अंतर्भारतीय पुस्तक माला

गृहभंग

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

गृहभंग

एस.एल. भैरप्पा

अनुवाद
वी.बी. पुत्रन

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

प्रथम संस्करण : 1977 (शक 1899)

प्रथम आवृत्ति : 1990 (शक 1912)

रू. 35.00

Original title : Grihabhanga (*Kannada*)
Hindi translation : Grihabhanga

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित।

भूमिका

संक्षेप में कहना चाहिए कि कन्नड़ उपन्यास की परंपरा का प्रारंभ बिंदु, इस शताब्दी के आदि में ही देखा जाना है। लेकिन अब उस बिंदु के महत्व के घटक के रूप में केवल स्व. गळगनाथ बचे हुए हैं। ऐतिहासिक विषयों को, वर्तमान की विपुलता के साथ, गळगनाथ ने उपन्यास चित्रण में प्रस्तुत किया है। वे कन्नड़ उपन्यास जगत् के निरूपण-विधान के लिए सशक्त नींव डालने के साथ-साथ विभिन्न भाषाओं के उपन्यासों को पढ़कर तृप्त होने वाले, कन्नड़ के प्रति अभि-रुचि रखने वाले गुटों में आशा-किरण बनकर उदित हुए। गळगनाथजी के पश्चात् वही परंपरा, संपत्ति के रूप में बढ़ने के साथ प्रगतिशील, नवोदय, रम्य, नव्य आदि गुटों में शाखोपशाखाएं उग आयीं। लेकिन यहां दो महत्वपूर्ण विषयों को जान लेना आवश्यक होगा। पहला है, नव्य साहित्य के अतिरिक्त अन्य समस्त गुट, जो संप्रदायबद्ध निरूपण-विधान में ही संतुष्ट हुए; और दूसरा, इन गुटों से दूर रहने वाले प्रमुख उपन्यासकार। यह द्वितीय विषय प्राय: आजकल के कन्नड़ साहित्य के संबंध में लिखी गयी व्याख्या ही प्रतीत होता है। डा. भैरप्पा के उपन्यासों के बारे में लिखते समय तो यह और भी महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। क्योंकि कन्नड़ के दो महान उपन्यासकार—डा. शिवराम कारंत और डा. एस. एल. भैरप्पा—सदा गुटबाजियों से दूर, उपन्यास-दृष्टि से जीवन को देखकर सृष्टि-क्रिया की जिम्मेदारी को निभाने में निरत हैं। मार्ग, पंथ अथवा विचार, आदर्शों के प्रति आबद्ध होकर अपनी साहित्य-क्रिया की बलि होने वाला नव्यपंथ के अनुभव की व्याप्ति अत्यंत कम होकर, अब हमें दिखायी न देने पर भी उन सबको त्याग कर उपन्यास को जीवन की संकीर्णता को समझाने में संवहन मार्ग का उपयोग करने वाले भी काफी लोग हैं। कन्नड़ के श्रेष्ठतम नाटककार 'श्रीरंग' ने कन्नड़ साहित्य-जगत् को प्रथम मनोवैज्ञानिक उपन्यास प्रदान किया है; 'देवुडु' अपने अनुभव को

हाड़-मांस में भरकर सप्राण बना देने में सफल हुए हैं; चदुरंगजी ने अपने उपन्यास 'सर्वमंगळा' के द्वारा पुनः उपन्यास जगत् को त्रासद दृष्टि दे दी; विनायक गोकाकजी ने 'समरसवे जीवन' (समरस ही जीवन है) के माध्यम से पीढ़ियों के वृत्तांत को पचाने का कमाल कर दिखाया है और उन सबके कलश के समान के. वी. पुट्टप्प (कुवेंपु) ने 'कानूर सुब्बम्मा हेगडती' एवं 'मलेगळल्लि मदुमगळु (पहाड़ी प्रदेश की वधू) के द्वारा बताया है कि उन्होंने ग्राम्य जीवन में महाकाव्य के विस्तार को पहचाना है। 'ग्रामायण' के माध्यम से रावबहद्दूर ने हमारे एक देहात को सप्राण पात्र बनाकर व्यक्ति से श्रेष्ठ समष्टित्रासद के सम्मुख हमें मूकवत् बना दिया है। यह सूची इस तरह बढ़ायी जा सकती है। लेकिन मार्मिक विषय यह है कि उपर्युक्त सभी उपन्यासों में उन लेखकों के उत्कट क्षणों की भावनाएं प्रकट हुई हैं—इन सब लेखकों ने जीवन को न उपन्यास की दृष्टि से ही देखा और न ही अपने को व्यक्त करने के लिए उपन्यास को माध्यम बनाया। इनमें से अधिकांश ने साहित्य के अन्य अंगों में अपनी प्रतिभा व्यक्त की है। यहां भुला नहीं सकते कि डा. शंकर मोकाशी 'पुणेकर' कृत बहुचर्चित उपन्यास 'गंगव्वा गंगामाई' (इनका एकमात्र उपन्यास) और डा. यू. आर. अनंतमूर्ति कृत 'संस्कार' उपन्यास भी ऐसे ही उत्कट क्षणों का परिणाम हैं।

कन्नड़ उपन्यास की इस पृष्ठभूमि में जब भैरप्पा की साधना देखते हैं तो लगता है कि अपनी मान्यताओं, अनुभवों और विचारों को केवल उपन्यास जगत् को यशस्वी बनाने के उद्देश्य से समाज के समस्त स्तरों के लोगों को अनुभव कराते हुए, उन सबको अपने में समेट कर कहने वालों में डा. शिवराम कारंत के पश्चात् इन्हीं का नाम आता है। वर्तमान कन्नड़ उपन्यासों की फसल काफी विपुल होते हुए भी भैरप्पा की तरह समाज के समस्त स्तरों को समेटकर ले चलने वाला और कोई उपन्यासकार दृष्टिगोचर नहीं होता।

संक्रमण काल से गुजरने वाले हमारे भारत की समस्त समस्याओं को पकड़ने की शक्ति केवल उपन्यास में ही होने के कारण, उपन्यासकार का दायित्व भी काफी बढ़ जाता है। डा. भैरप्पा एक सप्राण प्रतिक्रियापूर्ण व्यक्तित्व होने के कारण, पुराने से नये में परिवर्तित होते समय निहित संकट, मानसिक हलचल, संघर्ष आदि उनके उपन्यासों की कथावस्तु हैं।

'धर्मश्री' डा. भैरप्पा का प्रथम उपन्यास है। इसमें प्यार के बंधन में बंधकर

हिंदू से ईसाई बनने वाले एक युवक का द्वंद्व चित्रण है। बुद्धि और भावनाओं का द्वंद्व आगे बृहदाकार बनकर उनके महत्वपूर्ण उपन्यासों में साकार होने वाली कथा-वस्तु यहीं अपना प्रथम बीज बोती है। यह उपन्यास एक हिंदू युवक की, मतांतर के पूर्व की तनी भावनाओं की बलि होकर शिथिल होना उचित समझकर चित्रित करने पर भी, इसका दूसरा छोर मतांतर नहीं, बल्कि इस बात को विचित्र करना है कि जाति त्यागने की विधि भी होनी चाहिए। तत्पश्चात् प्रकाशित 'दूर सरिदरू' (दूर हट गये) में बौद्धिक असमानता से उत्पन्न स्थिति-गतियों का विवरण देने का प्रयास होते हुए भी वह केवल वैचारिक स्तर पर ही उपन्यास का अधिकांश भाग दो पात्रों की चर्चा बनकर रह जाता है; और चर्चा में प्राण संचार का माध्यम नहीं बनता।

'वंशवृक्ष' भैरप्पा का प्रथम महत्वपूर्ण उपन्यास है।[1] संक्रमण काल में आने वाली समस्त समस्याओं का दर्पण-घरासा यह उपन्यास, कात्यायनी के दुरंत को चित्रित करने में अद्भुत सफल हुआ है। सात्विकता के प्रतीक बनकर श्रोत्रि उपन्यास-भर में छा जाते हैं तो आधुनिकता का स्पर्श करने वाली कात्यायनी विधवा होते हुए भी पुनर्विवाह कर उनके समान उभरती है। सनातन धर्म और आधु-निकता का समांतर चित्रण वैचारिकता को स्पर्श किये बिना ही इतना शक्तियुक्त होकर कन्नड़ के किसी और उन्पयास में नहीं निखरा है। दोनों लक्ष्य, विश्वास को अर्थ प्रदान कर पात्रों के द्वारा मन के त्रासदों के माध्यम से चित्रित, भैरप्पा का यह उपन्यास सचमुच एक अर्थपूर्ण कृति है। (स्मरण रहे कि इस अति जनप्रिय उपन्यास और उससे निर्मित राष्ट्रपति प्रशस्ति प्राप्त चलचित्र ने भैरप्पा को अखिल भारत ख्याति-शिखर पर पहुंचाया है।)

'जलपात' दांपत्य जीवन की समस्या की कल्पना को सुंदर ढंग से चित्रित करता है। अति वैज्ञानिक दृष्टि दांपत्य जीवन को त्रासद में समाप्त करने में सफल होती है। लेकिन संतान बनने से रोकने वाले कलाकार के कृत्रिम विधान, उसकी कला के विकास में नाशक बनता है। यहां का कलाकार और उसके समांतर उभरता डाक्टर ये दोनों बंबई की पृष्ठभूमि में निखरते हैं। 'जलपात' इन सब विषयों की विपुलता लिये हुए भी 'दूर सरिदरू' उपन्यास की अपेक्षा रचना की दृष्टि से अधिक सफल है।

---

[1]यह डा. पुत्तन द्वारा हिंदी में अनूदित और विकास प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है।

इनका 'नाथी नेरळु' (कुत्ते की छाया) एक अन्य उपन्यास अन्यों से भिन्न रूप लेकर आया है।[1] पुनर्जन्म को कथावस्तु के रूप में प्रस्तुत करने वाली यह कृति पूरे कन्नड़ उपन्यास जगत् के लिए नयी है। भैरप्पा के ही शब्दों में—"कहानी दो परस्पर विरोधी बौद्धिक जगत् में चलती है।" 'नाथी नेरळु' को पढ़ने के पश्चात् कथा के विवरण मन में रह जाते हैं—पात्र नहीं। इस उपन्यास में आने वाला जोगय्य आगे 'गृहभंग' में मुख्य पात्र के रूप में आने वाले अय्यजी का स्मरण कराता है। यहां भी फिर विश्वास, नयी वैज्ञानिक दृष्टि की कथावस्तु प्रस्तुत होने के बावजूद भैरप्पा ने इस कथावस्तु को अन्य उपन्यासों की कथावस्तुओं के साथ ला जोड़ा है। यही कथावस्तु बृहद् समस्या बनकर 'तब्बलियु नीनादे मगने' (तुम अनाथ हुए बेटे) उपन्यास में उपस्थित होती है। दिखावे के लिए कहानी यद्यपि गौ से संबंधित लगती है, जैसे-जैसे उपन्यास आगे बढ़ता है, वैसे-वैसे हमारे देश के देहातों की संपूर्ण संकीर्णता बटोर लेता है। ग्वालों का एक लड़का विदेश से लौटने के बाद देश में फैले अंधविश्वास को धिक्कारता है। उसकी संगिनी है उसकी अमरीकी पत्नी। अंत में, इस प्रश्न के पैदा होने तक कि पत्नी को वापस अमरीका लौट जाना चाहिए, उपन्यास आगे बढ़ता है। लेकिन इस सबसे मुख्य बात है गाय-बैलों से चारागाहों को खेतों में बदलकर अधिक फसल उपजाने की सरकारी नीति से संपूर्ण देहात पर होने वाला परिणाम। नये को छोड़ने में असमर्थ और पुराने के बंधन से मुक्त होने में असमर्थ, छटपटाता कालिया (सर्प) सात्विक बनकर, नये को जानने की जिज्ञासा रखने वाला वेंकटरमण आदि को उपन्यासों में सफल रूप से प्रस्तुत करने के कारण लेखक की मूल समस्या सनातन एवं आधुनिक) वहां के ग्रामीण वातावरण में नया रूप लेकर उपस्थित होती है। यह उपन्यास ग्रामीण जीवन के प्रति भैरप्पा के सूक्ष्म परिज्ञान को प्रस्तुत करता है।

'मतदान' भैरप्पा के उपन्यासों के एक महत्वपूर्ण मोड़ को प्रस्तुत करता है। इनके उपन्यास में पहली बार राजकीय कथावस्तु ने स्थान पाया। यहां एक जन-प्रिय डाक्टर द्वारा राजनीति में भाग लेने के फलस्वरूप होने वाले त्रासद चित्रण देखने को मिलते हैं। 'मतदान' सफलतापूर्वक उद्घाटित करता है कि आज की राजनीति में ऐसे कपट नाटक चलते हैं जिसकी कल्पना मूलतः बुद्धिजीवी नहीं कर

[1]यह डा. पुत्रन द्वारा हिंदी में अनूदित और भारतीय ज्ञानपीठ से 'दायरे : आस्थाओं के' नाम से प्रकाशित है।

पाता। इसी कथावस्तु ने भैरप्पा जी के महत्वपूर्ण नये उपन्यास 'दाटु' (लांघ) में विस्तार धारण किया है।

इस स्तर तक आये हुए भैरप्पा के सारे उपन्यास सात्विकता को स्वीकार करते हैं या वैभव बढ़ाने और वैवाहिक समस्याओं को देखने में ही तल्लीन रहते हैं। लेकिन 'गृहभंग' इस स्तर से पूर्णतः मुक्त होने के साथ पहले के उपन्यासकारों द्वारा स्वीकृत कुछ मूल्यों पर प्रश्न उठाता है। इस उपन्यास की कथावस्तु तिपटूर और चण्णपट्टण तालुका प्रदेशों में 1920 से 40-45 की अवधि में घटी घटना है। 'गृहभंग' का प्रथम अध्याय पटवारी रामण्ण के परिवार के चित्रण से प्रारंभ होता है। गंगम्मा विधवा है। उसे संस्कृति की गंध तक नहीं। उसकी जबान से निकलने वाला हर शब्द 'गृहभंग' का मूल कारण बनता है। उसके बेटों—चेन्निगराय और अप्पण्णय्या के गुणों में काफी अंतर है। चेन्निगराय आलसी और महास्वार्थी है। अपनी पत्नी और बच्चों के प्रति भी उसे कोई आसक्ति नहीं। पत्नी पर अधिकार चलाने का इच्छुक होते हुए भी वह कायर है। वह इतना निर्लिप्त है, आलसी है कि लगता है अगर उसकी पत्नी नंजम्मा अप्पण्णय्या की पत्नी की भांति झगड़ालू होती तो शायद उसकी चाल कुछ और हो जाती। नंजम्मा, कंठीजोइसजी जैसे की बेटी होते हुए भी सहनशील है। दो परिवार की प्रतिष्ठा की रक्षा करती है। लेकिन उसका सारा जीवन त्रासद है। पति निरक्षर, पेटू है। सास तो हृदय-हीन पशु है ही। नंजम्मा उस नरक को स्वर्ग में परिवर्तित करने का प्रयत्न करती है, लेकिन उसका सारा संघर्ष विफल हो जाता है। विवाहित बेटी और विवेकी बेटा, दोनों दो ही दिनों में प्लेग की बलि चढ़ जाते हैं। इन संकटों से मुक्ति उसे अपनी मृत्यु के साथ ही मिलती है।

इस स्तर के महत्वपूर्ण उपन्यास 'वंशवृक्ष' के श्रोत्रि एवं 'गृहभंग' के कंठीजोइस की तुलना करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है। कंठीजोइस एक दृष्टि से देव-विरोधी, नास्तिक हैं, क्योंकि उन्होंने जादूटोना आदि सीख लिया है। लेकिन वे नीच नहीं हैं। देव-विरोधी, नास्तिक होते हुए भी, अच्छे मानव बनने वालों को भैरप्पा ने अपने इस उपन्यास में स्थान दिया है, चित्रित किया है। उसी तरह यहां आने वाले अय्यजी शुद्धाचारी सनातनी नहीं हैं, लेकिन अन्य जाति के लड़के के लिए अपने बुढ़ापे में भी जीवन व्यय करते हैं। यह उपन्यास दिखाता है कि अक्लमंद जाति के नाम से प्रसिद्ध ब्राह्मणों में चेन्निगराय जैसे मूर्ख भी होते हैं। यहां

तक भैरप्पा ने आधुनिक एवं सनातन दोनों को परस्पर आमने-सामने प्रस्तुत किया है तो 'गृहभंग' में वैचारिकता से दूर हटकर केवल चरित्र-चित्रण में लग जाते हैं। इसी कारण उपन्यास का नायक विश्व की मां नंजम्मा धीरोदात्त पात्र बनकर निखरती है। आलस्य से ही विवाहित उसका जीवन त्रासद में समाप्त होना सहज प्रतीत होते हुए भी उसका संघर्ष सचमुच त्रासद नायिका का संघर्ष बन जाता है। भय और करुणा, ये दोनों उस पात्र में घुलमिल जाने के कारण भैरप्पा ने हमारे ग्राम्य जीवन से महाकाव्य के एक पात्र का निर्माण कर प्रस्तुत किया है।

उपन्यास के अंत में आने वाला प्लेग, बचे-खुचे को भी लपेट कर ले जाने वाली घातक शक्ति के रूप में प्रस्तुत होता है। लेकिन यह शक्ति भी उपन्यास के सम्मिलित त्रासद को दुर्बल नहीं बनाती, क्योंकि उपन्यास, जीवन की शिल्प रचना की ओर ध्यान देने की अपेक्षा जीवन के एक अंश को ही वास्तविक स्तर पर चित्रित करने की ओर अधिक महत्व देता है।

यह उपन्यास भैरप्पा के उपन्यास जगत के महत्वपूर्ण गुण को प्रस्तुत करता है। वह यह है कि अपने वैयक्तिक ग्राम्य जीवन की संपत्ति में हाथ लगाते हैं तो ये उपन्यासकार वैचारिकता से सहज ही मुक्त हो जाते हैं; और बौद्धिक समस्याओं को उठा लेते हैं तो अधिकांशतः नगरों को ही अपने उपन्यास के केंद्र के रूप में चुन लेते हैं।

जीवन के एक अंश को सफल रूप में चित्रित करने में 'गृहभंग' का निरूपण-विधान ही कारण है। कन्नड़ की उपन्यास-परंपरा के समस्त तत्वों का प्रयोग इस उपन्यास में हुआ। मुख्यः ग्राम्य जीवन के यथार्थ चित्रण के लिए आवश्यक ग्रामीण भाषा यहां के कथोपकथनों में निखर आयी है। कन्नड़ का यह महत्वपूर्ण उपन्यास गंभीर होते हुए भी, संकीर्ण होते हुए भी, जनप्रिय बनने का कारण यह है कि जहां वैचारिकता से युक्त मुक्ति, ग्रामीण स्तर का वास्तविक चित्रण 'वंशवृक्ष' के कुछ विचारों की प्रतिक्रिया के रूप में निखर आया है, वहां 'गृहभग' एक शुद्ध साहित्यिक कृति बनकर रह जाता है। 'गृहभंग' की तुलना कन्नड़ उपन्यास 'ग्रामायण' से करें तो रावबहद्दूर और भैरप्पाजी की त्रासद दृष्टियों के बीच स्थित अंतर स्पष्ट होता है। 'ग्रामायण' में एक देहात के त्रासद को सांकेतिक रूप से पूर्ण देश के त्रासद के रूप में चित्रिण किया है, साथ ही 'ग्रामायण' अवनति के चित्र को भी उपस्थित करता है। लेकिन 'गृहभंग' नंजम्मा नामक महिला के संघर्ष की कथा है;

एक व्यक्ति के संघर्ष त्रासद के माध्यम से उसके आसपास के वातावरण में अनुकंपन, निर्दयता, मूर्खता एवं जिद्द व्यक्त होते हैं। अगर भैरप्पा व्यक्तिगत त्रासद के पीछे पड़ते हैं तो रावबहद्दूर समष्टि के त्रासद को प्रस्तुत करते हैं।

'गृहभंग' में व्यक्त उपन्यासकार की निर्लिप्तता अद्भुत है। अपने सृष्टि-कार्य को बाहर खड़े होकर देखने वाले भगवान की भांति कलाकार को कृतिरचना में लग जाना पड़ता है। इस कला का उदाहरण 'गृहभंग' में है।

इस उपन्यास की पृष्ठभूमि में भैरप्पा का कहना है—"यह उपन्यास किसी भी समस्या से संबंधित नहीं है—जीवन को वस्तुनिष्ठ चलाकर प्रस्तुत करने का प्रयत्न है।" इस प्रयत्न में लेखक काफी सफल हुआ है।

'गृहभंग' के पश्चात प्रकाशित उपन्यास 'निराकरण' और 'ग्रहण' अत्यंत दुर्बल कृतियां हैं। एक स्वामीजी द्वारा विवाह कर लेने के निश्चय से गांव भर में हलचल मच जाती है। यही 'ग्रहण' की कथावस्तु है। निश्चय स्वस्थप्रद होने के कारण स्वाभीजी का ग्रहण मिटता है। इसी अर्थ से इसका शीर्षक ग्रहण रखा गया है। लेकिन स्वामित्व को त्यागने वाले पात्र का क्रोधपूर्ण आवेश उपन्यास में स्पष्ट उभर नहीं पाया। 'निराकरण' मानव संबंध और निर्लिप्तता को लेकर लिखा गया उपन्यास है। यहां फिर वैचारिकता के भार से उपन्यास ढह जाता है। नरहरि का अपनी पत्नी की मृत्यु के वाद बच्चों को दत्तक में देकर निर्लिप्त हो, शांति की खोज में निकल पड़ना—इस उपन्यास की कथावस्तु है। यह डा. शिवराम कारंत के 'अळिद मेले' (मृत्यु के बाद) उपन्यास का यत्र-तत्र स्मरण दिलाता है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि इन दोनों ('ग्रहण' और 'निराकरण')—उपन्यासों ने रचना विधान की दृष्टि से या कथावस्तु की दृष्टि से कन्नड़ साहित्य पर किसी तरह का विशेष परिणाम नहीं डाला।

'दाटु' भैरप्पा का हाल में प्रकाशित बृहद् उपन्यास है जिसने लेखक को पुनः डा. कारंत के पश्चात का श्रेष्ठ उपन्यासकार साबित करने के साथ-साथ कन्नड़ विमर्श-जगत से पर्याप्त प्रतिक्रिया दिलायी है। इस उपन्यास को सन् 1975 का साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है। इस समय जबकि जाति, वर्ग आदि का काफी शोरगुल है, हमारे वर्तमान समाज में जाति, वर्ग किस तरह स्वरूप पाते हैं, इस विषय को भैरप्पा ने काफी निर्लिप्तता से परखा है। क्रांति को लेकर उपन्यास लिखा जा सकता है, क्रांति वाले उपन्यास लिखे जा सकते हैं। 'दाटु'

शायद दूसरी श्रेणी में आता है। लेकिन यहां का महत्वपूर्ण साहित्यिक गुण यह है कि सर्वत्र क्रांति ही क्रांति बनकर उपन्यास के उद्देश्य पात्रों को हड़प नहीं लेते—यहां जाति पद्धति भी उपन्यास का अविभाज्य अंग बन गयी है। विजाति के लड़के से विवाह कर लेने की इच्छा रखने वाली नायिका स्वजाति वालों द्वारा चलाये जाने वाले कालेज से नौकरी से निकाली जाती है; हरिजनों को मंदिर प्रवेश के विचार का प्रोत्साहन देने वाले मंत्री मेलेगिरि गौड़जी के पिता बड़े गौड़ेजी, हरिजन प्रवेश के बाद मंदिर को गोमूत्र और गोबर से शुद्ध कराते हैं; अपने आपको ब्राह्मणों से श्रेष्ठ साबित करने के प्रयास में ब्राह्मणों से अधिक शुद्धाचारी बन बैठे हैं; हरिजन मोहल्ले में गांधीवाद का प्रचार करने के प्रयत्न में लगा हुआ हरिजन नेता बेट्टय्य, वेंकटरमणय्य जी को न छूने वाली जाति-पद्धति का संकेत दिया है। इन सब विरोधाभासों को उपन्यास ने वास्तविक रूप से निर्दाक्षिण्य से प्रस्तुत किया है। इसी कारण, जब कभी यह विषय आता है, उपन्यास में अद्भुत असंगत द्रव्य ही निर्माण होते हैं।

इस तत्व को कि प्रज्ञा-प्रधान उपन्यास से ही पात्रों के भीतरी भावों को पकड़ा जा सकता है, 'दाटु' प्रश्न करता है, सहमत नहीं होता। यहां प्रयुक्त तंत्र संपूर्ण सफल न होते हुए भी विभिन्न दृष्टि से एक समस्या को देखने का प्रयत्न किया जा सकता है जो कन्नड़ उपन्यास के स्वस्थता की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। समकालीन समस्या का निरूपण सदा कठिन कार्य है, एवं उपन्यासकार के सम्मुख प्रश्न बनकर खड़ा होता है। उसके लिए मूलभूत रूप में आवश्यक है जीवन का ताजा अनुभव और जीवन की सूक्ष्म पारखी दृष्टि। इन दोनों के लिए साक्षी बनकर उपन्यास के समस्त भाग विकसित होने के कारण 'दाटु' कन्नड़ उपन्यास जगत में स्थायी स्थान पाता है।

आजकल 'गृहभंग' का अगला भाग 'अन्वेपणे' (अन्वेषण) छपने जाने की तैयारी में है। इसके अतिरिक्त गत पांच सालों से भैरप्पा जी 'महाभारत' को वर्तमान में उपलब्ध होने वाले समस्त विषयों को बटोर कर अपने जीवन-दर्शन की कथावस्तु बनाकर, एक बृहद् उपन्यास लिखने की पूर्व तैयारी के खोज-कार्य में लगे हुए हैं।

—माधव कुलकर्णी

मैसूर राज्य के तुमकूर जिले में एक तहसील तिपटूर है जिसमें एक इलाका कंबनकेरे है। इस इलके में रामसंद्र गांव है जिसके पटवारी रामण्णाजी थे, जो अब इस संसार में नहीं रहे। वे अपने पीछे अपनी पत्नी गंगम्मा और दो बेटे—चेन्निगराय और अप्पण्णय्या——छोड़ गये हैं। रामण्णाजी को गुंजरे अब छह वर्ष बीत गये हैं। अर्थात, जिस वर्ष विश्वेश्वरय्या दीवान-बहादुर बने थे, उसी वर्ष रामण्णाजी ईश्वर को प्यारे हो गये थे। तब उनकी पत्नी गंगम्मा पच्चीस वर्ष की थी। बड़ा बेटा चेन्निगराय नौ साल का था और अप्पण्णय्या सात का। रामण्णाजी के बाद उनके वंश-परंपरागत पटवारी-कार्य को गांव के पटेल गंगेगौड़ का साला शिवलिंगेगौड़ देखने लगा क्योंकि चेन्निगराय यह कार्य तीन वर्ष पश्चात, अट्ठारह का बालिग होने पर ही संभाल सकता था। पटवारी कार्य कोई खिलवाड़ थोड़े ही है! इसके लिए प्रशिक्षण चाहिए। कम से कम 'जैमिनी भारत' तो समझ ही लेना चाहिए। अन्यथा बहीखाते, रायशमारी और अन्य व्यावहारिक बातें समझ में नहीं आ सकतीं! इसलिए चेन्निगराय गांव की चटशाला के मास्टर चाताली (वैष्णव) चेन्नाकेशवय्या से विद्यार्जन कर रहा है।

अप्पण्णय्या तेरह का हो गया था लेकिन चटशाला में पैर तक नहीं रखा था। पट्टी पर 'श्री ओम' लिखना तक नहीं आया था। उसका यज्ञोपवीत संस्कार भी नहीं हुआ। "अप्पण्णा, चटशाला जायेगा या नहीं?" मां ने क्रोध से पूछा।

"न जाऊं तो तेरा क्या बिगड़ता है? गधी, छिनाल कहीं की!"

"मुझे छिनाल कहता है? तेरा वंश खत्म हो जायेगा, हरामजादे!" मां ने कहा!

"वंश तो तेरा ही नष्ट होगा, देख!" बेटा इतना कह ही पाया था कि बाहर से मुद्दा आ गया। "मुझे गधी कहता है, छिनाल कहता है! मुद्दा, रांड के बच्चे

को घसीट ले जा चेन्नकेशवय्या के पास, और बिठा आ वहां !" गंगम्मा ने आज्ञा दी। यह सुनते ही अप्पण्णय्या बाहर भागा। लेकिन मुद्दा भी ऊंचा-पूरा आदमी था। दस कदम पर ही उसकी चोटी पकड़ ली ! वह रोने-चिल्लाने लगा ! पर छोड़ा नहीं। गंगम्मा के सामने ला खड़ा कर दिया ! गंगम्मा ने आज्ञा दी—"इस रांड की औलाद को दो लात लगाओ और ले जाओ !"— लेकिन मुद्दा ब्राह्मण को लात कैसे मार सकता था ! क्या वह नहीं जानता कि ऐसा करने पर उसके पैरों में कीड़े पड़ेंगे ? इसलिए उसकी बांह पकड़कर घसीट ले गया।

छोटे बेटे के चले जाने के बाद गंगम्मा की नजर बड़े पर पड़ी। वह घर में ही था। "अरे चन्निगा, होन्नवळ्ळि के सीताराम से लेखा सीखने के लिए तुझसे और कितनी बार माथा-पच्ची करनी पड़ेगी ? कल सुबह जायेगा या तुझे भी दो डंडे लगाऊं ?"

"हां, अब मेरे पीछे पड़ गयी ! नाई रुद्रण्णा से तेरा सिर मुंडवा दूंगा, समझी ?" खंभे के पास से बड़ा बेटा गुर्राया।

"अरे ! मेरा सिर तो उसी दिन मुंड गया जिस दिन तुम लोगों के पिता गुजर गये थे। जन्म देनेवाली मां को ऐसा कहता है ? जबान में कीड़े पड़ेंगे, छिनाल के बेटे !"

होन्नवळ्ळि रामसंद्र से करीब अट्ठारह मील दूर है। दोनों गांव एक ही तहसील में होते हुए भी, इलाके में अलग-अलग हैं। रामसंद्र कंबनकेरे इलाके में पड़ता है। होन्नवळ्ळि, इलाके का प्रमुख केंद्र है जो पहले तहसील भी था। लेकिन तिपटूर का विकास होने से इसका महत्व घट गया है। चिक्कमगलूर और कडूर का विकास होने पर, तहसील कार्यालय भी तिपटूर चला गया है। होन्नवळ्ळि जब तहसील थी तब भी सीतारामय्या कस्बे के पटवारी थे। गणित में बड़े होशियार ही नहीं, बल्कि उनमें अमलदारों को हिला देने का व्यक्तित्व भी था। उनसे जिसने भी लेखा सीखा, उसने पटवारी-कार्य बड़ी आसानी से कर लिया। यह बात अरसीकेरे, गंडसी, जावगळ्ळु आदी स्थानों के पटेल, पटवारी भी कहते थे। लेकिन सीतारामय्या के साथ निभना कम आसान नहीं था। खातों के शीर्षक देने से लेकर लाल स्याही की रेखाएं खींचने तक, सौ-दो सौ रुलर खाने पड़ते थे। चटशाला के अध्यापक की तरह वे भी कहते कि पटासी पर हथौड़ी की हजार मार पड़े बिना लकड़ी की मूर्ती कैसे बन पायेगी।

दोनों बेटों का व्यवहार देखकर, गंगम्मा क्रुद्ध हो गयी। रुलाई के साथ आंखों में आंसू छलक आये। "दूसरों के घरों में बच्चे अपनी मां से कितना डरते हैं! लेकिन इस रांड के बेटों को क्या रोग लगा है? मेरी ही किस्मत ऐसी है!" कहकर रो पड़ी। फिर उठी और सीधे रसोईघर में जाकर चिमटा चूल्हे में रख दिया। दोपहर के तीन बज चुके थे। चूल्हे में आग नहीं थी। नारियल की नट्टी आदि की आग राख बनती जा रही थी। बेटा पंद्रह वर्ष का था और 'जैमिनी भारत' पढ़ चुका था, इसलिए जान गया कि मां चिमटा क्यों तपा रही है। एक ही सांस में छिनाल, रांड, कुलटा कहकर वह घर से निकल भागा। गंगम्मा जानती थी कि अब उसे पकड़ना मुश्किल है। फिर भी वह हार मानने वाली नहीं थी। वह बैठी-बैठी सोचने लगी कि इन हरामजादों को काबू मे कैसे किया जाय! चिमटा बुझते अंगारों में भी धीरे-धीरे गरम होता ही जा रहा था।

जब गंगम्मा ने इस घर में प्रवेश किया था, वह तेरह वर्ष की थी। पति की उम्र थी पैंतालीस। इनकी पहली पत्नी से दो बच्चे हुए थे, किंतु दोनों मर गये थे। बाद मे उनकी मां भी चल बसी थी। पहली पत्नी, गंगम्मा के गांव जावगळ्ळु की ही थी। इसीलिए गंगम्मा रामण्णाजी को ब्याह दी गयी थी। वे रामसंद्र सहित तीन गांव के पटवारी थे। छह एकड़ का खेत, आठ एकड़ की बाड़ी, नारियल के तीन सौ पेड़, काफी सोना-चांदी और पर्याप्त बर्तन आदि होते हुए उन्हें कौन लड़की न देता! सारा गांव कहता था कि रामण्णाजी शुरू से ही साधु-पुरुष थे। वह भी गाय-से, नन्हीं बछिया-से। लेकिन गंगम्मा बाघिन थी—ऐसा लोग कहा करते थे, जब कभी यह बात गंगम्मा के कानों में पड़ती, तो वह कह उठती, "इन लोगों के मुंह में अपने बायें पैर की पुरानी चप्पल ठूंस दूंगी।" अगर उसके बेटे अक्लमंद होते और कहना सुनते और तो उसे ऐसा करने से कोई भी रोक नहीं पाता, वह लोगों के मुंह में जरूर चप्पल ठूंस देती। लेकिन इस छिनाल के बच्चे नालायक निकले। "इन्हें सबक सिखाना होगा। न सिखाऊं तो मैं जावगळ्ळु की औरत नहीं! चिमटे को चूल्हे में ही रहने दो और तपने दो। शाम को 'पिंड' खाने जरूर आयेंगे ही। तब उनके पैरों पर दागूंगी, जैसे बछड़ों को दागा जाता है। बछड़ों को जब तक दागा न जाय, वे कहां मानते हैं! इसीलिए तो दागते हैं न कि वे कहना मानें, आज्ञा का पालन करें!"—बड़बड़ाती हुई गंगम्मा ने चिमटे को अपने लाल पल्लू से पकड़रक एक बार घुमाया-फिराया और फिर धीमी आंच में रख दिया।

इतने में ही उसे लगा कि छत की खपरैल पर कोई चुपके-चुपके चल रहा है। इस दिन दहाड़े कौन सूअर आयेगा ? बंदर होगा ! रांड की इन औलादों ने बाड़ी के नारियलों का पानी पीना छोड़कर, अब गांव में आना शुरू कर दिया है ! वह ऐसा सोच ही रही थी कि उसे लगा कि वे उसके ठीक सिर के ऊपर आ पहुंचे। वह ऊंची आवाज में चिल्लायी—"तुम लोगों के घर-बार नाश हों ! हाय, कहते हैं वे अंजनेय के स्वरूप हैं, और बुरा कहूं तो शाप देते हैं।"—इतना कहकर तुरंत अपनी जबान को लगाम लगायी और ऊपर देखा तो लगा कि कोई दो डंडों से एक साथ खपरैलों पर प्रहार करता जा रहा है। पंद्रह-बीस खपरैलों के टुकड़े हो गये। कुछ टुकड़े उसकी झोंपड़ी और ऊपर की ओर देख रहे मुंह पर गिरे। "इनके घर-बार का सत्यानाश हों।" कोसते हुए वह रोने लगी। इतने में ऊपर से चेन्निगराय को यह कहते हुए सुना, "अरे, वह यहीं है, और दो-हाथ मारो अप्पण्णय्या।" दोनों भाइयों ने हाथ के मूसलों से, मां के सिर के ठीक ऊपरी हिस्से के खपरैलों पर अपना बाहुबल आजमाया। "रांड के बेटो, पटेल शिवेगौड से कहकर तुम दोनों को फांसी पर चढ़वाऊंगी।"—कहती हुई घर से बाहर निकल गयी।

"अरे चन्नैया, वह कहती है कि शिवेगौड़जी को बुलाती हूं।" अपण्णय्या ने बड़े भाई को सजग किया ! और वे मूसल वहीं छोड़, खपरैलों पर दौड़ते हुए पिछवाड़े के नाले के उस पार कूदकर फरार हो गये !

[2]

ऐसा कहा जाता है कि पहले रामसंद्र पांच सौ घरों का गांव था, लेकिन अब पटवारी की राजकुमारी के अनुसार केवल एक सौ सैंतालीस घर ही हैं। इस गांव को दो ओर से तालाब का पानी घेरे हुए है और तालाब का पानी हर साल खंडहर हुए किले की दीवारों से टकराता रहता है। दक्षिण की ओर तालाब के ऊंचे तट पर चोलेश्वर मंदिर में मूल लिंग स्थापित है। गांव के मंदिर के सामने वाले रास्ते के अंत में ब्रह्मदेव मंडप है ! उसके पास हनुमान का मंदिर है। गांव के बाहर पेड़ों की कतारों के पास ग्रामदेवी मां-काली का मंदिर है। गांव में बनिये, जुलाहे, तेली, गड़रिये, सभी जातियों की अपनी एक-एक गली है। लेकिन ऐसी बात नहीं

कि एक जाति के लोग दूसरी गली में नहीं रहते। हां, मांसाहारियों के बीच ब्राह्मण, लिंगायत, वैष्णव जैसे बहुत कम रहते हैं।

पटेल शिवेगौड़ और दिवंगत पटवारी रामण्णाजी के घरों के बीच दो गलियों की दूरी है। लगभग बीसेक घरों का अंतर है। शिवेगौड़ घर पर ही था। गंगम्मा सीधे अंदर आकर बोली—"शिवेगौड़, जल्दी उठो और देखो! हमारे चन्निग और अप्पण्णा छत की खपरैलों को मूसलों से तोड़ रहे हैं! यह देख, खपरैल सिर पर गिरने से खून निकल रहा है!"

"आखिर क्यों?"

"चटशाला जाने के लिए कहा था मैंने! बस, इंकार ही नहीं किया, खपरैल तोड़ने लगे।" शिवेगौड़ की पत्नी गौरम्मा अपने पति से बोली, "वे बिगड़ गये हैं! उन्हें खींचकर लाइये!" शिवेगौड़ का शरीर एक तो भारी था और ऊपर से तोंद निकली हुई थी! चलता तो मदमस्त हाथी सा! चप्पल पहन वह उस ओर चल पड़ा! वहां देखा तो दोनों भाई फरार हो चुके थे! इस बीच वहां मंदिर के महादेवय्या और दस पंद्रह अन्य व्यक्ति जमा हो चुके थे! रसोईघर के पिछवाड़े की खपरैलें टूट चुकी थीं! गौड़ ने उनमें से दो-चार को पकड़ लाने के लिए कहा।

रसोईघर की छत की हालत देखकर गंगम्मा की आंखों में आंसू छलक आये! बोल उठी, "शिवेगौड़, उन रांड के बच्चों को घसीटकर लाओ। उन्हें उनके पैर तोड़कर ही बिठाना चाहिए!"

लड़के नहीं मिले। रात होने तक भी उनका पता नहीं चला। "इनके घर का नाश हो न जाने कहां भाग गये?"— गंगम्मा कोई दस बार बड़बड़ायी। वैसे घर में वह अकेली है। पिछवाड़े के खपरैल टूट चुके हैं, फिर भी अकेली रहने में उसे डर नहीं लगता। वह कहती है "जहां मैं रहूं, वहां भूत भी नहीं फटकते। लेकिन ये हरामखोर न जाने कहां भाग गये? उनके प्राणों की उसे तिलभर भी चिंता नहीं। कहीं छिपे बैठे होंगे! रात में न जाने क्या खायेंगे! बाड़ी के नारियल चुराकर खाते होंगे! खेत की ओर गये होंगे तो गन्ने तोड़कर खाते होंगे! फिर भी क्या घर लौटना नहीं चाहिए था? कल सुबह रोटी के लिए आने दो, तब उन्हें बताऊंगी!"

इस घर के ठीक सामने चोलेश्वर का मंदिर है। मंदिर का द्वार उत्तर की ओर है, और घर का द्वार पूर्व की ओर, अर्थात् मंदिर का बायां भाग उनके घर के

सामने की ओर पड़ता है। मंदिर और घर के बीच एक छोटा खंडहर है जिस पर मंदिर बना हुआ था। उसका निशान अभी भी बाकी है। मंदिर में महादेवय्या अकेले हैं। दायें हाथ से इकतारा और बायें हाथ से चुटकियां बजाते हुए भजन करते रहते हैं। यही इनका रोज का नियम था। आधी-आधी रात तक भजन गाते रहते। सुबह मुर्गे की बांग देने से पहले उठ जाते और भजन शुरू कर देते। इनके गांव और प्रांत के बारे में कोई नहीं जानता। कहते हैं कि इस गांव में इन्हें आये बीसएक साल हो चुके हैं, अर्थात् गंगम्मा की शादी के कुछ दिन पहले आये। अब चोलेश्वर मंदिर में ही रहते हैं। भजन गाते हैं और भिक्षा से पेट भरते हैं। ऊंचा कद और गोल चेहरा है। ललाट पर भभूति की तीन लंबी रेखाएं खींचते हैं। भौंहों के बीच और कान के पास भभूति की बिंदी लगाते हैं। सिर मुंडा हुआ है। गेरुआ रंग की धोती और इसी रंग की कमीज पहनते हैं।

गंगम्मा लेटी तो उसे नींद नहीं आयी। क्योंकि लड़के अभी तक लौटे नहीं थे। महादेवय्याजी का भजन समाप्त करने का समय हो रहा था। मंगलारती की पंक्तियां गायी जा रही थीं। गंगम्मा उठी और घर का दरवाजा बंद करके मंदिर की ओर चल पड़ी। मंदिर का अग्रद्वार मंडप-सा था, जिसमें दरवाजा नहीं था। महादेवय्याजी यहीं बैठकर भजन गाते थे। संध्या समय गांव के और लोग भी भजन सुनने आ जाते थे और भजन गाते हुए चुटकियां बजाने लगते थे।

आधी रात हो चुकी थी। मंदिर में महादेवय्याजी के अलावा और कोई नहीं था। गंगम्मा उनके सामने खंबे के पास बैठ गयी। जब उनका भजन समाप्त हुआ और उन्होंने इकतारा और चुटकियां बंद कीं तो गंगम्मा ने पूछा––"महादेवय्याजी, इस रांड की औलादों को कब अक्ल आयेगी?"

'गंगम्मा, अक्ल धीरे-धीरे आती है। लेकिन पहले आपको साधु-वाक्य बोलना सीखना चाहिए।"

"मैंने बुरा क्या कहा?"

"रांड की औलाद को क्यों कहती हैं? मेरे बच्चों को कहिये।"

जबान सुधारने के लिए गंगम्मा को महादेवय्याजी पहले भी कई बार समझा चुके थे। लेकिन उसमें सुधार नहीं हो सकता, यह जानते हुए भी मौका मिलने पर उसे टोकते ही रहते। गंगम्मा ने लड़कों के न लौटने की बात फिर कही।

"गंगम्मा, बेटों को सजा देने के लिए पटेल को क्यों बुलाने गयी थीं?"

"क्यों ? ये मुझे थोड़े ही मिलने वाले थे!"

"गलती आपकी ही है।" उन्होंने समझाया—"घर की स्वामिनी मां के अलावा बच्चों को और कौन सुधार सकता है?"

इस पुरानी नसीहत से वह सकपका गयी।

"आपने अप्पण्णय्या को चटशाला भेजा। वहां उसने मास्टरजी को 'रांड का बेटा' कह कर गाली दी और भाग आया। तो ये गालियां उसने कहां सीखीं ?"

"मेरी किस्मत ही ऐसी है कि उनसे ऐसी बातें करवाती है। गाली देने के बाद इस रांड के बेटे को मास्टरजी यों ही थोड़े छोड़ देते ?"

"वहां से लौटने के बाद ही तो दोनों भाईयों ने खपरैल तोड़े थे न?"

"उन हरामजादों का घर-बार मिट्टी में मिल जाय ! नये खपरैलों के लिए अब कहां से पैसे लाऊं मैं ?"

"गंगम्मा, फिर ऐसे शब्द कहने लगीं ! आप…" महादेवय्या जी आगे कुछ कहने जा ही रहे थे कि बाहर दस-बारह आदमियों के दौड़ने की आवाज सुनाई दी। वे चिल्ला रहे थे, "गन्ने के खेत में आग लग गयी है, दौड़ो दौड़ो।" इन दोनों ने मंदिर के बाहर आकर देखा तो तालाब के पिछवाड़े समतल खेतों में आग के शोले धधक रहे थे। इसी प्रकाश में धुआं भी दीख पड़ता था।

"हाय! हाय! !हमारे भी गन्ने हैं। न जाने किस रांड की औलादों ने आग लगायी?" कहते हुए गंगम्मा घर भागी। दरवाजे को ताला लगाया और लोगों के साथ वह भी तालाब के किनारे की ओर दौड़ी।

गांव के सामने उसे दोनों ओर से घेरे हुए तालाब है। इस तालाब के किनारे पहुंचने के लिए गांव के सामने ही चक्कर काटकर जाना पड़ता है। सारा गांव तालाब के किनारे की ओर दौड़ा और उसपर लोग इधर-उधर खड़े हो गये। इस समतल खेती के आधे से अधिक भाग में गन्ने बोये हुए थे। पश्चिम की ओर बांध के मुख के पास दो कोल्हू चल रहे थे। आग पूरब में लगी थी, जो अब धीरे-धीरे पश्चिम और उत्तर की ओर बढ़ रही थी। गन्ने तैयार हो गये थे। इनके नीचे के पत्ते सूख गये थे जो आग को फैलाने में घी का काम कर रहे थे। हवा न होती तो लपटों की तीव्रता कम हो जाती, लेकिन हवा तो दिशा-भ्रम में डाल कभी पश्चिम की ओर तो कभी दक्षिण की ओर बहने लगती। इसने आग को शीघ्र ही फैला दिया। दोनों कोल्हूवालों ने कोल्हू के बैलों को छोड़ा और इन्हें बांध की ओर

भगा दिया। मजदूर गुड़ की गठरी ले जाने लगे। गुड़ बनाने के चरखे दो-दो की जोड़ी में उठाकर बांध पर डाल रहे थे। आकाश को छूती आग बांस, नारियल के पत्तों और लोहे के पतरों से निर्मित कोल्हाड़ को भस्म करने में अब पांच मिनट से ज्यादा नहीं लेगी ऐसा लगता था।

इस फैलती आग की ज्वालाओं से अपने शरीर को बचाते हुए खेतों के मालिक हाय-हाय मचा रहे थे। आग कैसे लगी, किसने लगायी—लोगों में यही तर्क-वितर्क चल रहा था।

कोल्हू के पास ही गंगम्मा की एक एकड़ की बाड़ी थी। इसमें चालीस नारियल के पेड़ थे। उसकी दूसरी बाड़ी दूसरी जगह थी। आग ने इस बाड़ी को चारों ओर से घेर लिया। बाड़ी के पास का कोल्हाड़ जल गया था। इसकी लपटें और धुआं ऊंचे-ऊंचे पेड़ों से भी ऊपर उठ रहा था। बाड़ी के बीच से ही किसी के जोर-जोर से चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी—"हाय! हाय!! हे भगवान, बचाओ, मैं मर रहा हूं, मुझे बचाओ।" यह आवाज आग की चिट्ट-चिट् के स्वरों के बीच भी साफ सुनाई पड़ रही थी। लोग घबराकर और आश्चर्यचकित होकर उस ओर देखने लगे जिस ओर से आवाज आ रही थी। गंगम्मा चिल्ला उठी—"हमारे चेन्नि की आवाज है। हरामजादा, इतनी देर गये बाड़ी में क्यों बैठा रह गया? अरे, आप लोगों के पैर पड़ती हूं, कोई मर्द उसे बचाओ।" लेकिन आकाश छूती आग से कौन खेलता! बाड़ी के बाड़ में आग लग चुकी थी। अब नारियल के पत्ते डंठल आदि के ढेर में भी आग लग सकती थी। किसी में भी उसे बचाने का साहस नहीं हुआ। लेकिन, 'बाड़ी के अंदर आग नहीं आयेगी, आओ-आओ' चिल्लाते हुए मंदिर के महादेवय्याजी बांध से उतरे और जलते खेत के बीच बहते पानी के नाले को पार कर बाड़ी में पहुंच गये।

"कोई मर्द की संतान नहीं है! मैं औरत हूं फिर भी जाती हूं।" कहती हुई गंगम्मा बांध से उतरी। कोली मुद्दा, अछूत बेलूरा, भजनों में आने वाला तोटीमर आदि सात-आठ लोग गंगम्मा के बाद नीचे उतरे और उसे पीछे छोड़ दौड़ने लगे।

बाड़ी में चेन्निगराय नारियल के पेड़ के एक डंठल पर बैठा हाय-हाय मचा रहा था। महादेवय्याजी चिल्लाये—"चेन्नैया, बाड़ी में अभी तक आग नहीं लगी है, तुम जल्दी उतर जाओ।" लेकिन वह उतरने से डर रहा था। "मुझे डर लग रहा है जी।" इतना कहकर वह रोने लगा। इतने में मुद्दा, बेलूरा, तोटमरी, सभी दौड़

आये। हांफते-हांफते गंगम्मा भी आ पहुंची। "उतर आओ मेरे लाल। अप्पण्णा कहां है ?" और वह रोने लगी। कुछ साहस बटोर, बंदर की भांति वह सरलतापूर्वक पेड़ से जल्दी उतर गया। अब आग फैलकर नारियल के पत्तों आदि के ढेर में लगने की संभावना थी, इसलिए वे उसे साथ ले लौट पड़े। वे जिस नाले से आ रहे थे, उसके दोनों ओर के गन्ने की आग बुझ रही थी लेकिन कोल्हाड़ की ज्वालाएं अब भी धधक रही थीं और कोल्हू के पास पड़े गन्ने के छिलकों के ढेर की आहूति हो रही थी।

सब तालाब के किनारे पहुंच गये। महादेवय्याजी ने चेन्निगराय से पूछा—"इतनी देर तक नारियल के पेड़ पर क्यों बैठे थे ?"

"मां शिवेगौड़ को बुलाने गयी थी, इसलिए।"

तब तक सभी वहां एकत्र हो गये थे। पटेल शिवेगौड़ भी आ गया था।

"तुम दोनों भाइयों ने खपरैल क्यों तोड़े ?" महादेवय्याजी ने पूछा।

"हाय, खपरैल जाय चूल्हे में। अप्पण्णा कहां गया रे ?" गंगम्मा ने कातर स्वर में पूछा।

"वह लिंगापुर की ओर भाग गया है। उसी ने गन्ने के खेत में आग लगायी"

"वह क्यों लगायेगा ?"

"मैंने कहा था कि चलो दोनों नारियल के पेड़ पर छिप जायें। लेकिन उसे सीधे लंबे पेड़ पर चढ़ना आता नहीं था इसलिए उसने खेत में ही रहने को कहा। फिर कोल्हाड़ के लोगों द्वारा देख लिये जाने के भय से वह नाले की ओर चला गया। उसने बीड़ी पीने के लिए दियासलाई जलायी और जो काड़ी गन्ने के पत्तों में गिर गयी।"

शिवेगौड़ इस पर गरजा—"अरे जाओ, उसे पकड़कर लाओ।" लेकिन महादेवय्याजी ने पूछा—"इसके कहने से ही हम कैसे विश्वास कर लें ? तू कैसे जानता है कि उसके बीड़ी जलाने से ही आग लगी ?"

"मैं झूठ नहीं बोल रहा हूं जी। भगवान की कसम खा सकता हूं। वह खुद यहां तक दौड़कर आया था और बोला था कि ऐसा हुआ है और पुरदप्पा के खेत में आग लग गयी है। फिर मुझे किसी से न बताने को कहकर, लिंगापुर की ओर भागने को कहा। लेकिन मैंने कहा कि आग तुमने लगायी है, मैं क्यों भागूं ! फिर मैंने उसे भाग जाने के लिए कहा और वह भाग गया।"

उसकी इस बात का क्या परिणाम हो सकता है, उसे पटेल शिवेगौड़ और कुछ प्रमुख लोग तुरंत भांप गये। गंगम्मा की कुछ समझ में नहीं आ रहा था। महादेवय्याजी सब समझकर भी, किसी तरह छुड़ाने के उद्देश्य से बोले— "इस लड़के की बात पर कैसे विश्वास किया जाय ?"

"क्यों न विश्वास किया जाय ?" पटेल ने रौब से पूछा।

"सत्य कहता हूं पटेलजी !" चेन्निगराय ने फिर अपनी बेकसूरी पर जोर दिया। महादेवय्याजी यह सोचकर चुप हो गये कि जब उसका बड़ा भाई ही मूर्खता बरत रहा है तो अब अगर अपनी बुद्धिमता दिखाऊंगा तो पटेल और गांव के लोग मझपर ही बिगड़ पड़ेंगे।

[3]

पटेल के आदेश पर गांव का चौकीदार और कारिंदा अप्पण्णय्या को ढूंढ़ने निकले। रात के अंधेरे में वह ज्यादा दूर नहीं जा पाया था। तालाब के दूसरी ओर जल-निकास के पास एक भूतहे मंडप में वह दुबक कर बैठा था। कोली मुद्दा अनुमान से खोजता हुआ मंडप के भीतर आया तो वह मिल गया। उसे बुलाया, लेकिन डर के मारे उसने आने से इंकार कर दिया। वह उसके पास पहुंच गया तो वह गिड़गिड़ाने लगा और उसके पैरों पर गिर पड़ा। लेकिन झुके हुए अप्पण्णय्या को मुद्दा ने उठाकर कंधे पर इस तरह डाल लिया जैसे कोई बकरे के चारों पैरों को पकड़कर कंधे पर लादकर ले जा रहा हो।

गांव वाले अभी भी किनारे पर ही थे। अब तक सारा कोल्हू जल गया था—केवल अंगारे दिखायी दे रहे थे। खेतों के गन्ने जलकर काले पड़ गये थे। आकाश में चांदनी न होते हुए भी धुंधला-धुंधला-सा दिखाई दे रहा था। अप्पण्णय्या को सबके सामने ला उतारा गया। वह डर के मारे कांप रहा था। उसके चोटी भाग को छोड़कर मुंडाये हुए सारे सिर पर पसीना छूट रहा था। बेटे का मुख देखकर गंगम्मा ने एक निःश्वास खींची। उसने पहले से ही निश्चय कर लिया था कि इसे शिवेगौड़ से पिटवाना चाहिए। लेकिन शिवेगौड़ का निर्णय कुछ और ही था।

उसने पूछा—"गन्ने के खेत में आग क्यों लगायी ?"

अप्पण्णय्या डर के मारे कुछ न बोला। दुबारा गरज के साथ पूछने पर वह बोला—"मैं नहीं जानता जी।"

"ओह! कहता है नहीं जानता! बीड़ी सुलगाते समय आग लगी कि नहीं! तुम्हीं ने आकर मुझसे कहा था न जब मैं नारियल के पेड़ पर था!" चेन्निगराय ने स्वप्रेरित हो सबूत दिया। लेकिन अप्पण्णय्या सिर झुकाये मौन खड़ा था। उसके पैर कांप रहे थे। पहनी हुई छोटी धोती के भीतर से ही यह कंपकंपी दिखायी दे रही थी। वहीं खड़े पंडा अय्याशास्त्रीजी बोले—"मौनं सम्मति सूचकं, अर्थात् यह स्पष्ट हो जाता है कि इसी ने आग लगायी। अब आगे बोलिये।"

जिनके खेत थे, वे बोलने लगे—"मेरे मीठे गन्नों से मिश्री-सा गुड़ बनता था। एक आने की दो भेली कहने पर भी गुरुवार के बाजार में लोग खरीद लेते थे। कम-से-कम तीन सौ रुपयों का मेरा नुकसान हो गया।"—गडरिया सण्णय्या बड़-बड़या। बनिया रेवण्णा शेट्टी बोला—"मेरा गुड़ बन चुका था। खेत में गन्ने के जो डांड रह गये थे, अगर वे बड़े होते तो चार सौ रुपये आते।" इसी तरह हर एक ने अपने-अपने नुकसान का अंदाजा लगाकर बताया।

पंडा अय्याशास्त्रीजी का खेत नहीं था। फिर भी वे अपना नुकसान बताते हुए बोले—"यह सच है कि मेरा कोई खेत नहीं है, लेकिन गुड़ बनाते समय गुड़वालों से गणपति पूजा के लिए प्रति कड़ाही एक-एक भेली मिलती। इसका हिसाब अगर किया जाये तो कम से कम पांच सौ भेली मिलतीं। इसका मतलब हुआ कि मेरा पचास रुपयों का नुकसान हो गया। इसके आलावा, गन्ने का रस, कड़ाही उतारते समय वहां जाने पर मिलने वाला गरम गुड़, आदि ···।"

"शास्त्रीजी, आपका ब्याज-युक्त हिसाब बहुत बढ़ गया है। जिनके गन्ने थे उनका हिसाब लगाना नो न्याय संगत है लेकिन गणपति-पूजा के निमित्त मिलने वाले गुड़ की भेली का हिसाब न लगाइये।" महादेवय्याजी बीच में ही बोल उठे—"गन्ना काटकर गुड़ चुकने के बाद भी रेवण्ण शेट्टी डांड का चार सौ रुपया बता रहे हैं जबकि उनका केवल डेढ़ एकड़ खेत है और इसकी पहली फसल में उन्हें सौ रुपये भी नहीं मिले थे। तो अब डांड के चार सौ रुपये कैसे मिलते? मैं डांड नहीं छोड़ूंगा। जमीन साफ कराकर अगली बार धान बोऊंगा। गन्ने से जमीन खराब हो जाती है।—ऐसा इन्होंने मुझसे खुद ही कहा था।"

न जाने और कितने लोग अपना-अपना नुकसान बढ़ा-चढ़ाकर बताते, लेकिन

महादेवय्याजी का सुझाव सुनकर लोगों को कुछ सोच-समझकर बोलना पड़ा।

महादेवय्याजी ने आगे कहा—"गणपति पूजा के लिए गुड़ की बहुत छोटी भेली दी जाती है। ऐसी पांच सौ भेलियों का पचास रुपया कौन देगा? इस हिसाब से रुपये की दस भेलियां बैठीं जबकि रुपये की चालीस मिलती हैं। तब इतनी छोटी भेली का डेढ़ आना भी कौन देगा?"

पंडा अय्ययाशास्त्रीजी की जबान एकदम बंद हो गयी। उठते हुए अंतिम निर्णय सुनाने की मुद्रा बनाते हुए महादेवय्याजी बोले—"नुकसान का हिसाब लगाओगे तो किसी को कुछ नहीं मिलेगा। लड़के ने जानबूझ कर तो यह किया नहीं। लेकिन हां, इतना, छोटा लड़का बीड़ी पीता है तो उसे सबक सिखाना चाहिए। इसके चार छड़ी लगाओ। नहीं तो मास्टरजी से कहकर रस्सी से बंधवा दो।"

"नहीं जी, मुझे मत बंधवाइये। आपके पैरों पड़ता हूं।" अप्पण्णय्या गिड़-गिड़ाने लगा। चेन्निगराय अकारण ही बोल पड़ा—"मेरा कोई कसूर नहीं, उसे ही बंधवाइये।"

लेकिन पटेल शिवेगौड़ ने कुछ और ही बात की—"महादेवय्याजी, आप ठहरे संन्यासी। न घरबार है और न बाल-बच्चे। लड़के को सबक सिखाना और बात है, लेकिन जो नुकसान हो गया है वह कौन भरेगा? मैं गांव का पटेल हूं, मुझे न्याय करना है। अब मेरा न्याय सुनिये। कुल मिलाकर इस गांव के लिये दंड के रूप में एक निश्चित रकम देनी पड़ेगी, और वह रकम उन लोगों में बांट दी जायेगी जिनका नुकसान हुआ है।"

"न्याय है, न्याय।" अनेक ने सिर हिलाकर कहा। रेवण्णशेट्टी और अन्या-शास्त्री ने जोर देकर कहा—"यह रही असली बाप की संतान के मुख से निकली बात।" इन्होंने महादेवय्याजी को चिढ़ाने के ख्याल से ही यह कहा था, लेकिन महादेवय्याजी ने इसे मन में नहीं लिया। अब गंगम्मा समझने लगी कि मामला किस ओर जा रहा है। उसने हाथ जोड़कर कहा—"मैं विधवा हूं, अपनी अज्ञानता से इन्होंने यह कर दिया है, ..." आगे कुछ बोलना ही चाहती थी कि बीच में ही चेन्निगराय बोल उठा—"मेरी कोई गलती नहीं मां, सिर्फ अप्पण्णय्या का नाम लो।" इसे अनसुनी कर गंगम्मा ने निवेदन किया—"उसकी गलती के लिए उसे सजा दे दीजिये, लेकिन दंड-वंड के लिए मेरे पास कुछ नहीं है।"

"मुझे सजा मत दीजिये—दंड ही दीजिये।" अप्पण्णय्या रोते हुए बोला।

गण्यमान व्यक्तियों में चर्चा शुरू हो गयी। सबने नुकसान का हिसाब लगाया। तय हुआ कि गंगम्मा दंड के रूप में सारा नहीं तो थोड़ा-थोड़ा बांटने के लिए दो हजार रुपये दे, और गणपति के लिए मिलनेवाले गुड़ से वंचित होने के कारण अय्याशास्त्री को दस रुपये; रेवण शेट्टी के डांड के लिए पच्चीस रुपये दिये जायें।

गंगम्मा गिड़गिड़ायी। उसने हाथ जोड़े लेकिन किसी ने ध्यान नहीं दिया। महादेवय्याजी भी यह सोचकर चुप रहे कि उसका पक्ष लेने से कोई लाभ नहीं। गंगम्मा ने जब कहा कि उसके पास एक दमड़ी भी नहीं है तो मामला सुलझाने के लिए पटेल शिवेगौड़ बोला—"तुम अपनी खेत-बाड़ी, घरबार, सब मेरे पास गिरवी रख दो तो मैं यह रकम दे देता हूं। मेरा पैसा लौटाकर अपनी जायदाद वापस ले लेना।"

गंगम्मा को कुछ सूझा नहीं। अय्याशास्त्री के चेहरे की ओर देखने लगी। लेकिन अय्याशास्त्री अपने हिस्से में आने वाले दस रुपये क्यों खोने लगे। गंगम्मा को इससे कोई लाभ नहीं हुआ। गांव का एक और पुरोहित है अण्णाजोइस। वे अय्याशास्त्री के संबंधी हैं—उनके दूर के बड़े भाई के बेटे। चाचा के निर्णय के विरुद्ध वे भी नहीं बोले। क्योंकि गांव के गण्यमान व्यक्तियों द्वारा दिया गया यह निर्णय था। अब इसे स्वीकार किये बिना गंगम्मा के पास और कोई चारा भी नहीं था, इसलिए यह मानना ही पड़ा। दंड से बचाने के लिए महादेवय्याजी ने कोशिश तो की, लेकिन उनकी कुछ चली नहीं। फिर भी उन्होंने गंगम्मा को एक सलाह दी—"जमीन गिरवी रखकर उधार मत लीजिये। आपके पास जो कुछ भी सोना-चांदी हो, वह बेच दीजिये। पूरा न पड़े तो घर का अनाज, नारियल आदि बेचकर पूरा कीजिये। कर्जा लेने से ब्याज बढ़ता रहेगा और ऐसे व्यवहार से आप पूरी तरह वाकिफ भी नहीं हैं।"

पटेल शिवेगौड़ बीच में ही बोल उठा—"उसके लिए अनुभव की क्या जरूरत है? मैं क्या उनसे ब्याज मांग रहा हूं? केवल सबूत के लिए लिखकर दे दें। शादी में और बुजुर्गों से मिले गहने, कपड़े-लत्ते एक बार बेच दिये तो फिर थोड़े ही मिलेंगे! संन्यासी को अगर सोना-चांदी की जरूरत नहीं पड़ती तो क्या गृहस्थ संसारियों को भी नहीं पड़ती? गंगम्माजी, संन्यासी महादेवय्याजी की बात मानेंगी या गांव के दस अनुभवी लोगों की?"

दस लोगों ने पटेल की बात को सही बताया। पटेल का साला, जो फिलहाल

पटवारी-कार्य कर रहा था, बोला—"जो सोना-चांदी शादी में मिला है, उसे पति के गुजर जाने के पश्चात् बेचने का अधिकार कानून किसी भी औरत को नहीं देता। जमीन गिरवी रखी जा सकती है।" अय्याशास्त्रीजी ने भी इसका अनुमोदन किया। इतने लोगों के अभिमत का विरोध करने लायक कानून का ज्ञान, महादेवय्याजी में नहीं था। हो भी, तो इन साझेदारों के बीच उनके तर्क या अभिमत को कौन घास डालेगा ? और इनकी बातों को गंगम्मा मान लेगी, इसका भी कोई विश्वास नहीं था इसलिए वे चुप रहे।

अब न्याय-पालन में देरी नहीं होनी चाहिए। तुरंत दो बैलगाड़ी तैयार करायीं। दोनों बेटों के साथ गंगम्मा को लेकर पटेल और अन्य कुछ गण्यमान तिपटूर के लिए रवाना हो गये। सब-रजिस्ट्रार के समक्ष शिवेगौड़ ने दो हजार रुपये दे दिये। गंगम्मा के परिवार की कठिनाइयों को कारण बताकर उसकी सारी जायदाद गिरवी लिखा ली। पटवारी शिवलिंग गौड़ ने कागजात तैयार कराये। इसके लिए उसने कम-से-कम पच्चीस रुपये मेहनताने के मांगे तो गंगम्मा ने वचन दिया कि इस साल कीमत बढ़ते ही लोबिया बेचकर पैसे दे दिये जायेंगे। पटेल शिवेगौड़ ने अपने गन्ने के खेत के नुकसान के चार सौ रुपये काटकर, शेष रुपये दूसरों में बांट दिये।

विधवा गंगम्मा तिपटूर के होटलों में कुछ भी नहीं खा सकती थी। तलने से पहले पानी डाल देने से पूड़ी भी नहीं खा सकती थी। उसने तालाब में स्नान किया और भीगी साड़ी में ही दो मुट्ठी गरम चने, गुड़ के साथ खा लिये और गाड़ी में बैठ गयी। बेटों को उसने छह आने देकर ब्राह्मणों के साथ चौबीस दोसे और चटनी दिला दी।

गांव लौटने के पश्चात् संकोच के मारे गंगम्मा चार दिन तक कहीं नहीं गयी। तीन मील दूर सण्णोनहळ्ळी के कुम्हार से सोलह रुपये के पांच सौ खपरैल खरीदे और छत ठीक करायी।

आठ दिनों के बाद, एक दिन उसने मंदिर के महादेवय्याजी को बुलाया। सुख-दुख की बातें कीं। भविष्य में क्या किया जाय, इस बारे में पूछने पर वे बोले—"अप्पण्णय्या को मास्टरजी के पास भेज दीजिये। थोड़ी विद्या मिलेगी तो वह ठीक हो जायेगा। चेन्निगराय को होन्नवळ्ळी के पटवारी के पास भेज दीजिये। आप होन्नवळ्ळी जाइये और मास्टरजी से कहिये कि इसे होशियार बना दीजिए ताकि

वह अपने परंपरागत पटवारी-कार्य को संभाल सके जो कि अभी पराये के हाथ में है। अब जाइये, देरी करना उचित नहीं। वह पंद्रह का हो चुका है न ?"

गंगम्मा मान गयी। हिसाब सीखने के लिए चेन्निगराय को होन्नवळ्ळी के पटवारी सीतारमय्या के पास भिजवाने की बात पटेल शिवेगौड़ के कानों पर पड़ी। वह गंगम्मा के पास आकर बोला, "उतनी दूर क्यों भेज रही हैं उसे ? हमारे शिवलिंग के पास भेज दीजिये। घर के पास ही रहकर उसका सीखना उचित नहीं होगा क्या ?"

लेकिन गंगम्मा का दृढ़ विश्वास था कि होन्नवळ्ळी के सीतारमय्याजी के अधीन रहकर सीखे बिना पूरी विद्या नहीं आ पायेगी। दूसरे लोग पटवारी-कार्य कर सकते हैं लेकिन इसके लिए गुरु की योग्यता आसपास के गांवों में केवल सीतारमय्याजी के ही पास है। जावगळ्ळु में हळेवीडु के वेंकटेशय्याजी में ऐसी ही योग्यता है लेकिन वे इस क्षेत्र के नहीं हैं, और हर एक क्षेत्र की विशेषता उस क्षेत्र के लोग ही जान सकते हैं।

गंगम्मा कमानीदार बैलगाड़ी तैयार करा, दोनों बेटों को साथ ले होन्नवळ्ळी के लिए निकल पड़ी। रवाना होने से दो दिन पहले चेन्निगराय ने रुद्रण्णा नाई से बाल मुंडवाकर, कपाल पर चंदन लगाया। दूसरे दिन तैल स्नान हुआ। 'कोड्बले' और चावल के आटे के लड्डुओं की पोटली तैयार की। कोट, टोपी पहनकर इनके गाड़ी में चढ़ते समय महादेवय्याजी बोले—"बड़ी जगह जा रहे हो, अब तुम्हारे मुंह से भूलकर भी बुरी बात नहीं निकलनी चाहिए। अब बुद्धिमान बनकर लौटना !

होनवळ्ळी के सीतारमय्याजी स्वर्गीय रामण्णाजी के परिचित थे। गंगम्मा का आग्रह स्वीकार कर चेन्निगराय को अपने घर पर हिसाब सिखाना मान गये। मां और बड़े भाई लौटने के लिए गाड़ी में चढ़े, तो चेन्निगराय खड़ा रोता रहा। अंत में बोल उठा, "मां, किसी के हाथ एक और बार कोड्बले और लड्डु भिजवा दो।"

गांव लौटने के बाद अप्पण्णय्या को चेन्नकेशवय्या की पाठशाला में भर्ती करा दिया। उसे चटशाला में भेजने के लिए रोज जेब भर चना, गुड़, और खोपरा देना पड़ता था।

दूसरा अध्याय

चेन्निगराय ने यहां तीन वर्ष तक अध्ययन किया। अब वह सरलता से बायें हाथ की उंगलियों से रूलर सरकाता और दायें हाथ में कलम लेकर रेखाएं खींचता। हिसाब-किताब में बायीं ओर बिना चूक किये लिखने के आलावा, वह यह भी जान गया था कि दायीं ओर का हिसाब किस तरह लिखा जाना चाहिए। उसकी पूरी शिक्षा हुई या नहीं, यह कहना कठिन था। उसके गुरु सीतारमय्याजी कहते—"तुमने रुपये में चार आना भी नहीं सीखा है।" चेन्निगराय उनके सामने जवाब न देते हुए भी कहता कि उसे इस बात पर विश्वास नहीं है। "वे सोचते हैं कि उनसे हिसाब सीखकर मैं यहीं पड़ा रहूं।"

वह साल में दो-तीन बार गांव हो आता— पैदल ही। जब भी आता तो आते ही मां से पूछता—"अब कितने दिन वहां और रहूंगा ? अब मैं यहीं आकर पटवारी का चार्ज ले लेता हूं।"

"हिसाब ठीक से सीख लिया क्या ?"

"सीखा क्यों नहीं ? चाहो तो पूछ लो। पहला नंबर व्यवहार-खाता, दूसरा बंजर खाता, तीसरा मर्दमशुमारी, चौथा खाता, पांचवां भाड़ा, छठा अंतर, सातवां तकार खाता, आठवां इनाम रजिस्टर, नौवां जमाबंदी गोशवारा, दसवां खतौनी, ग्यारहवां रसीद खाता और बारहवां रायशुमारी। ये हैं पटवारी काम के बारह किस्म के खाते। इसके बाद प्रभव, विभव आदि साठ संवत्सरों के नाम कह गया।

अब बेटे का विद्वान होने का विश्वास मां को हो गया। तो बेटा बोल उठा—"तुम चुपचाप बैठी रहोगी या मेरी शादी-वादी कराओगी ?"

"क्यों नहीं कराऊंगी ? पहले पटवारी-काम हाथ में ले लो।"

"वह तो ले ही लूंगा। अब मैं अट्ठारह का जो हो गया हूं ! बालिग बन गया

हूं। लोग सोलह साल की उम्र में ही लड़कों की शादी कर देते हैं। हम न करें तो लोग क्या कहेंगे ?"

चेन्निगराय को कन्या देने के लिए कई लोग आ चुके थे। लेकिन गंगम्मा ने ध्यान नहीं दिया था। अब जब बेटा ही पूछ रहा है तो करा ही देनी चाहिये, यह सोचकर उसने महादेवय्याजी से राय ली। और एक-दो वर्ष सीखने की सलाह देकर वे बोले कि जब वह पटवारी-काम संभाल लेगा तब शादी कर देना।

यह सुनकर चेन्निगराय को क्रोध आ गया। वह बोल पड़ा—"ओ हो, अभी दो साल और प्रतीक्षा करने के लिए कहते हैं। आप क्या जानते हैं? चुप रहिये जी।" उसने पहले कभी भी 'आप क्या जानते हैं, चुप रहिये' ऐसा नहीं कहा था। इस लिए वे चुप हो गये।

चेन्निगराय फिर होन्नवळ्ळी नहीं गया। वह एक दिन शिवलिंगे गौड़ के पास गया और अपना परंपरागत पटवारी-काम का भार मांगने लगा। शिवलिंगे गौड़ ने जवाब दिया कि दे देंगे, ऊपर से हुक्म आने दो। चेन्निगराय समझ नहीं पा रहा था। कि अब क्या करना चाहिए। इतने में शादी की बात कान में पड़ी तो उसका ध्यान उस से हट गया।

एक दिन उसके घर के सामने एक सफेद घोड़ा आकर खड़ा हो गया। चमकती हुई ज़ीन और लगाम थी। उसपर से सफेद निकर, सफेद कोट और पैर में मोजे-जूते पहने हुए एक बुजुर्ग मोटा आदमी उतरा। सफेद घोड़े और आदमी को देखकर कोई भी कह सकता था कि वह डिप्टी कमिश्नर होगा। गंगम्मा ने भी यही समझकर अंदर आकर चेन्निगराय को सूचना दी। वह बाहर आया और बड़े अदब से सिर नवाकर हाथ जोड़ा। फिर तुतलाते हुए बोला—"महानुभाव, मुझ पर कृपा करें।" वह यह समझ रहा था कि पटवारी-कार्य की जिम्मेदारी उसे दिलाने के लिए ही डिप्टी कमिश्नर आये हैं।

"शिवलिंगे गौड़ को बुला लाऊं?" उसने पूछा।

"किसलिए?"

"अभी पटवारी-काम उसी के पास है। महानुभाव, उससे कार्यभार मुझे दिलवाने की कृपा करें। मैं हूं स्थायी पटवारी रामण्णाजी का बड़ा बेटा चेन्निगराय।"

"दिलवा देंगे, अंदर चलो।"

अंदर आ गये। घर में कुर्सी नहीं थी। सारे गांव में किसी के यहां कुर्सी नहीं थी, अगर अण्णाजोइसजी के घर की एक कुर्सी छोड़ दें। आगंतुक पाटी पर ही बैठ गया। चेन्निगराय ने गंगोदक लाकर उनके सामने रखा तो उन्होंने कहा—"हमें पहले ही पानी नहीं पीना चहिए।" जब ये दोनों समझ नहीं पाये तो उन्होंने कहना शुरू किया—"नागलापुर का नाम सुना होगा आपने ? हम वहां के स्थानीय पुरोहित हैं। मुझे कंठीजोइस कहते हैं। मेरी एक कन्या है नंजम्मा। रेवती नक्षत्र, द्वितीय पाद में जन्मी है। बारहवां चल रहा है। जन्मकुंडली लाया हूं। अपने बेटे की जन्मकुंडली मुझे दीजिये।"

गंगम्मा अब समझी कि ये डिप्टी कमिश्नर नहीं, नागलापुर के कंठीजोइस हैं, जो उसके बेटे को कन्या देने के लिए आये हैं। वह भी बड़े घोड़े पर डिप्टी कमिश्नर की तरह पहने हुए कपड़ों में। वह बोली—"पटवारी-पद का अधिकार हाथ में आने के बाद ही मैं इसकी शादी करूंगी।"

"तुम क्या जानो मां, चुप रहो। उन्होंने पहले ही कहा है कि चार्ज दिला देंगे।" चेन्निगराय ने मां को चुप करा दिया।

"मैं जानता हूं आपका अधिकार आपको दिलाने में कितनी देर लगेगी ! मैं अमलदार से कहूंगा। लेकिन पहले शादी हो जाने दो।"

गंगम्मा ने बेटे की जन्मकुंडली दे दी। कंठीजोइसजी स्वयं ज्योतिषी थे। जैसे ही कुंडली मिली, हिसाब लगाकर बोले—"ठीक बैठती है। अब आगे की बात कीजिये।"

[2]

नागलापुर, रामसंद्र गांव से बारह मील दूर पश्चिम में है। ऐसा एक भी नहीं मिलेगा जिसने कंठीजोइसजी की कीर्ति न सुनी हो। रामसंद्र तुमकूर जिले के तिपटूर तालुके में है; जबकि नागलापुर हासन जिले के चन्नरायपट्टण तालुके में आता है। यही कारण है कि रामसंद्र वालों के लिए कंठीजोइसजी इतने परिचित नहीं लेकिन चन्नरायपट्टण तालुका, शांति ग्राम, हासन, कौशिका आदि स्थानों में ऐसा कोई नहीं मिलेगा जिसने उनके बारे में न सुना हो।

कंठीजोइसजी ऊंचे कद, विशाल ललाट और तीक्ष्ण दृष्टि के व्यक्ति थे।

सोलहवें साल में उनकी शादी हुई और बीसवें में पत्नी घर आयी। दो बरस बाद एक लड़का हुआ। फिर दो साल बाद एक बच्चा पैदा होकर मर गया। दो बच्चे और हुए, किंतु वे भी न रहे। अंतिम प्रसूति में एक लड़की हुई, लेकिन पत्नी चल बसी। इस बच्ची को कंठीजोइसजी की मां ने पाला-पोसा। जोइसजी का दूसरा ब्याह नहीं हुआ। अब उनके दो बच्चे—बड़ा लड़का कल्लेश पुलिस बनकर श्रवण-बेळगुळ में नौकरी करने लगा और लड़की नंजम्मा की शादी अब चेन्निगराय के साथ होने जा रही थी।

कंठीजोइसजी यों ही प्रसिद्ध नहीं हुए थे। प्रसिद्धि के लिए सिद्धि चाहिए ही न! उनकी भीम-सी काया जो एक बार देख लेता उसे कभी भूल न पाता। और फिर जब नाटक, यक्षगान (कर्नाटक का विशिष्ट कला-नृत्य नाटक) में अदा किये गये उनके पार्ट को देखने के बाद तो कोई भूल ही नहीं सकता उन्हें। कालिदास के नाटक में राजा भोज का पार्ट उनसे अच्छा और कोई नहीं कर पाता था। महाभारत के पात्रों में दुर्योधन मानो उन्हीं के लिए था। यक्षगान के वीरवेश नृत्य में जब तक दो पहिये नहीं तोड़ते, तब तक वे नृत्य बंद नहीं करते। एक ही सांस से ऊंचे स्वरों में सराग कंदपद्य (छंद विशेष) गाते। हारमोनियम के साथ, तबला बजाना भी जानते थे। मंगल अमंगल—दोनों तरह के पुरोहिती कर्म कराने के साथ-साथ ज्योतिषी, जादू-टोना, दवा-दारू के भी ज्ञाता थे। अमलदार से अंग्रेजी में बात करने की हिम्मत और मुसलमानों से बातचीत में उर्दू प्रयोग का ज्ञान भी उन्हें था।

ऐसी हिम्मत ने ही उन्हें प्रसिद्धि हासिल करायी। लोगों का कहना था कि पहले कोर्ट केसों में भी जीते हुए हैं। दो-एक हत्या कराकर भी छूट गये। लेकिन यह सच है या झूठ—कोई नहीं जानता। जोइसजी इसे झूठ बताते हैं। किसी से झगड़ते समय 'खून कर दूंगा' जैसे वाक्य उनके मुंह से जिस आवेग के साथ निकलते, वह देखकर कोई डर जाये तो आश्चर्य नहीं। अंधकार से तनिक भी न डर, निर्भयतापूर्वक रात में घूमते। कमर में कटार लटकाकर निकलते, तो अकेले ही सूर्योदय से पहले टेढ़े-मेढ़े रास्तों से होकर चौबीस मील दूर हासन में पहुंच जाते। वह दिन में बहुत ही कम चलते। कोळ्ळिदेव्व (पिशाच) और जटाधारी मुनियों का साहस से मुकाबला कर भगा देने की क्षमता रखने वाले व्यक्ति की कीर्ति फैलने में आश्चर्य ही क्या?

चेन्निगराय की शादी में रामसंद्र के सभी ब्राह्मण और पटवारी—कार्य सीमा में आने वाले कुरूबरहळ्ळि का पटेल गुंडेगौड़ और अन्य गण्यमान व्यक्ति भी आये थे। दस बैलगाड़ियों में वर-पक्ष के बाराती गये थे। नागलापुर के तालाब के चढ़ाने के पास वधू पक्ष वालों ने तुरही वाद्य के साथ उनकी मिलनी की। वर को लिवा ले जाने के लिए कंठीजोइसजी सफेद घोड़ा लेकर आये। उस पर चढ़ने में चेन्निगराय को डर लगने लगा। लेकिन न चढ़े तो सारे रामसंद्र का अपमान होगा, यह भी सोच रहा था। जब गंगम्मा ने 'थू: नामर्द' कह कर धिक्कारा तो वह झट घोड़े पर चढ़ गया। वधू का भाई पुलिस कल्लेश उसकी लगाम थामे चल रहा था जिससे कि घोड़ा एक-से कदम रखते हुए चले।

वर पक्ष के बारातियों को कंठीजोइसजी के व्यक्तित्व का आभास हुआ। बड़े रईस नहीं थे, फिर भी धूमधाम से ब्याह किया। हासन से एक वकील भी शादी में आया था। अय्याशास्त्रीजी और अण्णाजोइसजी दोनों वर पक्ष के पुरोहित होकर आये थे। अय्याशास्त्रीजी ने प्रातिमासिक श्राद्ध, पुण्या:, गौरी-गणेश व्रत के अलावा और कोई दूसरी पुरोहिती विधियां नहीं सीखी थीं। अण्णाजोइसजी उम्र में छोटे होते हुए भी सिघघट्ट के सूरण्णजोइसजी से नियमित अध्ययन कर इस क्षेत्र में प्रसिद्ध हो गये थे। अब तक कई शादी-ब्याह, यज्ञोपवीत करा चुके थे। वह भी धाराप्रवाह मंत्रोच्चार करते हुए। वर पक्ष के कक्ष में होम कराते समय अप्पणाजोइसजी जोर से उच्चार रहे थे—"ओ३म् भूर:ग्नये प्राणाय स्वाहा। इदमग्निये प्राणाय स्वाहा…।"

वर पक्ष का कक्ष वधू के घर के बगल में ही था इसलिए मंत्रोच्चार वधू के घर वालों को भी सुनाई दे रहा था। जैसे ही वह कान में पड़ा, तुरंत कंठीजोइसजी वहां आकर बोले—"जोइसजी, अग्नि को दी जा रही आहूति का मंत्रोच्चार पुन: करिये।"

"क्यों?"

"सुनना है, करिये।"

"वेदमंत्र दोबारा नहीं उच्चारना चाहिए।" कहकर अय्याशास्त्री जी की ओर देखने लगे।

"क्यों नहीं बोलना चाहिए? आप गलत बोल सकते हैं!"

"मैं गलत बोल रहा हूं? सिघघट्ट के सूरण्णजोइसजी का पाठ गलत है। बोलिये

चाचाजी, मैं यह शादी कराऊं या उठ जाऊं ?" कह कर जोइसजी खड़े हो गये।

"आपके गुरु के बारे में मुझे मालूम है। वे शुद्ध संस्कृत नहीं जानते। 'भूरग्निये' गलत है—'भूरग्नये' कहना चाहिए। आपका व्याकरण अशुद्ध है। ग्रंथ निकालकर दिखाऊं क्या ? वेदमंत्र गलत उच्चारने से सिर हजार हिस्सों में चिर जायगा।"

अण्णाजोइसजी चुप हो गये। कंठीजोइसजी के मंत्र-ज्ञान से बाराती भी चकित रह गये। बाद में पाणिग्रहण के समय कन्यादान मंत्र भी उन्होंने प्रवाहपूर्ण उच्चारा और सभी ने ध्यानमग्न हो सुना। व्याह की रस्में पूरी होने के बाद बारात विदा होने लगी तो अण्णाजोइसजी, कंठीजोइसजी के पास जाकर बोले—"मेरा केवल पाठ हुआ है। व्याकरण में मैं पीछे रहा हूं। अध्ययन पूरा होने से पहले ही पिता जी गुजर गये। इससे यह अधरा ही रह गया। लेकिन इस अधूरे को मैंने पुस्तक पढ़कर ही सीखा है। गलती हुई हो, तो क्षमा करेंगे।"

शादी व्यवस्थित ढंग से हो गयी। वधू बाजूबंद, सेवती, कंगन, चांदी का कंदोरा, और पैर में पाजेब पहने हुए थी। वर पक्ष शास्त्रानुसार मंगलसूत्र, झुमका, नथ ले गये थे। वधू अपने पिता के ही समान ऊंची थी। ललाट चौड़ा था और आंखें बड़ी-बड़ी। वह पूरी सुलक्षणा थी। रामसंद्र वाले बोल उठे—"ऐसी वधू पाने के लिए हमारे चेन्निगराय ने कोई बड़ा पुण्य किया होगा। गंगम्मा यह सह न सकी। चेन्निगराय पत्तल में परोसी सारी सामग्री बिना जूठन छोड़े खा गया, तो नागलापुर वालों ने और बाद में रामसंद्र वालों ने भी नुक्ता-चीनी की कि उसे इस तरह नहीं खाना चाहिए था। लेकिन उसने अपने किये को उचित ठहराते हुए कहा कि इतने अच्छे भोज को जूठे में कैसे फेंका जा सकता है ?

[3]

चेन्निगराय के कई बार कहने के बावजूद शिवलिंगे गौड़ ने उसे पटवारी-कार्य नहीं सौंपा। पहले तो 'देंगे-देंगे' कहकर टालता रहा। लेकिन चेन्निगराय ने कुछ दिन तक और इंतजारी करने के बाद पुनः पूछा तो तब भी वही उत्तर मिला। लेकिन एक दिन वह बोला—"वर्षांत का हिसाब अदा करना है, उसके बाद देखेंगे।" वर्षांत का मतलब है अप्रैल महीने का अंत। अर्थात अभी पांच महीने बाकी हैं। गौड़ ने बात बनाते हुए कहा—"साल का हिसाब अदा किये बिना तुम क्या समझ

पाओगे !" उसने उसकी यह उक्ति मान ली।

घर में और ज्यादा काम नहीं था। पत्नी अभी छोटी होने के कारण गौना नहीं हुआ था। वह मायके में ही थी। अप्पण्णय्या गांव की चटशाला में दो साल जाता रहा, लेकिन चटशाल के मास्टर जी ने यह समझकर उस पर ध्यान ही नहीं दिया कि उसे पूर्व कर्म का पुण्य अर्जित न कर पाने के कारण विद्या नहीं आ सकती। अब वह बगीचे के बाड़े में मधुमक्खी के छत्तों को तोड़ता, पेड़ों से पानी वाले नारियल तोड़ता और पीकर समय बिताता। भावी पटवारी चेन्निगराय सुबह उठकर शौच आदि से निवृत होकर स्नान करता। फिर माथे पर भभूति इस तरह लगाता जैसे सिर भारी होने पर पट्टी लगायी जाती है। गीली लंगोट बांधे ही संध्या कर के जनेऊ की ब्रह्मगांठ हाथ में ले इतनी जोर से 'ओम् तत्सत् त् त्…ओम तत्सत त् त् त्…' एक हजार आठ गायत्री जपता कि सभी को सुनायी दे।

अब साल के अत में उसने शिवलिंगे गौड़ से कार्यभार सौंपने को कहा तो शिवलिंगे गौड़ ने उत्तर दिया कि ऊपर के हुक्म बिना कार्यभार नहीं दे सकता।

"मेरा मुझे देने में ऊपर के हुकुम की बात क्यों?"

"हुं, तेरे बाप का कहकर नहीं लिखा गया है। मुझे दस साल का अनुभव है। जाओ, मुझसे छुड़ा लो।"

यह सुनकर चेन्निगराय को रूलाई-सी आ गयी। "अरे तेरी मां…"गाली उसकी जबान तक आयी, लेकिन साहस के अभाव में चुप रह गया। फिर शिवलिंगे गौड़ के बहनोई पटेल शिवेगौड़ के पास जाकर पूछा तो उसने कहा—"अरे भाई, तुमसे पटवारीगिरी संभाली जायेगी क्या? इस जिम्मेदारी को क्या मजाक समझते हो?"

चेन्निगराय समझ नहीं पाया कि आगे क्या कहे। और फिर पटेल के समक्ष बोलने की हिम्मत हो भी कैसी सकती थी! आखिर बचपन में उसे डराने के लिए गंगम्मा इसी पटेल का नाम जो लेती थी! वह सीधा मां के पास गया और शिवलिंगे और पटेल की कही बातें उसने मां को बता दीं। गंगम्मा क्या चुप रहने वाली थी? पटेल के द्वार के पास की गली में खड़े होकर जोरों से पूछने लगी, "शिवेगौड़, किस रांड का मैला खिलाने का इरादा है? तेरी औरत की चूड़ियां टूट जायेंगी, तेरा घर मिट्टी में मिल जायेगा, समझ ले।"

यह सुनकर पटेल की पत्नी गौरम्मा सहम गयी। कहीं इस विधवा ब्राह्मणी का

शाप न लग जाय, इस भय से पति से बोली—"उनकी अर्थी की लकड़ी लेकर हमें क्या करना है ! भैया शिवलिंगे से उसे फेंक देने के लिए कह दीजिये।"

पटेल स्वयं बाहर निकलकर बोला—"गंगम्मा, ऐसी बुरी बातें क्यों कहती हो ? आओ बैठो, बात करें।"

गौरम्मा ने दालान में बैठने के लिए पाटा लाकर रखा। गंगम्मा उस पर बैठ गयी। पटेल भी एक तकिया मंगवाकर उसके सहारे बैठ गया। भावी पटवारी चेन्निगराय बाहर छत के नीचे खड़ा था। पटेल के बुलाने पर वह भी आ गया। वर्तमान पटवारी शिवलिंगे दालान में पैर पर पैर डालकर बैठ गया। पटेल ने कहा—"सिवा, इस मांजी को समझाओ कि तुम चार्ज क्यों नहीं सौंपना चाहते हो ?"

शिवलिंगे ने गंगम्मा से पूछा—"आपके बेटे की क्या उम्र है ?"

"उन्नीस चल रही है।"

"यह आपका कहना है। सरकारी रिकार्ड अभी सोलह बता रहा है। यह अब भी नाबालिग है। यह सरकारी नौकरी नाबालिग को कैसे सौंपी जा सकती है ?"

"जब यह पैदा हुआ तो मेरा घरवाला ही पटवारी था। उन्होंने क्या उम्र झूठी लिखी होगी ? ठीक तरह से देखो।"

"जन्म-मरण रजिस्टर हमारे पास नहीं रहता। यह देखने के लिए सरकार को फीस देनी पड़ती है। पचास रुपये दीजिये तो तिपटूर ले जाकर दिखा लाऊं।"

जन्म-मरण रजिस्टर पटवारी के पास रहता है या नहीं, और देखने के लिए फीस देनी पड़ती है या नहीं, और अगर देनी ही पड़ती हो तो पचास ही देनी पड़ेगी, आदि बातें गंगम्मा नहीं जानती थी। "क्यों रे चेन्निग, इस बारे में तू क्या कहता है ? तूने भी तो सीखा है न ?" छत की किनार के नीचे खड़े बेटे की ओर मुखातिब होकर पूछा तो वह मुंह बनाकर सोचने लगा। "क्या कह रहा है ?" गंगम्मा ने दुबारा पूछा तो उसने उत्तर दिया—"मैं नहीं जानता, मां।"

"तूने तो कहा था कि मैं सब सीख आया हूं !"

शिवलिंगे बोल उठा—"मैंने तो सुना था कि तुम होन्नवळ्ळी वालों के पास से सीख कर आये हो। लेकिन उस बुद्धू को इस विषय की जानकारी होती तो वह तुम्हें सिखाता ! खैर, अब इसे चार साल हमारे यहां कचरे की टोकरी ढोने दो तब मैं सिखाऊंगा !"

पटेल शिवेगौड़ बोला—"जाने दो। गंगम्मा, पचास रुपये ला दो इसे। इसकी उम्र की जानकारी ऊपर से लिखाकर मंगवायेंगे।"

"पैसे क्यों ला दूं, शिवेगौड़ा ?"

"वह सरकार है ! मजाक की बात थोड़े ही है !"

गंगम्मा के लिए और कोई मार्ग न रहा। पचास रुपये दिये बिना बेटे की उम्र का रिकार्ड नहीं मिलेगा। और उसके बिना पटवारीगिरी हाथ नहीं लगेगी। लेकिन घर में इतना पैसा नहीं। घर आकर पेटी ढूंढ़ी। तीस विक्टोरिया मोहरें मिलीं। इन मोहरों के साथ छह पल्ली मडुआ मिलाकर शिवलिंगे को सौंपकर बोली—"जल्दी से इसका रिकार्ड मंगा लो। मैं देखना चाहती हूं कि हमारे घर की पटवारी-गिरी इसके हाथ आ जाये।"

तीन महीने बीत गये। लेकिन कुछ नहीं हुआ। गंगम्मा ने जाकर पूछा तो शिव-लिंगे बोला—"सरकारी रिकार्ड है, जल्दी थोड़े ही मिलेगा ! पत्र पहले डिप्टी कमिश्नर के पास जायेगा, फिर वहां से दीवान मिर्जा साहेब के पास, और उसके बाद लौटेगा। धीरज धरो, आ जायेगा। गोचड़ी चिपकी गाय की तरह क्यों झट-पटा रही हो ! सब्र से काम लो।"

गंगम्मा निरूपाय हो घर लौटकर बेटे से बोली—"चिन्ना लगता है यह काम नहीं लौटायेगा। तू ही तिपटूर जा और अमलदार के पैर पड़कर शिकायत रख।"

अमलदार से अकेले मिलने में चेन्निगराय को डर लगने लगा और सोचने लगा कि 'अगर वे मुझ पर बिगड़ पड़े तो क्या करूंगा। उन्होंने अगर मेरी असली उम्र पूछी तो क्या बोलूंगा; शायद मेरी उम्र सोलह ही हो; मेरी जन्मकुंडली में ही गलती हो !' "मां, शायद मैं सोलह का ही होऊं। दो साल और ठहर जायें।"

"अरे रांड की औलाद ! तुझे जन्म देने वाली मैं अभी जिंदा हूं। मैं नहीं जानती क्या तेरी उम्र ? उन्नीस पूरी होने जा रही है। जाकर अमलदार साहब के पैर पड़।" गंगम्मा ने गुस्से से कहा।

"मुझे डर लगता है, मां।"

"तुझे शरम नहीं आती, नामर्द कहीं का। मैं भी साथ चलती हूं, चल।" गंगम्मा ने ऐसा कह जरूर दिया लेकिन फिर यह सोचकर चुप रह गयी कि औरतों को सरकारी काम में दखल नहीं देनी चाहिए। कहते हैं कि औरत द्वारा रिकार्ड छूने की भी खबर सरकार को मिल जाय तो पुलिस पकड़ लेती है। और अगर

अमलदार के सामने खड़ी हो जाऊं तो वे चुप थोड़े ही रहेंगे !

अब कोई उपाय नहीं था। इसी तरह महीना बीत गया। तो गंगम्मा बोली— "कुछ भी होने दो। नागलापुर जाकर अपने ससुर से पूछो। वे कुछ करा देंगे।"

[4]

चेन्निगराय की शादी हुए डेढ़ साल हो गया था। लेकिन वह एक बार भी ससुराल नहीं गया था। जाने की इच्छा नहीं थी, ऐसी बात नहीं, लेकिन किसी ने आकर उसे बुलाया भी तो नहीं था। वह स्वयं भी नहीं गया था। पता नहीं उसे शरम थी या हिचकिचाहट। जब मां ने ही पटवारीगिरी के लिए वहां जाने के लिए कहा, तो उसे खुशी हुई। एक दिन वह सुबह उठा। स्नान करके, तीन आचमन में ही संध्या समाप्त की। लोबिया की रोटी, नारियल चटनी और दही खाया। रास्ते के लिए तीन रोटी और चटनी बंधवा ली। शादी का कोट, किनारीदार धोती पहनी। चप्पल पहनकर चलने की आदत न होने से, खाली पैर ही नागलापुर की बारह मील की यात्रा के लिए पश्चिमाभिमुख होकर निकल पड़ा।

रामसंद्र से तीन मील की दूरी पर एक टीला चढ़कर उतरने पर चौळा टीला पड़ता है। काले पत्थरों वाले इस टीले से उतरने पर बड़ा रेतीला तालाब है जिसके दोनों ओर और बीच में भी ढाक के पौधे ही पौधे हैं। नागलापुर के मार्ग पर ही तालाब के पास के एक रेतीले कुएं को देखकर चेन्निगराय बैठ गया। रोटी-चटनी खायी और छह अंजलि-भर पानी पीकर फिर चलने लगा। चोळा टीला दाहिनी ओर छोड़कर, चढ़ाई से उतरने पर लाल मिट्टी का तालाब है और उसके उस पार कटिगेहळ्ळी। इससे थोड़ा आगे बढ़ने पर हूबिनहळ्ळी है जो नागलापुर क्षेत्र में ही आता है। इस गांव से एक मील की दूरी पर नागलापुर का बड़ा तालाब दिखाई देता है जिसके पास पहुंचने के लिए केतकी के बीच की पगडंडी, कनेर के तालाबों से होते हुए और दो मील चलना पड़ता है। तालाब के किनारे-किनारे मेड़ पर एक मील चलकर गांव की सीमा पार करने के बाद बाजार पड़ता है और नागलापुर पहुंचते हैं।

गांव के तालाब की इस ओर की सीमा पास आयी तो उसे कुछ हिचकिचाहट महसूस हुई। अगर मुझे किसी ने पहचान लिया तो ? पूछा कि अब क्यों आये हो

तो ? ससुरजी ने ऐसा प्रश्न कर लिया तो क्या कहूंगा ? न जाने वह कैसी होगी ? वह मुझसे बात करेगी भी या नहीं ? बोलेगी नहीं तो उस हरामजादी को सबक सिखाऊंगा ! न जाने वह कब हमारे गांव आयेगी ? कहते हैं कि अब तेरह की हो गयी है । न जाने अब और कितने दिनों में स्त्री बनेगी !' यही सब सोचता हुआ वह बागर पर चलते हुए गांव के अंतिम छोर तक आ पहुंचा । गांव में प्रवेश करते समय फिर हिचकिचाहट हुई । किस रास्ते से बारात गयी थी, उसी से वह जा रहा था । 'किसी ने पहचान लिया तो ··· ?'

सटे हुए घरों के इस गांव में प्रवेश करते ही एकमात्र मार्ग मिलता है—पटवारी मार्ग । गांव का पटवारी श्यामण्णाजी बड़े ही रौब से अपना अधिकार चलाते हैं । इसीलिए इस मार्ग का नाम यही है । यहीं से आगे बढ़ने पर एक टेढ़ मोड़ के अंत में चेन्निगराय के ससुर कंठीजोइसजी का घर है जो दूसरों से बड़ा है ।

उसने अपने धड़कते दिल पर नियंत्रण किया और अधखुले द्वार को ढकेल कर भीतर घुसा । वहां किसी प्रकार की आवाज तक सुनाई नहीं दी । एक क्षण रुककर देखा और फिर हिम्मत कर जोर से आवाज दी—"कोई है?"

रसोईघर से बूढ़ी ने पूछा—"कौन है भाई ? काळेगौड़ हैं क्या ?"

"नहीं, मैं रामसंद्र से आया हूं, स्वर्गीय रामण्णा जी का बेटा चेन्निगराय ।"

"आओ बाबा, आओ ··· ।" कहकर बूढ़ी तेजी से बाहर आयी । एक चादर बिछा-कर बैठने को कहकर भीतर से तांबे के एक बड़े पंचपात्र में गंगोदक लाकर सामने रख दिया और गांव की कुशल-क्षेम पूछने लगी । इसी समय चेन्निगराय की पत्नी बगीचे से आयी और घर के धुंधले प्रकाश में हरी साड़ी और चोली को पास ही खड़ी हो इस अंदाज से झाड़ने लगी मानो यहां कोई दूसरा न हो ।

"नंजा, तेरा पति आया है। वहां बैठा है। अंधेरे में दिखाई नहीं दिया क्या ?"—बस, इतना कहना था कि वह झाड़ रही साड़ी में पैर उलझकर गिर पड़ने की भी परवाह न किये बगीचे के द्वार से भाग गयी ।

बूढ़ी ने दामाद को हाथ-पैर धोने को पानी दिया । गरम-गरम खाना परोसा जिसमें कढ़ी, पापड़, अचार, मक्खन, दही था । बूढ़ी के ना-ना कहने पर भी चेन्निगराय 'कोई बात नहीं, कोई बात नहीं' कहते हुए मडुए का डेढ़ लौंदा खा गया ।

भोजन कर चुकने के बाद पता चला कि ससुरजी गांव में प्राय: रहते ही नहीं ।

चन्नरायपट्टण, नरसीपुर, हासन आदि स्थानों के दौरे घोड़े पर करते रहते हैं। इस बार गये बीस दिन हो गये। दो-तीन दिनों में आ सकते हैं। 'अब मैं आया ही हूं तो उनसे मिले बिना नहीं ही जाना चाहिए।' उसने सोचा बूढ़ी ने भी ठहर जाने का आग्रह किया। चेन्निगराय ठहर गया। पास-पड़ोस के लोग उसे घुमाने ले गये। कंठीजोइसजी की खेती-बाड़ी भी दिखायी। दूसरे दिन सुबह बूढ़ी ने उसे तेल मलकर नहलाया। लेकिन नंजम्मा कहीं दिखायी नहीं पड़ी। हल्के अंधेरे में धोयी हुई साड़ी को सुखाते समय उसे जो देखा था, बस वही देखा। पास-पड़ोस के घर जाने में उसे संकोच होता था। समय कट नहीं रहा था। गांव की तरह यहां भी सुबह स्नान कर, माथे पर भभूति की लकीरें काढ़कर, गीली लंगोट के बदले गीला अंगोछा पहनकर बैठता ओर संध्यावंदन के साथ एक हजार आठ गायत्री रटता। यह देखकर बूढ़ी को अत्यंत संतोष हुआ।'

चौथे दिन आधी रात का समय था। अचानक गलियों में कुत्ते भौंकने लगे। खट-खट की आवाज भी सुनाई पड़ी। कुत्तों ने जोरों से भौंकना शुरू किया। बीच में ही 'तेरी बहन...' की आवाज सुनाई दी। इसके घर के पास ही खट-खट् होने लगी। अब किसी ने दरवाजा खटखटाया। "नंजा दरवाजा खोलो"—बोलने की आवाज सुनाई पड़ी। इस आवाज से चेन्निगराय समझ गया कि ये ससुरजी ही हैं। दर-वाजा खोलने जाने में उसे संकोच हुआ। आंखें मूंद कंबल ओढ़कर चुपचाप लेट गया।

रसोई घर में दादी के साथ सोयी नंजम्मा समझ गयी कि आगंतुक उसके पिताजी ही हैं। लेकिन पति चौपाल में सो रहा था, इसलिए स्वयं जाकर दरवाजा खोलने में उसे शर्म आ रही थी। उसने दादी को ही झकझोर कर उठाया। चिमनी जलाकर बूढ़ी ने दरवाजा खोला। घोड़े को उसी द्वार के भीतर से बगीचे की ओर ले जाकर बांध दिया। लौटकर कंठीजोइसजी ने पूछा—"यह कौन सोया है ?"

"चार दिन हो गये चेन्निगराय को आये। तेरा ही इंतजार कर रहा था।"

"चेन्निगराय।" इतने जोर की आवाज मानो किसी ने सिर पर दे मारा हो। बूढ़ी ने कहा—"नींद आयी होगी, अब मत जगाओ।" वे चुप हो गये। भोजन करके आये थे, इसलिए उन्होंने कुछ नहीं खाया। तंबाकू खायी। बूट, कोट, निकर उतार दी और धोती पहन ली। फिर बेटी को न जगाकर स्वयं ही चौपाल में चेन्निगराय के बगल वाले कमरे में चादर बिछाकर लेट गये।

[5]

सुबह दस बजे उठे, और अपने दामाद से कुशल समाचार पूछे। सारी बातें उसने बतायीं। शिवलिंग द्वारा मां से पचास रुपये लेने की कह दी। इस पर कंठी-जोइसजीने पूछा—"तेरे भेजे में अक्ल है या केवल चिकनी मिट्टी भरी पड़ी है ? पटवारी के कार्यों के नियम जब तू नहीं जानता तो क्या खाक काम करेगा ?"

चेन्निगराय धीरे से सिर हिलाकर, और फिर भुकाकर बैठ गया। बूढ़ी भी वहीं थी।

वैसे उसने यह सब अपने आते ही बूढ़ी को बता दिया था। दामाद को इस तरह डांटना बूढ़ी को सहन न हुआ। वह बीच ही से बोल उठी—"कंठी, तू भी यह कह रहा है ? अरे, वह छोटा है, अभी नहीं समभता। तेरे मुंह से हमेशा कड़वी बातें ही क्यों निकलती हैं ? जाकर इसका अधिकार दिलवा दे।"

कंठीजोइसजी फिर कुछ नहीं बोले। स्नान किया। संध्या समाप्त कर भीतर भोजन करने पहुंचे। नंजम्मा ने चावल की थाली पीठ, बैंगन का भरता बनाया था और बूढ़ी परोस रही थी। ससुर-दामाद दोनों ने एक साथ भोजन किया। भोजन के बाद ससुर ने तंबाकू खायी। चार-छह बार पीक थूककर उन्होंने रामसंद्र के बारे में दामाद से चार-छह प्रश्न किये। चेन्निगराय, जितना जानता था, उतना उत्तर दे दिया। जोइसजी ने अपना खेत जोतने वाले होन्ना को बुलाया और एक चिट्ठी लिखकर उसके हाथ में थमा कर कहा कि तुरंत श्रवणबेळगोळ जाओ और मेरे बेटे पुलिस कांस्टेबिल कल्लेश को यह चिट्ठी देकर इसका जवाब लाओ। जोइसजी चुपचाप बैठे रहे। दामाद से भी अब कोई बात नहीं की। गांव वालों को जोइसजी के लौटने का पता चला तो कई जादू-टोना भड़वाने, भूत-पिशाच उतरवाने आ गये। इनसे घर भर गया तो बूढ़ी ने दामाद को बुलाकर रसोईघर में इस ख्याल से बिठा लिया कि कहीं भीड़ से ऊब न जाय। नंजम्मा रसोईघर से कोठार में चली गयी।

होन्न दूसरे दिन सुबह ग्यारह बजे श्रवणबेळगोळ से लौटा। आकर जोइसजी को एक कागज दिया। होन्न के चले जाने के बाद उन्होंने अपनी मां से कहा—"अक्कम्मा, यह और मैं रात को रामसंद्र जायेंगे।"

"यह क्या ! आज ही जा रहे हो ! मैंने तो अभी तक कोई पकवान भी नहीं बनाकर उसे खिलाया ।"

"शाम को बना दो । रात के खाने के लिए खीर बनाओ ।"

"तू तो कोळ्ळिदेव (पिशाच, जो रात को मशाल लेकर चलता है) की तरह रात में घूमता रहता है लेकिन इसे अंधेरे में क्यों ले जा रहा है ?"

"यह क्या लड़की है ? मर्द समझकर ही तो मैंने बेटी दी है इसे !"

अंधेरे से अधिक न डरते हुए भी, चेन्निगराय भूत-पिशाचों के घूमते रहने की याद से ही भय खाने लगा । उसका सीना अंदर धंसने लगा । इसके अलावा उसने यह भी सुन रखा था कि चोळेश्वर के टीले के पास शेर रहते हैं । फिर भी इस डर से कि उसका भय समझकर, ससुर उसे डाटेंगे, वह द्विविधावश चुप रहा ।

बूढ़ी ने जल्दी-जल्दी कोड्बळे बनाया । नंजम्मा ने पहले दिन जो चकली-आटा पीसा था, उसे तला । रात को भोजन में खीर खायी गयी । फिर जोइसजी ने मौजे, जूते, सफेद निकर, खाकी कोट पहनकर, सिर पर हैट रखा । सुबह ही नाई ने मूंछें सवारी थीं । घनी मूंछों से मुंह ढंक गया था । घोड़े को ज़ीन बांधी । फिर लगाम लगायी । कपड़े लत्ते एक थैली में डाल, ज़ीन के आगे दोनों ओर लटका दी । रवाना होने से पहले चेन्निगराय ने दादी और ससुर को प्रणाम किया । दादी ने नंजम्मा को पुकार कर उसके पति को प्रणाम करने के लिए कहा, लेकिन वह नहीं आयी । दूसरी बार जोइसजी ने पुकारा तो दूर से ही जमीन छूकर चली गयी । वैसे चेन्निगराय को पत्नी देखने की बहुत इच्छा थी किंतु ससुरजी की उपस्थिति में शर्म के मारे आंखें इधर-उधर घुमा ही नहीं पाया ।

वे रात को दस बजे के लगभग घर से निकले । अमावस्या थी । सर्वत्र घना अंधकार छाया हुआ था । गांव के बाहर निकल आने पर जोइसजी ने दामाद से भी घोड़े पर सवार हो जाने के लिए कहा । लेकिन उसने यह कहकर टालना चाहा कि उसे आदत नहीं है, डर लगता है । "मैं पकड़ लूंगा ।" ससुर के कहने पर उसने हठ किया—"ऊहूं, आप कुछ भी कहें, मुझसे यह नहीं होगा ।"

"अच्छा तो चलो ।" कहकर जोइसजी घने अंधेरे में ऐसे कदम बढ़ाते चलने लगे मानो रास्ता साफ दिखाई दे रहा हो । पीछे-पीछे घोड़ा चल रहा था । उसके दस-बारह गज पीछे चेन्निगराय चल रहा था । ससुर चुपचाप चले जा रहे थे । इस भयानक अंधकार में चारों ओर चल रही हवा सांय-सांय कर रही थी ।

[6]

उन्होंने चढ़ाई कर तालाब पार किया। हूविनहळ्ळी, कटिगेहळ्ळी को भी पार कर गये। अब चोळेश्वर टीले के पश्चिमी उतार से पहले पड़ने वाले लाल मिट्टी के तालाब को पार कर रहे थे। अब तक आठ मील का सफर तय कर चुके थे।

कंठीजोइसजी आगे-आगे चल रहे थे। उनके पीछे ऊंची नस्ल का घोड़ा। और उसके पीछे-पीछे अंधकार में दीख पड़ रहे घोड़े के सफेद रंग के धुंधलके में चेन्निगराय थके पैरों कुछ दौड़कर और कुछ चलकर सफर तय कर रहा था। ससुरजी एकाएक रुक गये। घोड़ा रुका तो दामाद उससे टकरा गया। इधर-उधर नजर घुमायी तो आगे कुछ दूरी पर मार्ग के दायीं ओर प्रकाश दिखायी दिया। ससुरजी बोले—"थोड़ा आगे आओ।" घोड़े को पारकर वह उनके पास गया तो उन्होंने प्रकाश की ओर इशारा करके कहा—"वहां देखो।" बस, चेन्निगराय का देखना था कि उसे पसीना छूटने लगा, हाथ-पैर कांपने लगे।

लगभग कमर जितनी ऊंची चंडी की प्रतिमा थी जो वीरासन जमाये खड़ी थी। मुंह खुला था और रक्त-रंजित जीभ बाहर निकली हुई थी। मानो रक्त चाट रही हो। गले में कनेर के फूलों की बड़ी माला थी। दोनों ओर मिट्टी के दीप मशाल की तरह जल रहे थे। सम्मुख सिर कटे हुए तीन मुर्गे पड़े हुए थे। पास में कटे हुए पेठे के दो टुकड़े। दो-तीन गुच्छे केले थे। कुंकुम इधर-उधर बिखरा पड़ा था। हल्दी और कुंकुम से चंडी का पूरा शरीर रंगा हुआ-सा था। कच्चे धागे, तांबे की पट्टी, ताबीज, मनुष्य या जानवर की हड्डियां भी चारों ओर बिखरी पड़ी थीं।

वह प्रतिमा घना अंधकार चीरती हुई आग के समान दिखाई दे रही थी। "देखा ?" ससुर ने कहा। 'हूं' कहने में भी उसकी जीभ लड़खड़ा रही थी।

"देख, वहां जाकर मूर्ति की छाती पर लात से प्रहार कर गिरा दो और केले का गुच्छा लेते आओ। तुझे पैसे मिलेंगे।"

वह थर्रा उठा। "नहीं, नहीं।" तुतलाता हुआ वह बोला। "अच्छा तो तू घोड़े की लगाम थाम, मैं जाता हूं।" उन्होंने दामाद को लगाम थमायी और स्वयं आगे बढ़े। सीधे उस प्रतिमा के पास गये। केले का गुच्छा हाथ में लिया। दो मिनट परखते-से मूर्ति को देखते रहे। फिर उसकी भुजाओं, जीभ, सिर, वीरासन के

घुटनों में हाथ डालकर कुछ निकाला। शायद चांदी के रुपये होंगे। बाद में जूते सहित बायें पैर से छाती पर जोर की लात मारी। प्रतिमा टूटकर गिर पड़ी। जहां गिरी, वहीं कई सिक्के बिखर गये। साथ में अशर्फी या कुछ और दिखायी पड़ा। सबको बटोरकर जेब में डाला, और लौटकर घोड़ी की लगाम संभालकर बोले, "चलो।" फिर दोनों वहां से चल पड़े।

अब भी कंठीजोइसजी आगे-आगे, फिर घोड़ा और उसके पीछे चेन्निगराय चल रहे थे। वह खंडित चंडी प्रतिमा की ओर रह गया। मुड़कर देखने में भी उसे डर लग रहा था। लेकिन न देखे तो डर लग रहा था कि कहीं पीछे से झपटकर वह गला न दबोच दे। खामोशी पूर्ववत् गूंज रही थी। ससुरजी चुपचाप पिशाच-सी तेज चाल चल रहे थे। बातचीत से डर कुछ कम होने के विचार से उसने पूछा—"व-व-वह क्य-क्य-क्या है ?"

"आज अमावस्या है न !"

"उ-उ-उसके ल-ल-लिए क्य-क्य-क्या किया ?"

"किसी पर जादू-टोना किया है। करीगेरे वीराचारी नाम का एक व्यक्ति है। वही यह सब कार्य करता है। जादू-टोना कराने वालों के सामने यह कार्य कर, वह उनके साथ चल देता है। फिर कुछ देर पश्चात् वापस लौटकर प्रतिमा की जीभ और भुजाओं के भीतर रखे हुए पैसे, केले आदि निकालकर ले जाता है। आज वापस आकर देखने दो, उसे मिट्टी के ढेले मिलेंगे।"

"उ-उ-उसे छ-छ-छूकर आपने क-क-कुछ निकाला है न ? अब अ-अ-आपको क-क-कुछ नहीं होगा ?"

"छाती छूकर देखना चाहिए। अगर वह मजबूत है तो बाल भी बांका नहीं होगा। वैसे तो डर के मारे पस्त हिम्मत के खून की उलटी करने वाले नामर्द भी मिलेंगे।"

यह अंतिम वाक्य सुनकर चेन्निगराय डर गया लेकिन अब तक वे टीला पार कर चुके थे। यहां से जादू-टोने वाली जगह दिखाई नहीं पड़ रही थी। उसका भय कम हो गया। साहस बटोर, फिर एक बार पीछे मुड़कर उसने देखा। अंधकार की कालिमा के अलावा कुछ नहीं दिखाई पड़ रहा था। अब टीले का उतार प्रारंभ हो गया था। पलाश वृक्षों का भूभाग भी खत्म होने जा रहा था। ससुरजी ऐसे घोर अंधेरे में भी बेधड़क चले जा रहे थे मानो सारे मार्ग से पूरे परिचित हों।

[7]

दोनों घर पहुंचे तो रात के दो बज चुके थे। इनके पहले कंठीजोइसजी का लड़का पुलिस कांस्टेबल कल्लेश अपने एक हवलदार के साथ गंगम्मा के घर पहुंच चुका था। गंगम्मा और नप्पण्णय्या अपने संबंधी कल्लेश को पहचान गये। इन दोनों को आये आधा घंटा हुआ था। दोनों खाकी वर्दी पहने, पैरों में बैंडेज मौजे बांधकर, पुलिस के जूते पहने थे। दोनों पुलिस वर्दी में थे। ऊन के ओवर-कोट पहने थे और हाथ में केनें थीं। इन दोनों का इस समय आने का कारण, गंगम्मा समझ न पायी, और इन्होंने भी नहीं बताया। गंगम्मा ने आगंतुकों को गरम-गरम थालीपीठ बनाकर खिलाया। उसे काफी बनाना नहीं आता था और न ही इतनी रात गये दूध ही था। इसलिए इन्होंने अपने साथ लाये काफी-पाउडर के घोल में गुड़ डालकर पी लिया। इनसे ही पता चला कि चेन्निगराय अपने ससुरजी के साथ आ रहे हैं।

अपने घोड़े और दामाद के साथ आये कंठीजोइसजी ने अपने बेटे को पटवारी-कार्य संबंधी विवरण दिये। उसने जब कहा कि चलो, अभी, अभी चार्ज दिलवा दिया जायं, तो कल्लेश के साथी जमादार ने पूछा—"किस तरह दिलवाया जाये ?"

"आप चुपचाप मेरे साथ आइये।" कहकर कंठीजोइसजी बाहर निकले और घोड़े पर बैठकर दामाद से बोले—"चलो, उनका घर दिखाओ।"

चेन्निगराय कुछ समझ न पाया। वह डर-सा गया था। उसे इस बात का भी डर था कि अगर कारण पूछा तो वह डांट न दें। वह आगे-आगे चलने लगा। पीछे घोड़े पर सवार कंठीजोइसजी चल रहे थे। और दोनों बगल में दो पुलिस वाले। शिवलिंग गौड़ के घर के सामने पहुंचने पर जोइसजी कड़क स्वरों में बोले—"दरवाजा पर दस्तक देकर उसे जगाओ।"

चेन्निगराय ने दरवाजा खटखटाया। भीतर से शिवलिंग की पत्नी ने पूछा—"कौन हैं ?"

"शिवम्मा, मैं हूं। शिवलिंग गौड़ को बुलाओ।" चेन्निगराय ने इतना कहा ही था कि शिवलिंग गौड़ जाग उठा और आकर दरवाजा खोलते हुए नींद की खुमारी में बोला—"क्या है ? इस समय क्यों नींद खराब कर रहा है, तुझे कोई पूछने वाला

कहने वाला नहीं है क्या ?" इतना कहने के बाद जब उसने गौर से सामने एक घुड़-सवार कंठीजोइसजी और पुलिस वालों को देखा तो उसके हृदय की धड़कनें मंद पड़ने लगीं। कंठ से कोई बोल भी न फूटा। घुड़सवार ने बड़े रौब से हुक्म दिया—"हवलदार, इसे गिरफ्तार कर लो।" पुलिस ने उसकी दोनों बाहें पकड़ीं। दरवाजे पर खड़ी शिवम्मा चिल्ला उठी—"हाय ! हे भगवान ! मेरे पति ने क्या गलती की है ?" तो कल्लेश गरज उठा—"मुंह खोला तो तुझे भी ले जाकर भेड़ियों के बीच डाल देंगे। चुप रह।" इस पर उसने दोनों हाथ से अपना मुंह ढंक लिया।

घोड़े से उतरकर कंठीजोइसजी बोले—"भीतर चलो।" पुलिस शिवलिंग को ढकेलकर भीतर लायी। कंठीजोइसजी ने भीतर से दरवाजे की सांकल लगा देने के बाद शिवलिंग से पूछा—"जन्म तारीख मंगाने के बहाने तुमने पचास रुपये हड़पे हैं। हमारे पास शिकायत आयी है। बदमाश, हरामजादे, तुझे फांसी दी जायेगी।"

"उ-उ-उसे र-र-रहने दीजिए।" चेन्निगराय कह ही रहा था कि घुड़सवार ने उसे डांट दिया—"चुप रहो।" अब उसने भी शिवम्मा की तरह दोनों हाथ से मुंह बंद कर लिया। फिर शिवालिंग की ओर मुड़कर बोले—"यह राजा की सर-कार है। दीवान मिर्जा साहब का हुक्म है। चार सौ बीसी नहीं चलेगी। वाह रे बहन ··· भड़वा कहीं का, छिनाल की संतान, सरकार के नाम पर खाता है। अंग्रेज राजा से आर्डर आया है कि तुझे शूली पर चढ़ा दिया जाये। इसे बेड़ी लगाओ।"

यह सुनते ही शिवलिंग थर-थर कांपने लगा। उसकी पत्नी जमीन पर उनके पैरों पर गिर पड़ी। "चांदी के वे पचास रुपये लाओ।" घुड़सवार बोला। तो उसने अपनी पत्नी से कहा—"ल-ल-लोहे की प-प-पेटी में हैं, त-त-ताला खोलकर दे दो।" पत्नी ने बिस्तर के नीचे से चाबी उठायी और संदूक खोलकर चांदी के रुपये गिनकर सौंप दिये। "इंसपेक्टर, इन रुपयों को जेब में रखो। कल खजाने में भरना है।" घुड़सवार ने हुक्म दिया तो हवलदार ने रुपये अपनी जेब में रख लिये।

घुड़सवार अब अगले विषय पर आये—"साले, बेवकूफ, भड़वे कहीं के, पटवारी का पदभार क्यों नहीं सौंप रहा इसे ?"

"न-न-नहीं।" शिवलिंग तुतलाकर बोला।

"इनका हाथ छोड़ दे।" घुड़सवार ने हुक्म दिया। पुलिस वालों ने उसकी बांह छोड़ते हुए कहा, "एक गज कागज और कलम लेकर आओ।"

शिवलिंग कागज और कलम ले आया। तो उन्होंने गरजकर कहा—"मैं जैसा कहूं, वैसे ही लिखना, ...हूं। सन् उन्नीस सौ ... मैं मैसूर राज्य के महाराज की सरकार के तुमकूर जिले, तिपटूर तालुके, कंबनकेरे विभाग के रामसंद्र ग्राम के स्थायी पटवारी स्वर्गीय रामण्णाजी के बड़े बेटे उत्तराधिकारी चेन्निगरायजी को उपरोक्त जिले और तालुके के रामसंद्र ग्राम के वर्तमान पटवारी मैं, शिवलिंग गौड़ द्वारा लिखित में कार्यभार सौंप रहा हूं जोकि अब तक मेरे द्वारा संभाली हुई इस उपसंभाग की पटवारीगिरी आपकी ही थी। उसके नाबालिग होने के कारण अब तक मैं देखभाल करता रहा। अब डेढ़ साल पूर्व आपके बालिग हो जाने के कारण उपरोक्त अधिकार आज दिन उसको सौंप रहा हूं और दाखिला, हिसाब-किताब आदि तमाम कागजात जांच के अनुसार सुपुर्द करने में मुझे किसी तरह की आपत्ति भी नहीं है। साथ ही अपने सख्त बीमार रहने के कारण मैं यह सरकारी नौकरी संभालने में असमर्थ हूं, इसलिए ऊपर से सरकारी हुक्म आने से पहले ही मैं सारा कार्यभार आपको सौंप रहा हूं। आप कृपया यह कार्यभार संभालें।" उनके कहे अनुसार शिवलिंग ने लिख दिया। अब चार्ज—सूची का विवरण दिया—पहला नंबर का व्यवहार-खाता, दूसरा नंबर का बंजर खाता, आदि बारह किस्म के हिसाब नमूने। अंत में शिवलिंग गौड़ ने हस्ताक्षर कर दिये।

चार्ज-पट्टी अपने हाथ में लेने के बाद उन्होंने हिसाब का रजिस्टर लाकर देने के लिए कहा। शिवलिंग ने रजिस्टरों की गठरियां जब उनके सामने रखीं तो उन्होंने दूसरा हुक्म दिया—"तुम और तुम्हारी पत्नी दोनों इन्हें ढोकर इनके घर पहुंचाओ।"

शिवलिंग, उसकी पत्नी और कांपते खड़े उनके बच्चों ने हिसाब की इन गठरियों को ढोकर चेन्निगराय के घर पहुंचा दिया। कंठीजोइसजी ने धमकी दी—"पूंछ हिलाई तो निकार करा दूंगा। दोनों मुंह बंद करके, घर जाकर सो जाओ। पुलिस यहीं गश्त लगा रही है।"

शिवलिंग अपनी पत्नी-बच्चों के साथ घर पहुंचा और द्वार बंद करके लेट गया। जो अनपेक्षित, स्वप्नवत सब कुछ हुआ था उससे उसके रोंगटे खड़े हो गये। वह कांपने लगा। यह देख उसे पत्नी ने सांत्वना दी, और समझाया कि उन्हें कोई अधिक हानि नहीं हुई है।

दोनों पुलिस वाले सो गये। गंगम्मा, अप्पण्णय्या और चेन्निगराय रसोईघर

में सोये। चेन्निगराय को नींद नहीं आयी। वह भयवश बुखार महसूस करने लगा। कंठीजोइसजी सोये या नहीं, किसी ने नहीं देखा। उन्हें शायद भूख लगी होगी। सुबह उठते समय देखा गया कि खंभे के पास जादू-टोने वाले केले के गुच्छों में से दो गुच्छे केलों के छिलके खंभे के पास पड़े हुए थे। उन्होंने सुबह सात बजे अप्पण्णय्या को उठवाया और कारिंदों को बुला लाने के लिए कहा। उनके आते ही आज्ञा दी—"गांव भर में नगाड़ा बजाकर ऐलान कर दो—"चेन्निगराय को पटवारी का अधिकार मिल गया है और आप सबको उनकी बात माननी होगी; नहीं तो अपराध माना जायेगा—"पुलिस वाले अंदर सोये हुए हैं और उनकी टोपियां खूंटी पर लटकती दिखाई दे रही हैं न ?"

कारिंदा झुककर हाथ जोड़ कर चला गया। चेन्निगराय के पटवारी होने की खबर आध घंटे में ही सारे गांव मैं फैल गयी। कल्लेश के साथ आये हवलदार के पास पच्चीस सिक्के छोड़कर, शेष पच्चीस उससे लेकर कंठीजोइसजी घोड़े पर सवार हुए और इलाकेदार से मिलकर पटवारी कामकाज को व्यवस्थित करने के लिए कंबनकेरे के लिए रवाना हो गये। कल्लेश और हवलदार भी भोजन कर श्रवणबेळगोळ के लिए निकल पड़े।

रात के दस बजे लौटने पर कंठीजोइसजी ने देखा कि चेन्निगराय को आग-सा तपता बुखार है। गंगम्मा ने बेटे के सिर पर दवा लगाकर कपड़े की पट्टी कसकर बांध रखी है। चेन्निगराय तुतलाते हुए बड़बड़ा रहा है—"ह-हा-हाय ! मां, मैंने लात नहीं मारी। मेरी भूल हुई, मां !" उसकी यह बड़बड़ाहट किसी की समझ में नहीं आ रही थी। कंठीजोइसजी अंदर आये। उसे देखते ही कारण समझ गये। एक फर की कलम मंगायी। उसपर मंडल चित्रित किया और फिर उसे गोल लपेटा। उसपर सूत का कच्चा धागा लपेटकर उसे बांध दिया। फिर उन्होंने एक नारियल फोड़ा और उसके पानी को तीन बार रोगी पर न्यौछावर कर छपाक से उसके मुख पर दे मारा। ताबीज भी न्यौछावर कर उसके गले में बांध दिया। झाड़ से तीन बार मंत्र पढ़े और फिर सिर से चार बार स्पर्श किया। गंगम्मा से लवंग, मिर्ची, अद्रक का कषाय उबलवाकर मंगाया और उसे पिला दिया। फिर चेन्निगराय सो गये।

दूसरे दिन सुबह उसके उठने से पहले ही बुखार जा चुका था।

तीसरा अध्याय

नंजम्मा ऋतुमति के बाद गौना होकर ससुराल आयी। पटवारी चेन्निगराय को पत्नी की बड़ी चाह थी। उसपर हुक्म करने की अभिलाषा भी थी। पत्नी पर हुक्म करने का मतलब था उसे डांटना-फटकारना, मारना। लेकिन यह उससे होने वाला नहीं था। गरीब गाय या बछड़े को मारने की भी उसे आदत नहीं थी। सिर्फ जबान चलाकर ही पत्नी पर रौब गांठता। मुंह से अनायास निकले 'छिनाल' 'रांड' शब्द के साथ अन्य विशेषण जोड़कर और गालियां देकर चुप हो जाता। इसका यह मतलब नहीं था कि उनके पास भाषा-शक्ति का अभाव था। आखिर गंगम्मा का बेटा था। लेकिन इस बात का सदा भय रहता कि उसको अधिक गालियां देने पर यह बात ससुरजी के कानों तक न पहुंच जाये।

बहू पर अधिकार जमाने की इच्छा या गालियां भरी बातों की कमी गंगम्मा के पास नहीं थी। समधी से उसे भी उतना ही डर रहता था। इसलिए केवल गुर्राने से ही उसे तृप्ति मिल जाती।

पटवारी का कार्यभार सम्हालने के बाद पहले वर्ष का लिखित हिसाब और जमाबंदी लेकर—चेन्निगराय स्वयं गये। वह केवल तालुका जमाबंदी थी, हुजूर ज़माबंदी नहीं। उन्होंने रिश्वत के पैसे दिये थे, फिर भी हैड क्लर्क ने अपने हिसाब के मुताबिक एक सौ एक गलतियां निकाल दीं। बस, उनकी जमाबंदी नहीं हुई। 'हय इनकी मां···' मन ही मन गाली निकाली वैसे मुंह खोलकर किसी को गाली देने की हिम्मत वे कर नहीं सकते थे। हैड क्लर्क ने कहा—इनकी जमाबंदी मंजूर नहीं होगी। दो महीनों के भीतर खुद तिपटूर आकर साहब से सही करा लें।" उसने सोचा, चलो साहब के सामने खड़े होने और गालियां सुनने से बचे।

जमाबंदी के लिए तिम्लापुर के पटवारी द्यावरसय्यजी भी आये थे। बिना गलती किये हिसाब लिखने के लिए वे प्रसिद्ध थे। पटवारीगिरी के अतिरिक्त

उनके पास और कोई जीवनोपाय भी नहीं था। कह रहे थे कि पटवारीगिरी अचार मात्र है जो भोजन में स्वाद लाता है, किंतु इससे पेट तो नहीं भरता! चेन्निगराय द्यावरसय्यजी की शरण गये। उन्होंने कहा कि इसके भी अतिरिक्त हिसाब लिख दूंगा, लेकिन सालभर की पचास रुपये भेंट देनी होगी। चेन्निगराय को तीन गांवों से कुल एक सौ बाईस रुपये सात आने ग्यारह पैसे वार्षिक आमदनी होती थी। इसमें से हर नोट के ऊपर का सारा पैसा कागज-स्याही में चला जाता था। फिर वर्ष के अंत में वर्षासन का खर्च दिखाते समय शिरस्तेदार को दस रुपये (उसमें से कहते हैं अमलदार को छह और शिरस्तेदार को चार), हैड क्लर्क को दो रुपये, विभाग क्लर्क को दो रुपये, खजांची को एक रुपया और चपरासियों को आठ-आठ आने, अर्थात् सत्रह-अट्ठारह रुपये खर्च हो जाते थे। इसके अतिरिक्त जब तालुका में आते तो खाना-पीना, जमाबंदी का खर्च होता। इन सबको भुगताने के बाद फिर हिसाब लिखाने के चेन्निगराय पचास रुपये दे, तो उसके पास बचा ही क्या रहेगा! हां, वसूली के समय दस रुपये से ज्यादा लगान देनेवाले किसान से एक रुपया, उससे कम देनेवाले से आठ आने, दो रुपये लगान देनेवाले से चार आने दस्तूरी के रूप में लेने की प्रथा थी। लेकिन रामसंद्र की दस्तूरी को पटेल ही हड़प लेता था। लिंगापुर से भी कुछ नहीं आता था। कुरूबरहळ्ळी से चालीस रुपये अवश्य मिल जाते थे। ऊपरी कमाई जो कुछ भी थी, वह पटवारी की क्षमता पर निर्भर थी। बंटवारा, खरीदी, गिरवी, तकरार, तख्त, दरख्वास्त आदि से कुछ बचा सकता था, लेकिन खाते, खतौनी, हिसाब को ही ठीक-ठाक न रख सकनेवाले चेन्निगराय के लिए रजिस्टर, कागजात सही लिख पाना कठिन था। इसीलिए उसे यह कमाई भी नहीं थी।

तिम्लापुर के द्यावरसय्य ने रामसंद्र में पंद्रह दिन का डेरा डाला। उनके खाने-पीने की व्यवस्था गंगम्मा और नंजम्मा ने की और चेन्निगराय ने सेवा की। हिसाब-किताब समाप्त होने पर चेन्निगराय को वह साथ ले गये। वहां हैड क्लर्क को दो रुपये और शिरस्तेदार को पांच रुपये दिलवाकर द्यावरसय्य ने जमाबंदी पर हस्ताक्षर करवा लिये। कोट पहना, पगड़ी बांधी और उतरीय ओढ़कर चेन्निगराय तालुका दफ्तर होकर आये। जमाबंदी पर हस्ताक्षर कराते समय चेन्निगराय हाथ जोड़े साहब के सामने खड़े थे, किंतु सौभाग्य से उन्होंने इनसे कुछ नहीं पूछा और हैड क्लर्क द्वारा बताये स्थान पर साहब ने हस्ताक्षर कर दिये।

तिपटूर से पहली गाड़ी से तिम्लापुर आकर द्यावरसय्यजी को उतखाया और वहां से अपने गांव पहुंचे। इसी दोपहर में चेन्निगराय ने पत्नी को पुकारा—"अरे छिनाल, जमाबंदी सौंपकर आ रहा हूं, हाथ-पैर टूट रहे हैं। अरे अरंड तेल लाकर कपाल पर डाल और हाथ-पैर दबा।"

नंजम्मा लंबी और हृष्ट-पुष्ट लड़की थी। घर के पिछवाड़े गिर्री लगे कुएं से पानी खींचकर एक हंडा पानी लायी और नारियल के पत्तों की जड़ जलाकर खूब गरम किया। पति के कपाल, पीठ, बांह, पैरों में तेल मला। फिर गरम पानी डाला। पिसी सीकाकाई से सारा शरीर मला और स्नान कराया। चेन्निगराय ने टावेल से शरीर पोंछा और सिर पर अंगोछा बांध लिया। उधर नंजम्मा ने बिस्तर बिछा दिया। चेन्निगराय लेट गया तो नंजम्मा ने उसे दो कंबल ओढ़ा दिये और उसके बगल में बैठकर उसके 'बस' कहने तक धीरे-धीरे हाथ-पैर दबाती रही।

[2]

अप्पण्णय्या का विवाह अगर कर दिया जाता तो दो साल पहले ही हो जाता। लेकिन तब चेन्निगराय का विवाह हो गया। उसके बाद वह पटवारी के काम में लग गया। इसलिए विवाह का योग अब आया।

अप्पण्णय्या चेन्नकेशवय्य की चटशाला में दो साल अवश्य रहा था। मास्टरजी ने कहा था कि उसके भाग्य में विद्या नहीं लिखी है ! इसमें उसका क्या दोष ? रेत पर लिखते समय उसकी अंगूठी तो घिस गयी, लेकिन अक्षर रेत में ही मिट गये। इसकी किसीको चिंता नहीं थी। उसे चटशाला में इसलिए भेजा गया था कि पुनः बीड़ी पीकर गन्ने के खेतों में आग न लगा दे !

अब अप्पण्णय्या की शादी कडूरू प्रदेश के नुग्गीकेरे ग्राम के श्यामभट्ट पुरोहित की लड़की से हो गयी। गंगम्मा का मायका जावगळ्ळु था जहां के लोगों ने ही स्वयं यह संबंध तय कराया था। उनकी यह इकलौती बेटी थी। कोई भाई नहीं था। छुआछूत के साथ लड़की कसीदा-कार्य में निपुण थी। पीपल के पत्ते पर कृष्ण चित्रित करना भी जानती थी। वह काफी सयानी लड़की थी। लेकिन श्याम भट्ट ने गंगम्मा को यह बात नहीं बतायी। अगर बता देते तो वह ऐसी तड़क-भड़क वाली लड़की अपने घर लाना पसंद न करती।

एक सेर चांदी का पंचपात्र, मुकुट, कीमती धोती, जरीदार पगड़ी और बहुत कुछ देकर उन्होंने धूमधाम से शादी की। वर के माता-पिता के स्थान पर भैया और भाभी अर्थात् चेन्निगराय और नंजम्मा ने पाणिग्रहण कराया। शादी के छह महीने बाद सातम्म ऋतुमती हो गयी और सोलह दिनों में गौना होकर पति के घर आ गयी।

पत्नी पर किस तरह शासन किया जाय, शुरू में अप्पण्णय्य के लिए भी समस्या थी। उसने पहले ही निश्चय कर लिया था कि जिस तरह भैया भाभी पर शासन करता है, वैसे ही उसे भी करना चाहिए। पत्नी के घर आते ही उसने पुकारा—"री छिनाल, यहां आ। मुझे तेल मल!"

सातु समझ न पायी कि वे किसे पुकार रहे हैं। वह झाड़ू देती रही। "री, तुझसे कहा है। साती कमीनी, सुना नहीं?" आश्चर्यभरी नजरों से वह उसकी ओर देखने लगी। वह फिर गरजा—"ऐसे क्या देख रही है, गधी कहीं की! क्या सुनाई नहीं देता?" सातु रो पड़ी। झाड़ू वहीं पटक, सास के पास जाकर बोली—"मांजी, आपने अपने बेटे की बातें सुनीं? मुझसे ऐसी बातें करने के लिए किसने सिखाया है उन्हें?"

गंगम्मा ने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि बहू शिकायत करने की इतनी हिम्मत कर सकती है। आखिर बड़ी बहू नंजम्मा को चेन्निगराय भी तो इसी तरह बुलाता है, लेकिन वह कुछ नहीं कहती। चुप रहती है। पर यह मुंहजली मुझसे ही ऐसा कहती है!

"पति अपनी पत्नी को और क्या कहकर पुकारता है री छिनाल, हरामजादी?"

"मैं क्यों छिनाल हुई? शायद कहने वाले ही होंगे!"

इतना सुन गंगम्मा आग बबूला हो उठी—"अरे नामर्द, हरामजादे, सुना तूने! तेरी औरत तुझे जन्म देने वाली मां को क्या कह रही है? क्या मैं हरामजादी हूं? अपनी औरत को ठीक से काबू कर सकता है या नहीं? शिखंडी, छिनाल की औलाद!"

अप्पण्णय्या का पौरुष जाग उठा। जाकर पत्नी की गर्दन पकड़ दो थप्पड़ जड़ दिये। सातु चक्कर खाकर गिर पड़ी। "इस छिनाल को खत्म कर दूंगा।" इतना ही बोला था कि नंजम्मा रसोईघर से दौड़ी आयी। वह रसोईघर से सारी

बातें सुन रही थी। आज तक उसने कभी अप्पण्णय्या के सामने इतनी जोर से बात नहीं की थीं। "अप्पण्णय्या, घर आयी बहू को इस तरह सतायेंगे तो आपका हाथ सूज जायेगा ! आपकी अक्ल क्या घास चरने गयी है ?" कहकर भीतर से थोड़ा पानी लायी और सातु के सिर पर छींटने लगी। अप्पण्णय्या की जबान भाभी को छिनाल कहना चाहती थी, लेकिन न जाने किस भय से, शायद इसके पिता कंठी-जोइसजी के स्मरण से मौन रह गयी। सातु पूरी तरह बेसुध नहीं हुई थी। उठ बैठी। बोली—"उच्च वंश में जन्म लिया होता तो मुंह से अच्छी बातें निकलतीं !"

"सातु, तू कुछ न बोल। चुपचाप चली आ।" नंजम्मा उसे बुलाकर ऊपर छत पर ले गयी। "अब इसके कान भरने के लिए ले गयी है यह ताटकी !" जोर से कहे हुए सास के ये शब्द नंजम्मा को सुनाई पड़े, तो भी इसे अनसुनी कर दी उसने।

"ब्राह्मण होकर इनके मुंह से ऐसी बातें निकलती हैं !" छत पर एक पटिये पर बैठकर सातु ने पूछा।

'तेरे लिए यह नयी बात है। इस घर का व्यवहार ही ऐसा है।"

"तो जेठजी आपको भी ऐसा ही कहते हैं ?"

"यहां दो साल हो गये। अब मुझे सुनने की आदत हो गयी है।"

"सुनकर आप चुप रहती हैं न, इसीलिए इनको इतनी हिम्मत हो गयी है।"

नंजम्मा ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह कुछ सोचने लगी। सातु फिर कहने लगी—"आपके पिताजी बड़े आदमी हैं। मेरी शादी में आये थे। उन्हें देखकर घर के सभी लोग डर-से रहे थे। मेरे पिताजी भी कह रहे थे कि वे बहुत बड़े व्यक्ति हैं। सुना है कि जेठजी को पटवारी का कार्यभार उन्होंने ही दिलवाया है। एक बार पिताजी से कहकर इन्हें डरा दीजिए। फिर मुंह बंद हो जायेगा इनका। नहीं तो एक बार आप ही उनसे कह दें। इन्हें अक्ल आ जायेगी।"

"सातु, तू अभी छोटी है, जानती नहीं। लड़की को अपने पति की अक्ल ठिकाने लगाने के लिए अपने पिता से नहीं कहना चाहिए।" नंजम्मा ने इतना कहकर अपने पिता का यह स्वभाव बताया कि वे जब किसी पर क्रुद्ध होते हैं तो पहले उस पर झपटते हैं, फिर चोटी पकड़कर ऐसा चांटा जड़ते हैं कि दांत हिल उठें। उसके बाद ही बात करते हैं। वे और कोई तरीका जानते भी नहीं। यहां तक कि अपनी

बेटी के पति अर्थात् दामाद का भी बेटी के समक्ष मान नहीं रखते। जो धैर्यवान नहीं होते, उन्हें पिताजी कभी सम्मान नहीं देते। ऐसा उनका स्वभाव है। लेकिन पत्नी अपने पति के मान की रक्षा न करे तो कैसे ?

सातु बोली—"तो इन्हें आप ही समझाइये। आगे से मुझे कभी इस तरह संबोधन कर बातें न करें।"

इतने में नीचे से चेन्निगराय की आवाज सुनाई पड़ी—"कहां गयी ? इसका घर बर्बाद हो जाय। अभी तक चटनी-रोटी नहीं बनी क्या ?"

"सुनी, अपने जेठजी की बात ? मैं जाकर रोटी बनाती हूं और तुम चटनी पीस दो। चलो ! नहीं तो तुम अपने पति को तेल मलो, जाओ।" कहकर नंजम्मा खड़ी हुई।

"तेल मलवाना चाहे तो अपनी मां से मलवा ले, मैं चटनी पीसूंगी।" मन ही मन सातु ने सोचा।

चौथा अध्याय

नंजम्मा को गर्भ साधे सात महीने हो गये। एक दिन कंठीजोइसजी घोड़े पर सवार हो रामसंद्र पहुंचे। इस बार ये दिन में आये। इनके पहुंचने के दो घंटे बाद एक गाड़ी पहुंची। यह गाड़ी कमानीदार थी जिसमें गादी तकिये लगे हुए थे। बेटी की जचकी के लिए उसे अपने यहां लिवा ले जाने के लिये आये थे।

इन्होंने अपने बेटे कल्लेश की शादी के समाचार भी बताये। ठीक पंद्रह दिन बाद वधू के घर पर ही शादी होगी। वधू हासन की है, इसलिए उन्होंने सभी को नागलापुर आने का निमंत्रण दिया और कहा कि वहीं से गाड़ी से हासन चलेंगे। इतना कहकर बेटी के साथ रवाना होने की तैयारी की। नंजम्मा गाड़ी में बैठ गयी। गाड़ी के आगे-आगे सफेद घोड़े पर सवार कंठीजोइसजी सेनापति की तरह चल रहे थे।

नागलापुर के घर में दादी अकेली थी। नंजम्मा को जन्म से उन्हीं ने पाला-पोसा है। अक्कम्मा को देखकर नंजम्मा रो पड़ी। यह रुलाई दादी से विलग होने के कारण थी अथवा किसी और कारण से, वह स्वयं भी जान न पायी। पोती को गर्भवती होने से पहले बुलाने की उसकी इच्छा तो थी, किंतु पूरी न हुई। क्योंकि कंठीजोइसजी कल ही बाहर गांव से लौटे थे—वह भी बेटे की शादी का दिन निश्चित करके। उन्होंने इस ओर ध्यान दिया ही नहीं कि बेटे का विवाह इससे पहले ही कर देना चाहिए था। जब एक कांस्टेबल से इन्हें पता चला कि कई दिनों से कल्लेश का चालचलन ठीक नहीं है तो बस, इन्होंने दो दिन में ही लड़की खोज, विवाह तय कर दिया।

भैया की शादी के लिए नंजम्मा तैयारी करने लगी। घर की दुरुस्ती पुताई आदि से लेकर नौकरों से काम कराने की जिम्मेदारी तक उसी की थी। अपने गांव में अधिक ठहरना कंठीजोइसजी के स्वभाव के विपरीत था। फिर जो लौटे

तो आठ दिनों के बाद ही। शादी के लिए केवल छह दिन रह गये थे। कल्लेश पुलिस की पोशाक में गांव आया। वह हर काम में होशियार भी था। अपनी शादी की तैयारी में उसने बहन और अक्कम्मा की सहायता भी की। उसके खास रिश्तेदारों में रामसंद्र के लोग ही थे। देव समाराधम के एक दिन पहले ही चेन्निगराय, अप्पण्णय्या और सातु गाड़ी से आ गये। गंगम्मा ने कहला भेजा कि वह विधवा होने के कारण नहीं आ सकेगी। देव भोजन के पश्चात्, रात में रवाना होना चाहिए था, उधर लेकिन नंजम्मा के बुखार से सभी चिंतित हो उठे। अधिक काम करने से वह थक गयी थी और बुखार ने दोपहर जो घेरा कि रात में तेज हो गया और वह लेट गयी। अब सबने निश्चय किया कि रात के समय चौबीस मील बैलगाड़ी से सफर करना, इसके लिए ठीक नहीं, इसलिए नंजम्मा के साथ अक्कम्मा यहीं रहे।

नंजम्मा और दादी, दोनों को ही गांव में रहना था। लेकिन पहली बार के गर्भ के नये अनुभव से उसमें एक सहज भय समा गया। उसने अपने पति का अपने पास ही रह जाना उचित समझ, उन्हें बुला भेजा। चेन्निगराय उधर गाड़ी में सोने के लिए जगह बना रहे थे। पत्नी का बुलाबा आने पर वह आया और ऐसी ध्वनि में गुर्राया कि दूसरे न सुन सकें—"क्या है?"

"मुझे डर लग रहा है। यहां कोई आदमी भी नहीं रहेगा। अप्पण्णय्या और सातु को शादी में जाने दो, आप यहीं रह जायें।"

"यह कैसे हो सकता है?" ऐसा कहते समय वह इतना निराश दीख रहा था मानो विवाह मंडप में ढेर सारी परोसी रसोई किसी ने छीन ली हो।

"क्यों नहीं हो सकता! मैं कल्लेश भैया और बाबा से आपके यहीं रुकने को कह दूंगी।"

"नहीं! चाहो तो सातु को रोक लो।"

"नंजम्मा अपने गृहस्थ-जीवन के इन दो वर्षों में पति के स्वभाव से काफी परिचित हो गयी थी। थोड़ी देर रुकने के बाद बोली—"कोई बात नहीं, आप हो आइये।" चेन्निगराय लौट पड़े और चौड़ी कमानीदार गाड़ी के बीच में ऐसी जगह पीठ टिकाकर बैठ गये कि ठंडी न लग सके। इस जगह पर पहले से ही उनकी नजर थी। सातु नंजम्मा के पास आकर बोली—"दीदी, मैं आपके साथ रहूं क्या?"

"नहीं, तुम जाओ।" और जब नंजम्मा के समझाने पर भी वह नहीं मानी तो उसने अक्कम्मा के पास जाकर पूछा—"आप अकेली वृद्धा हैं। घर में और कोई नहीं है। इसलिए मैं यहीं रहूंगी।"

"नहीं, तुम जाओ। वहां दौड़धूप करने के लिए हमारे घर की कोई स्त्री नहीं होगी। तुम ही कम-से-कम विवाह-वेदी के आसपास का काम देख लोगी। मैं यहां नंजा के साथ रहूंगी। डरने की कोई बात नहीं।" अक्कम्मा के यह कहने पर सातु चली गयी।

रात को आठ बजे चार बैलगाड़ियां निकल पड़ीं। कंठीजोइसजी वही अपनी निकर, कोट, बूट पहन घोड़े पर सवार हो आगे-आगे चलने लगे। कल्लेश अपने कुछ पुलिस के मित्रों और हवलदार के साथ पीछे की गाड़ी में बैठा था। नंजम्मा द्वार पर खड़े हो चारों गाड़ियों को आंखों से ओझल होने तक देखती रही।

रात में वह लेटी तो अक्कम्मा बोली—"देख नंजा, बकरी के स्तनों के समान ही तुम मेरे दो बच्चे हो। तेरा बाबा जानता है कि तू सात महीने की गर्भवती है, फिर भी वह कल्लेश की शादी तय करके आया है। तू क्या समझती है उसमें अकल नहीं है?"

"उनका स्वभाव हमेशा से ऐसा ही है। सबगड्डमड्ड।"

"तुझे जन्म देकर, जब से तेरी मां मरी थी, तब से मैं अकेली हूं। कल्लेश लड़का है। तू पैदा हुई तो वह सात साल का था। लड़के तो किसी तरह बड़े होते ही हैं। तेरे बाबा तीन दिन घर में रहते और तीन महीने बाहर। शादी के बाद जब से गयी, तब से अकेली रह कर मेरा जी ऊब गया है। तेरी कोख से जन्मने वाले चार बच्चों को देखकर जचकी करने की मेरी बड़ी इच्छा थी। भगवान ने अब वह अवसर दिया है। लड़कियां परायी हो जाने के बाद जब हम चाहें, कैसे आ सकती हैं?"

"अब तुम्हें कोई चिंता नहीं। कल्लेश भैया की पत्नी आ जायेगी। एक से दो हो जायेंगी।"

"तेरा भ्रम है बेटी! वह पुलिस में है जिस गांव में उसकी बदली होती है, वहीं वह रहता है। उसकी पत्नी भी उसके साथ ही रहेगी। तिसपर वह है भी तो हासन नगर की। उसकी शादी तय करने से पहले तेरे पिता ने मुझसे कुछ पूछा भी नहीं। जो मन में आना था, बस…! न जाने इस यमब्रह्म को जन्म देने वाली

मेरी कोख के पुण्य को क्या कहूं ?"

नंजम्मा पिता के स्वभाव के बारे में सोचने लगी, कि अक्कम्मा बोल उठी—"तेरी सास तेरा ख्याल रखती है क्या ?"

"हुं, अच्छी तरह रखती है !"

"बस, लड़कियों को इससे अधिक और क्या चाहिए !"—कहकर अक्कम्मा चुप हो गयी।

कुछ देर के बाद वह फिर बोली—"देख मुन्नी, तुझे सीता—वनवास का गीत, लवकुश युद्ध की बातें, अब भी याद हैं न ?"

"वहां जाने के बाद तो एक बार भी नहीं गायी। एक दिन सुबह महुआ पीसते-पीसते गुनगुना रही थी कि उन सबने यह कहकर बंद करा दिया कि नींद खराब मत करो। मैं मौन रह, पीसने लगी।"

"कल से तू रोज सुना। मुझे सुनने की बहुत इच्छा है।" फिर कुछ स्मरण करके बोली—"खैर, छोड़ ! तू गर्भवती है। सीता—वनवास जैसा गीत नहीं गाना चाहिए और न ही सुनना चाहिए।"

दो मिनट बाद फिर बोली—"देख, तेरे जाने के बाद यहां गांवभर में गीत गाने वाली एक भी लड़की नहीं रही। किसी के घर में कोई आरती-अक्षत होती है तो फीकी-फीकी सी लगती है। सब यही कहते हैं। तू गाने की किताब भी यहीं छोड़ गयी थी। एक दिन कंठी को मिली थी। उसने उसे कहीं रखा है। सुबह ढूंढ़कर गाना। नहीं तो भूल जायेगी।"

[2]

जिस दिन कल्लेश की शादी थी, उसी दिन नागलापुर के मछुआरों की गली में चूहा गिरा। इसका यह अर्थ था कि प्लेग माता गांव में आ रही है। जिसने मन्नत नहीं उतारी थी, जो भक्ति-भाव से नहीं चलते थे, उन सबको वह निगल लेती है। उसके आने के पहले ही लोग अपना घर, मोहल्ला छोड़कर गांव के बाहर खेत-बाड़ी में नारियल के पत्तों की झोपड़ी बनाकर रहते और तभी लौटते जब तीन महीने या अधिक समय तक गांव में रहकर प्लेग माता जा चुकी होती।

दूसरे दिन झाबे वाली मारी-मां आयी। हाथ में एक मोटा-सा काफी लंबा

कोड़ा हवा में उछालते, कभी अपने शरीर पर फटाक् से मारते हुए। शरीर पर हल्दी और गुलाल का लेप था और सिर पर झाबा। इसमें माता प्रविष्ट थी। उसके पीछे-पीछे आ रही उसकी पत्नी शकुन बोल रही थी—"आस-पास के चौंसठ गांवों में माता दिखायी पड़ रही है। उन्हें धूल-धूसरित कर रही है, मां को छोड़ बच्चों को खा जाती है, बच्चों की माताओं को घसीटकर ले जाती है, बिना गौना हुई लड़कियों को खा जाती है। गौने के लिए गये लड़कों के सिर तोड़ देती है, गर्भवती की जान ले लेती है।" बीच-बीच में वह दैवीमय पुरुष नंगे शरीर पर चटाचट कोड़े मारता जा रहा था।

इस तरह झाबेवाली मारी मां का आना, शकुन का बोलना, कोई नयी बात नहीं थी। लेकिन वह गर्भवती की जान लेती है, यह सुनकर अक्कम्मा डर गयी। जल्दी से उठी और हल्दी, गुलाल, चावल, दाल, नारियल और दक्षिणा में तीन पैसे सूप में रखे और स्वयं माता को भेंट कर, प्रसाद-रूपी कुंकुम लाकर नंजु को दिया।

इसके दूसरे दिन और अधिक चूहे गिरे। गांव की दूसरी गलियों में भी दिखाई पड़े। खबर फैलते ही आस पास के गांव वाले गांव छोड़ने लगे। अब इन्हें भी चाहिए था कि शीघ्र ही झोंपड़ी खड़ी करें। गांव के पटवारी श्यामण्णाजी ने शाम को हर घर के एक-एक आदमी को बुलाकर पंचायत में निर्णय सुनाया कि अगलें सोमवार से पहले ही सभी गांव छोड़ दें। बस, फिर क्या था! दूसरे दिन सुबह से ही लोग अपने-अपने खेत, बाड़ी में और भूमिहीन गरीबों ने दूसरी की जमीन पर झोपड़ियों बनानी आरंभ कर दीं। छोटे धंधेवाले अपने सामान भी साथ ले गये।

कंठीजोइसजी बेटे की शादी कर जब गांव लौटे, तब तक कई घरों के सामान जा चुके थे। शादी के झंझटों से मुक्त होने पर विश्रांति लेना चाही थी कि अब यह और एक काम आ पड़ा। हाल ही में घर की पुताई हुई थी, किंतु अब इसे खाली करना पड़ रहा था। वैसे गांव छोड़ने से पहले गांव के पुरोहित से मुहूर्त निकलवाने का का नियम है। छोटे-मोटे पुरोहिती कार्यों के लिए एडतोरे के गरीब ब्राह्मण पुट्टभट्ट को कंठीज़ोइसजी ने नियुक्त कर रखा था और सारी कमायी पुट्टभट्ट को ही दी जाती थी। लेकिन इस बार पटवारी श्यामण्णाजी ने कंठी-जोइसजी से भी नहीं पूछा। इनकी अनुपस्थिति में पुट्टभट्ट को भी नहीं बुलाया। खुद ही सब निर्णय कर लिये। इन दोनों में पहले से परस्पर शत्रुता थी। और

पिछले साल खेत के पानी को लेकर दोनों में झगड़ा भी हुआ था। तभी से वह इसी तरह कुछ-न-कुछ करता रहता। कंठीजोइसजी ने इस निर्णय का विरोध करने का निश्चय किया।

शादी से लौटने के दूसरे दिन ही मासिक 'कंबोलीशास्त्र' (प्रथा) के पश्चात् छप्पर निकाल दिया गया। चेन्निगराय, अप्पण्णय्या और सातु, तीनों गाड़ी में बैठ गांव लौटे।

इस श्यामण्णा को क्या करे ? उसने जो कदम उठाया है, उसका विरोध करना चाहिए। लेकिन अब तक लोग सामान ले गये हैं और घर में ताला लगा दिया है। जो लिखना जानते थे, उन्होंने दरवाजों पर "कल आओ लिख दिया। जब एक गांव छोड़ता है तो दूसरे सभी डर के मारे जल्दी-जल्दी सामान बांध लेते हैं। "मैंने शास्त्र देखा है, गांव को कुछ नहीं होगा। कोई न जाये।" कंठीजोइसजी बोले। लेकिन किसी ने नहीं सुना। "तो आप गांव के अंदर ही रहेंगे ?" किसी एक ने प्रश्न किया। हठ के आवेश में उन्होंने कहा--"हां, रहूंगा।" अपने हठ को निभाने के लिए उस खाली किये गये गांव में उन्होंने अकेले ही रहने का निर्णय किया।

अक्कम्मा ने इस निर्णय का बड़ा विरोध किया। "पोती पहली प्रसूति के लिए यहां आई है। इस साढ़ेसाती गांव में अकेला परिवार कैसे रह सकता है ? हमें भी छोड़ना चाहिए। नहीं तो उसे उसके ससुराल भेज दूंगी। भले ही वे दोष दें कि उसकी जचकी हम न कर सके। वे चाहें तो मैं वहां आकर जचकी कर आऊंगी।"

"मैंने रौब से कहा न कि मैं गांव नहीं छोड़ूंगा। यह नहीं निभाऊं तो मेरी प्रतिष्ठा का क्या होगा ?"

"इसमें प्रतिष्ठा कैसी ? चुपचाप आओ।"

कंठीजोइसजी अपनी प्रतिष्ठा को बट्टा लगाने के लिए तैयार नहीं थे। इसलिए फिर से वाद-विवाद छिड़ गया। इसमें तय हुआ कि अक्कम्मा और नंजम्मा अपने खेत में झोंपड़ी बनाकर रहें और वहीं नंजम्मा की प्रसूति और जचकी हो। और कंठीजोइसजी यहीं गांव के घर में रहेंगे।

"तू तो यमराज के स्वभाव का है। तू अकेला यहां क्यों रहे ? वहां नहीं चल सकता ?"

"प्लेग माता मुझसे कुछ छीन नहीं लेगी। मैं मर्द हूं, यहीं रहूंगा।"

अन्य कोई चारा न था। उसने खेत में झोंपड़ी बनवा दी। दादी और गर्भवती

पोती, यहां चली आयी। कंठीजोइसजी के गांव में रहने के कारण, पटवारी श्यामण्णाजी ने पंचायत में निर्णय सुनाया कि वे गांव के बाहर अपनी मां और गर्भवती बेटी से मिलने नहीं आ सकते, क्योंकि उनके शरीर में प्लेग-माता का प्रवेश रहेगा। अब नंजु की प्रसूति और जचकी की सारी जिम्मेदारी वृद्धा अक्कमा पर आ पड़ी।

[3]

गांव में एकमात्र कंठीजोइसजी रह गये। एक गाय उन्होंने खेत की झोंपड़ी पर रख दी; और एक गाय तथा उसके बछड़े को अपने पास रख लिया। अपना खाना वे स्वयं पकाते। घर साफ-सुथरा रखकर बाघचर्म के आसन पर बैठकर ज्योतिष विषयक ताड़पत्रों को पढ़कर विभिन्न मंडलों, त्रिकोण, चौकोण, पंचकोण आदि आकृतियों, 'ह्रीं, घीं, ओम् आदि मंत्र-शक्तियों के बारे में चिंतन-मनन करते। कभी ऊंचे स्वर में मंत्रोच्चारण करते हुए बगीचे में पहुंच जाते। बहुत बेजार होने पर घोड़े पर सवार हो चेन्नरायपट्टण की ओर हो आते।

वे गांव में इतने दिन कभी नहीं रहे थे। रहने की आवश्यकता भी नहीं थी। लेकिन हठ जो था! यह हठ शायद पटवारी श्यामण्णा अथवा मना करने के बावजूद डरकर छोड़ जाने वाले सारे गांव वालों पर रहा। अंधेरे, अकेलेपन, चोर-डाकू, गुंडों, सांप-बिच्छू आदि से डरना वे जानते ही नहीं थे।

एक दिन गांव में एक व्यक्ति आया। उम्र करीब पचास की थी। सिर चोटी से आगे कमान-सा मुंड़ाया हुआ था। पीछे की सफेद चोटी में गांठ बंधी थी। लाल कमीज, मैला काला कोट और लांघदार धोती पहनी हुई थी। सामने के दो दांत गिरे हुए थे और मुंह देखने पर लग रहा था कि तंबाकू खा रहे हैं। दाहिने हाथ के बीच की उंगली में मांत्रिक अंगूठी थी जो सोने के तार से गूंथकर बनाई गयी थी। आगंतुक को कंठीजोइसजी तुरंत नहीं पहचान पाये। कुछ क्षण स्मरण करने पर कंठीजोइसजी पहचान कर बोले--"क्यों वीराचारी, इस त्यागे हुए गांव में कैसे आ गये?"

"आपको देखने के लिए दो साल में चार बार आया हूं। कोई नहीं जानता कि आप गांव में हैं या नहीं। आज यों ही आपसे मिलने निकल पड़ा।"

"आओ, आओ अंदर बैठो।"

वीराचारी भीतर आकर बैठ गया। कंठीजोइसजी ने अपने आसन के पास चार पुरानी चप्पलें रखी थीं। इन्हें देखकर वीराचारी ने पूछा—"आप पुरानी चप्पलें साथ रखना पसंद करते हैं?"

"हां, हाथ में लेकर खड़ा हो जाऊं, तो कोई भी हो, बात मान लेता है।"

"इसलिए नहीं पूछा। सुना है कि भूत-पिशाच भी भगाते हैं।"

"मान लो यह भी होता है। मैंने तो इन्हें आदमियों के लिए रख छोड़ा है।"

कुछ देर इधर-उधर की बातें होने के बाद जोइसजी ने पूछा—"किस कारण से आना हुआ?"

"यों ही आ गया। दो साल पहले एक घटना घटी थी। चोलेश्वर टीले के पास कटिगेहळ्ळी वालों का एक टोटका करवाया था। अमावस्या की रात थी। काली-मां की मूर्ति में रखा हुआ दक्षिणा-धन, तीन गुच्छे केले आदि किसी ने निकाल लिये थे। सोचा, आपको कुछ मालूम हो तो पूछ लूं।"

"जो टोना-टोटका करना जानते हैं, वे कौड़ी छोड़कर, शास्त्र देखना नहीं जानते क्या? मुझसे क्या पूछ रहे हो? तुमसे अच्छा शास्त्र देखना मैं जानता हूं क्या।"

इसके लिए न शास्त्र चाहिए न और कुछ। उस रात लौटकर मैंने देखा तो तुरंत समझ गया कि मेरी बनाई हुई काली-मां को खंडित कर उसमें रखे पैसे, उनके सीने में रखे केलों के गुच्छे हजम करने का साहस और किसी में नहीं है। अमावस्या की रात में वहां जाने की हिम्मत किसमें थी? मैं समझ गया था कि इस प्रदेश में कंठीजोइसजी के अलावा और कोई साहस नहीं कर सकता। सच कहिए जोइसजी?"

"तुममें अक्ल है वीराचारी। क्या अब वह पैसा पूछने आये हो?"

"पैसा जाय भाड़ में। इसलिए नहीं आया। अब कभी मेरे कार्य में आप टांग न अड़ायें। आपसे हाथ जोड़ता हूं।"

"अच्छा, मंजूर है। मैंने अभी खाना पकाया नहीं है। चलो, दोनों के लिए पकाता हूं। खाकर जाओ।"

वीराचारी ने स्वीकार कर लिया। शाम के चार बजे वह चला गया। रात को कंठीजोइसजी को अनायास बेटी के बारे में विचार आने लगे—'अब प्रसूति के

दिन नजदीक आये होंगे। मैं गया ही नहीं। उस बदमाश पटवारी श्यामण्णा ने पंचायत में मेरा वहां न जाने का निषेध करवाया है तो डरकर वहां क्यों न जाऊं ? कल जरूर जाकर देखूंगा। चलो, देखता हूं वह मेरा क्या बिगाड़ता है ! उसकी झोंपड़ी हमारी झोंपड़ी के पास ही है। सीना ताने उसके सामने से ही जाऊंगा। वह अगर तनिक भी गुर्राया तो मादरचोद की चमड़ी उधेड़कर रख दूंगा। अब तक न जाकर मैंने अच्छा नहीं किया। वह सोचता होगा कि उसके निषेध से डरकर कंठी नहीं आया। इसी घमंड में वह मूंछों पर ताव देता होगा। उस भड़ुवे के बेटे की मूंछें मुंड़वा देनी चाहिए।' वे करवट बदल ही रहे थे कि घर की खपरैलों पर कुछ गिरने का-सा लगा। एक मिनट बाद दो पत्थर गिरने की आवाज आयी। यह विचार आ ही रहा था कि शायद उस वीराचारी का ही काम है, घर पर टपाटप बीस-तीस पत्थर बरसे। 'वीराचारी नहीं हो सकता। गांव के ही कोई होंगे ! मुझे डराने के लिए यह कर रहे हैं। रहने दो इन नामर्दों को, हरामखोरों को दिखाता हूं।' वैसे ही उठे और बिना आवाज किये पिछवाड़े का दरवाजा खोलकर बगीचे में पहुंचे। चुपचाप दीवार लांघकर बगल के घर को पार किया और गली में आकर जोर से गरजे—"कौन है रे हरामजादे, तेरी आहूति ले लूंगा।" चार-पांच आदमी डरकर इधर-उधर भागने लगे। वे भय से थर्रा रहे थे कि गरजते हुए आगे बढ़कर उन्होंने एक को पकड़ लिया। दूसरे सब भाग निकले।

पकड़े जानेवाले का नाम जुट्टग निकला। यह पटवारी श्यामण्णा के खेत का बटाईदार है और बहुत साहसी भी, लेकिन पकड़े जाने पर थरथर कांपने लगा। कंठीजोइसजी देवी-माता के समान हैं। जुट्टग ने सुना था कि त्यागे हुए गांव में देवी-माता रहती है। अंधकारमय इस आधी रात को जबकि उसके सभी साथी भाग गये, उसे गरजते हुए आकर पकड़ने वाली देवी-माता है या कंठीजोइसजी—वह निश्चित रूप से जान न सका। यों तो वह जानता था कि वे कंठीजोइसजी ही हैं, फिर भी उसे यह विश्वास नहीं था कि उनमें देवी-माता का वास नहीं है।

"ज-ज-जी, मु-मु-मुझे छोड़ दीजिए।" हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाने लगा।

"तू कौन है ? श्यामण्णा ने भेजा है न ?"

"हूं।"

"यहां आने की हिम्मत कैसे हुई तेरी ?"

"ब-ब-बताया कि अ-अ-आप गांव में न-न-नहीं।"

"अगर मैं गांव में नहीं भी था तो घर पर पत्थर मारने की हिम्मत कैसे की ?"

"उन्होंने धौंस दी थी कि अगर मैं नहीं जाऊंगा तो खेत छीन लेंगे।"

"और कौन-कौन थे तुम ?"

"तिम्मक्क के घर का गिड्डा, ऊपर के मोहल्ले का गुळ्ळिग, चोकीदार सिद्दूर

"उन सबको हिम्मत कैसे हुई ?"

"सरकारी जमीन न देने की धमकी दी गयी थी।"

"अच्छा, तू चाहता है कि तेरी पत्नी विधवा हो जाय ?"

"नहीं, नहीं, हुजूर ! ऐसा मत कीजिए।"

"मेरे घर पर पत्थर फेंककर कैसे बच सकता है ?"

जुट्टग कुछ न कहकर कांपता खड़ा रहा। कंठीजोइसजी के मन में आया कि पटवारी श्यामण्णा की झोंपड़ी पर तेल छिड़ककर आग लगा दे। लेकिन उसकी झोंपड़ी के पास ही अपनी झोंपड़ी भी है जिसमें मां और बेटी रह रही हैं। पटवारी की झोंपड़ी की आग अपनी झोंपड़ी में भी लग सकती है—इसीलिए यह विचार छोड़ दिया। इस पिल्लू को दिन-दहाड़े सबक सिखाना चाहिए। यह विचार भी मन में आया कि अगर रात में ही कुछ सबक सिखा दिया तो हम दोनों में क्या अंतर रह जायेगा। जुट्टग हाथ जोड़े वहीं खड़ा था।

"हमारी झोंपड़ी की तरफ गया था ?"

"उसके पास गया था लेकिन अंदर नहीं।"

"माईजी कैसी हैं ?"

"सुना है आज दोपहर को नंजम्माजी को बच्ची हुई है, और जच्चा-बच्चा दोनों ठीक हैं।"

यह सुन उन्हें संतोष हुआ। कल सुबह जाकर देखना ही चाहिए। वहां श्यामण्णा से भी पूछताछ कर ली जायेगी। यह सोच जुट्टग से बोले—"अच्छा, तू जा।"

लेकिन वह वहीं खड़ा रहा। पूछने पर उसने कहा—"अकेले जाने में मुझे डर लग रहा है। आप साथ चलकर पहुंचा दीजिए।"

"अरे वाह रे हरामजादे ! यहां आते डर नहीं लगा, अब जाते डर लगता है ! चुपचाप जाता है कि पीठ अच्छी तरह मजबूत कर दूं !"

"नहीं-नहीं, जाता हूं, जाता हूं।" कहते हुए वह जल्दी-जल्दी गांव के बाहर

जाने लगा। लेकिन संकरी गली के आगे मुड़ने पर देवीमाता से त्रस्त गांव के बाहर निकलने के लिए कम-से-कम दो-तीन सौ कदम चलना था। हिम्मत कर उसने कंठीजोइसजी के घर की संकरी गली पार की। फिर एकाएक 'हाय मेरी मां' चिल्लाने और भागने की आवाज सुनाई पड़ी।

घर का अगला दरवाजा भीतर से बंद था, इसलिए जोइसजी जैसे बगीचे की दीवार फांदकर पिछले दरवाजे से बाहर निकले थे, वैसे ही उन्हें भीतर आना पड़ा। आकर लेटे किंतु तुरंत नींद नहीं आयी। कल श्यामण्णा से कैसे निपटा जाय—यही विचार सिर में चक्कर काटने लगा। उनके पिता के जमाने से ही दोनों परिवारों में अनबन चली आ रही थी। पटवारी काम का अर्थ राजमहल का काम समझते, और अपने को राजप्रतिनिधि—श्यामण्णा के पिता नरसिंहय्या ऐसा कहा करते थे। 'अब यह रांड की औलाद भी यही कहता रहता है। लेकिन हम क्या कम हैं। अगर उसका काम राजमहल का है तो हमारा गुरुमहल का। राजमहल वाले गुरुमहल वालों को डरा-धमका कर पहले खाते थे, लेकिन अब हमारे जमाने में यह नहीं चल सकता। ये दान लेकर जीते हैं और जी-हुजूरों की अपेक्षा करते हैं। लेकिन मेरे साथ यह नाटक नहीं चल सकता। कंठीजोइस को क्या समझते हैं? कंठी का अर्थ है रणधीर कंठीरव। इन राजमहलों का भूपति। इन हराम-जादों को कल दिखाता हूं—इन्हीं विचारों में सुबह होते-होते नींद आ गयी।

सुबह जागे तो दस बज गये थे। श्यामण्णा की झोपड़ी पर जाने के विचार से उठे। बगीचे तक गये कि लौट आये। लौटने पर घर के सामने एक पुलिसवाला खड़ा दिखाई दिया। पूछने पर उसने बताया—"आपके बेटे कल्लेश को प्लेग हो गया है। उसकी बायीं कांख में गांठें निकल आयी हैं। आप तुरंत चलें।"

"अच्छा! कहां?"

"बेळगोळ में है। अभी वह होश में है। हवलदार ने आपको बुलाने के लिए मुझे भेजा है। गांव की ड्यूटी पर गया था, तो लौटते समय प्लेग देवी का प्रसाद ले आया। जल्दी चलिये।"

आगे बात नहीं की जा सकती थी, बगीचे की ओर वाले बाड़े में बंधे हुए बछड़े को गांव के बाहर मिले एक परिचित व्यक्ति से यह कहकर उसे थमा दिया कि इसे हमारी झोंपड़ी में छोड़ देना। घर को ताला लगाया। घोड़े पर सवार हुए और

कांस्टेबल को अपने पीछे बिठाकर हवा से बातें करते हुए श्रवणबेळगोळ की ओर बढ़ चले।

[4]

इस बार के प्लेग ने नागलापुर में किसी की जान नहीं ली। आसपास के सभी लोग गांव छोड़ चुके थे। रामसंद्रवाले गांव के बाहर झोंपड़ी बनाकर रहने लगे थे। फिर भी वहां तीन आदमी मर गये। दूसरे गांवों में भी काफी लोगों की जानें गयीं। यह नहीं कह सकते कि नागलापुर में देवी को कोई आहूति नहीं मिली। रात के समय कंठीजोइसजी के घर पर पत्थर फेंकनेवाला जुट्टग जैसे ही घर पहुंचा कि उसे बुखार चढ़ गया। उसने पत्नी से अपने गांव के भीतर जाने की बात बतायी। लौटने पर लगा कि गलियारे में मोटी काली औरत ने अपना काला आंचल फैला दिया है। बस, तब से बुखार शीघ्र चढ़ने लगा, उतरा ही नहीं। दूसरे दिन दोपहर में बेहोश हो गया। शाम को थोड़ी चेतना आते ही पत्नी से बोला, "कंठीजोइसजी से टोना-टोटका करा दो।" उसकी पत्नी ने अपने छोटे मामा को कंठीजोइसजी को बुलाने गांव में भेजा। लेकिन उनके घर के दरवाजे को ताला लगा मिला। इधर-उधर देखा, लेकिन जोइसजी का पता नहीं लगा। दूसरे दिन सुबह फिर जाकर देखा तो अब भी ताला लगा था। जुट्टग फिर होश में आया तो उसने पूछा, "जोइसजी आये ?" यह मालूम पड़ने पर कि वे नहीं आये हैं, उसने आखें मूंद लीं। फिर होश ही नहीं आया। दो दिन बाद वह मर गया। किसी को पता नहीं कि उसे गांठें निकली भी थीं या नहीं। माता के कोप-भाजन से मरना हो तो यह जरूरी थोड़े ही है कि गांठें दिखाई दें। खैर, जुट्टग की पत्नी विधवा हो गयी। जुट्टग ने कंठीजोइसजी से काफी गिडगिड़ाकर कहा था कि उसकी पत्नी विधवा न बने।

नंजु की प्रसूति के दूसरे दिन दोपहर को अक्कम्मा ने अपने बटाईदार होन्ना को कंठीजोइसजी के पास यह समाचार देने के लिए भेजा कि नंजु ने बच्ची को जन्म दिया है और जच्चा-बच्ची दोनों तंदुरुस्त हैं। लेकिन घर पर ताला लगा देखकर वह लौट आया और अक्कम्मा को बता दिया। रात में कंठीजोइसजी के घर पर पत्थर फेंकने वाले गिड्डा, गुळिळग या सिद्दूर में से किसी ने भी किसी से इस

बात का उल्लेख नहीं किया था। इसलिए इस बारे में अक्कम्मा, नंजम्मा भी कुछ नहीं जानती थीं। बछड़े को घर पहुंचा दिये जाने से अक्कम्मा ने समझा कि बेटा कहीं प्रवास में गया होगा और अब तक लौटा नहीं। पुरोहित पुट्टभट्ट की पत्नी ने अक्कम्मा का हाथ बंटाया। अक्कम्मा ने पुट्टभट्ट से स्वयं रामसंद्र जाने का अनुरोध किया और कहा कि चेन्निगराय को नामकरण के दिन आने का कह आये। वे यह सोचने लगे कि छोड़े हुए गांव से होकर जाना चाहिए या नहीं। दूर-बैठी, अलग कमरे में लेटे-लेटे नंजम्मा ने कहा—"वह गांव छोड़ गया होगा। शायद वह हमारी बाड़ी में होगा जो गांव के सामनेवाले देवीमंदिर के पीछे अंजीर के पेड़ के पास है। आप वहां जाकर देख आइये।" पुट्टभट्टजी पूर्व की ओर चल पड़े।

झोंपड़ी में रीत-रिवाज पूरे कर लिये। दसवें दिन नामकरण संस्कार में सम्मिलित होने के लिए चेन्निगराय पैदल ही निकल पड़े। बैलगाड़ी जुतवाकर अप्पण्णय्या और सातु को भी वह साथ ले जा सकते थे, लेकिन सातु गर्भवती थी। उसकी उलटियां अभी रुकी नहीं थीं। अब वह गंगम्मा और अपने पति से भी बात नहीं करती थी। लेकिन एक दिन तो उसने जवाब देकर ढेर सारी गालियां तक दे दीं। जेठ के साथ वह पहले से ही अधिक नहीं बोलती थी। उन्होंने भी उससे कभी बात नहीं करवायी थी। ऐसी स्थिति में वह अकेले ही नागलापुर के लिए निकल पड़े।

ग्यारह बजे के समय वे रेतीला कुदरती नाला और चोळा टीला पारकर कटिगेहळ्ळी पहुंचे और फिर बाद में हूविनहळ्ळी पहुंचे। गांव की एक दुकान में पके लाल एलची केले के गुच्छे लटके हुए थे। तीन आने गुच्छे के हिसाब से चेन्निगराय ने तीन गुच्छे खरीदे। उन्होंने सोचा कि कल नामकरण के समय तांबूल थाली में रखने के लिए चाहिए ही। दुकान में एक खुले डिब्बे में बूरा भी रखा दिखाई पड़ा। वह भी सवा सेर कागज की एक थैली में बंधवाकर अपनी गठरी में बांध चल पड़े।

दो मील आगे बढ़े कि उनके मन में एक विचार उठा—जचकी का अर्थ है तीन दिन में एक बार तेल मालिश कर स्नान करना, भोजन में चम्मच-भर घी लेना, महकता लेह खाना और फिर इन सबके बाद आराम से सोये रहना। लेकिन मेरे लिए तो कुछ नहीं। जबसे यह नागलापुर गयी है तब से मुझे तेल मलकर गरम पानी से किसी ने स्नान नहीं कराया। मेरे हाथ-पैर नहीं दुखते क्या? उसकी बूढ़ी दादी अक्कम्मा ने गर्भवती पोती को उसकी इच्छा के मुताबिक तरह-तरह की चीजें

बनाकर खिलायीं। बिना मां की समझकर उपचार किया।—यह तो मुझे बुलाने आये पुट्टभट्ट ने ही कहा था। लेकिन मेरे लिए भेजा क्या ? या यह कहकर बुलाया क्या कि तुम आ जाओ, हम तुम्हारे लिए पकवान बना रहे हैं ? मेरी जूती तले…!

वे सोचते हुए चल रहे थे कि रास्ते में एक वटवृक्ष मिला। उससे दस गज दूर एक तालाब दिखायी पड़ा। अनजाने ही पटवारी महोदय इसकी छाया में गठरी रखकर बैठ गये। इन हरामजादों के घर में ये केले और बूरा क्यों ले जाऊं—यह प्रश्न उठते ही गुच्छे गठरी से निकाले। बूरे का पुड़ा खोलकर सामने रख लिया। फिर एक-एक केला बूरे में दबाकर खाने लगे। केले का कोर मुंह में जाते ही आधा चबाते और फिर 'गुड़ुप' आवाज के साथ निगल जाते। तब तक दूसरे केले का छिलका निकालकर बूरे में दबाकर तैयार रखते।

कुल अड़तीस केले और सवा सेर बूरा समाप्त कर गये। जब उन्हें प्यास लगी तो तालाब से पानी पी आये। गठरी को तकिया बनाये और खर्राटे भरते हुए शाम तक सोये रहे। आंख खुलते ही हड़बड़ाकर उठ बैठे और नागलापुर की ओर तेजी से कदम बढ़ाने लगे। पुट्टभट्ट ने पहले ही उनकी झोंपड़ी का पता बता दिया था, इसलिए उसे ढूंढ़ने में मुश्किल नहीं हुई। अक्कम्मा इन्हीं के आगमन की प्रतीक्षा कर रही थी। दोपहर का खाना ठंडा हो गया था, इसलिए ताजा खाना बनाने, भीतर चली गयी। झोंपड़ी में, जच्चा के लिए एक अलग कमरा बनाया गया था जिसमें एक खाट पर नजम्मा बच्चे के साथ लेटी हुई थी। चेन्निगराय उसके दरवाजे के पास गये तो वह बोली—"दोपहर का आपके लिए बना खाना ठंडा हो गया। आप सीधे घर न आकर, उस पेड़ के नीचे क्यों सो गये ?"

चेन्निगराय को आश्चर्य हुआ। "यह किसने बताया ?"

"हूविनहळ्ळी का दुकानदार चिन्नैय हमारा पुरोहित है। उसी ने बताया कि उसकी दुकान से आपने तीन गुच्छे लाल एलची केले और सवा सेर बूरा खरीदा। वह सामान लेने इस गांव में आया था, तब उसने हमें बताया। उसने यह भी बताया कि आते समय आप वटवृक्ष के नीचे सोये थे और बगल में ही केले के छिलके पड़े थे।"

"उसने ऐसा बताया ? उसकी मां की…" गाली पूरी होने के पहले ही वह बोल उठी—"बुरी बात क्यों कहते हैं ? रास्ते में भूख लगी होगी तो केले लेकर

खा लिये। यह कोई ऐसा काम तो नहीं कि दूसरे न करते हों। वैसे भूख लगी ही थी तो जल्दी आकर घर में भोजन कर सकते थे।"

उसे अब कोई उत्तर नहीं सूझा। कोई गाली भी मुंह से नहीं निकली।

पुट्टभट्ट और उसकी पत्नी की सहायता से अक्कम्मा ने दस लोगों को आमंत्रित कर नामकरण संस्कार कराया। पटवारी श्यामण्णा का परिवार भी आया था। घर की पहली बच्ची होने के कारण उसे नानी का नाम गंगम्मा रखना चाहिए था, लेकिन उनके जिंदा होने और बुलाने की सुगमता से तथा जन्म-नक्षत्र के अनुसार पार्वती नाम रखा गया। चेन्निगराय आठ दिन वहीं रहकर अक्कम्मा से गरम-गरम भोजन और आदर पाते रहे। प्रसूति-शुश्रूषा के लिए लाया गया खोपरा और गुड़ इन्हें भी स्वादिष्ट लगा। जच्चा भी तांबूल तैयार करके उन्हें दिया करती। दादी की इच्छा थी कि पोती के पति को कई प्रकार के पकवान बनाकर खिलाऊं, लेकिन बुढ़ापे के कारण वैसा कर नहीं सकी। साथ ही, आवश्यक सामान मंगवाने के लिए पैसे भी नहीं थे। बेटा कंठी कहां गया, किसी को पता नहीं।

नंजु ही एक दिन पति से बोली—"गांव में पटवारी कार्य है। इलाकेदार से कहे बिना आप यहीं रहें तो क्या होगा?"

"तो इलाकेदार को खत लिखकर बता दूं?" पति ने पूछा।

"वसूली का समय नजदीक आ रहा है। आप ही गांव में न रहे तो, द्यावरसय्यजी न जाने क्या कर बैठें? और वसूली तो आपका ही काम है न? आज पंद्रह-सोलह तारीख होगी। बारिश भी आ चुकी है। गांव में जमीन की हालत नहीं देखेंगे क्या?"

गांव गये बिना कोई उपाय भी नहीं था। अतः पटवारी चेन्निगराय दूसरे दिन नाश्ते के बाद, बुढ़िया द्वारा दी गयी कैरी, सुपारी आदि की गठरी ले निकल पड़े। उनके जाने के बाद अक्कम्मा बोली—"नंजू, तेरे पति ने एक बार भी अपनी बच्ची को गोद में नहीं लिया! बेटी होने से वह नाखुश तो नहीं है न?"

नंजु कुछ नहीं बोली। उसकी आंखों में आंसू आ गये। वह लड़का होता तो भी शायद नहीं उठाते—यह बात उसकी जबान कहना चाहती थी लेकिन कह नहीं पायी मानो उसने नानी की बात सुनी ही नहीं। चुपचाप अपने आंसू पोंछ लिये।

[5]

कंठीजोइसजी के आने तक कल्लेश की कांख की गांठ बड़ी हो गयी और दर्द भी बढ़ गया। सरकारी अस्पताल के डाक्टर ने दवा देकर भी कहा—"बड़े डाक्टर से इलाज कराना ठीक रहेगा। लेकिन इस हालत में रोगी को ले जाना मुश्किल है। फिर भी मुझसे जो बन पड़ेगा, अवश्य करूंगा।" जोइसजी के पहुंचते ही हवलदार ने जिम्मेदारी लेकर कहा—"आप एक 'वान' दिलवा दें। मैं इसे हासन ले जाऊंगा।"

हवलदार चेन्नपट्टण पहुंचा और वहां एक वान की व्यवस्था की। इसमें कल्लेश को लिटाकर हासन ले गये। वह रास्ते में दम भी तोड़ सकता था लेकिन ऐसा हुआ नहीं। बड़े अस्पताल में भर्ती करा दिया गया। कल्लेश के ससुर रंगण्णाजी गत पच्चीस सालों से हासन में पोस्टमैन थे। अस्पताल के डाक्टर इनके परिचित थे। डाक्टर ने काफी कोशिशें कीं। गांठ को काटकर पीप और सड़े हुए भाग को अलग निकाल दिया और दवा लगाकर बांध दिया। जान खतरे से बच गयी। इस अवधि में वह दुबला हो गया। डाक्टर ने कम-से-कम पंद्रह दिन अस्पताल में रखने को कहा। कंठीजोइसजी भी इतने दिन कल्लेश के ससुराल में ही रहे और बेटे की देखभाल करते रहे।

अस्पताल से छुट्टी मिलने का दिन आया तो देखने पर मालूम हुआ कि उसका बायां हाथ ठीक तरह से काम नहीं कर रहा है, क्योंकि एक दूसरा फोड़ा उसी ओर की कांख में निकल आया है। डाक्टर ने कहा—"इन्हें यहीं गांव में रहने दीजिए। हम और इलाज करेंगे।" रंगण्णाजी दामाद को अपने घर ले गये। आठ दिनों के बाद कंठीजोइसजी घोड़े पर सवार अपने गांव की ओर चल पड़े। इन पच्चीस दिनों में अगर किसी को अत्यधिक कष्ट हुआ है तो इनके घोड़े को। संबंधियों के घर में जोइसजी का खाना-पीना हुआ करता था। हासन नगर के पोस्टमैन रंगण्णाजी के घर में कंठीजोइसजी को भरपूर घी-दूध न मिलने पर भी भरपेट भोजन की कमी नहीं थी। लेकिन इनके सफेद घोड़े के दाना-पानी और चारे की व्यवस्था कौन करता ?

इनके गांव लौटने तक प्लेग का प्रकोप खत्म हो गया था। आसपास के क्षेत्रों

में दो बार मामूली बारिश भी हो गयी थी। नागलापुर के लोग अपनी झोंपड़ियां छोड़कर गांव लौट आये थे। अक्कम्मा और नंजम्मा को भी यह भनक लग गयी थी कि कल्लेश को प्लेग हो गया है, और उसे इलाज के लिए कंठी हासन ले गये हैं जहां वह ठीक हो गया है। अक्कम्मा ने निर्णय किया कि गांव लौटने में अब बेटे का इंतजार नहीं किया जा सकता, इसलिए होन्ना और पुट्टभट्ट की सहायता से झोंपड़ी का सामान और जच्चा-बच्ची को घर ले चलेंगे। पहले तो वह घर गयी। सुतार को बुलाकर दरवाजे का ताला तुड़वाया। भीतर गयी तो वहां क्या देखती है कि बारिश का पानी अंदर चला गया है और इससे जमीन पिचपिच हो गयी है। छत की पट्टी, शहतीर पर पानी पड़ा हुआ है और वे सब अभी भी गीले हैं। किसी के बिना कहे ही मालूम हो गया था कि किन्हीं बदमाशों ने पत्थरबाजी की थी। इसकी पूछताछ करने का अब समय भी नहीं था। होन्ना सीढ़ी लगाकर छत पर गया और खपरैलों को आगे-पीछे सरकाकर ठीक किया। दोनों दरवाजे खोल दिये ताकि हवा से फर्श जल्दी सूख जाये। फिर भी नयी मिट्टी और रेत डालकर जमाना पड़ा। खैर, अन्य लोगों की अपेक्षा अक्कम्मा चार दिन देर से जच्चा और बच्ची को ले घर आयी। नंजु के प्रसूति को एक महीना हो गया। वह उठकर कुछ काम करना चाहती, तो अक्कम्मा नहीं करने देती। झाड़ू निकालने से लेकर गाय दुहने तक का सारा काम अक्कम्मा ही करती।

इनके यहां आने के चौथे दिन दोपहर के तीन बजे घोड़े पर सवार हो कंठीजोइसजी घर पहुंचे। अक्कम्मा और नंजु को कल्लेश का कुशल-समाचार बताया। फिर इनका ध्यान जमीन पर चला गया। "यह क्या? जमीन को नया जमाया है? इसकी क्या जरूरत थी?"

"देख, घर पर किसी ने पत्थरबाजी की होगी या गीध ने खपरैल खसका दिये होंगे जिससे बारिश का पानी घर में आ गया। सारा घर खेत-सा बन गया था। पैर नहीं रखे जाते थे। पहले होन्ना से इसे जमवाया, तभी सामान लेकर यहां आ सके।"

"इसकी मां चांडाल की···इस बेटे को बताता हूं।" कहते ही कंठीजोइसजी बाहर निकले। लेकिन अक्कम्मा और नंजु यह सब समझ न पायीं।

दोपहर के भोजन के बाद पटवारी श्यामण्णा के घर के बड़े बरामदे में गांव के कुछ प्रतिष्ठित लोग सूर्यास्त तक शतरंज खेलते थे। वह नियम-सा बन गया था।

कंठीजोइसजी जानते थे कि ऐसे वक्त श्यामण्णा भी होता है। वे सीधे गये और बरामदे में खड़े होकर गरजे—"हरामजादे, मेरे बेटे, तुमने रात को आदमी भेजकर मेरे घर पर पत्थर फिंकवाये ? मर्दानगी थी तो दिन में आना चाहिए था, वह भी भरे गांव में। ऐ, मुझे क्या समझ रखा है ? मर्द हूं, तेरी मां का भड़वा समझ तेरी बहन को…"

इनके अनपेक्षित आगमन और ऐसी गर्जना से सभी शतरंज खिलाड़ी अवाक् रह गये। साथ ही श्यामण्णा भी भयभीत हो उठा। कंठीजोइसजी सीधे श्यामण्णा के घर के भीतर घुस गये और दरवाजे के पिछवाड़े की ओखली के पास दीवार से टिकाकर रखी हुई मूसल दाहिने हाथ में उठायी और वहीं पास रखी बांस की सीढ़ी बायें में लेकर बाहर निकले। सीढ़ी छत से टिकाई और खपरैलों पर चढ़ते ही मूसल उठा-उठाकर खपरैल तोड़ने लगे। चार-छह प्रहार में शतरंज खेलने के बरामदे के ऊपर के सारे खपरैल टूट गये। फिर वे और भी ऊपर चढ़ने लगे।

बरामदे के ऊपर खपरैलों पर पहला प्रहार पड़ते ही शतरंज वाले बाहर निकल गये। भीम के समान ऊपर खड़े कंठीजोइसजी ने इन लोगों को एक बार देखा और फिर गरजकर बोले—"अरे नामर्दो, अभी ठहरो। तुम लोगों की पत्नियों का सिर मुंड़वाकर उनके मंगलसूत्र निकलवाऊंगा।" और झुककर दो खपरैल उठाकर उनकी ओर फेंके। इससे दो को चोटें लगीं। एक के माथे से और दूसरे के कंधे से खून बहने लगा। लोग तितर-बितर हो गये। श्यामण्णा ने एक बार तो सोचा कि ऊपर चढ़कर कंठीजोइस को सबक सिखा दूं क्योंकि वह भी काफी ताकतवर था, लेकिन खतरे से खाली न समझ कुछ और ही सोचने लगा।

दस हजार खपरैल बनाने में कुम्हार ने न जाने कितने महीने मेहनत की होगी। लेकिन कंठीजोइसजी के मूसल ने आध घंटे से भी कम समय में घर की सारी खपरैलों का चकनाचूर कर दिया। फिर धीरे-से नीचे उतरे और सीढ़ी तथा मूसल को उनके स्थानों पर रख बाहर निकले। सामने के घर के बरामदे में बच्चों के साथ भयभीत खड़ी श्यामण्णा की पत्नी के पास जाकर बोले—"देख बहन, तू तूबिनकेरे के तम्मय्या जोइसजी की बेटी है, इसीलिए तुझसे कह रहा हूं। तम्मय्या-जोइसजी मेरे गुरु के समान हैं। खाली हुए गांव में मुझे अकेला समझकर तेरे पति ने आधी रात को नौकरों से मेरे घर पर पत्थर फिंकवाये। लेकिन मुझे देख, दिन में मैंने यह काम किया। कंठी मर्द है। अपने पति से कह दे कि अब कभी नामर्द

का काम न करे। मर्द कहलाने लायक काम करे। भड़ुवों की संतान, हरामजादे, तेरे पति से मैं नहीं बोलता।" इतना कहकर वह सीधे अपने घर चल दिये। श्यामण्णा की पत्नी अवाक्-सी खड़ी-की-खड़ी रह गयी !

कंठीजोइसजी सीधे घर आकर रसोईघर में पहुंचे। अक्कम्मा चूल्हे पर रखे भगोने में बासमती चावल डाल रही थी। पड़ौसी से लाया हुआ साग तैयार हो रहा था। जोइसजी पिछले दरवाजे से कुएं पर गये और दो घड़ा पानी अपने पर उंडेलकर स्नान किया। शुद्ध स्वरों में संध्या मंत्रोच्चारण करते हुए शरीर पोंछा और गम्छा पहना। भगवान के मंडप में रखी हुई नट्टी से सुगंधित चंदन घिसकर बीच माथे पर लगाया, और उंगलियां धोकर खाने बैठ गये। एक सेर चावल का गरम-गरम भात तैयार हुआ था। घर की गाय के दूध से ही घी बना था, जो जचकी के बाद भी बच गया था। पहले सुपारी के खोल पर परोसा गया भात तो साग के साथ तीन मिनट में चट कर गये, फिर दूसरी बार भात, अचार और तेल में मिलाते हुए उन्होंने अक्कम्मा से पूछा—"गाय का दूध जच्चा के लिए पूरा पड़ता है कि नहीं ?"

"ज्यादा ही होता है। एक बरनी घी भरकर रखा है।"

"अच्छा जचकी के बाद यहां से उसके जाने तक किसी तरह चार बरनी घी इकट्ठा कर उसके साथ भेज देना। चैन से खायेगी। छोटा एरंड पिसवाया था या बड़ा ?"

"जच्चा को इतनी जल्दी एरंड के तेल की कौन मालिश कर स्नान कराता है ! सर्दी लग जायेगी।"

"अच्छा, नामकरण कराया क्या ?"

"हुं ! चेन्निगराय आया था। पार्वती नाम रखा है।"

थाली का दही-भात खत्म कर जोर की डकार लेते हुए वह उस कमरे में गये जहां जच्चा लेटी हुई थी। और बोले—"नंजा, कहां है तेरी मुन्नी ? जरा दे तो सही, हम भी तो देखें।"

बच्चे को अपनी गोद में लेकर वे कमरे की देहली पर बैठ गये। बच्ची सफेद सुंदर और हृष्ट-पुष्ट थी। "यह भी तेरी जैसी ही है री ! देख कितना बड़ा ललाट है ! कौन-सा नक्षत्र बताया ?"

"पुट्टभट्ट जी ने कुछ बताया था लेकिन कहा कि आप ही जन्म-कुंडली बनावें।

कहते थे आप उनसे अच्छा जानते हैं।"

"ठीक है, कल मुझे याद दिला देना। जन्म समय बराबर नोटकर लिया है न? मुझे जरा पान तो देना। सुबह से तंबाकू नहीं खायी।" फिर बच्ची को उठाकर रसोईघर में पहुंच कर बोले, "अक्कम्मा, मिर्ची, लेह आदि के लिए पैसों का क्या इंतजाम किया? मेरा तो इस ओर ध्यान नहीं गया। ठहरो।" बाहर आकर अपने कोट की जेब से तीस रुपये निकालकर देते हुए बोले—"कहीं से उधार लिया हो तो लौटा दो। अब मैं गांव में ही रहूंगा। पंद्रह-बीस दिन बाद हासन जाकर यदि कल्लेश स्वस्थ हो गया होगा तो उसे लेते आऊंगा।"

बेटी की बनायी तांबूल मुंह में रख, बच्चे को उसकी गोद में लिटा दिया और अपनी बायीं हथेली पर थोड़ी-सी तंबाकू ले दाहिने हाथ के अंगूठे से मसलकर मुंह में डाल ली। पांच-छह बार बाहर जा गटर में पीक थूक आने के बाद चारपाई बिछायी और सिरहाने एक पाट रखकर थोड़ी देर के लिए सो गये। शाम को उठे। खेत के पास जाकर लौट आये। रात को भोजन में गरम-गरम भात, साग, बाटी खाकर आराम से सो गये।

[6]

आधी रात में लगा कि कोई दरवाजा खटखटा रहा है। कंठीजोइसजी उठे और जाकर पूछा—"कौन है?" उत्तर में जो कुछ सुना, उन्हें चकित कर दिया—"आपके ससुराल के लोग हैं। दरवाजा खोलिए।"

"कौन है रे हैवान, अक्ल ठिकाने पर है न?" आग-बबूला हो उन्होंने चिटकनी ढीली कर दरवाजा खोला तो चार पुलिस वाले आगे बढ़े और इनकी बाहुओं को ऐसी मजबूती से पकड़ा कि झटका देने पर भी नहीं छूटें। हवलदार ने सीटी बजायी तो कंपाउंड के पीछे खड़े दो कांस्टेबल दीवार फांदकर आ टपके।

"क्यों जी, मैंने क्या किया है जो मुझे पकड़ा है? आपको क्या अधिकार है?" हवलदार बोला—"जो भी पूछना हो, चलकर थाने में पूछिए। चलिए?" चलने लगे तो इतने में अक्कम्मा और नंजम्मा भी जाग उठी थीं। बाहर आकर देखा तो 'हाय-हाय' कर रोने लगीं। कंठीजोइसजी ने समझाया—"अक्कम्मा, रोओ मत। लगता है यह सब मेरे बेटे श्यामण्णा की साजिश है। मैं चेनरायपट्टण तक जाकर

आता हूं। तुम लोग दरवाजा लगा लो। मेरी अनुपस्थिति में घर के पास अगर कुत्ता तक आ जाये तो झाड़ू से खबर लेना।" इतना कहकर वे उनके साथ चल दिये। गांव के बाहर वान खड़ी थी। उसमें बैठकर पुलिस वाले चेनरायपट्टण की ओर बढ़े। श्यामण्णा गांव में ही रह गया।

शाम को अक्कम्मा खेत की ओर गयी तो उसे अपने बेटे द्वारा श्यामण्णा के घर की सारी खपरैल तोड़ आने की खबर मिली। इसका कारण भी मालूम हुआ उसे। श्यामण्णा ने ही पुलिसवालों को बुलाकर बेटे को गिरफ्तार कराया है, यह जानकर उसे बहुत गुस्सा आया। रात को अकेली श्यामण्णा के घर के सामने खड़ी होकर रास्ते की मिट्टी का ढेर बनाकर मुट्ठी भर-भर फेंकती हुई गालियां देने लगी—"हाय, तुझे जनम देनेवालों के मुंह में अपना मल-मूत्र डालूं। नामर्द, हरामजादे, हमारे घर पर पत्थर फेंकने के लिए रात के समय आदमी भेजा! नपुंसक, रांड की औलाद! मैंने अपने बेटे को मर्द के रूप में पाल-पोसकर बड़ा किया है। और इसीलिए दिन-दहाड़े उसने तेरे घर की खपरैल तोड़ीं। डरकर ही तो तू पुलिस के पास गया न? तूने क्या साड़ी पहन रखी है? तेरा वंश नष्ट हो! तेरे बच्चों का नाश हो! तेरी पत्नी विधवा हो जाये! रांड के बेटे, देख लेना तेरी पत्नी भी सिर मुंडवाकर लाल साड़ी पहना करेगी, जैसी कि मैं हूं। विधवा के शाप को क्या समझ बैठा है···?"

इतने में आसपास अनेक लोग एकत्र हो गये। कारण सब समझ गये थे। लेकिन किसीने मुंह तक न खोला। परंतु श्यामण्णा के घर का दरवाजा नहीं खुला। इतने में यह स्मरण आते ही कि घर में बच्चे के साथ नंजम्मा अकेली है, अक्कम्मा और दस गालियां देकर लौट गयी।

चेन्नरायपट्टण पुलिस स्टेशन पहुंचने पर हवलदार ने कहा—"रात यहीं रहिए, सुबह सब-इंस्पेक्टर के आने के बाद बयान लेंगे।" लेकिन कंठीजोइसजी नहीं माने। ऊंची आवाज में बोले—"उन्हें अभी बुलाओ। जो पूछना हो अभी पूछें। मैंने कुछ चुराया नहीं है कि अकारण पुलिस स्टेशन पर रोका जाय।" मारकर चुप कराने में पुलिसवालों को भी डर था। उनके बारे में वे भी काफी जान चुके थे। सब-इंस्पेक्टर तुरंत आ गये। श्यामण्णा पटवारी है; मतलब कि वह सरकारी अधिकारी है। उसने घर की खपरैल तोड़ने और भीतर घुसकर पटवारी-कार्य के हिसाब की किताबें ले जाने की शिकायत दर्ज करायी थी। लेकिन हां, सिर्फ खपरैल तोड़ने

पर पुलिस तुरंत कदम उठाती या नहीं, कहना मुश्किल था किंतु सरकारी हिसाब गायब करने की शिकायत पर तुरंत कार्यवाही करनी ही चाहिए थी। श्यामण्णा ने इस शिकायत की प्रति तालुका अमलदार को भी दी थी।

"मुझे कुछ नहीं मालूम। मैं उसके घर गया ही नहीं। यह सब झूठ है।" जोइसजी ने बयान दिया। दूसरे दिन स्थानीय मजिस्ट्रेट और अमलदार के सम्मुख भी यही बयान दिया। पुलिस ने केस दर्ज कर लिया। स्थानीय नगरपालिका के सदस्य हनुमंत शेट्टी की जामिन पर कंठीजोइसजी को पुलिस ने छोड़ दिया। गांव में आकर वे मूंछों पर ताव देते हुए सब रास्तों का एक चक्कर मार घर लौटे।

वे श्यामण्णा को पकड़कर मरम्मत कर देना चाहते थे, लेकिन अपने पर केस रहते हुए ऐसा करना ठीक न समझकर चुप रहे। कुछ दिनों में होळेनरसीपुर के कोर्ट से 'समन्स' आया। प्रसिद्ध वकील वेंकटराय को इन्होंने नियुक्त किया। कंठीजोइसजी तीन महीनों तक होळेनरसीपुर और हासन के बीच घुड़सवारी करते रहे।

जिस दिन साक्षी की सुनवाई होने वाली थी, उस दिन उन्हें सुबह वकील से मिलना था। इसलिए कंठीजोइसजी अपने घोड़े पर सवार हो रात में गांव से निकल पड़े। चन्नरायपट्टण को पार कर गांव के बाहर पहुंचे तो नदी भर रही थी। नदी का भरना अनपेक्षित था। उन्हें किसी तरह नदी पार कर सुबह तक नरसीपुर पहुंचना ही चाहिए था। आधी रात तो हो चुकी थी। चांदनी रात में भर्र-भर्र की गर्जना के साथ नदी गांव के बाहर दोनों तटों को फांदने लगी थी। इस स्थिति में घोड़े पर सवारी करना खतरनाक था। नदी के तट पर डाकबंगला था। वहां जाकर पहरेदार को उठाकर पूछा। उसने कहा कि दो दिनों से नाव छूटी नहीं है। नदी आपे से बाहर हो गयी है। लेकिन वे रुकने वाले तो थे नहीं। घोड़े की देख-भाल के लिए उससे कहा और खर्च के लिए एक रुपया दिया। अपने पास की चांदी के सिक्कों की थैली अंटी में खोंसी और कसकर बांध ली। कोट, कमीज, निकर सिर पर रख रूमाली से बांध लिया। अब वे पहरेदार के मना करने पर भी गांव के बाहर कुछ ऊपर की ओर जाकर तैरते हुए नदी पार करने लगे।

लगभग आधा मील नीचे की ओर तैरते हुए उस पार तट पर पहुंच गये। शरीर और लंगोट गीली हो गयी थीं, और सिर पर रखे कपड़ों का थोड़ा भाग भी गीला हो गया था। आधा मील चलने पर शरीर सूख गया। निकर, कमीज, कोट पहन

खाली पैर तेजी से चलने लगे। अब सिर्फ आठ मील की दूरी तय करनी थी। मुर्गा बांग देते-देते वे नरसीपुर पहुंच गये। नदी तट पर प्रातः विधि से निपट स्नान किया। संध्यावंदना की और फिर सूर्योदय होते-होते वकील के घर पहुंच गये।

उस दिन दो मुख्य गवाहों की गवाही थी। इनमें से एक श्यामण्णा की पत्नी थी। कोर्ट के सामने जो सांड था, उसे उसके हाथ से स्पर्श कराकर शपथ दिलाते हुए वकील ने कहा कि झूठ बोलेगी तो तुम्हारा पति और बच्चे मर जायेंगे। यह सुनकर उसे अक्कम्मा के दिये शाप का स्मरण हुआ और वह रोने लगी। वकील ने सच-सच कहने के लिए कहा तो डरकर वह बोली—"कंठीजोइसजी ने हमारे घर में घुसकर मूसल से खपरैल तोड़ी। सुना था कि जब गांव खाली हुआ था तब मेरे 'इन्होंने' गुळ्ळिग, जुट्टग आदि से कंठीजोइसजी के घर पर पत्थर फिकवाये थे और इसीलिए उन्होंने ऐसा किया।"

वहां श्यामण्णा उपस्थित था। वह पत्नी को ऐसे घूर रहा था मानो उसे निगल लेना चाहता हो। जोइसजी के वकील ने पूछा—"बहन, सच-सच कहो। भगवान की कसम खायी है आपने। यह झूठ है न कि जोइसजी आपके घर में घुसकर पटवारी-कार्य के हिसाब की किताब उठा ले गये।"

"हिसाब की किताबें उठाकर नहीं ले गये। मैं वहीं खड़ी थी।"

पता लगा कि कोर्ट से गांव लौटने पर श्यामण्णा ने पत्नी की चंपी कर दी।

श्रवणबेळगोळ का पुलिस हवलदार कंठीजोइसजी के पक्ष में बोला—"उस दिन दोपहर के तीन बजे मैं हासन गया था और मैंने कंठीजोइसजी को वहां देखा था।" श्यामण्णा ने शिकायत की थी कि कंठीजोइसजी ने उसी दिन दोपहर में तीन बजे खपरैल तोड़े थे और हिसाब की किताबें उठा ले गये थे।

जजमेंट के दिन श्यामण्णा भी आया था। कंठीजोइसजी भी आये थे। ठीक एक बजे न्यायाधीशों ने अपना निर्णय पढ़कर सुनाया—"वादी की पत्नी ही कह रही है कि पटवारी-कार्य के हिसाब की किताबें प्रतिवादी ने छुई तक नहीं, बल्कि प्रतिवादी के घर पर वादी ने रात के समय पत्थर फिकवाये और इसी की प्रतिक्रिया-स्वरूप प्रतिवादी ने वादी के घर की खपरैलें तोड़ी होंगी। लेकिन मुख्य आरोप है सरकारी हिसाब की किताबें उठा ले जाने का। तो इस संबंध में श्रवणबेळगोळ के हवलदार की गवाही बताती है कि जिस समय यह घटना घटी, उस समय प्रतिवादी हासन में था। इन सबको ध्यान में रखकर देखें तो साफ है कि आरोप में कोई

सच्चाई नहीं है। इनके परस्पर द्वेष के कारण छोटे-मोटे झगड़े हुए होंगे। अतः यह केस खारिज किया जाता है।"

[7]

कंठीजोईसजी अपने वकील को देने के लिए पचास रुपये लाये थे। वकील को कोर्ट के कार्यालय में काम था इसलिए ये रुपये देने उनके घर जाना था। इतने में होटल में खाना खाकर आने की बात वकील से कहकर जोइसजी कोर्ट के बाहर निकले। पेड़ से बंधे घोड़े को छुड़ा, उस पर सवार हो चलने लगे। एक फर्लांग आगे बढ़े कि श्यामण्णा अकेला जाता हुआ दीखा। अनायास इनकी क्रोधाग्नि भड़क उठी।

"अब तेरी मां की ··· मेरा क्या छीन लिया कोर्ट जाकर?" कहकर घोड़े से उतर कर उसके सामने खड़े हो गये। श्यामण्णा डर के मारे चुपचाप खड़ा रहा। जोइसजी ने दाहिने पैर का जूता हाथ में लेकर उसके सिर पर जड़ दिया। श्यामण्णा ने भी हाथ उठाया, लेकिन उन्होंने अपनी सारी शक्ति लगा उसकी गर्दन पकड़ी और पीठ पर ऐसा प्रहार किया कि वह जमीन पर पड़ा। उसके मुंह से रक्त निकलने लगा और बेहोश हो गया। इस समय कंठीजोइसजी आपे से बाहर थे। बुद्धि वश में न थी। घबरा उठे। इतने में पीछे से सुनाई पड़ा—'मर्डर केस, जल्दी पकड़ो।' पीछे पलटकर देखा तो वे ही न्यायाधीश थे जिन्होंने अभी-अभी निर्णय सुनाया था। उन्होंने ही पुलिस को पकड़ने का आदेश दिया था। जोइसजी का शरीर पसीने-पसीने हो गया। पुलिस झपटी। वे बिजली की फुर्ती से घोड़े पर कूदे और उसकी पीठ पर चाबुक लगायी। घोड़ा तीर-सा भागने लगा। अगर पुलिस दस गज और पास होती तो पकड़ लेती। जोइसजी ने इसके बाद मुड़कर भी नहीं देखा।

पुल पर से घोड़े को तेज दौड़ाकर दाहिनी ओर तालाब की ओर मुड़ गये। जिधर रास्ता मिला, उधर से ही होते हुए शाम को बरगूर के पास पहुंचे। 'पुलिस अवश्य मेरा पीछा कर रही होगी! राज्य शासन का हुक्म है कि खूनियों को कहीं से भी ढूंढ़कर पकड़ा जाये। अब फांसी की सजा होगी! न्यायाधीशों ने स्वंय देखा है, इसलिए वकील भी कुछ नहीं कर सकता! इसलिए इस राज्य को ही छोड़ देना चाहिए।' जोइसजी ने निश्चय किया। वे जानते थे कि इस घोड़े से जाने पर खतरा है। साथ ही यह विचार भी आया कि इसे आखिर छोड़ा भी कहां जाय!

दाहिनी ओर चार मील जाकर, थके हुए घोड़े को गांव की ओर मोड़ दिया। नागलापुर वहां से चार मील था। रास्ता भी घोड़े के लिए परिचित था। किसी तरह भी घर पहुंच जायेगा। किसी के हाथ लग जायेगा तो वही बांध लेगा। वे वहां से बायीं ओर बढ़े। एक गांव में गये। इस बेविनहळ्ळी से वे परिचित थे। यहां एक कपड़े की दुकान भी थी। दुकान से एक मोटी धोती खरीदी। इसी दुकान से लगकर एक छोटी दुकान है जहां से एक आने की पिसी हल्दी, एक माचिस, खरीदी। अब गांव के बाहर निकले। एक बाड़ी के कुएं में नयी धोती को भिगोया। रगड़कर उसकी कांजी निकाली। हल्दी और चूना मिलाकर धोती को भगवा रंग में रंग लिया। इसे सिर पर डाल उत्तर की ओर बढ़े। आधी रात तक वह सूख गयी।

पास ही एक रेतीला तालाब मिला। थोड़ी रेत खोदी। भगवा कपड़े पहन लिये और लकड़ी के टुकड़ों की आग जलाकर उसमें उतारी हुई निकर, कोट और कमीज स्वाह कर दी। पूरी तरह जलकर राख हो जाने के बाद उसे रेती से पूर्ववत पाट दिया। पास के सिक्के अंदर लंगोट में ठूंस लिये। आठ मील पर अरसीकेरे है। देर करने से खतरा था। जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये। अरसीकेरे पहुंचकर स्टेशन पर पूछताछ की तो पता लगा कि पौ फटने के बाद ही हुब्बळ्ळी की ओर जाने वाली रेल मिलेगी। धैर्यपूर्वक स्टेशन पर ही इंतजार की। सुबह गाड़ी से चल दिये। प्रदेश की अंतिम सीमा हरिहर पार कर ली तो फिर अंग्रेज सरकार है। 'उसके बाद वे मेरे बेटे मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते'। उन्हें यह विश्वास था।

[8]

आठ महीने के लगातार इलाज के बाद भी कल्लेश का बायां हाथ ठीक नहीं हुआ था। बायें हाथ की कंपकंपी दिखाई न देने पर भी, हाथ से कसकर पकड़ा नहीं जा सकता था। केवल दाहिने हाथ से ही साइकिल नहीं पकड़ी जा सकती थी। इसका मतलब यह हुआ कि अब पुलिस की नौकरी नहीं कर पायेगा। शारीरिक अस्वस्थता पर उसे नौकरी से निकाल दिया गया। पुलिस विभाग की सबसे निचली नौकरी पुलिस की होते हुए भी उसने सरकारी नौकर के रौब से दौलत का अनुभव कर लिया था। अब वह चल दिया। ठीक तरह से गांव में खेत, बाड़ी, घर

संभाले तो उसे चिंता करने की जरूरत ही नहीं और उसने चिंता की भी नहीं।

इस बीच उसे यह खबर मिली कि नरसीपुर के केस में पिताजी जीत गये हैं और फिर श्यामण्णा को इतना पीटा कि वह बेहोश हो गया था और उसके मुंह से खून निकलता देख वे कहीं भाग गये। वास्तव में श्यामण्णा मरा नहीं था। जूता मुंह पर पड़ा था इसलिए सामने के दो दांत टूट जाने से खून बहने लगा था। और वैसे ही चेतनाहीन हो गया था। न्यायाधीशों ने डाक्टर बुलवाया। डाक्टर के आने के पहले ही वह होश में आ गया। अब दुबारा कंठीजोइसजी पर केस करने के लिए श्यामण्णा तैयार नहीं हुआ। केस करके दंड कराया जा सकता है, या जेल की सजा दिलायी जा सकती है, लेकिन उसके जेल से छूटने के बाद अगर रात के समय बाहर से दरवाजे को ताला लगाकर ऊपर से मिट्टी का तेल उड़ेल दे और आग लगा दे तो कौन बचायेगा?—इस भयपूर्ण विचार से वह चुप रहा।

कंठीजोइसजी का घोड़ा घर पहुंच गया। अक्कम्मा ने नंजम्मा को बुलाकर उसे बंधवाया। नंजम्मा और अक्कम्मा समझ नहीं पाये कि जोइसजी कहां गये हैं और क्यों? इस बीच कल्लेश घर आ गया। अपनी बायीं बांह के लिए गौरसार औषधि शुरू की। कंठीजोइसजी के बारे में बताने में वह भी असमर्थ था।

इस बीच कल्लेश की पत्नी कमला ऋतुमति हो गयी। छह महीने बीत गये लेकिन कंठीजोईसजी का पता न चला। अक्कम्मा बोली—"अब उसका इंतजार नहीं करना चाहिए। गौना कराकर बहू को ले आना चाहिए। देर करना ठीक नहीं।" दिन तय हुआ। कल्लेश रामसंद्र गया और बहन, उसके बच्चे और बहनोई को लिवा लाया। इन सबके साथ अक्कम्मा बैलगाड़ी में सवार हो हासन के लिए चल पड़ी।

कमला ससुराल आयी तो पति को स्पर्श का अवसर ही नहीं दिया। जिद् पकड़ उसने शरीर सिकोड़कर रात बिता दी। लेकिन कल्लेश ऐसा मर्द नहीं था जिसने लड़की न देखी हो और विषय से अनभिज्ञ भी न था। सात महीने उन्हीं के घर रहने पर उससे परिचय हो गया था। लेकिन अब बातों और प्यार से रिझाने पर भी वह टस से मस नहीं हो रही थी। बोली तक नहीं। अगले दिन पहली रात में वह बोली—"उस पिछड़े गांव में मैं नहीं जाना चाहती।"

कल्लेश उसके अंतःकरण की बात तुरंत भांप गया। लेकिन कुछ कर नहीं सकता था। दुलार कर फुसलाया—"गांव हुआ तो क्या हुआ? वहां दो गायें दूध देतीं

हैं। इस शहर के समान वहां घी-दूध की कमी नहीं है। अन्न-धान्य आदि पर्याप्त मात्रा में होता है। दान-दक्षिणा के रूप में भी बहुत कुछ आ जाता है।"

"मैं गांव में नहीं रह सकती।"

"मैं भी सरकारी नौकरी में था ही, लेकिन किस्मत ही ऐसी निकली। क्या किया जा सकता है! अब गांव में खेती-बाड़ी करेंगे और सुख से रहेंगे।"

"और कोई सरकारी नौकरी कर लीजिए।" दीवार की ओर मुंह किये ही वह बोली।

"देखेंगे!" पता नहीं एक इलाके वालों ने मेडिकल-अनफिट कर दिया है तो दूसरे इलाकेवाले भर्ती कर लेंगे या नहीं!"

"वह मैं नहीं जानती।" कहकर उसने पति को बोलने का अवसर ही नहीं दिया, तो उसकी कनपटी पर कल्लेश का दाहिना हाथ पड़ा। इस समय ज्यादा गड़बड़ करना ठीक नहीं समझा, क्योंकि बाहर ससुराल के सगे-संबंधी थे और अपनी दादी, बहन, बहनोई भी थे।

मन में और भी एक बात थी। जब वह बीमार था तो इन्होंने बहुत दिनों तक अपने घर में रखकर उसकी सेवा की थी। उसमें भी ससुरजी ने तो दामाद का बायां हाथ ठीक होने के लिए बड़ी मेहनत की थी। उनका मन दुखाना उसे ठीक नहीं लगा। वह चुप रहा।

अगले दिन जब सब जाने की तैयारी कर रहे थे तो कमलु अपनी मां से बोली—"मैं वहां नहीं जाऊंगी।"

"चुप रह। लोग हंसेंगे, ऐसा नहीं बोलते।"

इससे अधिक उसकी मां ने कुछ नहीं कहा। यह सोचकर उन्होंने इसलिए अधिक कुछ नहीं कहा कि मायके से पहली बार ससुराल जाते समय लड़कियों का ऐसा कहना स्वाभाविक है। उसके माता-पिता, भाई-बहन सभी गाड़ी में बैठ नागलापुर आये। चार दिन रहकर लौट गये। उसी दिन नंजु भी अपने पति और बच्चे के साथ अपने गांव चल दी।

उस रात को भी कमलु ने फिर वही बात कही। कल्लेश बोला—"तूने देख लिया न, इस घर में किस चीज की कमी है। इतना घी, दूध, दही, सब्जी आदि हासन में भी कहां है?"

"यह में नहीं जानती।" दीवार की ओर मुड़कर उसने अंगड़ाई ली। सास-

ससुर यहां थे, तब तक तो कल्लेश ने सह लिया, लेकिन अब अपने को रोक न सका। उठकर कपोल पर दे मारा। वह सिसक उठी। पुलिस खाते का भूतपूर्व नौकर! उठा-उठकर पीठ पर लगायी। बाहर सोयी अक्कम्मा पूछ बैठी—"यह क्या हो रहा है ?"

"हरामखोर, छिनाल, ऐसा कहती है! मानो मैंने कभी देखा ही नहीं।" और अपना बिस्तर कमरे से बाहर ले आया और वहीं बिछाकर लेट गया। अक्कम्मा को बताया तो वह कमरे में गयी। उसे समझाती हुई बोली—"ऐसा क्यों कर रही है ? यहां तुझे किस चीज की कमी है ? खाने की कमी है या पीने की ? ऐसा नहीं कहना चाहिए। हम तुझे कष्ट नहीं देंगे, सुख से रह।"

"मुझे श्मशान-सा यह गांव नहीं भाता।" सिसकती हुई वह बोली।

अक्कम्मा समझ नहीं पा रही थी कि इसे कैसे समझाया जाय। शहर की लड़की को लाते समय ही उसे इस बात की शंका थी। लेकिन कंठी ने किसी से कहे-सुने बिना ही तय कर लिया था। जो होना था सो हो चुका। अब तो किसी तरह निभा लेना चाहिए—बूढ़ी का यही विचार बना।

कल्लेश बाहर से ही बोला—"उसे खुजली है। तुम खुजलाने मत जाओ। बाहर आ जाओ।"

अक्कम्मा जितना समझा सकती थी, समझा दिया। तब बाहर आकर लेट गयी। थोड़ी देर बाद कल्लेश को नींद लग गयी। सुबह उठकर स्नान किया, नाश्ता किया और पिता के घोड़े पर सवार होकर श्रवणबेळगोळ की ओर निकल पड़ा। उसके पुराने परिचित वहीं पास के गांव में रहते थे।

पांचवां अध्याय

सातु पांच महीने की गर्भवती थी तभी उसके पिता उसे जचकी के लिए लिवा ले गये। नंजम्मा फिर गर्भवती हो गयी।

पटवारी-कार्य की बही लिखने वाले तिम्लापुर के द्यावरसय्या की उम्र साठ पार कर गयी थी। उन्हें अपने उपविभाग के हिसाब-किताब लिखने थे। उसके साथ चेन्निगराय का काम संभालना कठिन लगने लगा। चेन्निगराय से मिलते पचास रुपयों के अतिरिक्त, इस वर के प्रति उनमें एक तरह से स्नेह भी हो गया था। वैसे इस घर के सदस्य प्रायः मूर्ख ही थे, लेकिन बहू नंजम्मा के गुण और स्वभाव देखकर वे गौरव अनुभव करते।

एक दिन घर में नंजम्मा के अलावा और कोई नहीं था। चेन्निगराय सामने के मंदिर में तंबाकू मसलते हुए महादेवय्याजी का भजन सुन रहे थे। अप्पण्णय्या मछुआरों की गली में माटा के घर में बैठा बीड़ी फूंक रहा था। गंगम्मा तेलिन ईरक्का के घर के सामने तिल्ली का तेल निकलवा रही थी।

द्यावरसय्याजी नंजम्मा से बोले—"देख बेटी, मेरी उम्र पूरी हो गयी! इस काम को अब अधिक से अधिक दो साल और कर सकूंगा। हमारे चेन्निगराय खुद हिसाब-किताब लिखना नहीं सीखते। बता क्या किया जाय?"

"मामाजी, आप ही उन्हें अच्छी तरह से साफ-साफ समझा दीजिए।"

"इस हिसाब में क्या खाक रखा है बेटी! होन्नवळ्ळी के सीतारामजी के साथ तीन साल रहकर भी जब कुछ न सीखा, तो इसका यही अर्थ है कि उन्हें कुछ नहीं आयेगा। कितने समय से मैं यहां लिख रहा हूं, लेकिन वे हैं कि सब भार मुझ पर ही छोड़कर सोये रहते हैं। कभी मेरे पास बैठकर लिखा है? नहीं। लिख-लिखकर ही तो सीखा जाता है। बीच-बीच में मुझसे पूछे तो सिखा दूं। अपना कार्य स्वयं नहीं करना चाहिए क्या? कितने दिन पगार देकर लिखवाते रहेंगे?"

दो वर्ष पहले यही विचार नंजम्मा के मस्तिष्क में आया था। लेकिन वह क्या कर सकती थी? "मामाजी, मेरी किस्मत तो आप जानते ही हैं। आप ही कहिए! मैं क्या करूं!"

"बहन, तुम्हें इतना पढ़ना-लिखना आता है। तुम्हारी कविता की पुस्तक मैंने देखी है। अच्छे मोती-से गोल-गोल सुंदर अक्षर लिखती हो। मैं तुम्हें सिखाऊंगा। तुम सीख लो। घर में बैठकर ही लिखना है। चेन्निगराय को कोट-फेटा पहन जमाबंदी कर आने दो। नहीं तो इस घर का उद्धार नहीं होगा!"

"क्या औरतें सरकारी हिसाब-किताब छू सकती हैं?"

"इस प्रश्न का समाधान द्यावरसय्याजी तुरंत नहीं कर सके। सरकारी कानून क्या कहता है, यह भी नहीं मालूम। फिर भी बोले—"देखो, तुम तो पटवारी-कार्य का चार्ज नहीं ले रही हो, सिर्फ घर में बैठकर हिसाब लिखना है। ऊपर के अधिकारी को क्या मालूम कि औरत ने लिखा है या मर्द ने! तुम बिना किसी को कहे सीख लो।"

रजिस्टर में रेखाएं खींचकर उसे आगे बढ़ाकर द्यावरसय्याजी बोले—"यह लो इसमें पहले लाइन डालो। यहां देखो, रूलर शीर्षक की लाल रेखा के समानांतर चलना चाहिए। बायें हाथ की उंगली से रूलर धीरे-धीरे सरकाना चाहिए। इस बात का ध्यान रहे कि निब से स्याही न टपके। अच्छा देखें, लाइन तो डालो।"

नंजम्मा ने वैसे ही किया। उनकी जितनी शीघ्रता से रेखाएं खींच तो न सकी, किंतु रेखाएं सीधी और ठीक जगह पर अवश्य थीं। "सुंदर है, आदत होने दो। अब तुम ही पूरे रजिस्टर में रेखाएं डाल लो।" कहकर वे तालाब की ओर चल दिये। नंजम्मा के लिए यह नया अनुभव था। इससे पहले, जब वह छोटी थी तब अपनी कविता-पुस्तिका में स्लेट के किनारे से रेखा खींचा करती थी। लेकिन रूलर से, वह भी सरकारी पुस्तक में, रेखा डालने में एक अजीब-सा आनंद लग रहा था। वह भी पहली बार में ही अचूक रहा। उसने पटवारियों को कहते सुना था—"पटबारी-कार्य सामान्य कार्य थोड़े ही है! ठीक तरह से लाइन खींचने में ही छह साल लग जाते हैं और इस अवधि में रूलर की मार से हथेली में छाले उठ आते हैं।"

वह लाइन डाल रही थी कि अप्पण्णय्या आया। भाभी के इस काम को देखकर वह भौंचक्का रह गया। उसे क्रोध आ गया। सीधा तेली गली जाकर मां से

बोला—"देख मां, वह हिसाब की किताब को बिगाड़ रही है।"

"कौन ?"

"तुम्हारी बड़ी बहू। किताब में लाइन डाल रही है।"

"यह क्या है। इसका घरबार नष्ट हो जाय ! गधी, छिनाल कहीं की।" कहती हुई गंगम्मा एक ही सांस में दौड़ी आयी। इसके आने तक द्यावरसय्याजी तालाब से लौट आये थे और बरामदे में बैठकर अपनी नासिकाओं में सूंघनी भर रहे थे। बहू भीतर लाइन डाल रही थी। "तेरी अक्ल ठीक तो है छिनाल, क्या कर रही है ?" गंगम्मा की बातें सुनकर द्यावरसय्याजी भीतर जाकर पूछने लगे—"क्यों क्या हुआ ?"

"हिसाब की किताब छूकर ऐसा करना इसके लिए ठीक है क्या ?"

"नहीं बहन, लाइन डालने के लिए मैंने ही कहा था। मेरी तबियत ठीक नहीं है। हिसाब समय पर समाप्त होना चाहिए। चेन्निगराय तो कुछ करता ही नहीं।"

"कोई छिनाल औरत के हाथों हिसाब करवाता है ?"

"बुरी बात क्यों कह रही हैं बहन ? छूने से कुछ नहीं होता।"

"हमारे यजमान का पटवारी कार्य था। उसकी हिसाब की किताब को इसके हाथों से छूना ठीक है ?"

"यह आपके यजमान की बहू है न बहन ! परायी तो नहीं।" इतने में नंजम्मा रूलर, कलम आदि वहीं छोड़कर बाहर जा चुकी थी। उसे बुलाकर द्यावरसय्याजी बोले, "नंजम्मा, उठकर क्यों चली गयी ? आओ, तुम अपना काम करो। मैंने तुम्हारी सास से कह दिया है।"

गंगम्मा मंदिर जाकर बेटे को बुला लायी। नंजम्मा फिर लाइन डालने लगी थी। उसे दिखाकर गंगम्मा बोली—"देख तेरी औरत को, तेरे समान पटवारी-कार्य करने चली है।"

स्वयं द्यावरसय्याजी ने चेन्निगराय से कहा, "देखिए पटवारीजी, मेरी तबियत ठीक नहीं है। बैठकर रूल डालते-डालते पीठ में दर्द उभर आया है। पुस्तक बांधने लाइन डालने, दायीं ओर का हिसाब लिखने, आदी काम करने की मैंने अपनी स्वीकृति दी है। आपकी पत्नी ठीक लाइन डालती है सुंदर अक्षर लिखती है। साफ-साफ कहिए, क्या आप उसे यह काम करने देंगे या खुद करेंगे ! नहीं तो अब मैं अपने गांव जा रहा हूं।"

चेन्निगराय दुविधा में पड़ गये। एक मिनट सोचकर बोले, "इस छिनाल के हाथ से ही करा लीजिए। मैं चला भजन सुनने।" और वे चले गये। बेटे को गालियां देती हुई मां तेलियों के मुहल्ले में चली गयी। वहां अकेला बैठना अपना अपमान समझकर, अप्पण्णय्या मछुआरों के मुहल्लों में फिर से चला गया।

द्यावरसय्याजी नंजम्मा से बोले, "बहन, इस घर की हालत मैं पहले से ही जानता हूं। तुम्हारे ससुर की यह दूसरी शादी हुई है। तब उनकी उम्र शायद चालीस से अधिक थी। इसलिए तुम्हारी सास का स्वभाव ऐसा है। उन्हें जो मन आये कहने दो। तुम मन लगा कर हिसाब-किताब की बातें सीख लो। नहीं तो इस का उद्धार नहीं होगा। तुम्हारे ससुरजी जब पटवारी थे, तब उन्होंने एक बार मेरी मदद की थी। इसलिए हिसाब-किताब के बारे में मैं जितना जानता हूं, तुम्हें सिखा दूंगा। मैं जैसा कहता हूं, वैसा करो।"

[2]

इसके तीन महीने बाद सालांत का हिसाब पूरा करना था। पटवारी-कार्य में यह अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य है। इसमें गलती न हुई हो तो अगले साल के हिसाब में गलती होने की संभावना नहीं रहती। "बहन, तुम्हें भगवान ने अच्छी बुद्धि दी है। दूसरे तो चार वर्ष सीखने पर भी दायां-बायां समझकर नहीं लिख पाते। कठिन होने पर भी तुम मेरे बताये अनुसार लिखो। उसके बाद मैं तुम्हें सालांत का हिसाब लिखना सिखाऊंगा।" अब उसे जो हिसाब लिखना था, वह बताकर द्यावरसय्याजी गांव चले गये। इनके आने तक उसे सब हिसाब समाप्त करना था। नंजम्मा को छठा महीना चल रहा था। प्रसूति के लिए सातु अपने मायके गयी हुई थी। प्रसूति हुई या नहीं, ये लोग नहीं जानते। घर का कामकाज करने के साथ-साथ गर्भवती नंजम्मा लगातार हिसाब-किताब नहीं लिख पाती थी। "छिनाल औरत, मर्द की तरह हिसाब लिखने बैठी है, तो मैं क्यों काम करूं?"—कहकर गंगम्मा ने खाना भी न पकाने की मानो कसम खा ली हो। एक दिन दोपहर के भोजन के पश्चात् नंजम्मा लिख रही थी। चेन्निगराय और अप्पण्णय्या दोनों उसी बरामदे में सोकर खर्राटे भरने में होड़ ले रहे थे। गंगम्मा दरवाजे के पास बैठकर

रात के फलाहार में उसळ बनाने के लिए मूंग बीन रही थी। बच्ची पार्वती अंदर सोयी थी।

बाहर बंधी गाय को कोई चराने नहीं ले गया। न ही उसे सूखी घास डाली गयी और न पानी पिलाया गया। दो बार जोर से रंभाकर जल्दी-जल्दी खूंटे के चक्कर काटने लगी। नंजम्मा ने अपने पति को आवाज दी—"सुनाई पड़ा!"

उनकी नींद नहीं खुली। अप्पण्णय्या ने करवट बदल ली। नंजम्मा ने उसी से कहा—"अप्पण्णय्या, जाग गये क्या?"

"उं!" कहकर उसने चादर ओढ़ ली।

"हम सबने पेटभर लिया, लेकिन गौमाता का उपवास चल रहा है। उसे बाड़ी में चराकर नहीं लाना चाहिए था क्या?"

"उं!" उसने पुन: लंबी सांस ली।

दस मिनट बाद नंजम्मा फिर बोली—"दिन में दो बार इन्हें दूध चाहिए, लेकिन उसकी देखभाल कोई नहीं करता। इतने आलसी बनेंगे तो भगवान खाने को अन्न कैसे देगा।"

इस बात से गंगम्मा को क्रोध आ गया—"क्या बक रही है री?"

"मैंने कोई गलत बात नहीं कही। इतना ही तो कहा कि गाय को उपवासी ही बांध रखा है।"

"तो तू ही चरा ला।"

"यह हिसाब कौन लिखेगा?"

"आ-हा-हा-हा! झगरी, हिसाब लिखने से तुझे सूबेदार की दौलत मिलनी है! सिर चढ़कर नाच रही है, छिनाल!"

जब से कंठीजोईसजी गायब हुए थे और उनके आने की संभावना भी बहुत कम ही थी, तब से बहू के प्रति व्यवहार में गंगम्मा को तनिक भी भय न रहा था। नंजम्मा भी छिनाल, रांड, जैसे शब्दों की अभ्यस्त हो चुकी थी अब तक।

मां की आवाज से अप्पण्णय्या की नींद खुल गयी। दोपहर की नींद बीच में ही टूट पड़ने के कारण करवट बदलते हुए उसने गुस्से में पूछा—"क्या है मां?"

"मैं हिसाब लिखकर सूबेदारी करती हूं, तुम खाकर पड़े हो, गाय चराकर लाओ, रांड के बेटे—कहकर तुझ पर हुक्म चला रही है। देख?"

"अप्पण्णय्या आग-बबूला हो उठ बैठा—क्यों री, ऐसा कहती है ? अक्ल ठिकाने पर है न ?"

"मांजी, झूठ क्यों कह रही हैं ! भगवान की कसम खाइये कि मैंने ऐसा कहा।"

"देख अप्पण्णय्या, मैं भगवान की कसम खाऊं ? झूठ बोलने के लिए मैं अन्न खाती हूं या मैला ? यह कहती है तुम लोगों की मां झूठ बोल रही है। देख क्या रहा है ? इस छिनाल को लगा दो लात।"—गंगम्मा की बात पूरी हुई कि अप्पण्णय्या उठा और दाहिना पैर उठाकर भाभी की पीठ पर जड़ दिया। वह वहीं लुढ़क गयी। दुबारा पैर उठाकर गरजकर बोला—"अगर फिर कभी हमारी मां को ऐसा कहा तो गड्ढा खोदकर गाढ़ दूंगा।" इतने में बाहर कुछ पुलिसवाले आ गये। खाकी कमीज, खाकी टोप, पैर में जूते, हाथ में चमड़े की थैली, काला कोट। पुलिसवाले ही थे। उनके साथ दो पुलिसवाले और थे जिन्होंने पैरों में बेल्टनुमा खाकी मोजा लपेटा हुआ था, हाथ में चमड़े की थैली, सांकल, लोहे की पट्टी और भी कई चीजें लाये थे। अप्पण्णय्या की छाती धड़क उठी। "हाय ! हाय ! ! मैं मरा !" चिल्लाते हुए दरवाजे से बाहर निकलकर रास्ते की ओर वह भागा। वहां से वह बगल के गलियारे में घुसा तो गलियारे के कुत्ते भूंकने लगे।

उन्हें देखकर गंगम्मा भी दिग्भ्रमित हो गयी। कांपती हुई खड़ी हो गयी। अप्पण्णय्या के चीत्कार करते हुए भागने से चेन्निगराय भी जाग गये और उठ बैठे। अंदर बच्चा रोने लगा। नंजम्मा वैसे ही मुड़कर, आगंतुकों को देखकर बच्चे को उठा लेने के लिए अंदर जाना चाहती थी कि कमर में भयानक दर्द उठा। शायद नस जकड़ गयी हो या मोच आ गयी हो। वैसे ही झुकती हुई वह भीतर जाने लगी। चेन्निगराय ने भय मिश्रित अंदर से आगंतुकों से कहा—"म-महोदय, क-कृपया पधारें।"

"क्यों जी, आप ही हैं पटवारी चेन्निगराय ?"

"जी, सर।"

"वह आपका भाई है जो अपनी पत्नी को लात मार रहा था ?"

"वह मेरी पत्नी है सर !"

"ओह ! भाभी को लात मार रहा था ?"

"नहीं, सर !"

"क्यों जी, सरकारी नौकर होकर झूठ बोलते हो ? पत्नी की देखभाल ठीक तरह से नहीं कर सकते ?"

गंगम्मा को पसीना छूटने लगा। आगंतुक इससे अधिक कुछ नहीं बोले। चेन्निगराय ने बरामदे में एक पाटी डालकर उन्हें बिठाकर हाथ जोड़ खड़ा हो गया। इस बीच गंगम्मा खिसककर सीधे जुलाहों के मोहल्ले में पहुंची। माटा से पूछने पर वह उसके कान में फुसफुसाया—"हमने उस छत पर नारियल के तनों में छिपा रखा है।" गंगम्मा सीढ़ी रखकर छत पर चढ़ी। बेटे के पास पहुंचकर फुसफुसायी—"उनके साथ आये हुओं के हाथ में तुमने देखा है ? बटी हुई मोटी रस्सी-सी सांकल लाये हैं। लंबे फावड़े के समान लोहे की पट्टी है। तू मिल जायेगा तो सांकल से हाथ बांधकर फावड़े से गड्ढा खोदकर फांसी पर चढ़ा सकते हैं। उसका भाई कल्लेश पुलिश वाला था न! उसी तरफ के लोग हैं। तू बाड़ी से होकर भाग जा। पांच-छह महीने इस ओर मत आना। जावगळ की ओर चला जा।"

"अब क्या होगा मां ?" अप्पण्णय्या ने घबराकर पूछा।

"जल्दी कर मेरे बेटे। न जाने किस अशुभ घड़ी में हमारे घर में उस छिनाल ने अपना अशुभ पैर रखा ! बस, हमें साढ़े साती लग गयी।" वह नारियल के तनों के ढेर से बाहर आया और सीढ़ी से झटपट उतरकर पिछवाड़े के दरवाजे से एक बार दोनों ओर झांककर सूखी घास के ढेर के बाड़े के झरोखे से झुककर भाग निकला। उसे तालाब की ऊंचाई से उतरकर आंखों से ओझल होने तक गंगम्मा पछीत के झरोखे से देखती रही। फिर गंगम्मा ने थोड़ा धीरज धरा।

घर पर आनेवालों में था सरकारी अमीन (सर्वेयर)। राज्य की व्यवसायी भूमि को स्वामित्व के अनुसार पुनः नापने, उसका विस्तीर्ण और आकार का निर्णय कर इंडेक्स तैयार करने की आज्ञा रेवेन्यू कमिश्नर से मिली थी। नये नाप के लिए जो अधिकारी नियुक्त थे, वे अपने कर्मचारियों के साथ आये थे। लगभग तीन महीने तक रामसंद्र में डेरा डाले रहे, क्योंकि आसपास के गांवों की भूमि नापना इनका काम था। उनके रहने की व्यवस्था से लेकर चौकीदार, कारिंदा आदि का सहयोग दिलाने की जिम्मेदारी पटवारी की ही थी।

[3]

दूसरी जचकी के लिए अक्कम्मा स्वयं गाड़ी ले आयी और नंजम्मा को लिवा ले गयी। अब कल्लेश का बायां हाथ और भी सुधर गया था। दोनों हाथों से पेड़ से लिपटकर ऊपर चढ़ सकता था। खेती-बाड़ी के काम में भी थोड़ा-थोड़ा हाथ बंटाता। उसकी पत्नी को गांव पसंद न होने पर भी उसे सरकारी नौकरी मिलना संभव नहीं था। कल्लेश वह नौकरी चाहता भी नहीं था। कमलु स्वयं को गांव के लायक बनाने में असमर्थ रही या उसका स्वभाव ही ऐसा था कि दादी और पोता दोनों को उससे चैन नहीं था।

जब नंजु जचकी के लिए आयी तो साथ में ढाई साल की पार्वती भी थी। कल्लेश उसे उठाकर लाड़-प्यार करता। एक दिन कल्लेश खेत की ओर गया तो कमलु अपने आप कहती-सी जोर से जो बोली, वह उसने सुन लिया—"सूअर की तरह जल्दी-जल्दी गर्भवती बनने मात्र से चलता है क्या ? पति के घरवाले जचकी करने में असमर्थ हैं तो गर्भवती क्यों बनना ? मायके वाले करते हैं तो आखिर उनका कितना खून चूसा जा सकता है ?"

नंजु ने यह सुन लिया। सोचने लगी—'अपने को न अच्छी सास मिली और न अच्छी भाभी। मेरी किस्मत ही ऐसी है। अब केवल सात महीने का गर्भ है। अब प्रसव होकर, जब तक बच्चा तीन महीने का नहीं होता, जा नहीं सकती। अर्थात्, पांच-छह महीना यहां रहना पड़ेगा। गांव जाना उचित तो है, लेकिन वहां सास की पीड़ा। जचकी के लिए मायके आयी हुई अगर वैसे ही लौट जाऊं तो सास खुरेदे बिना नहीं रहेगी। पति भी तो पत्नी का पक्ष लेकर बोलने वाला नहीं है। खैर, प्रसव होने दो।' उसकी आंखों से एक आंसू की बूंद टपक पड़ी।

कमलु की बात अक्कम्मा ने भी सुनी। चुपचाप सारी बातों को सहनेवाली पोती के आंसू देखकर क्रुद्ध हो गयी। कमलु के सामने खड़ी होकर उसने पूछा—"गौना हुए एक साल हो गया, तो भी तू गर्भवती नहीं हुई। तो तू उसे सूअर कहने वाली कौन होती है ? बांध में पानी नहीं, पेट में बच्चे नहीं !" तुझ जैसी पापिन को गर्भ ठहरे भी कैसे !"

"ए बूढ़ी, तेरा पोता छिनालों के साथ सोता है तो घरवाली को गर्भ कैसे ठहरे।

ऐसी मां की हरामखोर औलाद तुम लोगों के घर में ही पैदा हुई है।"

"बेशर्म होकर बात मत कर, गधी, छिनाल ! पति के साथ सोये तो मर्द बाहर क्यों जाये ! तूने औरत जाति में जन्म लिया है, री ?"

इससे नंजु को नयी बातें मालूम हुईं। पास आकर वह बोली—"अक्कम्मा, धीरे तो बोलो। पड़ोसियों ने सुन लिया तो ?"

"पड़ोसी ही क्यों ? इस गांव का हर आदमी इस छिनाल की कहानी जानता है। आकर इसने एक महीने के अंदर ही हमारे घर की इज्जत मिट्टी में मिला दी। तालाब से पानी लाने जाती है तो सारे गांव वालों को हमारे घर की बात बताती रहती है। अच्छे कुल में जन्म लिया हो तब न ?"

"रे बूढ़ी, छिनाल ! मेरे बाबा के घरवालों को ऐसा कह रही है ! हमारे स्नान घर के गंदे नाले में शुद्ध होयेगी तो तुझे पुण्य मिलेगा।"

"अक्कम्मा, तुम मत बोलो। अंदर चलो।" नंजु दादी को अंदर लिवा ले गयी। फिर बाहर आकर भाभी से बोली—"भाभी, थोड़ा धीरे नहीं बोल सकतीं ? हमारे घर की बातें दूसरों को मालूम पड़े तो वे पीठ पीछे हंसते रहते हैं।"

"पति के घर खाने के लिए रोटी न मिली तो जचकी के लिए यहां आ गयी ! मुझे मत सिखाओ, जाओ।"

नंजु चुपचाप अंदर चली गयी। कमलु सोने के कमरे में जाकर चटाई पर औंधी लेट गयी। जिस तरह कोपभवन में कैकेयी पड़ी थी, उसी तरह बाल बिखेर लिये, माथे का सिंदूर मिटा लिया और चेहरा जो पहले ही सूजा हुआ था और भी सूजा लिया। इस हालत में उससे किसी ने बात भी नहीं की।

एक बजे के समय कल्लेश घर लौटा। स्नान किया। पत्नी की अनुपस्थिति की ओर उसका ध्यान नहीं गया। लेकिन कमलु कैसे चुप रहती ? भीतर से पिटपिट गालियां देने लगी। कल्लेश का ध्यान उस ओर गया। आधे खुले कमरे के द्वार के पास खड़ा हो गया। एक मिनट में सौ शब्दों की गति से उसके मुंह से निकल रही पिटपिट स्पष्ट सुनाई पड़ रही थी—"छिनाल की औलाद के घर का नाश हो, इनका वंश मिट जाय, इनका घर मिट्टी में धंस जाय ! ये छिनालें मर जायें ! छिनाल की औलादों, छिनाल की औलाद, छिनाल, छिनाल की औलाद।"

खेत में धूप में काम करके आये हुए कल्लेश ने पूछा—"ओ री, छिनाल, गालियां किसे दे रही है ?"

"छिनाल की औलाद, छिनाल की औलाद, छिनाल की औलाद" मंत्र-सी रटती हुई दोनों हाथों की उंगलियां मिलाकर इस तरह तोड़ीं मानो पटाखे की लड़ फूट रही हो।

"हत् ! बहन…!" और दाहिने हाथ का एक घूंसा पत्नी की पीठ पर जमा दिया।

मुंह फिराकर वह बोली—"छिनाल की औलाद, मुझे मार, रहा है ? जैसे तेरा बायां हाथ बेकार हो गया, वैसे ही दाहिना हाथ भी बेकार हो जाये ! मेरे शाप को क्या समझ रखा है ?" एक घूंसा और पड़ा। उसी सांस में वह आगे बोली—"बीमारी के बहाने मेरे बाबा के यहां आठ महीने टुकड़े तोड़ता रहा न तू ? पेटू ! मुझे मारने के लिए तेरे हाथ उठे कैसे ? तेरे हाथ में कीड़े पड़ें !"

इतने में नंजु वहां दौड़ी आयी। मार की आवाज सुनकर बच्ची पार्वती रसोई-घर में ही रोने लगी। नंजु भाई का हाथ पकड़ कर खींचती हुई बोली—भैया, तुम्हारी, अक्ल ठिकाने है या नहीं ? पत्नी को कोई ऐसे मारता है ! कुछ हुआ तो फिर क्या ? चुपचाप अंदर जाकर खाना खा लो।"

"मेरा हाथ छोड़। आज इस बेहया की बहन… ठिकाने लगा देता हूं।" उसने हाथ छुड़ा लिया।

लेटी हुई कमलु प्रत्यंचा टूटे धनुष-सी उठी और पति की ओर पीठ फेर कर खड़ी रही और बोली—"मारना चाहता है, तो ले मार ! बांह टूटने तक मार। आज तुझे फांसी पर चढ़वाऊंगी ! आज ही अंतिम दिन है, ले मार !"

नंजु भाई को और मजबूती से पकड़, बाहर खींचने लगी। वह भी ताकतवर औरत थी। कल्लेश भी कम शक्तिवान पुरुष नहीं था ! दोनों कंठीजोइसजी की ही तो संतान थे। उसने हाथ नहीं छुड़ाया। बायां पैर उठाकर कमलु की कमर पर लात मारी। इस प्रहार से वह लुढ़क पड़ी। "बहन…फिर ऐसा किया तो तुझे सिखाता हूं" कहकर बाहर निकला। तो कमलु भीतर से बोली—"तुझे फांसी पर चढ़वाऊंगी !"

कल्लेश भीतर बैठा खाना खा रहा था। आज जैसी घटना इस घर के लिए नयी नहीं। लेकिन आज वह सीमातीत हो गयी। इसे किस तरह काबू में किया जा सकता है, इसका उपाय पा वह चुपचाप रोटी तोड़कर हाथ से मसलकर सब्जी से लगाकर, गुलं कहकर कौर निगलने लगा। नंजु उसके साथ न बैठकर बाद में

खाने का कहकर पछीत में कपड़े धोने लगी थी। अक्कम्मा रोटी के बर्तन में पानी डाल रही थी ताकि वह सूख न जाये। इतने में नंजु पछीत से चिल्लायी—"भैय्या, भाग आओ, भाभी कुएं में कूद पड़ी।"

"अरे इसकी ···" कल्लेश के मुंह से निकला और एक ही सांस में वह पछीत के कुएं के पास पहुंच गया। कमर झुकी अक्कमा भी वहां दौड़ी आयी। कुएं के पास रस्सी थी। उसका एक छोर कुएं में डाल और दूसरा छोड़ नंजु से मजबूती से पकड़ने का कहकर कल्लेश सर्र-सर्र नीचे उतरा कुएं की दीवार से पैर जमाकर नंजु रस्सी थामे रही।

नंजु की चिल्लाहट पड़ोसी कपिनीपतय्याजी की पत्नी को भी सुनाई पड़ी उसने पति से कमलु के कुएं में गिर पड़ने का कहकर वहां जाने के लिए कहा। वह स्वयं भी दौड़ी आयी। कपिनीपतय्याजी भी चिल्लाते हुए आये। इससे पास-पड़ौस के सभी लोग वहां एकत्र हो गये। खबर बिजली-सी फैल गयी थी।

कमलु एक बार तो ऊपर आई और फिर दूसरी बार डूब गयी। जैसे ऊपर आने पर उसने बचाने के उद्देश्य से दोनों हाथ हिलाये थे। यों वह मरने के ख्याल से कुएं में नहीं गिरी थी। केवल पति को फांसी पर चढ़ाने की बात उसने कही थी, और उसे वह पूरा करना चाहती थी। जीने की उसकी अभिलाषा थी और वह पहली डुबकी के बाद ऊपर आने पर मौत के भय से चिल्लायी भी थी। लेकिन नंजु के सुनने से पहले ही पानी ने फिर नीचे खींच लिया। पुनः गंगमैया (पानी) ने उसे अंतिम अवसर देकर फिर ऊपर उठाया। अब कल्लेश ने मजबूती से उसके बालों को पकड़ लिया। कुएं पर कपिनीपतय्याजी आदि जमा हो गये थे। कल्लेश नीचे से चिल्लाया—"रस्सी थोड़ी ऊपर खींचो।" बायें हाथ से उसने रस्सी पकड़ी थी। दाहिने हाथ में उसके बाल थे। अब वह छाती तक पानी में था और कमलु का कंधा पानी से ऊपर। कल्लेश बायें हाथ से रस्सी ठीक तरह से नहीं पकड़ पाया। ऐसी स्थिति में कमलु का भार अधिक देर तक रोक रखने की शक्ति उसके दूसरे हाथ में नहीं थी। कुएं से निकलने के लिए उसकी दीवारों में गोले बने हुए थे जिन्हें ढूंढ़-ढूंढकर उनमें पैरों को टेढ़ा रखकर मजबूत कर लिया। "हाय! हे मां! मुझे डर लग रहा है। जल्दी ऊपर खींच ले!" वह बुदबुदाई।

अब तक ऊपर के लोगों ने एक छोटा रंगीन पालना लाकर मजबूती से रस्सी बांधकर धीरे से कुएं में उतारा। पालना पास आया तो कल्लेश ने कमलु को उठा-

कर उसमें बिठा दिया। कल्लेश ने रस्सी खींचने के लिए जोर से कहा, तो कमलु बड़बड़ाने लगी—"मुझे डर लग रहा है, मैं नहीं जाती।" तो कल्लेश ने सोचा कि ऊपर जाते समय कहीं यह बंदर-सी उछलकर मेरे ऊपर ही न गिर पड़े और तब मैं भी न बच पाऊंगा। इसलिए कल्लेश ने अपनी धोती खोलकर कमलु को पालने से बांध दिया और बनियान निकाल कर लंगोट के रूप में बांध ली। पालना धीरे-धीरे ऊपर खींचा जाने लगा। चार पुरुषों द्वारा खींचे जाने वाले पालने में नौ गज की धोती से बँधी वह उसी तरह ऊपर जा रही थी जिस तरह गौरी-उत्सव के दिन बिना तालाब के गांव में कुएं से गौरम्मा निकलती है।

उसके पीछे-पीछे कल्लेश भी ऊपर चढ़ आया। कमलु का पेट पानी से फूल गया था। भय, घबराहट, लज्जा, सभी के सम्मिश्रण से उसकी आंखें लाल हो गयी थीं। कुएं में गिरते समय दीवार से टकराई थी और इससे उसकी भुजा, पीठ और सिर के एक भाग से रक्त बह रहा था। उसे जमीन पर मुंह के बल लिटाया गया और कल्लेश ने उसकी कमर धीरे से दबायी। इससे पेट का पानी मुंह से बाहर निकलने लगा। जहां से रक्त बह रहा था, उन हिस्सों को पोंछकर लेपन किया तो वह 'हाय-हाय' कर अपनी छाती पीटने लगी।

कल्लेश वहां उपस्थितों की ओर अभिमुख होकर बोला—"आपका यहां क्या काम है? आप सब अपने-अपने घर जाइये।" लेकिन लोग जाने को तैयार नहीं! कल्लेश, अत्रकम्मा, पड़ौस के दो आदमियों ने उन्हें वहां से हटा दिया।

"एक लोटा गरम-गरम काफी दो इसे।" कपिनीतय्याजी की पत्नी पुट्टम्मा बोली।

"इस छिनाल को ऊपर से काफी दी जाय! इसकी मां को चमार···कहता हुआ कल्लेश दूसरी धोती पहनने के लिए भीतर गया। पुलिस की नौकरी के दिनों में वह काफी पीना सीख गया था, फिर भी रोज पीने की उसकी आदत न थी। लेकिन हासन जैसे नगर के पोस्टमैन की बेटी कमलु को गांव (ससुराल) में काफी न मिले, कैसे हो सकता है! इसीलिए उनके घर में काफी का पाउडर था। नंजु ने एक लोटा काफी बनाकर भाभी को लाकर दी। एक घूंट ली तो कमलु लौटे को जमीन पर रखती हुई बोली—"थूः, इस गंवारू छिनाल को काफी बनानी भी नहीं आती! कभी काफी पी हो तब न!" कल्लेश ने यह सुन लिया। वह आया और उस लोटे को उठाकर सारी काफी कमलु के सिर पर उड़ेल दी।

अब वह कुछ न बोली। कल्लेश भीतर चला गया। "उठ, साड़ी बदल ले।" अक्कम्मा बोली। दो पुरुष खड़े थे, वे भी अंदर चले गये। अब वहां केवल महिलाएं ही रह गयीं। तो भी वह उठी नहीं। गीली साड़ी भी नहीं बदली। बिखरे भीगे बालों में ही कुएं के किनारे कुकड़ूं-कूं की तरह बैठी रही।

उस दिन रात को भी कमलु ने खाना नहीं खाया। कल्लेश ने खाना खा लिया। नंजु के न-न करने पर भी गर्भवती होने के कारण अक्कम्मा ने उसे जबर्दस्ती खाना परोस दिया। अक्कम्मा तो रात को खाती ही नहीं थी। बुढ़ापे में न पचने के कारण, फलाहार भी छोड़े दस साल से अधिक हो गया था।

रात को कमलु अपने सोने के कमरे में पड़ी रही। कल्लेश ने अक्कम्मा और मंजु से कह दिया कि वे सामने के और पिछवाड़े के दरवाजों से लगकर सोयें। वह पुलिसमैन रह चुका था, इसलिए उसे शंका थी कि कहीं वह फिर रात में उठकर कुएं पर न चली जाय। ये दोनों दरवाजे पर सो गयीं। अब दरवाजा खोलकर किसी का बाहर जाना संभव न था। कल्लेश कमरे के दरवाजे पर बिस्तर बिछाकर लेट गया। उसे तुरंत नींद आयी। इधर-उधर के अनेक विचार चक्कर काट रहे थे। पिता पर इस बात का गुस्सा आया कि मेरे लिए कैसी लड़की लाये! और न जाने किस-किस की याद! बहुत देर के बाद आंखें झपकने लगीं।

वह एकाएक जागा। लगा कि रसोईघर में बत्ती जल रही है। लेटे-लेटे ही सिर उठाकर कमरे के अंदर देखा तो कमलु वहां नहीं थी। चुपचाप उठा और बिल्ली-सा कदम रखते हुए रसोईघर के दरवाजे पर पहुंचा, तो देखता है कि वह चूल्हे के सामने बैठी है। केशराशि अभी भी बिखरी हुई है। भगवान के मंडप में दीया जल रहा था। ऐसा लगा कि वह कुछ खा रही है। धीरे से और एक कदम बढ़ा तो क्या देखता है कि रात को खाने से इन्कार करने वाली अब अन्न के बर्तन में ही सांबर उडेलकर, जल्दी-जल्दी खा रही है और पास में छाछ का मटका रखा है।

बिना आवाज किये वह आकर लेट गया। कमलु ने जिद्द के कारण कई दिनों से खाना छोड़ रखा था। लेकिन रात में सबके सो जाने पर, निशा भोजन करती और अनजानी-सी आकर सो जाती। सुबह उठती तो हाथों की उंगलियां तोड़ती हुई गाली देती—"कल रात मेरा उपवास करा दिया, इनका घर मिट जाय!" रात को ढंककर रखे गये भोजन का गायब होना ही इस बात का सबूत था कि

वह रात में भोजन करती थी। लेकिन आज तो कल्लेश ने खुद ही देख लिया। दूसरी शादी कर लेनी चाहिए और इस नीच, चोर, छिनाल को भगा देना चाहिए—मन-ही-मन वह सोच रहा था। इतने में बाहर से मोटर या कार के आने की आवाज आयी। वह सोच ही रहा था कि कौन होगा, किसके घर आये होंगे, कि कार से उतरकर उन्होंने उसी का द्वार खटखटाया। "कौन ?" पूछता हुआ वह उठा। दीया जलाया और दरवाजे से टिककर सोयी अक्कम्मा को उठाकर दरवाजा खोला। आगंतुक उसके सास-ससुर थे और साथ में उनके चार रिश्तेदार। ड्राइवर को वह नहीं जानता था। इन्हें देखकर उसे आश्चर्य हुआ।

"कमलु कैसी है ?" फूट-फूटकर रोती हुई उसकी मां अंदर आयी।

"रसोईघर में देखिए"—कल्लेश बोला।

वे वहां जाकर देखते हैं तो वह नहीं! भगवान के दीप को अभी अभी बुझाने की गंध आ रही है। "अरे,कहां गयी ?" कहकर कमरे में आकर देखता है तो वह चटाई पर मुंह के बल लेटी, आंखें ऐसे मुंदी थीं मानो वह कभी उठी ही नहीं है।

"देखा ! जब आप आये तब यह रसोईघर में अन्न के बर्तन में ही सांबर मिलाकर खा रही थी। अब दीप बुझाकर, यहां आकर ऐसी लेटी है मानो कुछ जानती ही नहीं। आप ही देखकर आइए।" कहकर हाथ में दीपक पकड़े उन्हें वहीं लिवा ले गया।

"अब जाने दो। क्या हुआ ? सब कुशल तो है ?" ससुर जी ने पूछा।

"आप लोग क्यों आये ? बात क्या है ?" भूतपूर्व पुलिस कांस्टेबल कल्लेश ने प्रश्न किया।

"कमलु के कुएं में गिरने की बात कह कर हमें आने के लिए कहा गया था। तुमने ही टेलीफोन करवाया था न ?"

"हुं हूं ! यह बताइए कि आप को किसने किया था ? जल्दबाजी में मैं भूल ही गया !"

"कोईभी हो, इन्हें क्या करना है ?" कमलु भीतर से फटाक से बोली।

खैर सब समझ गये कि टेलीफोन कमलु ने ही करवाया था। लेकिन समझ नहीं पाये कि उसकी ओर से किसने किया ! फिर यह सोचकर कि पता लगाना कठिन नहीं है, कल्लेश ने खुरेदने की कोशिश नहीं की। उसने सीधे पड़ोसी के घर जाकर दरवाजा खटखटाया। कार की आवाज से वे भी जाग गये थे। कंपनी-

पतय्या और पुट्टम्मा दोनों को घर लाया। एक ओर पड़ोस के घरवालों को भी बुला लाया। बोला—"मैं बोलूंगा तो आप झूठ मानेंगे, इसलिए इन्हीं से पूछिए। कपिनी मामा जी आप ही असली बात इन्हें बताइये।"

पड़ोसियों ने कुछ नहीं कहा। कल्लेश ने ही घटना बतायी। उसने यह तो बताया कि उसने मारा था लेकिन लात की बात नहीं बतायी। आसपास वालों ने स्वीकार किया कि कल्लेश ने जो कुछ कहा, सच है। उसकी सास बोली—"ठीक है, फिर भी हमारी पाली-पोसी लड़की को जब आपके गांव भेजा है तो आपको निभाना चाहिए!"

लेकिन ससुर पोस्टमैन रंगण्णाजी ने झुका हुआ सिर ऊपर नहीं उठाया। कल्लेश ने उन्हीं से पूछा, "आप ही अब बोलिए कि किस हरामजादे ने आप को टेलीफोन किया?"

"मेरे मुंह से झूठ नहीं निकलेगा। फोन चेन्नरायपट्टण से आया था। कहते हैं, वहां के इलेक्ट्रिक कैंप की हासन कैंप के साथ बात हुई थी और यह भी बताया कि पोस्टमैन रंगण्णा को तुरंत सूचना दी जानी चाहिए। कागज बांटने के निमित मैं रोज उस तरफ जाता ही हूं। इसलिए मेरी पहचान थी। इलेक्ट्रिक फोरमैन ने आकर यह सब बताया कि कल्लेश नामक व्यक्ति ने फोन किया है।" यह कैसी मुसीबत है! —कहकर पचास रुपया भाड़ा तय करके भागे आये।"

"अब आ ही गये हैं, साथ में कार भी है, आपकी बेटी भी ऊब गयी है तो लिवा ले जाइये।"

"ठीक है, चार-एक दिन चलकर आराम कर लेगी।" सास तुरंत बोली।

लेकिन उतनी ही तत्परता से ससुरजी बोले—"नहीं, नहीं! जब पति-पत्नी झगड़ रहे हों तो बेटी को नहीं ले जाना चाहिये। वे खुशी-खुशी रहें, तभी आना-जाना चाहिये।"

"मैं पूछती हूं हमारी बच्ची को मायके ले जाने में क्या हर्ज है?" उनकी पत्नी ने पूछा।"

"तुझे क्या समझ में आता है? चुप रह। ऐसे समय नहीं।"—पति बोले।

"मैं जरूर आऊंगी।" कमलु बोल पड़ी और जहां लेटी थी, वहां से उठकर मां के बगल में आकर खड़ी हो गयी।

"बेटी, मैं जो कहता हूं, सुन। तुझे अभी नहीं आना चाहिये।" पिता के सम-

झाने पर भी वह नहीं ही मानी। उन्होंने सोचा अब देर नहीं करनी चाहिये, इसलिए उठे और अपने साथियों से बोले—"सब चलो, कार में बैठो, गांव वापिस जाना है।" पत्नी के मुंह से निकला—"हमारी बच्ची…" तो वे बोल उठे—"इतने दिनों से तेरी बात सुनकर ही यह हालत हुई है। अब मुंह बंद कर।" सब कार में बैठ गये। कमलु भी भीतर घुसने की जिद्द करने लगी। लेकिन रंगण्णाजी ने उसकी बांह पकड़कर बाहर कर दिया। नंजु दौड़कर भैया की सास के सम्मुख कुंकुम लेकर आयी ही थी कि परिस्थिति समझकर ड्राइवर ने कार स्टार्ट कर दी। "पचास रुपये बेकार गये। डेढ़ महीने की पगार! कहां से लावें?" रंगण्णाजी की यह बात नंजु को सुनाई पड़ी।

बीस गज के बाद कार रुकी। "कल्लेल, जरा इधर आओ।" ससुर रंगण्णाजी ने पुकारा। कल्लेश कार के पास जाकर खड़ा हो गया। बाहर निकलकर उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—"गुस्सा मत करो। बुरी नियत की गाय को भी वराकर किसी तरह बांधते ही हैं। उसे मत देखो, मेरा मुंह देखो।" ऐसा कहते समय उनकी आंखों से टप-टप आंसू टपक रहे थे।

"आप तो बच्चों की-सी बात करते हैं। उसने ऐसा कौनसा हीन काम किया?" पत्नी ने पति से पूछा।

"बात करने से कोई लाभ नहीं।" कहते हुए वे कार में बैठ गये। ड्राइवर ने तुरंत कार दौड़ा दी।

पास पड़ोस के लोग जाकर सो गये। कल्लेश के घरवाले भी सो गये। पहाड़ जितनी बातें की जा सकती थीं किंतु कही नहीं गयीं। अक्कम्मा ही चार बार बोली—"मुंहजली, बड़ी छुपी रुस्तम है!" नंजु रोज की भांति चुप थी। कल्लेश भी चुप था। इसलिए अक्कम्मा को बात करने का मौका ही नहीं मिला। कल्लेश के हाथ पर ससुरजी के जो आंसू गिरे थे, वे उसके मन को खुरेद रहे थे। जब वह प्लेग का शिकार हुआ था तो उन्होंने ही उसे बच्चे की तरह पाला था। उनके स्वभाव और अंतःकरण के प्रति उसमें श्रद्धाभाव था। उसने सोचा कि पत्नी को इतनी लातें लगाऊं कि कमर टूट जाये, लेकिन ससुरजी के आंसुओं ने मानो उसे बिस्तर से बांध सुला दिया हो। वह कुछ नहीं कर पाया।

छठा अध्याय

करीब छह महीने बाद एक दिन आधी रात के समय अप्पण्णय्या लौटा। उसने मछुआरों के मोहल्ले के माटा के घर का दरवाजा खटखटाया। उठकर माटा ने दरवाजा खोला और उसे देख साश्चर्य पूछा—"कहां चले गये थे हुजूर ?"

"पुलिस-वुलिस मुझे ढूंढ़ रही थी क्या ?"

"कैसी पुलिस, हुजूर ?"

"वही, उस दिन …।"

माटा ने पिछली घटना याद कर कहा—"कहते हैं कि वे पुलिसवाले नहीं थे। खेत नापनेवाले अमीन थे। हमारे गांव में तीन महीने ठहरे। आप इतने दिन कहां छिपे रहे, हुजूर ? मांजी चिंतित थी कि बेटा कहां गया।"

"तो मैं घर जाऊं ?"

"चलिये हुजूर।"

"डर लग रहा है। तुम साथ आओ।" आधी रात को माटा के साथ अपूर्ण धैर्य से अप्पण्णय्या ने अपने घर का दरवाजा खटखटाया। "कौन इतनी रात गये दरवाजा खटखटा रहा है ?" भीतर से प्रश्न हुआ तो माटा ने इसका उत्तर दिया। मिट्टी के तेल की चिमनी जलाकर गंगम्मा बाहर आयी। बेटे को देखकर बोली—"मेरे बेटे, इतने दिन कहां भटकता रहा !" और उसके आंसू बह चले। माटा अंदर आकर बैठ गया। नंजम्मा प्रसूति के लिए नागलापुर गयी हुई थी। चेन्निगराय की नींद जल्दी खुलने वाली थी नहीं। "बेटा, कहां-कहां भटका ? पेट भरने के लिए क्या-क्या किया ?" आदि के बारे में गंगम्मा ने पूछताछ की।

"मैं निडर रहा। हर जगह कुशलतापूर्वक रहा हूं।" वीर-पुत्र ने अपने साहस की कहानी सुनाई—"यहां से जावगल गया। रास्ते में बिदरे सण्णगौड़ के घर जाकर परिचय दिया कि मैं ब्राह्मण हूं और खाना पकाने के लिए बर्तन मांगे।

उन्होंने दो सेर चावल, लोबिया, पिसी मिर्ची, मक्खन आदि दिया। खाना खाकर जो बचा, उसे बांधकर जावगल पहुंचा। वहां एक महीना रहा। उस मुंहजली छिनाल वेंकटराम् की पत्नी ने पूछा, 'अब कैसे आये, गांव में सब कैसे हैं, वे लोग क्यों नहीं आये?' एक दिन रात में वहां से अरसीकेरे की ओर निकल पड़ा। वैसे ही घूमता हुआ बाणावर, कडूरू, होते हुए शिवमोगा गया। वहां नदी किनारे 'बेक्किन कठल्लनमठ' है। वहां रहने और खाने-पीने का इन्तजाम भी था।"

"खाने के लिए क्या किया?"

"वहां के स्कूलवालों ने ही बताया कि वे लिंगायत हैं। मैं उनका खा नहीं सकता था। उस गांव में 'बड़ा ब्राह्मण मोहल्ला' नाम की जगह है। सभी अच्छे खाते-पीते लोग हैं। रोज भिक्षान्न पाता रहा। मां, तुम कुछ भी कहो, कैसा भी पकाया क्यों न जाय, लेकिन भिक्षान्न के सामने सब फीका लगता है। झोली-भर अन्न, बर्तन-भर सांभर लाता और नदी-तीर के पत्थर को धोकर उस पर डाल कर खाता था।"

"भिक्षान्न क्या होता है, हुजूर?" माटा ने पूछा।

"भोजन के समय जाकर सब घर-घर जाकर खड़े 'भवति भिक्षां देहि' कहता तो देखने वाले झोली में अन्न या बर्तन में सांभर या कढ़ी या साग या चटनी डाल देते। उसके बाद सब मिलाकर खाना। बहुत ही मजा आता है!"

"मजा क्यों नहीं आयेगा? कहावत है न कि दूसरे के घर की कढ़ी और रांड की बेटी अच्छी।" माटा के मुंह में पानी आ गया और उसने चुटकी मारी।

"मां उस शिवमोगा जैसे बेकार गांव में सिर्फ अन्न खाकर मैं बेजार हो गया। मुझे मडुए का लोंदा बनाकर दो। पेट में आग लगी हुई है।"

"इस समय?"

"रात को कुछ नहीं खाया।"

"उन छिनालों में से कोई होती तो उठकर बनाने के लिए कहती। कोई भी नहीं है। अप्पण्णय्या, खबर मिली है कि तेरी पत्नी ने लड़की जन्मी है। नामकरण के लिए बुलाने आये थे। चार महीने हो गये हैं। जाकर उसे ले आओ। खाना पकाते-पकाते मैं तो थक गयी हूं।" कहती हुई गंगम्मा उठी।

[2]

अप्पण्णय्या चार दिन हिम्मत से सिर ऊंचा रख गांव भर घूमता रहा। फिर वह अपनी पत्नी-बच्चे को लेने के लिए नुग्गीकेरे गया। रोटी-चटनी बांधकर कंधे पर रखी और तिपटूर पैदल पहुंचा। वहां से रेल द्वारा कडूर गया। नौ मील चलकर ससुराल पहुंचा। बच्ची चार महीने की थी। उन्होंने उसका नाम जयलक्ष्मी रखा था।

अप्पण्णय्या के पहुंचते-पहुंचते शाम हो गयी थी। सातु अब भी सूतिकागृह में थी। वह बच्चे को उठाकर खेलाने लगा। पत्नी से बातें कीं। रात में खाना खाने के बाद बीच के कमरे में ससुर के पास ही इनका बिस्तर लगाया तो मन खिन्न हो उठा। बिस्तर पर बैठा तो ससुर ने पूछा—"नामकरण के समय बुलाया था, कहां गये थे?"

"शिवमोग्गा! नहीं, जावगल!"

"मालूम नहीं था कि पत्नी के प्रसव के दिन हैं? बिना कुछ कहे गांव से चले गये?"

"थोड़ा काम था।"

सूतिकागृह में लेटी सातु बैठते हुए बोली—"ऐसा कौन-सा काम था? झूठ क्यों बोल रहे हैं? सच कहें। भाभी को लात मारी और फिर पुलिस द्वारा पकड़े जाने के भय से चुपचाप खिसक गये न?"

अप्पण्णय्या ने कोई जवाब नहीं दिया। सिर झुकाये बैठा रहा। सातु ने फिर पूछा—"अपनी मां के कहने पर आपने लात मारी न? उस झगरी औरत के मरने तक आपको अक्ल नहीं आयेगी!"

अपनी मां को गालियां देने के कारण अप्पण्णय्या को बहुत गुस्सा तो आया लेकिन कुछ करने का यह समय न था। सातु भाभी-जैसी साधु स्वभाव की औरत भी नहीं। वह चुप रहा। सातु अंदर से फिर बोली—"आपकी मां के साथ मुझसे नहीं रहा जाता। आपके घर के पिछवाड़े जगह खाली है। वहां छोटा-सा घर बंधवा दीजिये, अलग रहेंगे। उसके बाद मुझे और बच्चे को ले जाइये।"

"यह कैसे होगा?" बंद गले को मुक्त करने का प्रयत्न करते हुए उसने कहा।

"क्यों नहीं होगा ? रहने के लिए आप छोटा घर बनवाइये। भाई-भाई परस्पर बंटवारा कर लें। घर के लिए जो बर्तन-भांडे चाहिए, शादी में मिले ही हैं और अगर कम पड़े तो और ले आऊंगी।"

वह कुछ नहीं बोला। सातु फिर बोली—"आपके अलग होने की भी जरूरत नहीं। दोनों भाई साथ रहिए। मैं दीदी के साथ रहूंगी। लेकिन आपकी मां को अलग रहना होगा। उसके लिए अलग से एक कमरा बना दीजिये। तभी मुझे ले जाइये।"

मां को गालियां दिये जाने के कारण क्रोध से उसका मुंह लाल हो गया। यह रूप देखकर सास बोली—"हमारे अप्पण्णय्या का स्वभाव अच्छा है। सातु कहती रहती है कि वह सोने जैसा लड़का है। सास-बहू की नहीं पटती तो तुम लोग अलग रहो। चाहो तो सातु तुम्हारी मां के घर में कामकाज करने में हाथ बंटा दिया करेगी।" यह सुन उसके चेहरे पर प्रसन्नता की लहर दौड़ पड़ी।

ससुरजी अंत में बोले—"तुम पति-पत्नी का परस्पर सुख से रहना मुख्य है। सुबह उठते ही वह 'छिनाल', 'रांड' जैसी गालियां न दे। तुम उसके लिए आवश्यक व्यवस्था करके पत्नी को ले जाओ। हमारी तो इकलौती बेटी है। लेकिन अब न बेटी है, न बेटा ही।"

अप्पण्णय्या आठ दिन ससुराल में रहा। पत्नी को बिना गालियां दिये खुशी-खुशी बच्चे को गोद में लेकर खेलाता रहा। लेकिन अप्पण्णय्या की उज्जडता और उसका अकारण रौब सबको बुरा लगता। एक दिन नारियल फोड़ते समय सातु द्वारा गिरी निकालने पर भी नहीं निकली, तो 'इसकी मां ···' कह ही दिया। और एक दिन बाड़े में गाय ने सींग हिलायी तो 'हत् तेरी मां ···।' पास ही खड़ी सास ने सुन लिया। ये जानते थे कि इन्हें सुधारना आसान काम नहीं है। आखिर बेटी की नियति समझ सास ने निःश्वास छोड़ दी।

जिस दिन गांव लौटने के लिए रवाना होना था, सातु ने फिर अलग रहने की व्यवस्था करने को कहा। पति ने 'हां' कर दी। कडूर तक पैदल आये, वहां से रेल से तिपटूर उतरे। अब यहां से गांव पहुंचने के लिए सोलह मील चलना था। मोद-लियार कंपनी ने मोटर चलानी शुरू कर दी थी, लेकिन वह दो दिन में एकबार अर्थात् सोमवार, बुधवार और शुक्रवार को चलती थी। एकदिन उसमें बैठकर अप्पण्णय्या मजा ले चुका था। उसे डर ही नहीं लगा। रेल में अकेला रहने वाले

को मोटर में क्या डर ! लेकिन वह शुक्रवार की शाम थी। अगले दो दिन मोटर नहीं थी। पैदल चलना कोई कठिन नहीं, लेकिन मोटर में बैठने का मजा छूट गया था।

इतने में संध्या हो जाने के कारण वह तिपटूर में ही रह गया। होटल में आलू-कांदा, सांभर, बैंगन साग, पापड़, कढ़ी, छाछ, तीन-तीन बार लेकर मिलाकर खाया। छह आने लगे। छत्र के बरामदे में रात बितायी। सुबह उठकर तालाब की तरफ गया। लौटकर फिर उसी होटल में एक मसाला दोसा खाया। उसने शिव-मोग्गा में भी दो दिन मसाला डोसा खाया था। लेकिन यहां के जैसा स्वादिष्ट नहीं था। हरी मिर्च, कोथमीर, आलू, कांदा-भाजी और भीतर डोसे में लगी हरी चटनी ! तीखा डोसा मजे से खाने के पश्चात् उसने और छह दोसे मंगा कर खाये। कुल सात आने देकर पगडंडी से रामसंद्र की ओर निकल पड़ा। दो मील चला कि प्यास लगी। मुंह से निकल पड़ा—'इसकी मां की ··· यह दोसा खाने से प्यास लगती है।' फिर रास्ते के बगल में नारियल के पेड़ देखने लगा। कोई नजर नहीं आया। फिर चुपचाप बाड़ पारकर बाड़ी में घुसा। छोटे नारियल के पेड़ से तीन कच्चे नारियल तोड़े। एक लकड़ी से उनमें छेद कर गटगट गले से नीचे उतार लिया। भीतर की हरी गिरी खाने की इच्छा हुई लेकिन पकड़े जाने के भय से उन्हें वहीं फेंक, बाड़ पारकर मार्ग पर आ गया और लंबे-लंबे डग भरते हुए गांव की ओर चल पड़ा। रास्ते में गाय चराता हुआ ग्वाला मिला। उसने अप्पण्णय्या को बीड़ी दी। खरीदकर वह कभी बीड़ी नहीं पीता था। गन्ने के खेत में आग लगने के बाद से उसने बीड़ी पीनी भी छोड़ दी थी लेकिन यदि मुफ्त में मिल जाये, तो पीकर उसे वहीं फेंक देता था।

[3]

अप्पण्णय्या गांव पहुंचा तो शाम के चार बजे थे। उसके घर पहुंचने के थोड़ी देर पहले ही पटेल शिवेगौड़, उसका साला भूतपूर्व ऐवजी पटवारी शिवलिंगेगौड़ आकर बैठे हुए थे। उसके आते ही शिवेगौड़ ने बात शुरू की।

"गंगम्मा, अप्पण्णय्या भी ऐसे आया है मानो उसे बुलाया गया हो। मेरे पैसे का क्या किया ? भूल ही गये क्या ?"

दो मिनट तक गंगम्मा को याद नहीं आयी कि कौनसे पैसे का जिक्र कर रहा

है । शिवेगौड़ ने याद दिलायी—"मूलधन दो हजार। सात साल का ब्याज एक हजार आठ सौ अस्सी। इतने सालों से ब्याज भी नहीं दिया। इन सबका हिसाब लगायें तो छह सौ और। इस प्रकार कुल चार हजार छह सौ अस्सी होता है। आज से एक महीने में मेरा पैसा लौटा दीजिए। समय बीत गया है। नहीं तो मैं कोर्ट में जाऊंगा।"

"किसी दिन लड़के ने अनजाने में कुछ कर दिया तो इतने रुपये कहां से लाऊं शिवेगौड़ ?"

"लड़के ने किया ! मैंने जो पैसे दिये, वह झूठ है ? आप क्या कह रही हैं ? चन्नय्या, तुम तो पटवारी कार्य करते हो, तुम ही बताओ। मैंने पैसे दिये, यह झूठ है क्या ?"

चेन्निगराय चुपचाप बैठा था। "आज से आठ दिनके अंदर पैसे नहीं लौटाये तो मैं केस करता हूं। तब मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं रहेगी। हूं…" शिवेगौड़ यह कहकर शिवलिंगे गौड़ के साथ उठकर चला गया।

"चिन्नय्या, अब क्या किया जाय रे ?" गंगम्मा ने पूछा।

"मुझे क्या मालूम मां ?"

"तुझे पटवारी को नहीं मालूम ?"

अप्पण्णय्या बोला—"देखें हमसे वह क्या लेगा ! कह दो नहीं देंगे।"

"कह दूं ?"

"हां, मां !"

"मां, मुझे भूख लगी है। पहले खाना परोसो। वह क्याा छीन लेता है, बाद में देखा जायेगा।" अप्पण्णय्या ने कहा तो खाना परोसने के लिए वह भीतर चली गयी।

गंगम्मा सोचने लगी कि इस संबंध में किससे पूछना ठीक रहेगा। तुरंत रेवण्णशेट्टी का स्मरण हुआ। गांव के अनेक लोग रेवण्णशेट्टी को वकील कहकर ही पुकारते थे। न जाने कैसे-कैसे मामलों को लेकर वह तिपटूर जाता था। कहते हैं जिन प्वाइन्टों को बड़े-बड़े वकील नहीं जानते, उन्हें वह जानता था। गंगम्मा सीधे उसके घर गयी। उसकी पत्नी सर्वक्का ने कहा—"वे यहां नहीं हैं, कोडीग्राम गये हुए हैं।"

"किस काम से ?"

"गंगम्माजी, आप नहीं जानती ?" कुछ अनुमान से वह बोली—"ताश खेलने। कैसे आना हुआ ? बैठिये, पाट देती हूं।"

गंगम्मा पाट पर बैठ गयी। उसने शिवेगौड़ के आने और जमीन गिरवी रखने की बातें बतायीं। "जमीन गिरवी रखने को सारा गांव जानता है।" सर्वक्का ने कहा—"उसका पैसा पहले ही उसे लौटा देना चाहिये था ! इतने दिनों तक क्यों चुप बैठे रहे ?"

"वह क्या खाये-पीये का पैसा है ? कहां से दिया जाये ?"

अब समझाने का ज्ञान सर्वक्का में नहीं था। वह लगभग तीस की थी और उसके पांच बच्चे थे। तीन बच्चे मर चुके थे। दो साल से गर्भवती नहीं हुई थी। अप्पण्णय्या ने जब गन्ने के खेत में आग लगायी थी तब उसके पति ने गन्ने के डांड का हिसाब बताकर पच्चीस रुपये लिये थे, यह वह जानती थी। पहले 'अब कभी गन्ने का डांड न छोड़ने' कहने वाले पति ने उसी आधार पर पैसे लिये तो उसे अन्याय कहकर अपने गाल पर उसने मार खायी थी।

वे इधर-उधर की बातें कर रही थीं कि रेवण्णशेट्टी आ गया। बगुले के पर-सी सफेद धोती, पैर में रबर के चप्पल, इस्त्री की हुई कमीज, गले में दिखाई देता सोने का हार, उंगुलियों में चमकती तीन लाल अंगूठियों से सुशोभित हो, चेहरे पर संवारी हुई नयी-नयी मूंछें, ऐसे रेवण्णशेट्टी को देखकर गंगम्मा को विश्वास हो गया कि वह शिवगौड़ से केस जीत ही चुकी।

उनकी बात सुनने के बाद वह बोला—"वह अन्यायी, मेरा बेटा किस घर का पैसा समझ बैठा है ? कोर्ट में जाने की बात करता है ? कहिये 'जाओ, जाकर हमसे जो छीनना हो छीन लो'। तिपटूर में मैं बड़े वकील को जानता हूं।"

गंगम्मा को धीरज बंधा। "मैं ऐसा कह आऊं रेवणा ?"

"हो आइये। आप मत डरिये। आगे की मैं देख लेता हूं।"

"तुम भी मेरे साथ आओ।"

"मेरा आना उचित नहीं होगा। मुझे अंदर रहकर काम करना होगा। आपको डर किस बात का है ? लोग कहते हैं कि गंगम्मा की हिम्मत आसपास के चौसठ गांव के किसी हरामजादे मर्द में नहीं है। फिर आपको डर किस बात का ?"

यह बात काफी परिणामकारी हुई। "मैं वैसी डरपोक छिनाल नहीं हूं।" कहकर वह उठी और सीधी शिवेगौड़ के घर के सामने खड़ी होकर बोली—"जब मेरा

पति पटवारी था तब तुम पिल्ले के समान थे न, गौड़ ? अब अन्याय से दंड डालकर, कोर्ट जाने की धमकी देते हो ! कोर्ट ही क्यों, दीवानजी तक जाओ। मैं भी वकील करूंगी। हमसे तुम एक पैसा भी नहीं ले सकोगे। औरत होकर भी डरूंगी नहीं।"

शिवेगौड़ ने बाहर आकर पूछा—"यह क्या गंगम्मा, अब दो घंटे पहले तो आपने न्यायपूर्वक बात की थी और अब ऐसे बोलती हो।"

"क्यों न कहूंगी ? बुरे दिनों में मेरी मदद करने वाले भी हैं। मैं कोई परदेशी नहीं हूं।" कहकर गंगम्मा सीधे घर आयी।

उसके लौटने के पहले ही रेवण्णशेट्टी आकर बैठा हुआ था। उसके चेहरे को देखकर ही शेट्टी ने अंदाज लगा लिया कि शिवेगौड़ के साथ वह क्या करके आयी होगी। वह बोला—"गंगम्माजी, आप और दोनों बेटों को बैलगाड़ी से चार बार तिपटूर के चक्कर लगाने पड़ेंगे। जज के सामने यह अन्याय कहकर मुंह खोलकर कह दें तो केस आपके पक्ष में हो जायगा। बस, कुल मिलाकर पांच सौ खर्च करना पड़ेगा।"

"तिपटूर जाने पर खाने-पीने का क्या होगा ?" अप्पण्णय्या का प्रश्न था।

"होटल नहीं है क्या !"

होटल सुनते ही अप्पण्णय्या के मुंह में लार आ गयी। आलू-कांदे का सांभर कढ़ी, तला चना मिश्रित महकती हरी चटनी, छाछ। नाश्ते के लिए मसाला दोसा। "हां कह दो मां, तिपटूर में केस करें।" निर्णयात्मक स्वर में वह बोला।

"पटवारी क्या कहता है ?" मां ने पूछा तो चेन्निगराय ने कहा—"किसी बुद्धिमान से पूछना चाहिए।"

खैर, शिवेगौड़ ने केस किया। ये तीनों रेवण्णशेट्टी के साथ साथ तिपटूर गये और शेट्टी ने जिस महांतय्याजी के पास ले गया था उन्हें वकील नियुक्त किया। इनके केस को रेवणशेट्टी ने समझाया—"गांव के कुछ लोगों ने मिलकर खेत में आग लगा दी। इस अनुभवहीनों पर दंड कर पैसे निकलवाये। उसपर हस्ताक्षर करवाये नाबालिग बेटों के। गिरवी रखवायी पैतृक जायदाद। कागज पत्र लिखकर, हस्ताक्षर लेकर पैसे देकर गिरवी लिखवा लेने वाला स्वयं उसी का साला है। इतना सब रहते हुए केस जीता नहीं जायगा, हुजूर ?"

"जीते बिना रहेंगे ?" वकील साहब बोले।

पहले दिन के खर्चे के लिए इन्होंने घर का सोना बेचकर दो सौ रुपये जमा किये। रेवण्णशेट्टी उनसे यह कहकर एक सौ पचहत्तर रुपये ले गया कि सबके सामने वे पैसे नहीं लेंगे। वह अकेला वकील के घर जाकर हिसाब करके लौटा। अप्पण्णय्या ने होटल में खाना खाने के साथ ही तीन मसाला दोसा भी खाये। पटवारी चेन्निगराय तो होटल को अच्छी तरह जानते थे। साल में कम-से-कम चार बार द्यावरसय्यजी के साथ तिपटूर आया करते थे। उन्होंने खारी सेव, रवा लड्डू, मैसूरपाक खाये। विधवा गंगम्मा ने गांव से लायी सत्तू के साथ चार केलों का फलाहार किया।

[4]

नंजु ने लड़के को जन्म दिया। नामकरण के लिए आये हुए चेन्निगराय ने अपने पिता के नाम पर बच्चे का नाम रामण्णा रखा, जैसाकि उनकी मां ने बताया था। इस बार ससुराल में वे अधिक दिन नहीं रहे। साले कल्लेश को देखकह वह भीतर ही भीतर भयभीत होता था। इसके अलावा उसकी पत्नी कमलु भी खिटखिट करती रहती थी।

तीन महीने की जचकी के बाद नंजु गांव लौटी तो दूसरे ही दिन नंजम्मा को शिवेगौड़ के विरुद्ध चलने वाले केस का पता चल गया। शिवेगौड़ से उधार लेने की बात वह पहले भी जानती थी। जमीन गिरवी रखकर उससे दो हजार रुपये लेकर, गन्ने के खेत में आग लगाने के कारण गांववालों को दंड भरा था। इस घर की बहू बनकर आने के महीने-भर में तालाब पर बर्तन मांजते समय उसने सुना था। घर में वह किसी से पूछ भी नहीं सकती थी। एकदिन पति से पूछ लिया था तो उत्तर मिला था--"तुझे यजमानी किसलिए, चुप बैठी रह।"

वह जबसे पटवारी-कार्य की बही लिखने लगी, तभी कल्पना हुई कि गिरवी रखकर उधार लेने का क्या परिणाम होता है। वह सोच रही थी कि एक दिन इस संबंध में बात करनी चाहिए। लेकिन उसी समय अप्पण्णय्या लात मारकर गांव से भाग गया था। सास तो पहले ही कह रही थी—"इस अनिष्ट चुड़ैल के कारण ही मेरे लाड़ले का परेदश जाना हुआ।" अब अगर यह बात छेड़ी तो 'यजमानी क्यों चाहिए', गालियों के साथ सुनने की नौबत आने के भय से वह चुप ही रही।

फिर उसे उतने में प्रसूति के लिए मायके जाना पड़ा। अब लौटी तो कोर्ट में केस चलने का पता चला। एक उपाय से पति से पूछा तो उसने अपना शौर्य जतलाया—"मेरे उस बेटे को एक पाई भी नहीं दूंगा, कोर्ट में उलटा उसके हाथ से ही पैसे लूंगा।"

"आपको किसने कहा कि केस जीतेंगे ?"

"रवण्णशेट्टी ने।"

"रेवण्णशेट्टी की बात पर कैसे विश्वास किया ? आप लोग नहीं जानते कि वे किस तरह के हैं।"

"गधी, छिनाल, उन्हें गालियां दे रही है ? कल उन्हीं से कहूंगा कि तूने उन्हें ऐसा कहा है, देख लेना।"

पति अविवेकी है, इसे पहले से ही वह जानती थी। लेकिन यह सोचकर कि वह अविवेकीपन इस स्तर का है, उसकी आंखों में आंसू आ गये। बस उसने वहीं बात खत्म कर दी। लेकिन यही विचार मन को कुरेद रहा था। 'कहते हैं रेवण्णाशेट्टी ताश खेलता है, शराब पीता है और रास्ते में आते-जाते समय लड़कियों को बुरी नजर से देखता है, घर में पत्नी सर्वक्का खुश नहीं है'—उसे मालूम है। सारा गांव जानता है। दूसरे दिन बर्तन मांजने तालाब पर गयी थी तो रेवण्णाशेट्टी की बड़ी बेटी रुद्राणी उसके बगल के पत्थर पर बैठी थी। "रुद्राणी, तुम्हारी मां घर पर ही हैं क्या ?"

"हां, हैं।"

"पिताजी ?"

"कोडीहळ्ळी गये हुए हैं"—सब जानते हैं कि इसका अर्थ है शतरंज खेलने के लिए गये हैं।

"तो तुरंत घर जाकर अपनी मां को बुला ला। कहना कि मैंने बुलाया है। अपने बर्तन यहीं रहने दे। मैं नजर रखूंगी। तू घर में रहना और उन्हें भेज देना।"

दस मिनट में सर्वक्का आ गयी। एक-दो मिनट परस्पर कुशल-समाचार की बातें हुई, फिर नंजम्मा ने आसपास एक बार निगाह घुमाकर यह निश्चित हो जाने पर कि और कोई नहीं है, उससे पूछा—"देखिए, मैं एक गुप्त बात पूछ रही हूं, आप बतायेंगी ?"

"कहिए, क्या बात है ?"

"आपके घरवाले ने हमारे घर का केस लड़ने का विश्वास दिलाया है। क्या

उसमें सचमुच जीत होगी ?"

"नंजम्माजी, मर्दों की बात हमें क्या समझ में आती है ! हमें इससे क्या ? छोड़िये इस बात को ।"

"नहीं, आप जो कुछ भी जानती हैं, बताना ही होगा ।"

सर्वक्का ने भी एकबार आसपास नजर दौड़ाकर कहा—"मेरे घरवाले को पता लग गया तो मुझे मार डालेंगे । 'किसी से नहीं कहूंगी' कहकर आपको गंगा-मैया की कसम खानी पड़ेगी ।"

"गंगामैया की कसम, किसी से नहीं कहूंगी ।" नंजम्मा ने तालाब का जल हाथ में लेकर कसम खायी ।

"वळगेरळ्ळी के निगप्पा के घर में जब भाइयों में झगड़ा हुआ था तो इन्होंने वकील करवाया था । कहते हैं उसे जिता देने का वायदा करके पैसे खोये थे । फिर सुना कि वे हार गये । तब एक दिन वे हमारे घर के सामने आये और मां-बाप की गालियां दीं, बच्चों का सत्यानाश कहकर मिट्टी फेंक गये । ये ताश खेलने के लिए पैसों के लिए ऐसा करते हैं ।"

सर्वक्का ने भी वही कहा जिसका नंजम्मा को अनुमान था । नंजम्मा विचारों में खो गयी कि अब कोर्ट से छुट्टी पाकर जो जमीन है, उसे कैसे बचाया जाये । सर्वक्का ने निःश्वास छोड़ते हुए कहा—"नंजम्मा, आपकी और मेरी तकदीर एकसी है । मेरे पति तो घर तोड़ने की बुद्धि रखते हैं, और आपके पति को अक्ल ही नहीं है । किसी को सुख नहीं है । मैंने जो कहा, किसी से मत कहिये । गंगामैया की कसम खायी है आपने !" इतना कहकर वह अपने बर्तनों को टोकरी में भर घर की ओर चल दी ।

नंजम्मा रातभर सो नहीं पायी । सुबह उठकर एक कागज लिया और भाई को कुशल समाचार लिखकर आगे लिखा—'यहां की सारी जमीन गिरवी रखी हुई है । अब कोर्ट में केस भी चल रहा है । तुम तुरंत यहां आओ ।' चिट्ठी ली और बर्तन लेकर तालाब पर पहुंची । वह चाहती थी कि तालाब के पास कोई मिल जाये तो चिट्ठी मायके तक पहुंचाने के लिए कह दे । लेकिन कोई नहीं मिला । थोड़ी देर बाद मंदिर के महादेवय्याजी पुष्प और बिल्वपत्रों को शुद्ध करने के लिए झोली में भरकर वहीं आ रहे थे जहां वह बैठी थी । उनके प्रति नंजम्मा में अगाध श्रद्धा, भक्ति और गौरव था । फिलहाल वे इस घर में अधिक नहीं आते थे तो भी

बड़ी बहू के प्रति उनमें आदर था। नंजम्मा ने पुकारा—"अय्याजी, जरा इधर आइए।" आसपास देखा। फिर अपनी साड़ी की अंटी में खोंसे हुए पत्र को उनके पास गिरे, इस प्रकार फेंक कर बोली—"इसे आप पढ़ लीजिए, समझ जायेंगे। किसी तरह मेरे भैया के पास पहुंचा दें। किसी को इसका पता न लगे।" फिर ऐसे बर्तन मांजने लगी मानो कुछ हुआ ही न हो।

मुड़े हुए कागज को महादेवय्याजी ने उठाकर अपने गेरुए कमीज की जेब में रखकर 'अच्छा बहन' कहकर झोली के पुष्प-पत्रों को पानी में शुद्ध कर चल दिये। उस दिन गांव में उन्होंने गुरु भिक्षा भी नहीं मांगी। कहते हैं शिवगेरे के एक-दो गांवों में ही गये थे।

दूसरे दिन दोपहर को कल्लेश पैदल ही बहन के घर आया। भाई से सब कुछ बताने के लिए जगह नहीं थी। फिर निश्चय किया कि कहीं और जाकर बात करने के बदले यहीं सामने बोलना उचित रहेगा। सबके सम्मुख ही बोली। जो कुछ हुआ था, उसे बताने के पश्चात् उसने अगले कदम के बारे में सलाह मांगी।

गंगम्मा को शंका हुए बिना नहीं रही। इसने किसी के द्वारा सूचना भेजकर भाई को बुलाया है। लेकिन रिश्तेदार भूतपूर्व पुलिस के सामने न बोलने के विचार से चुप रही। कल्लेश को पता नहीं था कि गिरवी-पत्र में क्या लिखा गया था। पटवारी बहनोई से पूछा तो वे बोले—"वह मैं नहीं जानता। शिवलिंगा ने लिखा था।"

"कुछ जाने बिना आप लोग कोर्ट कैसे चले गये?" पूछा तो बोले—"रेवण्णाशेट्टी और वकील को मालूम है। वे क्यों झूठ बोलेंगे? केस में अवश्य विजय होगी।"

नंजम्मा ने धैर्यपूर्वक रेवण्णाशेट्टी की आगे-पीछे की बातें बतायीं—"उन पर विश्वास किया तो परिवार डूब जायेगा। अब जैसा हम जानते हैं, विवेक से काम लेना पड़ेगा। परबुद्धि की सलाह नहीं चाहिए।"

"जीजाजी, मेरे साथ आइए। शिवेगौड़ के घर जाकर पूछेंगे कि गिरवी-पत्र की इबारत क्या है।" कल्लेश ने कहा।

लेकिन उसके घर जाने में पटवारी साहब को डर लग रहा था। डर भीतर ही भीतर कुरेद रहा था कि कहीं उसने कह दिया कि 'अब मेरे घर क्यों आये, जो कुछ करना हो कोर्ट में ही करो, जाओ'—तो? इसलिए वह बोले—"उस

हरामजादे के घर क्यों जायें ! केस हम जीतेंगे। मैं इतना भी नहीं जानता क्या ?"

कल्लेश अकेला ही शिवेगौड़ के घर गया। शिवेगौड़ ने वही उत्तर देकर लौटा दिया जिसकी उसे कल्पना थी। नंजम्मा ने कहा कि तिम्लापुर के द्यावरसय्याजी से पूछ लें।

उस गांव का रास्ता पूछने के बाद, पैर में चप्पल डाल कल्लेश निकल पड़ा। उसे गये दस मिनट हुए होंगे कि गंगम्मा ने बहू से पूछा—"किसके हाथ खबर भिजवाकर इस भड़ुवे को बुलाया ? आज रात को उसी के बगल में सोयेगी क्या ?"

यह सुनकर अत्यंत क्रुद्ध होने के साथ उसमें अपूर्व साहस आ गया। वह बोली—"लगता है आप ऐसा ही करती थीं ! इसलिए आपके मुंह से ऐसी बातें निकलती हैं ! आप जबान संभालिए छोटी उम्र में ही शिष्टता सीखतीं, तो आप ऐसी नहीं होतीं और न ही आपकी औलाद ऐसी होती !"

"सुना तूने चिन्नय्या ? उठ, इस हरामजादी की कमर पर लगा एक लात रे !"

"हां, अब मुझसे उलझिए ! भैया फिर सांझ को आने वाला है।"

पत्नी को लात मारने के धैर्य के अभाव या इतना करने के आलस्य के कारण, खैर चेन्निगराय नहीं उठे। गंगम्मा ने दूसरे बेटे से नहीं कहा। कहती भी, तो शायद ही वह दूसरी बार वैसा साहस करता !

कल्लेश अगले दिन भी नहीं आया। इसके दूसरे दिन आया। उसके साथ द्यावरसय्याजी भी थे। परसों द्यावरसय्याजी के गांव में रहा। फिर उनको साथ ले तिपटूर जाकर शिवेगौड़ के वकील से मिला था। उन्होंने कल्लेश को बताया कि इनकी सारी जमीन गिरवी रखी हुई है। रजामंद कराके, मूलधन, ब्याज, कोर्ट-खर्च अगर वे दे दें तो विरोधी पक्ष को समझाकर रजामंद कराकर केस वापस लेने के लिए कहूंगा।

गंगम्मा, चेन्निगराय और अप्पण्णय्या को बिठाकर कल्लेश ने कहा—"मूलधन कोई नहीं छोड़ता। कोर्ट के लिए जो खर्च किया जाता है, उसे भी कोई नहीं छोड़ता। ब्याज में थोड़ा बहुत छोड़ने के लिए उससे निवेदन किया जा सकता है। कुल पांच-एक हजार में निपटता हो तो कोई एक बड़ी जमीन बेचकर या उसे ही खरीदी में लिखवाकर, कम-से-कम बाकी जमीन बचायी जा सकती है। चलिए,

उसके घर चलें।"

यह सलाह नंजम्मा नहीं मानी। तो कल्लेश ने भी नहीं छोड़ा। द्यावरसय्याजी ने भी चेन्निगराय को विवेक की बात कही। अंत में मां, दोनों बेटे, कल्लेश, द्यावरसय्याजी—पांचों शिवेगौड़ के घर गये। बिन बुलाये इनके आने के कारण उसका रौब बढ़ गया। कल्लेश और द्यावरसय्याजी अपनी सहनशीलतावश उसकी बातों को एक-एक कर सुनने के बाद समझा-बुझाकर उसे मना लेते थे। शिवेगौड़ एक बार गंगम्मा की ओर मुड़कर बदला लेने की ध्वनि में बोला—"क्यों बहन, मुझे पिल्ला कहकर गाली दे रही थी न? और मुझे एक पाई भी न देने का कह रही थी न? आखिर मेरे द्वार पर आई न? अब लाज नहीं आयी?"

"बहन, आप सहनशीलता न खोयें।"—द्यावरसय्याजी द्वारा गंगम्मा को समझाने के बाद भी वह आग-सी जल उठी—"क्यों गौड़, मुझे नीचा दिखाना चाहता है! तू क्या, तेरी औकात क्या है? कुत्ते छिनाल के···!"

"ऐसा है तो तू मुझसे जमीन वापस छीन ले तब देखूं!"

"तू नहीं देगा तो कोर्ट द्वारा छीन लूंगी रे! तू मुझे 'तू' कहकर संबोधित करता है पापी, छिनाल के छोकरे! अरे अप्पण्णय्या, चिन्नय्या, उठो। चलो घर चलें। अरे उठते क्यों नहीं, तुम लोग अपने बाप की औलाद नहीं हो क्या?"

अप्पण्णय्या तुरंत उठकर मां के बगल में खड़ा हो गया। मां चिन्नय्या से बोली—"रे चिन्नय्या, तू यहीं बैठा रहेगा क्या? तू अपने बाप द्वारा नहीं जन्मा? भड़वों से उत्पन्न रांड के बेटे, उठ खड़ा हो जा।"

पटवारी चेन्निगराय का अभिमान जाग उठा। वे अपने बाप की औलाद हैं, इसे वे कैसे सिद्ध करें और वह भी अपने साले कल्लेश, द्यावरसय्याजी, प्रतिवादी शिवेगौड़, भीतर दरवाजे पर खड़ी उसकी पत्नी और द्वार के पास खड़े उसके नौकर आदि के सामने! वे भी उठे और छोटे भाई तथा मां के साथ घर के लिए चल पड़े। कल्लेश, द्यावरसय्याजी यहीं रुके रहे। बात आगे बढ़ाने की कोशिश की, पर शिवेगौड़ ने अवसर नहीं दिया। "उस औरत को इतना घमंड है तो मुझे क्या? अगर इन हरामखोरों को भिक्षा मांग कर पेट भरते हुए न दिखाया तो मैं भी अपने बाप का बेटा नहीं! अदालत में केस न जीतूं तो 'धत् बहनचोद' कहकर मेरी छाती पर लात मारना; चप्पल से मारना। बड़ी अदालत तक जाने दो,

महाराजा तक जाने दो।" अपने गले का ताबीज दाहिने हाथ में लेकर कसम खाकर बोला—" मेरे बेटे मारवाड़ी रेवण्णा का आधार लेकर मेरे दुश्मन बन गये न ? मैं भी अपनी गडरिया जाति का रंग दिखाता हूं !"

अब समझौते की संभावना न देख कल्लेश और द्यावरसय्याजी घर लौट आये। गंगम्मा बरामदे में बैठी अपना प्रताप-गीत गा रही थी। पटवारी पान-तंबाकू चबा रहे थे। मातृ-भक्त अप्पण्णय्या, शिवेगौड़ की पत्नी के सिर को मुंडा देने की बात कर रहा था। कल्लेश क्रुद्ध था। बरामदे से नीचे उतर कर वह बोला—"मूर्ख, मेरे बेटे, तुम लोगों को अक्ल नहीं है। मुझ-जैसा आकर अगर कोई रास्ता निकालने का प्रयत्न करे तो टांग अड़ाते हो ! री बूढ़ी, तेरे मरे बिना यह घर बचने वाला नहीं। तुझ जैसी के घर में अपनी कन्या देने वाले मेरे पिता की पूजा तेरी चप्पल से होनी चाहिए।"

गंगम्मा एक तो पहले ही बौखलायी हुई थी और फिर ऐसा रिश्तेदार जो नमस्कार करना तो दूर, ऐसा सुनाने लगा तब वह और भी बौखला उठी—"भिखारिन रांड के छोकरे, मुझे ऐसा कहता है ! तुझे किसने यहां बुलाया था ? उसने चुपके से बुलाया है तो जा उसके साथ सो ! इसीलिए आया है न ? अरे, अप्पण्णय्या, इसे पकड़कर दे कपाल पर दो।"

अप्पण्णय्या में इतना साहस नहीं था। कल्लेश पुनः बोला, "पापी छिनाल, तेरे मुंह से जो शब्द निकल रहे हैं, उसी से तेरी जबान खत्म हो जायेगी। शिवलिंग से पटवारी का अधिकार लेने में असमर्थ थे तो बिल ढूंढ़ने लगे थे न ? तब कहां था तुम लोगों का पुरुषत्व ?"

कल्लेश देहली के भीतर आकर बहन से बोला—"री नंजू, ऐसे रांड के छोकरों के घर में कैसे संसार चला रही है ? चल बच्चों को साथ लेकर। मेरे घर में भगवान का दिया खाकर रहना।"

नंजु शांत खड़ी थी। कल्लेश ने पूछा—"खड़ी क्यों है ? चल।"

"भैया गुस्से में कुछ नहीं करना चाहिए। आओ अंदर बैठो।"

"इस चुड़ैल के घर में एक लोटा पानी भी नहीं छुऊंगा।" सामने खूंटी पर लटकी थैली ली और पैरों में चप्पल डाल चल पड़ा। "भैया, यह क्या कर रहे हो ?" उसने पुकार कर कहा, लेकिन वह नहीं रुका। शिवेगौड़ के घर में जो हुआ, वह अगर

इस समय नंजम्मा को कह सुनायें तो बरामदे में बैठे लोग भी बिगड़ेंगे—ऐसा सोच कर द्यावरसय्याजी गांव चल दिये।

[5]

नंजु में अब अपूर्व धैर्य समा गया। आशा की एक किरण जागी। और अगर सातु के पिता को यह सब बता दिया जाय तो वे शायद इन्हें समझा सकें। कल्लेश तो सगा भाई है जिसे पत्र लिख दिया। लेकिन इन्हें कैसे लिखे? आखिर उन्हें पिता के समान समझ, एक दिन दोपहर में जब सब सो रहे थे और पार्वती बाहर खेल रही थी, वह कागज लेकर लिखने बैठ गयी। कडूर डिस्ट्रिक्ट, कसबा तालुका नुग्गीकेरे ग्राम, श्यामपट्ट—यह पता उसे मालूम ही था। सप्ताह में एक बार कंबनकेरे का पोस्टमैन वासप्पाजी गांव में आते हैं और ग्राम आने के सबूत में पटवारी चेन्निगराय का हस्ताक्षर भी ले जाते हैं। इसलिए नंजम्मा उन्हें जानती थी।

इस बार जब वे आये तो घर में बच्चों के अलावा और कोई नहीं था। नंजम्मा बोली—"वासप्पाजी, मुझे एक लिफाफा चाहिए। मेरे पास पैसे नहीं हैं, दो टुकड़ा खोपरा दूंगी—चलेगा?"

"बहन, मैं जब-जब आया हूं, कुछ-न-कुछ खिलाया ही है। फिर आपसे खोपरा लेकर लिफाफा दूं, मूर्खता होगी। लीजिए।"

"यह किसी से न कहें। हमारे घर के केस के बारे में आप भी जानते ही हैं। उसी के लिए मेरे देवर के ससुरजी को आने के लिये लिखा है।" पत्र उनके हाथ में देकर बता दिया। उसने पत्र डाक में डालने का विश्वास देकर अपने खाकी कोट की जेब में रख लिया। वह जानता था कि पटवारीजी बस्ती के बाहर वीराचारी के चूल्हे के पास होंगे और नहीं तो मंदिर के महादेवय्याजी के पास बैठकर तंबाकू चबा रहे होंगे। इसलिए वहीं हस्ताक्षर ले लेने का नंजु से कहकर चले गये।

उनके चले जाने के बाद नंजु ने महसूस किया कि उसने गलत काम किया है। उन्होंने अप्पण्णय्या से जो यह कहा था कि अगर पत्नी-बच्चे को ले जाना हो तो मां को छोड़कर रहना होगा—यह अप्पण्णय्या ने गांव लौटने के कुछ दिन बाद अपनी मां से कह दिया था। "कडूर प्रदेश का यह घरफोड़ पुरोहित, मेरा घर तुड़-

वाना चाहता है !" कहकर गंगम्मा कुछ दिन लड़ती रही थी। उसके बाद तिपटूर प्रवास का मौका आया लेकिन बातचीत के अन्य विषय मिल जाने के कारण समधि की बात नहीं निकली। एक तो पहले से द्वेषभाव, और अब वे आयेंगे तो ये चुप नहीं रहेंगे। उसके मन में विचार आया कि उसने उन्हें बुलाकर झगड़े का कारण खड़ा कर दिया। फिर यह तसल्ली भी हो रही थी कि जो कुछ किया, गलत तो नहीं किया।

वासप्पाजी के हाथ कागज भेजने के बारहवें दिन शाम के चार बजे श्यामभट्ट जी अकेले आ पहुंचे। गंगम्मा बाड़ी के तालाब से पीतसाल के पत्ते लाने गयी हुई थी। अप्पण्णय्या गाय के बछड़े की भांति मां का अनुसरण कर रहा था। चेन्निगराय घर पर थे। आगंतुक के हाथ-पैर धोने के लिए पानी की व्यवस्था की, फिर खाना परोसते-परोसते नंजम्मा ने कोर्ट केस की सारी बात कह सुनाई। साथ ही कल्लेश के आने की बात भी बताई। पत्नी के यह सब बता देने पर पटवारी को गुस्सा तो आया, लेकिन समधि के सामने उसे गालियां देने की हिम्मत न हुई या शर्म रही। वे आंगन में ही बैठ तांबूल का पीक बाहर न गिराकर मुंह में ही रखने का प्रयत्न करते रहे।

श्यामभट्टजी खाना खाकर बाहर सूंघनी मसल रहे थे कि गंगम्मा टोकरी भर-कर पीतसाल के पत्ते उठाये आयी। उसके पीछे-पीछे अप्पण्णय्या दुही गाय की रस्सी पकड़े बाड़े की ओर गया। समधि को देखते ही गंगम्मा का क्रोध भड़क उठा, "मेरे बेटे को अलग करने के लिये कहता है! घर फोड़ू, रांड की औलाद, बेशर्म कहीं का आकर बैठा है। अभी करती हूं।" भीतर रसोईघर में पत्ते की टोकरी पटकी और बाहर आकर समधि के सामने खड़ी होकर फूट पड़ी—"ऐ ब्राह्मणार्य से पेट भरने वाले पुरोहित, मेरे बच्चे को अलग करने के लिए आया है क्या ?"

श्यामभट्टजी जानते थे कि उनकी समधिन की जीभ बेलगाम है। लेकिन उन्हें यह कल्पना नहीं थी कि उनके सामने ही इस तरह बात करेगी। गंगमा को अप-लक देखते हुए दो मिनट वह मौन रहे। फिर बोले—"देखिए, आप समझ से बात करें। आपका बेटा आपके साथ रहे, मुझे कोई मत्सर नहीं है। मेरे यहां आने का मुख्य कारण यही है कि आप अदालत जाकर पूर्वजों की जायदाद न खोयें। बुद्धि से काम लें···।"

पूरी बात कहने से पहले ही गंगम्मा के मन में इनके आने की पृष्ठभूमि चकमक

की आग की भांति प्रज्वलित हो उठी। रसोईघर के द्वार पर जाकर बहू की ओर मुखातिब होकर बोली—"क्यों री बाजारू छिनाल, तब तो अपने भाई को बुलवाकर बगल में सुलाया, और अब इस पुरोहित को बुलवाया है। आज इसके साथ नाचेगी क्या ? मदमस्त हो झूम रही है न तू ?"

फिर बरामदे के पास जाकर, तांबूल थूका और लौटकर बेटे के पास आकर बोली—"क्यों रे शांड, राड के बेटे, तू अपने बाप से नहीं जन्मा ? तेरी औरत ने इसे चिट्ठी लिखकर बुलाया है। तू आज बाहर बरामदे में सो जा। इसे उसके साथ ऊपर अटारी पर सोने दे।"

यह सब सुन श्यामभट्टजी दोनों हाथों से कान बंद कर राम-राम रटते हुए समधिन की ओर देखने लगे। गंगम्मा अब वहां न ठहरी। अप्पण्णय्या को साथ ले सीधे रेवण्णाशेट्टी के घर चली गयी।

श्यामभट्टजी कानों से हाथ हटाकर चेन्निगराय से बोले—"आप घर के यजमान हैं, इसलिए मैं आपसे कहता हूं। घर के लिए बुजुर्ग होते हुए भी अगर मनमानी से बात करें तो आप लोगों का संसार कैसे चलेगा ? हमारी सातु भी कहती है कि आपकी पत्नी नंजम्मा गुणवान, बुद्धिमान है। इस बच्ची को उसमें भी बड़ी बहू को, मेरे ही सामने ऐसा कहते हैं तो अंदाजा लगाया जा सकता है कि मेरी छोटी बेटी को क्या-क्या न कहते होंगे ! जावगल के किसी संबंधी के कहने पर हमने यहां लड़की दी। अब किसी तरह परस्पर निभाकर चलना चाहिए। मेरी बात समझ गयें न ?"

"और दो पान ले आ री।" पटवारी महोदय अपनी पत्नी से बोले। नंजम्मा ने पान ला दिये। उसपर चूना लगाकर, मुंह में डाला और तंबाकू मसलते हुए 'हुं' कर दी।

"आप लोगों को अलग करना हम नहीं चाहते। लेकिन घर में तुम पुरुष लोगों को विवेक से काम लेना चाहिए। आपको साहूकार से समझदारी से समझौता कर लेना चाहिए। कोई एक-दो जमीन या खेत, जैसाकि नंजम्मा कहती है, बेचकर ऋण-मुक्त हो जाइये और गिरवी-पत्र पर साक्षी लिखवा लीजिये। जो बचेगा, उसमें किसी तरह गुजारा कीजिए।

पटवारी महोदय मुंह में गुलगुल करते हुए तांबूल-रस का मजा लूट रहे थे। समधि उनके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे थे। इसलिए फिर पूछा—"है न ?" उसने मुख छत की ओर उठाकर मुंह तो खोला, लेकिन मुंह में तांबूलरस होने के कारण

जबान न खुल पायी। उनके थूककर आने तक इंतजार कर भट्टजी फिर बोले—"अब आपको बोलना ही चाहिए।"

चेन्निगराय कुछ भी बोलने से डरते रहे। अंत में बड़ी मुश्किल से निर्णय पर पहुंचकर बोले—"मुझे कुछ नहीं मालूम, आप हैं और हमारी मां हैं।" इतना कह कर बाहर चले गये।

"बहन, सुना तुमने ?" भट्टजी ने कहा।

नंजम्मा बाहर आकर बोली—"इनका स्वभाव आप अच्छी तरह से नहीं जानते। अपने दामाद से ही पूछिए। अप्पण्णय्या अगर हठ करे कि कम-से-कम अपना-अपना हिस्सा हमें दे दिया जाये तो कर्जा भी आधा-आधा चुका देंगे। शायद इससे कुछ बन जाय।"

"क्या उसमें योग्यता है, तुम नहीं जानती क्या ? अदालत के बारे में मुझे मालूम नहीं था। लेकिन इससे पहले ही हमने यही निश्चय किया था। इकलौती बेटी है। किस तरह पालेंगे। भगवान ने दो जून खाने के लिए न नहीं कहा है। इस सास के पास अपनी बच्ची को कैसे भेजें ? इसी लिए जचकी के पश्चात भी हमने वहीं रख लिया है !"

नंजम्मा को कुछ न सूझा। वह चुपचाप खड़ी रही। इतने में घर में घुसते ही गंगम्मा बहू को देखते ही जल उठी—"भड़ुवे के साथ मौज उड़ा रही है री ! तेरा पति मंदिर में बतिया रहा है।"

नंजम्मा को क्रोध के साथ हिम्मत भी आयी उलट पड़ी—"लगता है ऐसा काम आप ही करती हैं; इसीलिए कुलीन लड़कियों को इसी तरह कहती हैं। आपकी जबान में कीड़े पड़ेंगे। थोड़ा चुप रहेंगी या नहीं !"

"हलकट, छिनाल, मुझे कहने के लिए आई है तू ? अपने लड़कों से कहकर अगर तेरा मंगलसूत्र न उतरवा लिया तो मैं जावगल की बेटी नहीं, देख !" इतना कहकर गरजते ही गंगम्मा मंदिर भागी। बेटे के सामने खड़ी होकर गरजी—"अगर तू अपने बाप से पैदा हुआ है तो चलकर अपनी औरत के जबड़ों के दांत गिरा दे, उसका मंगलसूत्र छीन ले। वह कुलटा कहती है कि मेरे मुंह में कीड़े पड़ेंगे।"

महादेवय्याजी इकतारा झंकृत कर "जागो भाई, सांप काटने से पहले …"गा रहे थे। यह सब सुनते ही भजन रोककर बैठ गये। "तू अपने बाप से पैदा हुआ है

या नहीं, कह दे। बाप से पैदा हुआ होगा तो चलकर उसका मंगलसूत्र छीन लेगा।" दुबारा भड़काया। अपने पैदा होने की पवित्रता सिद्ध करने की असमंजसता में दो मिनट तिलमिलाते रहे, फिर हिम्मत कर चेन्निगराय खड़े हुए। पास ही बैठे महादेवय्याजी ने उसका हाथ खींच कर बिठाते हुए कहा—"पटवारीजी, इतने समय भजन सुनते रहे, अक्ल कहां गयी ?"

कुछ न समझकर पटवारी जी बोले—"जाने दो, भजन गाइये, सुनें।" इकतारा उठाकर महादेवय्याजी ने वही भजन शुरू किया कि गंगम्मा बौखला उठी—"रांड की औलाद, भिखारी की बात सुनता है। यह भिखारिन छिनाल का मर्द, जनम देने वाली की इज्जत की रक्षा नहीं करता।" कहती हुई वप रेवण्णाशेट्टी के घर चली गयी।

इधर श्यामभट्टजी नंजम्मा से बोले—"बहन, मेरे यहां आने से कोई लाभ नहीं हुआ। मैं अब चलता हूं। मेरा भी अट्ठारह गांवों का पौरोहित्य है। बेटी और पोती की देखभाल करनी है।" अपनी गठरी और छाता हाथ में उठा लिया। कुछ न सूझने पर वह बोली—"ठीक है, जो होना है होने दो। हां, सातु को भेज दीजिए।" उन्होंने कहा—"क्यों भेजूं, तुम सब नहीं जानती क्या ?"

वह कुछ नहीं बोली। केवल उनके चरण स्पर्श किये 'दीर्घ सुमंगली भव, सकल सन्मंगलानि भवंतु' आशीर्वाद देकर वे चल पड़े। दरवाजे के पास आकर नंजम्मा बोली—"तिपटूर के पास तिम्लापुर है। उस गांव में पटवारी द्यावरसय्याजी हैं। रात उन्हीं के घर रहकर सुबह जाइएगा। अंधेरा होने के बाद तिपटूर नहीं जायें। बुक्का के टीले पर चोर रहते हैं। वे एक-एक, दो-दो गाड़ीवालों को भी नहीं बख्शते। कुटम्मस करके सब कुछ छीन लेते हैं।"

सातवां अध्याय

बेटा रामण्णा डेढ़ साल का था कि नंजम्मा फिर गर्भवती हो गयी। उसका अंतर्मन साफ रूप से समझ गया था कि अदालती केस में सारी जमीन से हाथ धोने पड़ेंगे। "हमारा ही दुखड़ा है तब और बच्चे क्यों ?" इस प्रकार वह कई बार सोचकर निराश हो जाती। फिर यह स्मरण होने पर कि भैया की शादी हुए कई वर्ष हो गये लेकिन संतान नहीं हुई तो यह भगवान का ही लिखा समझना चाहिए; और भगवान के देते समय 'ना' भी नहीं कहना चाहिए—इस कल्पना से उसे सांत्वना मिलती।

इसी समय गांव में दो घटनाएं घट गयीं। पहली, गांव में प्लेग आना। यह घटना इस क्षेत्र के लिए नयी नहीं थी। दो-तीन साल में एक बार गांव छोड़कर गांव के बाहर झोपड़ियां बनाकर रहने की लोगों को आदत हो गयी थी। दूसरी घटना अपूर्व थी। काशिबड्डी साहूकार ने यहां आकर महाजनी प्रारंभ कर दी थी। सोना, चांदी, तांबा, पीतल आदि सामान गिरवी रखकर उधार देना और एक रुपये पर एक दमड़ी प्रतिदिन के हिसाब से ब्याज लेना। ऐसे महाजन मलाबार प्रदेश के माणिल्ला मुसलमान हैं। ये बंजारों के लहंगे की तरह पट्टीदार लुंगी बांधते और सिर पर बालदार टोपी पहनते। इनकी उम्र लगभग पचास की थी। 'एक दमड़ी कौन-सी बड़ी रकम है ! और फिर जरूरत के समय पैसा भी तो देते हैं !' कहकर शिवेगौड़ ने इस महाजनी के औचित्य को समझाया। इसी शिवेगौड़ ने इस परदेशी को रहने के लिए जगह दी। गांव में शिवेगौड़ के कुल तीन मकान थे। रास्ते के बगल वाले मकान में लोहे का एक बड़ा संदूक रखकर इस महाजन ने व्यापार शुरू किया। कहते थे कि इस घर का मासिक भाड़ा पचास रुपये था। शिवेगौड़ ने सबसे साफ-साफ कह दिया था कि उसका इस नये व्यापार से कोई संबंध नहीं है।

काशिबड्डी महाजन के गांव आने के एक-दो महीने में ही लगभग सारे गांव ने उससे कर्जा उठा लिया था। लोग कहते थे कि आवश्यकता पड़ने पर शिवेगौड़ भी इसी महाजन से उधार लेता है। व्यवहार है वायदे का। झूठ नहीं, धोखा नहीं। ब्याज का हिसाब लगाना भी मुश्किल नहीं। एक दिन का एक रुपये पर एक दमड़ी! इस तरह वह सारे गांव के लिए काम का आदमी था। प्लेग के समय काशिबड्डी महाजन ने भी गांव छोड़ा था और शिवेगौड़ की बाड़ी में उसकी झोपड़ी के पास ही अपनी झोपड़ी बनाकर शरण ली थी। लेनदेन की लोहे की पेटी भी साथ में ले गया था।

गंगम्मा के परिवार ने पहले जैसे ही गांव के बाहर अपनी बाड़ी में झोपड़ी बनायी। नंजम्मा का गर्भ तीन महीने का हो गया था। कै होती थी। तो भी घर की सारी चीजें बांधकर ले जाने का सारा काम उसे ही करना पड़ा। महादेव-य्याजी को भी गांव का मंदिर छोड़ना पड़ा। चोलेश्वर मंदिर तालाब के चढ़ान पर पत्थर का बना था जिसमें मूल लिंग प्रस्थापित था। सभी कहते थे कि इसे जकणाचारी (कर्नाटक का अमर शिल्पी) ने बांधा था। यह भी जानते थे कि वहां सांप अधिक रहते हैं। "सांप क्या हैं? शिवजी के गले का हार! ये मेरा क्या करेंगे?"—कहकर अय्याजी अपना इकतारा, तानपुरा, भिक्षा की झोली, पादुकाएं, बचा हुआ धान आदि लेकर वहीं चले गये। गंगम्मा की झोपड़ी इस मंदिर से दूर पड़ती थी, इसलिए पटवारी चेन्निगराय अब यहां कम जाते। काशिबड्डी महाजन भी तंबाकू खाते थे, इसलिए चेन्निगराय उन्हीं की झोपड़ी में पहुंच जाता। कभी-कभी शिवेगौड़ भी वहां आ जाता। इनकी बातचीत बंद नहीं हुई थी। आखिर पटवारी, पटेल है न! और फिर झगड़ा तो गंगम्मा और शिवेगौड़ के बीच है। लेकिन जब गंगम्मा को पता लगता कि बेटा वहां गया था तो वह बेटे को बे-लगाम गालियां देती।

लोगों को गांव छोड़ने से पहले प्लेग से छह आदमियों और दो बच्चों के अलावा इस बार अधिक मौतें नहीं हुईं। गांव वालों ने मारी-मां की पूजा करायी और तुरंत गांव खाली कर दिया। रोग और मौत से बचने की तसल्ली होते हुए भी, गांव के बाहर रहना सबकी जान पर आता था। फिर भी बाहर रहने की बात सबकी जबान पर थी।

कहते थे गंगम्मा और शिवेगौड़ का केस समाप्त होने को आया था। दोनों

पक्षों के वकीलों ने अपने-अपने तर्क पेश किये थे। "हमारे पक्ष के वकील के तर्क सुनकर जज ने भी सिर हिलाया।"—रेवण्णशेट्टी की कही हुई यह बात गांव भर में फैल गयी। प्रतिरोध में शिवेगौड़ ने कहा—"हमारे वकील ने तर्क किये तो गंगम्मा के वकील का मुंह बंद हो गया।" दोनों पक्ष के लोग बड़े उत्साह से तिपटूर जाते थे। अप्पण्णय्या सबसे पहले गाड़ी से उतरता और तिपटूर के होटल में पहुंच जाता। चेन्निगराय भी छोटे भाई से कभी पीछे नहीं रहे। शिवेगौड़ मडुए की रोटी और तीसी तिल की सूखी चटनी ले जाता और कार्य से निपटकर लौट पड़ता।

फैसले के दिन दोनों पक्ष के लोग बैलगाड़ी लेकर गये। गंगम्मा ने छाती पर हाथ रखकर जजों का फैसला सुना—"शिवेगौड़ से इन्होंने पैसे लिये थे। उसका ब्याज, ब्याज का ब्याज और अदालती खर्च मिलाकर साढ़े पांच हजार रुपये ये कोर्ट में जमा करें। नहीं तो अदालतन इनकी जमीन नीलाम कराकर साहूकार की रकम दे दी जायेगी।" "तेरी औरत की चूड़ियां टूट जाएं, रांड के बच्चे।"—जजों को गालियां देने के लिए गंगाम्मा की जबान तक शब्द आये थे कि अदालत के द्वार पर खड़ी पुलिस देखकर अंदर-की-अंदर ही रह गये।

अदालत से बाहर आने के बाद वकील महांतय्यजी बोले—"तुमकूर कोर्ट में अपील हम कर सकते हैं। पैसे खर्च होंगे। लाये हैं क्या ?"

"वकील साहब, मेरे घर में सोना, चांदी, बर्तन जो कुछ भी था, सभी गिरवी रख चुकी हूं। मैं विधवा पैसे कहां से लाऊं ?"

शिवेगौड़ का वकील भी वहां आ गया। दोनों वकीलों ने अंग्रेजी में न जाने क्या बातें कीं, कि बाद में गंगम्मा से उसका वकील कहता है—"देखो बहन, आपको शिवेगौड़ से और भी थोड़े रुपये दिलवा देंगे। आप अपना उधार चुका दीजिए। 'हमारा कुछ नहीं' यह बताकर सारी जमीन उसे लिखवा देते हैं। अंत में आप लोगों को भी बाद में अन्याय न हो।"

"जमीन खो देंगे तो पेट के लिए क्या करेंगे, वकील साहब ?" गंगम्मा ने पूछा। मुंह में तांबूल-पीक भरा होने से चेन्निगराय चुप थे।

"नहीं तो ऊपर के कोर्ट में जाना पड़ेगा। उसके लिए हजार रुपये चाहिए। रुपये जुटाने का विश्वास हो, तो बात दूसरी है।"

अब कोई दूसरा रास्ता न था। शिवेगौड़ को वहीं बुलाया गया। वह दो

हजार रुपये और देने के लिए राजी हो गया। उसे डर था कि अगर अदालत ने नीलाम कराया तो गांव में और लोग भी बोली लगा देंगे। गंगम्मा दिशा-भ्रमित-सी थी। शिवेगौड़ ने वहीं नारियल की दुकान पर जाकर दो हजार रुपये ला दिये। दोनों वकीलों ने पत्र तैयार किया। महांतय्यजी को आखिरी फीस के सौ रुपये लेने थे क्योंकि रेवण्णशेट्टी ने यह रकम उन्हें नहीं चुकायी थी।

"आपको देने के लिए मैंने आठ सौ रुपये दिये थे जी !" गंगम्मा ने कसम खाकर कहा।

"मुझे कुल डेढ़ सौ रुपये मिले हैं।" वकील ने कहा।

फैसले के दिन रेवण्णशेट्टी ने इनसे तो गाड़ी से चलने का कहा और खुद सुबह की मोटर से आने का कहकर आया ही नहीं। इसलिए अब वकील को सौ रुपये देने पड़े। दूसरे दिन पत्रों की रजिस्ट्री कराकर वे लोग गाड़ी से गांव के लिए रवाना हुए। गंगम्मा ने एक हजार नौ सौ की पोटली जांघ के पास रखी और बिना आंखें मूंदे गांव लौटी।

अदालत के फैसले के बारे में उसने गांव में किसी से नहीं कहा। लेकिन शिवेगौड़ बिना कहे कैसे रहता ? अदालत के खर्चे के लिए जिन्होंने गंगम्मा को सौ-पचास रुपये दिये थे, वे सब झोपड़ी की ओर दौड़े। इन सबको आठ सौ रुपये उधार के चुकाये। बचे रुपयों को गंगम्मा अपने बिस्तर के नीचे रख, सोती। एक दिन रेवण्णाशेट्टी के घर जाकर उसने पूछा—"रेवण्णा, वकील साहब कह रहे थे कि तुमने उन्हें पूरे पैसे नहीं दिये। उन्होंने मुझसे सौ रुपये लिये।"

"किसने कहा ?"

"वकील साहब ने ही कहा।"

"भड़वों की औलाद, मेरा बेटा कहीं का ! चलिए, मेरे सामने कहे तो चप्पल से पूजा करूं उस चोर की, अपनी औरत की औलाद की !". गुस्से से रेवण्ण ने अपनी लाल आंखें घुमायीं। गंगम्मा की आगे बोलने की हिम्मत न हुई। उसे भय था या हताशा, अथवा रेवण्णा की सचाई पर विश्वास—वह चुप रही।

"रेवण्णा, वकील साहब ने जिता देने की बात कही थी, फिर क्यों हार गये ?"

"कहते हैं उस हरामखोर ने जजों को रिश्वत खिला दी थी। कहते हैं शिवेगौड़ ने पहले दिन उन्हें दो हजार रुपये दिये। फैसले के एक दिन पहले ही वह गाड़ी लेकर गया था। मुझे पहले ही पता लग गया था। हमारे पास दो हजार रुपये

होते तो हम भी दे सकते थे। मैं जानता था कि आपके पास पैसे नहीं हैं, इसीलिए फैसले के दिन मैं नहीं गया।"

गंगम्मा चुपचाप अपने घर लौट आयी।

[2]

कई लोग गंगम्मा की झोपड़ी पर आये। इन्होंने शिवेगौड़ और जजों को गालियां देकर गंगम्मा के प्रति सहानुभूति जतायी। एक दिन सुबह अय्याशास्त्री जी आये और शिवेगौड़ को गालियां देकर गंगम्मा से बोले—"गंगम्मा, मेरी घर-वाली तुमसे कुछ बातें करना चाहती है, चलो चलें।" और अपनी झोपड़ी पर ले गये। शास्त्रीजी की पत्नी ने भी शिवेगौड़ को शाप दिया। शास्त्रीजी ने पंचांग देखकर भविष्यवाणी की कि उन जजों की पत्नी, बच्चे सब मर जायेंगे।

"गंगा बहन, तुम रेशमी वेष्टन पहन, यहीं खाओ। तुम्हें कोई क्या कहेगा!" शास्त्रीजी की पत्नी सुब्बम्मा ने विवश किया तो गंगम्मा अपनी बहू को मनःपूर्वक गालियां देने लगी—"ताटकी, छिनाल ने जिस दिन हमारे घर पैर रखा, तब से मुसीबत ही आने लगी। अब सारी जमीन भी चली गयी। कहते हैं न कि जन्मते बच्चों की किस्मत और आती वहू की किस्मत झूठ थोड़े ही होती है!"

गंगम्मा ने स्नान कर रेशमी वेष्टन लपेटा, विभूति लगायी और तीन आचमन किये तब तक शास्त्रीजी उसकी झोपड़ी पर जाकर अप्पण्णय्या को ले आये। शास्त्रीजी के बड़े चाचा का पोता अण्णाजोइस भी आ गया। इन दोनों के लिए भी सुब्बम्मा ने खाना बनाया—पेठे की कढ़ी, मडुए का लोंदा, भात और मट्ठा। इन्हें परोसकर वह स्वागत-सत्कार कर रही थी कि अय्याशास्त्रीजी ने बात शुरू की—"रामण्णाजी को रहना चाहिए था। उनकी वात ही निराली थी। इससे पूछो कि मैं उनके बारे में कितना छटपटाता हूं। उनके जाने से मानो हमारे गांव का कलश ही गिर गया।"

"ऐसी छिनाल बहुएं जब मेरी किस्मत में लिखी हों, तो कहिए वे कैसे रहते?"

सुब्बम्मा ने पूछा—"गंगम्मा, तुम्हारा मासिकधर्म रुके दो साल हो गये न?"

"तीन वर्ष हो गये हैं।"

शास्त्रीजी बोले—"देखा ! तुम भी जिंदगी जी रही हो न ! कोई ऐसा दान-धर्म, कथा-व्रत नहीं जिसे तुमने न किया हो। मासिकधर्म के रुकने के बाद स्त्रियों को चाहिए कि ऋषिपंचमी का व्रत करें। तुम्हारी सारी कठिनाइयां दूर हो जायेंगी।"

अण्णाजोइस अपने चाचा से अधिक शास्त्रीय मंत्र जानता था। शिवघट्ट के सूरणाजोइसजी का शिष्य रहा था। उसने मंत्र के साथ ऋषिपंचमी-व्रत की महिमा बतायी।

"जो भी हो, होने दो। तुम इसे करो। यहीं झोपड़ी पर ही क्यों न करना पड़े, परवाह नहीं। जो मदद चाहिए, मैं करूंगी। अप्पण्णय्या की पत्नी वेंकटलक्ष्मी है। वहीं अलग से एक छप्पर बनवा दिया जा सकता है। अपनी झोपड़ी के सामने बढ़ा-सा छप्पर डलवा देंगे। आप लोगों की झोपड़ी के पास उपद्रव होता रहता है। छुआछूत निभेगा नहीं।" सुब्बम्मा बोली।

"अप्पण्णा, करवा दूं रे ?" रोटी निकल चुकने के बाद मट्ठे की कढ़ी में अन्न मिलाती हुई गंगम्मा ने बेटे से पूछा। जब चेन्नेनहळ्ळी के वेंकटाचलय्याजी की मां ने ऋषिपंचमी की थी तब अप्पण्णय्या भी भोजन के लिए गया था। कढ़ी, पूरणपोली, कच्चे आम का मसालेदार अन्न ऐसा बनाया था कि जीभ से लार टपकने लगी थी। उसे तुरंत यह सब याद आया तो अपने सामने मट्ठे की कढ़ी की जगह कच्चे आम का मसालेदार अन्न और पूरणपोली का ढेर दिखाई पड़ा।

"करवा देंगे मां। उस वेंकटाचल से हम क्या कम हैं ?"

बस, व्रत करना निश्चित हुआ। सुब्बम्मा बोली—"गंगम्मा को क्या समझ रखा है ! जो कहेगी, वही करेगी। ब्रह्मदेव का बाप भी आ जाय तो भी वह अपनी वही बात नहीं बदलेगी।"

गंगम्मा नहीं बदली। बदले तो उसका नाम क्या ? अण्णाजोइस ने भोजन के पश्चात बैठकर पंचांग देखकर और दोनों हाथ की उंगलियों की रेखाओं की सहायता से हिसाब लगाकर दिन तय किया। चेन्नेनहळ्ळी के वेंकटाचलय्या की मां की अपेक्षा छोटे पैमाने पर ऋषिपंचमी करना गंगम्मा की प्रतिष्ठा के विपरीत था। इसलिए अधिक सामान मंगाना चाहिए। अय्याशास्त्रीजी के यहीं तवे की काली स्याही और निब से सामान की सूची बनवायी। गांव के दोनों पुरोहितों

के लिए रेशमी वेष्टन और मेलुकोटे की किनारेदार धोती और उनकी पत्नियों के लिए पचास-पचास रुपयों की साड़ी। दान के लिए घर में जो गाय है, वही चलेगी। इसके अलावा, बारीक चावल, दाल, शक्कर, रवा आदि चाहिए। ये सामान लाने के लिए बैलगाड़ी से तिपटूर जाना पड़ेगा। निश्चित हुआ कि अण्णाजोइस और अय्याशास्त्रीजी दोनों साथ चलें। अप्पण्णय्या को फिर एक बार तिपटूर जाने का सुअवसर मिला।

[3]

ऋषिपंचमी धूमधाम से मनाई गयी। निश्चित हुआ कि आठ दिन बाद ही सब अपने-अपने गांव लौटेंगे। व्रत का सामान—रवा, शक्कर, घी आदि अब भी बचे हुए थे। गंगम्मा ने एक दिन बहू से कह दिया—"तूने जबसे इस घर में कदम रखा है घर बर्बाद हो गया है। सारी जमीन हाथ से निकल गयी। अब गांव में तू और तेरे बच्चे अलग रहेंगे। हम घर में रहेंगे।"

"तू और तेरे बच्चे का अर्थ नंजम्मा तुरंत नहीं समझी तो उसने पूछा—"किस घर में रहेंगे ?"

"किस घर में? उसी घर में जिसे मेरे पति ने बंधवाया है।"

मन में आया कि कह दे शिवेगौड़ आप लोगों को घर के अंदर जाने दे तब न ! लेकिन उसने मुंह नहीं खोला। उसकी अंतरात्मा पहले ही गवाही दे चुकी थी कि कोर्ट में सारी जमीन हाथ से निकल जायेगी। उसने यह नहीं सोचा था कि शिवेगौड़ से दो हजार रुपये और मिलेंगे। रकम मिलने पर भी वह नसीहत देने नहीं गयी। कहे तो बेकार के झगड़े; बुरी बातें सुननी पड़ेंगी। अब वह छह महीने की गर्भवती थी। उसने छुटपन में ही सुना था कि गर्भवतियों को बुरी बातें नहीं सुननी चाहिए, बुरा विचार भी नहीं करना चाहिए; हमेशा अच्छी बातें सुनना और उल्लसित चित्त बनाये रखना चाहिए। पहली दो गर्भावस्थाओं में अधिक ध्यान नहीं दिया था। लेकिन अब अनायास मन में यह बात घर कर गयी थी। रोज कभी-न-कभी ध्रुवचरित्र, भक्त प्रह्लाद, राम-पट्टाभिषेक की कथा के गीत गुनगुनाती रहती। ऐसी कहानियों में ही हमेशा अपने को अटकाये रखती।

उस दिन दोपहर में पति लेटा हुआ था। उन्हें सास का आदेश बताकर पूछा—

"उन्होंने अलग रहने के लिए कहा है। कहां जायें, क्या किया जाये, कुछ सोचा है आपने ?"

"तेरे गुण देखकर ही मेरी मां ने यह कहा है। तू अपने बच्चों को लेकर कुछ भी कर।"

"मुझमें ऐसे क्या गुण हैं ? सारा गांव मुझे जानता है। अब उसकी बात नहीं करती, आगे क्या करना है यह बताइये।"

"मैंने कह दिया न ! मैं अपनी मां के साथ रहूंगा।"

उसे गुस्सा आ गया—"क्या कह रहे हैं ? दिमाग तो ठिकाने है न ?"

"जा री गधी, छिनाल कहीं की, मेरी नींद खराब मत कर।"

नंजम्मा आगे नहीं बोली। उसने अलग रहने का निश्चय तो कर लिया था, लेकिन यह कल्पना नहीं की थी कि सास अपने बेटे को भी मुझसे अलग कर देगी।

"खैर, अब तो जमीन भी नहीं है ! देखती हूं अपने बेटे को अपने साथ कितने दिन रखती है !" उसने सोचा भी कि परिवार का भार अब उसी पर है और बच्चों से लेकर सबको पालने की जिम्मेदारी भी उसी पर आने वाली है। परंतु यह नहीं मालूम था कि कैसे ? फिर भी उसने मन में निश्चय कर लिया कि कितना भी कष्ट क्यों न हो, गर्भवती होने के कारण रोयेगी नहीं, मन को विचलित नहीं होने देगी।

पति के सो जाने के बाद उसने रामण्णा को उठाया और गर्भ के कारण कमर पर न बिठाकर कंधे से चिपका लिया। दाहिने हाथ से पार्वती का हाथ पकड़, चढ़ान पर चलने लगी। तालाब में पानी नहीं था। उसकी चिकनी मिट्टी तपकर बांध के धूल भरे रास्ते पर धूप की चकाचौंध फैला रही थी। वह धीरे-धीरे चलकर मंदिर के प्राकार के दरवाजे पर आई। महादेवय्याजी अभी-अभी स्नान कर गेरुवा धोती सुखाने के लिए डालते हुए दिखाई दिये। ईंटों के चूल्हे पर मटके में अन्न पक रहा था। उन्होंने नंजम्मा को देखकर कहा—"आओ बहन, आओ। मैं तुम्हारी झोपड़ी की ही ओर आने की सोच रहा था, लेकिन झिझक रहा था कि तुम्हारी सास क्या कहेगी !"

"अब सासजी कुछ नहीं कह सकतीं। मैं ही आ गयी," वह बोली।

इस परिवार की ऐसी कोई बात छिपी नहीं थीं जिसे महादेवय्याजी ही क्या,

सारा गांव न जानता हो। इसलिए इन्हें कुछ भी बताने की जरूरत नहीं थी। फिर भी उससे सास का अलग रहने के लिए कहना और अपने पति से मिला उत्तर—ये दो ही बातें बतायीं।

"दो हजार रुपये आये थे न, उसमें से कहते हैं उधार चुकाने के बाद एक हजार रह गया था। जोइम की बातों में आकर उन्होंने पंचमी पर पैसे लुटाये, तो तुम क्यों चुप रहीं ?"

"अय्या जी, सब जाने के बाद वह भी चला गया। मैं मना करती तो भी वे न मानतीं। बेकार में झगड़ा क्यों ?"

"तुम्हारी बात भी ठीक है।"

अय्याजी ने अन्न और लोबिया की दाल अल्युमिनियम की थाली में डालकर खायी। रोज मध्याह्न में वे लिंगायत के घरों से भिक्षा लाकर खाते। और जब मध्याह्न का सूर्य आकाश में ढलने लगता तो फिर भिक्षा लेने नहीं जाते। उस दिन सोमवार होने के कारण दूर गांव में भिक्षा के लिए गये थे। आने में देरी हो जाने से खाना पकाना पड़ा। नंजम्मा और पार्वती को खाने के लिए थोड़ा गुड़ और नारियल का टुकड़ा दिया, और खुद विचारमग्न हो चुपचाप बैठे रहे।

"अय्याजी, मैं नहीं जानती कि आप मेरे मायके के बारे में जानते हैं या नहीं! अपने घर की बात दूसरों से क्यों कहें, इसलिए मैंने किसी से नहीं कही। भाभी का स्वभाव अच्छा नहीं है। अब मैं जचकी या और किसी वजह से भी वहां नहीं जाऊंगी। दादी को यहीं बुला लूंगी। वही आकर मेरी सेवा करेगी। वह भी पचहत्तर से अधिक है। अधिक काम नहीं कर सकती, फिर भी हाथ-पैर मारती ही है। लेकिन रहने के लिए छाया और खाने के लिए मुट्ठी भर अनाज चाहिए ही। ऐसे समय इन महाशय ने मेरा हाथ छोड़ा है तो अब क्या करूं!"

सोचकर अय्याजी बोले—"चेन्नय्या तो दो दिन में ही पुरानी दीवार ढूंढ़ता हुआ आ जायेगा। उसकी चिंता मत कर। कुरुबरहळ्ळी के पटेल गुंडेगौड़जी मालूम है न, वे चाहें तो आपकी मदद कर सकते हैं। इस गांव में आपका हितैषी कोई नहीं है।"

कुरुबरहळ्ळी इनकी पटवारी-सीमा के अंतर्गत ही था। गांव के चालीस घर एक ही जाति के गडरिये हैं। गुंडेगौड़ गत चालीस वर्षों से पटेल पद संभाल रहे हैं। पास-पड़ोस के गांववाले उन्हें धर्मराज कहते हैं। नंजम्मा ने भी सुन रखा था।

कहते हैं जब से उन्होंने पटेल-कार्य संभाला है तब से आज तक उस गांव में न चोरी हुई और न व्यभिचार, और न ही भूख के कारण गांव छोड़कर किसी को दूसरे गांव जाना पड़ा।

अय्याजी बोले—"पिछले मुहल्ले में उनका एक घर है जो खाली पड़ा है। उसमें रहने के लिए देने का उनसे आग्रह करें तो 'ना' नहीं कहेंगे।"

नंजम्मा को याद आया। रामसंद्र में भी गुंडेगौड़जी का एक घर है। उसमें भी कोई नहीं रहता। वे दे दें तो रहने की चिंता सुलझ जाती है। उसने उन्हें देखा है लेकिन अधिक परिचय नहीं है। इसी पटवारी कार्य के अंतर्गत क्षेत्र के पटेल होने के नाते कई बार घर आये थे। नंजम्मा ने कई बार उन्हें खाना परोसा था। घनी सफेद मूंछें, चौड़ा चेहरा, दाहिने हाथ की कलाई में उंगली जितनी मोटी सोने की पट्टवाली घड़ी। कोट पहनने पर भी घुटने तक मौजा और मोची के बनाये चप्पल पहनते थे।

"कल ही नौ-दस बजे आप कुरुबरहळ्ळी के लिए चल दीजिए। मैं भी शिक्षा के लिए आ रहा हूं। गौड़जी से पूछिए। मैं भी कहूंगा। वे ना नहीं कहेंगे। चिन्नय्या मां के साथ रहता है, इसका जिक्र वहां न करें।" अय्याजी से इतना सुनने के बाद नंजम्मा अपनी झोपड़ी में आ पहुंची।

"रांड कहीं की, गलियों में घूमने गयी थी!" गंगम्मा ने गाली दी। लेकिन नंजम्मा मौन ही रही।

नंजम्मा दूसरे दिन उठी। स्नान किया। बच्चों को धुले कपड़े पहनाये। रोटी बनाकर उन्हें खिलाई और स्वयं भी खायी। बाल संवारकर माथे पर सिंदूर-चंद्र लगाया। रामण्णा को कंधे पर डालकर और पार्वती का हाथ पकड़कर झोपड़ी से निकली। सामने पेड़ के नीचे बैठी गंगम्मा ने देखकर जोर से सुनाया—"किस भड़वे के घर जा रही है, रांड?" लेकिन वह बिना कुछ कहे चल दी। कुछ दूर जाकर पीछे मुड़कर इस विचार से देखा कि सास, पति या देवर उसे देखने आ तो नहीं रहे हैं!

कुरुबरहळ्ळी और रामसंद्र के बीच दो मील की दूरी है। बीच में एक टीला चढ़कर उतरना पड़ता है। नंजम्मा को अकेली जाने का डर नहीं था। लेकिन गर्भवती होने और ऊपर से बच्चे को गोद में लेकर कंधे से चिपकाये रहने के कारण टीला चढ़ते-चढ़ते हांफने लगी और छाती में दर्द होने लगा। चार वर्षीय पार्वती

थक गयी थी, फिर भी रोती-रोती मां का दाहिना हाथ पकड़े चल रही थी। नंजम्मा को भी अनायास दुख उमड़ आया। वह रो पड़ी। बच्चे को नीचे उतार बैठ गयी। पूरा रोना रो, आंचल से आंसू पोंछे। क्षण भर के लिए विचार आया कि किसी तालाब या कुएं में बच्चों को फेंक दे और खुद भी डूब मरे। लेकिन नहीं। गर्भावस्था में ऐसे कुविचार नहीं आने चाहिए—यह ख्याल आते ही साहस कर वह उठी। इस बार बच्चे को दाहिने कंधे से लगाया, पार्वती को बायें हाथ से पकड़ा और आगे बढ़ी। टीला चढ़ने पर कुरुब्ररहळ्ळी दिखाई देता है। गांव के बीच नंदी का मंदिर दिखाई देता है। कहते हैं कि मंदिर के बगल का घर गुंडेगौड़ जी का ही है। 'हे भगवान, गुंडेगौड़जी के मन में हमारे प्रति दया जगा देना' मन-ही मन प्रार्थना करती हुई नंजम्मा टीला उतरने लगी।

गौड़जी दालान में बैठे तंबाकू खा रहे थे। उन्हें देखते ही नंजम्मा घर पहचान गयी। इसे देखते ही गौड़जी उठकर बोले—"आओ बहन, आओ, आओ बहन ! लक्ष्मी की तरह आई हो। बच्चों को उठाये इतनी धूप में आई ?" भीतरी दरवाजे की ओर देखकर बोले—"रे, हे लड़ग्या, हमारी पटवारिन आई है, चटाई बिछा। वह इन्हें भीतर ले गये। नंजम्मा दीवार से टिक कर बच्चों के साथ बैठ गयी। गौड़जी खंभे से टिककर बैठ गये। उनकी पत्नी लक्कम्मा ने रोती पार्वती के हाथ में खोपरा और गुड़ देकर उसे शांत किया।

"हमारे घर की सारी बातें मालूम हुई कि नहीं ?"

"मालूम है बहन। तुम्हारी सांठ गांठ-छूटी मशाल है। गांठ रहने तक मशाल भी जलती है और गांठ भी रहती है। उसे ही छोड़ फेंकने से क्या बचा रह जाता है ? तुम्हारे ससुरजी मुझ जैसे बुद्धू थे। इसका आना हुआ कि बस ! इसने घर की नींव पर ही कुदाली चलायी। अब जो भी है, उसे तुम्हें ही बचाना होगा।" इतना कहकर अपनी पत्नी की ओर मुड़कर बोले—"पटवारी काम का सारा हिसाब-किताब यह बहन ही लिखती है। उस चिन्नप्पा के हाथ से थोड़े ही होगा। वह तो बछिया का ताऊ है। उससे पूछो कि घास खाओगे, सांड ? तो 'हुं' कहता है। पानी पिओगे, सांड ? तो 'हुं'। घास चरा है सांड ? तो भी 'हुं' कहकर गर्दन हिलाता है। कहा कि खेत जोतना है, गर्दन दोगे सांड ? तो 'नहीं-नहीं' कहकर सींग हिलाकर भागने लगता है। मैंने तुम्हारे पति के गुण बताये हैं, नाराज न होना बहन !"

"नाराज क्यों होयेंगी ! वे करते ही ऐसा हैं।" पत्नी ने कहा।

इन्हीं कुशल-समाचारों के बीच लक्कम्मा भीतर से तीन लोटे गरम दूध में अच्छा गुड़ डालकर और घी पिघलाकर इनके सामने लाकर रख दिया।

"अब मुझे दूध नहीं चाहिए" नंजम्मा बोली तो लक्कम्मा ने कहा—"गर्भवती स्त्री को दूध पीने से इंकार नहीं करना चाहिए। पी लीजिए।"

"गौड़जी, आपके घर का दूध इंकार नहीं करूंगी, लेकिन आप वचन दें कि मेरा हाथ नहीं छोड़ेंगे।"

"क्या बात है बताओ तो ?"

"मेरी सास ने कल मुझे अलग रहने के लिए कह दिया है। अब मेरे लिए कहीं कोई छाया नहीं है।"

"छाया की क्या चिंता है, मेरा घर है न ! उसी में रहें। लो, पहले दूध पी लो।"

गुंडेगौड़जी से वह जो मांगने आयी थी, पूछने से पहले ही उन्होंने उसे दे दिया। गालियां नहीं दीं, और ऐसा और कुछ भी नहीं। ऐसे दिया मानो दान में उन्हें तनिक भी हिचक नहीं। नंजम्मा ने बच्चों को दूध पिलाया और फिर खुद पिया। गौड़जी पत्नी से बोले—"मैं तुमसे कह नहीं रहा था कि इस बहन के मुख की कला देखने लायक है ! क्या सीता-मैया के चेहरे के समान नहीं है ?"

महादेवय्याजी भी भिक्षा के लिए यहां आ गये। नंजम्मा को यहां बैठी देख वे भी बैठ गये। लक्कम्मा ने उन्हें पाट दिया। नजम्मा के आने का कारण पूछा मानो वे जानते ही न हों। नंजम्मा के रहने की व्यवस्था सुनकर अय्याजी बोले—"गौड़जी, आपने छाया तो दे दी, लेकिन पेट-पूजा के लिए क्या साधन है ? घर के अंदर पांव पसार पड़ी रहेगी क्या ?"

"पटवारी-कार्य नहीं है ? मेहनत करने वाले मर्द को पटवारी-कार्य से बढ़कर और क्या जायदाद चाहिए ?"

"वह कैसा मर्द है, आप नहीं जानते ?"

"वह एक शिखंडी रांड की संतान है—गाड़ी के बैलों की जोड़ी में एक दुर्बल हो भी, दूसरा सबल हुआ तो बस ! नंजम्मा की ओर मुड़कर गौड़जी बोले—"उस बैल से कह दो कि जैसा तुम कहोगी, वैसा ही उसे करना होगा। पेट के लिए कोई कमी नहीं रहेगी।"

"ऐसा मानेगा वह ?" अय्याजी बोले ।

"किस्मत है जी, भोगना पड़ेगा !" लक्कम्मा बोली ।

मध्याह्न हो चुका था । उन्हें बिना खाना खिलाये गौड़जी और लक्कम्मा जाने देने के लिए तैयार नहीं थे । लक्कम्मा अंदर गयी और पीतल के बर्तन और दो घड़े लाकर रख दिये । अय्याजी गांव जाना चाहते थे, तो उन्हें भी नहीं जाने दिया । बर्तनों को इमली से घिसा और मंदिर के सामने वाले कुएं पर नंजम्मा और अय्याजी ने अलग-थलग बर्तन धोये । मंदिर के आगन में गौड़जी के बेटे ने बनाये हुए तीन-तीन पत्थरों के चूल्हों पर इन दोनों ने अलग-अलग अन्न पकाया । नारियल और छाछ नमक और छाछ में मिलाकर भोजन किया । बच्चों को और दूध पिलाया । गौड़जी ने बैलगाड़ी तैयार करवायी उसमें गर्भवती और बच्चों को विठाया । अपनी भिक्षा झोली रख, महादेवय्याजी भी गाड़ी में बैठ गये ।

[4]

गंगम्मा ने झोपड़ी छोड़कर गांव में प्रवेश किया । अपने पुराने घर जाकर दरवाजा खोला । वह अप्पण्णय्या के साथ बीच के कमरे की धूल भी साफ न कर पायी थी कि हाथ में एक मोटा ताला लिये शिवेगौड़ का नौकर मुरुब आकर बोला—"उन्होंने कहा है कि आप अपना सामान लेकर चले जायें । गौड़जी ने घर में ताला लगाने के लिए मुझे भेजा है ।"

"कैसे रांड की औलाद ने ऐसा कहा ?"

"शिवेगौड़ जी ने ।"

"हाय ! उसका घरबार उजड़ जाय । सारी जमीन ले ली । अब घर भी छोड़ देने के लिए कहता है ! इसे क्या वह अपने बाप का समझता है ?" गंगम्मा सीधे उसके घर के सामने खड़ी होकर चिल्लाने लगी—"रे गौड़, घर क्या अपने बाप का समझ रखा है ? अदालत में जमीन का फैसला हुआ था ।"

"चाहो तो तिपटूर जाकर पूछ आओ । तुम और तुम्हारे बच्चों ने जो खरीदीपत्र लिखकर दिया है, वह लोहे की पेटी में है । लाकर दिखाऊं ?" कहते हुए गौड़ बाहर आया ।

"हाय ! इसका घरबार खराब हो जाये ।" और कुछ कहने के लिए उसे सूझा

ही नहीं। थोड़ी देर बाद उसने पूछा—"तो हम कहां पड़े रहें? गांव के पटेल हो तुम, बताओ?"

"बेघरों के लिए घर बांधने का काम पटेल नहीं करता। चुपचाप चली जाओ।" गौड़ भीतर गया और खटाक से दरवाजा बंद कर दिया।

"इसका घर गिर जाये और उसे जोतकर एरंडी बीज बोऊं। धोखे में जायदाद हड़प यह घरफोड़ू रांड का बच्चा हवा में उड़ रहा है! मेरा भी कोई है!" सुनाती हुई सीधी रेवण्णशेट्टी के घर पहुंची। सारी बातें उसे बताकर बोली—"तुम्हारी गाय बांधने का बाड़ा है न, वहां एक टट्टा बांध दो तो मैं और मेरे दोनों बेटे रह लेंगे। दे दो न?"

"गंगम्माजी, हमारी भैंस ब्याहेगी तो उसे बांधने के लिए जगह नहीं रहेगी। और तब आप लोग कहां रहेंगे? आपके ही अय्याशास्त्रीजी हैं न, उनसे पूछकर देखिए।"

"मुझसे खाने के लिए ही इस रांड के बच्चे को मेरी जरूरत थी!" सुनाकर अय्याशास्त्रीजी के पास पहुंची। उनके बाड़े में भी जगह नहीं थी।

"मेरे घर खाने को मिलता रहा, तब हमारी जरूरत थी। भिक्षा मांगने वाले पुरोहित, कहता है चार गज जगह नहीं है!" रास्ते में खड़ी होकर उसने व्यंग्य कसा।

जोइसजी थोड़े तिलमिलाये, लेकिन उसकी जबान के जाल में फंसकर वे अपनी बाड़ी में जगह नहीं देना चाहते थे। इसलिए उन्हें उपाय बताया कि मेरे चाचा के पोते अण्णाजोइसजी को बुलाकर उससे बात करो। गांव के पूर्व में एक कोने में हनुमान का मंदिर है। चार कमरों का ईट-पत्थरों का बना हुआ है। दरवाजा है और ताला भी लगा सकती हो। अण्णाजोइस ही उसका पुजारी है। मां और दोनों बेटों के वहां रहने में कोई आपत्ति नहीं है। वहां रहने के लिए गांव के प्रमुखों की स्वीकृति लेनी पड़ेगी। प्रमुख कौन? मुख्य-मुख्य घराने। पटवारी, पटेल, पंचायत का अध्यक्ष और सदस्य। औरों को मनाना मुश्किल नहीं होगा। लेकिन शिवेगौड़ गांव का पटेल और पंचायत का अध्यक्ष भी है, वह मानेगा या नहीं? अय्याशास्त्रीजी ने समझाया—"गंगम्मा, तुम अपनी जबान पर थोड़ी लगाम लगाओ। रास्ते में ही खड़ी होकर उसे हरामखोर, रांड की औलाद न कहो।" तो उसने कहा—"मैं किसी रांड की औलाद से क्यों डरूं! छोड़िये।"

दोनों पुरोहित निवेदन करने शिवेगौड़ के घर पहुंचे ! वह मानता या नहीं, कहना कठिन था ! लेकिन उसकी पत्नी गौरम्मा को एक भय था कि गंगम्मा की जबान अच्छी नहीं है। कहते हैं उसकी जीभ में काला तिल है। वह अच्छा-बुरा वक्त कुछ नहीं समझती। रास्ते में खड़ी होकर मिट्टी फेंककर गालियां देती है। फिर भी हनुमान का मंदिर ब्राह्मणों का ही है और उन्हीं के जातिवालों को वहां रहने देने से उसे कोई आपत्ति नहीं थी। पति को भीतर बुलाकर कान में बोली। इस पर भी शिवेगौड़ माना या नहीं, मालूम नहीं। वह बाहर आकर बोला—"अच्छा, जाने दो। जाइए।"

हनुमान मंदिर में इनके आने से अण्णाजोइस को एक सुविधा हो गयी। इस मंदिर के पुजारी के लिए पांच एकड़ बाड़ी, एक एकड़ खेत छोड़ा गया था। पुजारी अण्णाजोइस इस जमीन का उपभोग करता था। लेकिन रोज मंदिर के कमरे झाड़ना, फर्श धोना, भगवान को स्नान कराकर पूजा करना, उसे नहीं भाता था। जिस दिन दान-दक्षिणा के लिए वह देहात जाता, उस दिन तो हनुमानजी को स्नान नहीं करा पाता। कई दिनों तक कमरे साफ न करने से पक्षियों की बींट से बदबू आने लगती थी। गांव के पटेल ने कई बार जोइस के खिलाफ शिकायत भी लिखी थी। मंदिर के सामने की खिड़की से साफ दिखायी देता कि भगवान की पूजा हुई है कि नहीं। जोइस भगवान को जिस दिन पुष्प-जल नहीं चढ़ाता, उस दिन गांव वाले यह देखकर उसे गालियां भी देते।

अब अण्णाजोइस ने अप्पण्णय्या से कहा—"देख, मैंने तुम लोगों को मंदिर में रहने के लिए जगह दी है। प्राकार, कमरे अच्छी तरह से झाड़ू देकर धोना चाहिए। तनिक भी गंदगी न रहे। शुद्धाचार में मूर्ति धोकर पीले कनेर के फूलों से पूजा करनी चाहिए। किंतु किसी से न कहना कि तुम पूजा करते हो। कहा तो तुम लोगों को मंदिर से निकलवा दूंगा। मैं भी कभी-कभी पूजा किया करूंगा।"

अप्पण्णय्या मान गया। गंगम्मा भगवान की पूजा से इनकार करने वाली नहीं थी। उसकी भगवद् भक्ति अगाध थी। चेन्निगराय को तो देव-पूजा के कुछ मंत्र भी आते थे।

[5]

नंजम्मा को विवाह में उसके मायके से बाजूबंध, शेवंतिका, एक जोड़ी चूड़ियां और चांदी के पाजेब मिले थे। वे उसने पटवारी-कार्य के मुख्य हिसाब-किताब रखने वाली पेटी में सबसे नीचे एक किनारे पर रख दिये थे। नंजम्मा चाहती थी कि कम-से-कम ये सारी चीजें उसे मिल जायें। इसलिए उसने अपने पति से पूछा तो उसने स्पष्ट उत्तर नहीं दिया। दूसरी बार पूछने पर वह बोले—"तेरे बाप से मिला तो क्या उन्हीं का है? सब खर्च हो गया!"

"कैसे खर्च हो गया? क्या किया आपने?"

"कोर्ट के लिए खर्च हो गया।"

"क्या किया?"

"काशिबड्डि के पास पचास रुपये में गिरवी रखे हैं। चाहो तो पैसे देकर छुड़वा लो।"

"रखे कितने दिन हुए?"

"पिछली दीवाली पर।"

मतलब कि सात महीने हो गये! ब्याज ही पचास रुपये से अधिक हो गया है। अब सौ रुपये जुटाकर छुड़ाना, स्वप्न में भी न होने वाला काम है।

"मेरे मायके की चीजों को मुझसे पूछे बिना कैसे छुआ आपने?"

"मां ने कहा, मैंने गिरवी रख दिया।"

उसका यह संकल्प कि सहनशक्ति नहीं खोनी चाहिए, न टिक पाया। घर के बर्तनों में से भी सास ने उसे कुछ नहीं दिया। उसकी शादी में दिये गये पतीले, भगौने, परात आदि देने से इंकार कर दिया। कम-से-कम यह सोना रहता तो इन कठिन दिनों में काम आता। अब नये सिरे से परिवार बसाने के लिए एक लोटा भी नहीं। बच्चों को रोटी सेंककर देने के लिए घर में मुट्ठीभर मडुआ का आटा नहीं। ऊपर से जचकी है। जचकी के लिए मायके जाने का विचार उसने छोड़ ही दिया था। वैसी सुशील स्त्री भैया की पत्नी बनकर नहीं आयी थी।

अब गुस्से से आग-बबूला हो उसने पति को सुनाया—"मर्द का काम है अपनी कमायी से पत्नी को दागीनें बनवाकर दे। पर यह तो दूर रहा, ऊपर से मायके

से मिले दागीनें ही मेरी निगाह से बचाकर मां-बेटे ने मिलकर गंवा दिये ! शर्म नहीं आई ?"

पतिदेव कुछ नहीं बोले। बकरे की भांति आंखों की पुतलियों को घुमाते खड़े रहे। "अब बच्चों के पेट के लिए क्या करें? तोते की तरह न-न कहने पर भी अनसुनी कर कोर्ट में जाकर सारी जमीन गवां कर बैठ गये न ?"

उसकी बातों का कोई उत्तर चेन्निगराय को न सूझा तो क्रोधित हो उठे। गालियां देनी चाहीं, लेकिन नयी गालियां न सूझने पर 'छिनाल, छिनाल, छिनाल, विधवा छिनाल' तीन-तीन बार सादी रीति से और दो बार विशेष रीति से प्रयोग कर वहां से चलते बने। नंजम्मा को भी क्रोध आ गया था, लेकिन उसने दस मिनट रोकर अपने आंसू पोंछ लिये। और क्रोध शांत हो गया।

उसी दिन वह महादेवय्याजी के मंदिर में जाकर पांच रुपये उधार ले आयी। दूसरे दिन बच्चों को पति के पास छोड़, निगाह रखने के लिए कहा। वह जुलाहा गली की पुट्टव्वा को साथ ले सण्णेनहळ्ळी गयी। रामसंद्र से तीन मील की दूरी पर सण्णेनहळ्ळी केवल कुंवारों का ही गांव था। पुट्टव्वा जिस घर में लिवा ले गयी, वहां से उसने रसोई के लिए आवश्यक छह रोटी मटकियां, पानी खींचने के लिए दो घड़े, पानी गरम करने के लिए एक हंडा, रोटी सेकने के लिए तवा आदि सामान खरीदे। पुट्टव्वा के भाव-ताव करने के कारण सारा सामान बारह आने में आ गया। सामान का पौना भाग पुट्टव्वा ने अपने सिर रखा और शेष नंजम्मा ने उठाया। धूप में चलकर गांव पहुंचते तक सूर्य भगवान सिर पर पहुंच चुके थे। सामान गुंडेगौड़जी के घर में रख ताला लगा दिया। फिर झोपड़ी पर गयी। अब तक सास, देवर अपना सामान हनुमान मंदिर ले जा चुके थे। झोपड़ी के सामने रामण्णा रोता हुआ पड़ा था। पार्वती नहीं थी। चेन्निगराय का तो पता ही नहीं था। बच्चे को उठाकर पास की तलैया पर गयी और हाथ-पैर की धूल धोयी। सौभाग्य से बच्चा तलैया के पास नहीं गया था। यह विचार आते ही उसे पार्वती की याद आयी। सब झोपड़ियां छोड़कर गांव की ओर सामान ले जा रहे थे। न जाने वह कहां चली गयी ! पैदा करने वाले बाप को किसी के सही-सलामत की चिंता ही नहीं ! रामण्णा को उठाकर वह फिर गांव के अंदर आयी। महादेवय्याजी अपना सामान मूल मंदिर में पहुंचा रहे थे। चेन्निगराय मंदिर के दालान में बैठे मुंह की तंबाकू साफ करने के लिए कुल्ला कर रहे थे। नंजम्मा ने उनके पास

आकर पूछा—"पार्वती कहां है ?" तो वे उठकर मुंह का तांबूल थूककर बोले—

"मुझे क्या मालूम, देख लो।"

"अय्याजी, बच्चों को देखने का कहकर, मैं मिट्टी के बर्तन खरीदने सण्णेनहळ्ळी गयी थी। लौटी तो पार्वती नहीं मिली। पूछने पर ये कहते हैं मुझे क्या मालूम, देख लो—देखा आपने ?"

"क्योंजी, सुबह से यहीं बैठे हैं न, फिर बच्ची कहां है ?" अय्याजी ने पूछा तो उन्होंने कहा—"न जाने अनिष्ट मुई कहां गयी; वह एक जगह बैठे तब न !"

एक ओर नंजम्मा ढूंढ़ने गयी और दूसरी ओर महादेवय्याजी। किसी ने बताया कि उन्होंने बच्ची को कोली मोहल्ले में देखा गया है। नंजम्मा वहीं पहुंची। किस्मत से बच्ची वहीं एक कुटिया के बरामदे में नीचे रोती हुई बैठी थी। सभी झोपड़ियों से अपना-अपना सामान पहुंचाने की गड़बड़ी में थे। किसकी बच्ची है, यह किसी ने ध्यान ही नहीं दिया था।

बच्ची का हाथ पकड़कर नंजम्मा घर आयी। घर की हालत से परिचित महादेवय्याजी ने सूप में दो सेर मडुए का आटा, थोड़ा लोबिया, पिसी मिर्च, नमक, इमली, साग में डालने के लिए पिसा हुआ नारियल आदि ला दिये। भूख से दोनों बच्चे हठ कर रहे थे। उसे भी भूख लगी थी। धूप में छह मील चलने से थकान महसूस कर रही थी। ताकतवर स्त्री होने पर भी वह पहले कभी एक साथ छह मील नहीं चली थी। इसके अलावा गर्भ-भार लेकर इतना चलना, आसान नहीं।

थकी होने पर भी बैठ नहीं सकती थी। नये घड़े में कुएं का पानी खींचकर लायी। घर के भीतर चूल्हा था। उस पर पानी का सिंचन किया। महादेवय्याजी ने ही नारियल के पत्ते की जड़ आदि लाकर डाल दिये। नये मटकों को धोया। यह जानते हुए कि मिट्टी की गंध आ सकती है, उन्हीं में से एक में लोबिया की दाल और दूसरे में मडुवे के लोंदे पकने के लिए रख दिये। चार बजे खाना तैयार हुआ। परोसा तो पार्वती बिचारी असह्य भूख में आधा लोंडे का टुकड़ा कर दाल में मिलाकर निगल गयी। लेकिन रामण्णा को यह नहीं भाया। वह अभी पूरा दो साल का नहीं हुआ था। दांत से चबाते समय एक टुकड़ा चिपक गया तो 'मुझे नहीं चाहिए' कहकर हठ करने लगा। नंजम्मा ने आधा सेर मडुआ का आटा रखा था। जल्दी से दो मुट्ठी आटे में थोड़ा-सा नमक डालकर, तवे पर एक रोटी सेंककर दी। उसी को दाल से खाने पर बच्चा चुप होगया। अभी आधी रोटी बची हुई थी।

इतने में पतिदेव घर आये। रसोईघर के द्वार पर एक मिनट रुक कर भीतर झांका। न जाने किसके बगीचे से एक बड़ा पत्तल तोड़ लाये और चूल्हे के पास पत्नी के सामने बिछाकर पालथी मारकर बैठ गये। रसोई बनाते समय उसे यह ध्यान ही न रहा कि खाने के लिए पतिदेव आयेंगे या नहीं। सारा ध्यान भूख से तड़पते बच्चों पर था। अब बच्चे चुप हो गये थे। पति आकर बैठे हैं, क्यों ? यह तो अपनी मां के साथ रहने वाले थे। अब क्यों आये ? क्या मां के घर चूल्हा नहीं जला या मां ने कह दिया हो कि अपनी पत्नी के हाथ का खा। नहीं तो ये अपने आप यहां आ गये हों ! लेकिन आकर सुबह से पूछा नहीं कि मरी हूं या जिंदी ! बच्चों तक का ख्याल नहीं। महादेवय्याजी ने जो आटा-दाल दिया था, वह पकाने के लिए एक घड़ा पानी तक नहीं खींचकर दिया। अब पत्तल—वह भी अपने लिए ही, लाकर बिछाये बैठे हैं—खाने के इंतजार में !' लेकिन नंजम्मा परोसे या नहीं उसे सूझा नहीं। और फिर बेजार हो, बच्चों को उठाकर बाहर आ गयी।

अब दोनों बच्चे ऊंघने लगे थे। उन्हें सुलाने के लिए एक भी चटाई नहीं थी। तो अपनी पुरानी साड़ी बिछाकर ही उन्हें सुला दिया। वह भी थक गयी थी। दाहिनी बांह को तकिया बनाकर रामण्णा के बगल में लुढ़क गयी। एक बार विचार आया कि जाकर पति को खाना परोस आऊं, लेकिन फिर विचार उठा कि उन्हें पुकारने दो। वह लेटी रही। सुबह से अब तक की थकावट और खाली पेट रहने के कारण तुरंत आंख लग गयी।

आंखें खुली तो मालूम पड़ा कि वह एक घंटे से भी अधिक सोयी थी। बाहर धूप ढल रही थी। पति ने खाना खाया या नाराज होकर चले गये? —विचार आया। अंदर जाकर देखती है—पकाने के बर्तनों पर सूर्य-किरण पड़ रही है। बगल में ही उनकी छोड़ी हुई पत्तल वैसी ही है। उसने कुल पांच लोंदे बनाये थे। आधा पार्वती ने खाया था। मटके में साढ़े चार बचे थे। अब केवल आधा है। मटके के तल में केवल एक चम्मच-भर दाल है। वह सोचने लगी कि इतना मेरे लिए छोड़ा है या उनके ही पेट में जगह नहीं थी। उसे भी पेट में भूख की आग लगी हुई थी। उस आधे को ही खाने की इच्छा से हाथ भीतर डाला, लेकिन रात को बच्चों को क्या दूंगी इस विचार से वह सब नहीं निकाला। अब भी पावसेर मडुए का आटा था जिसकी रोटी बनायी जा सकती थी, लेकिन यह कठिन लगा। बाहर आकर वह खंभे के सहारे बैठ गयी।

बच्चे अब भी सो रहे थे। सूर्यास्त का समय था। इस समय सोना नहीं चाहिए, इसलिए उसने उन्हें जगा दिया। फिर उसे याद आया कि उसने और बच्चों ने स्नान ही नहीं किया। सण्णेनहळ्ळी से लौटकर मुंह धो लेने के बाद माथे पर सिंदूर नहीं लगाया था। सिंदूर की थाली भी सास के घर ही है। वह देगी भी या नहीं ? रात में जलाने के लिए मिट्टी के तेल की चिमनी नहीं है। पास में सिर्फ सवा चार रुपये थे। दरवाजे को ताला लगाकर बच्चों को लेकर वह जुलाहा मोहल्ले में पहुंची। चेन्नशेट्टी की दूकान से दो चिमनी, एक बोतल और उसमें तेल तथा एक माचिस लेकर आयी। कुल साढ़े तीन आने खर्च हुए। बच्चों को छह देढिये का बतासा दिलाया। घर आकर अपनी साड़ी का एक कोना फाड़ उसकी बाती बनाई। बाहर आकर धुंधले प्रकाश में एक चिमनी में बाती डाल तेल भरा। उसके प्रकाश में अंदर बैठकर और दूसरी चिमनी को उसमें बाती डालकर रख दिया। समझ नहीं पा रही थी कि अब क्या करना चाहिए। शरीर में ताकत भी नहीं थी। इसलिए खंभे से टिककर बैठ गयी। दोनों बच्चों ने एक-एक जांघ पर सिर रखकर पैर पसार लिये। नयी जगह होने के कारण उनमें संकोच-सा था।

कुछ देर बाद उन्हें अंदर ले गयी। बची आधी रोटी रामण्णा को और आधा लोंदा पार्वती को दिया। रामण्णा ने आधी रोटी का आधा खाकर 'बस' कह दिया और पार्वती ने लोंदे के दो टुकड़े बचाकर बस कर दिया। उसके पेट में शूल उठने लगे। उसने बची पाव रोटी और पार्वती द्वारा छोड़े गये लोंदे के दो टुकड़ों को बची दाल के साथ खा लिया। बचे डेढ़ पाव-भर मडुए के आटे की रोटी बनाकर खाने की इच्छा हुई, लेकिन अजीब-सी खिन्नता और तिरस्कार भाव में बायें हाथ में चिमनी उठा बच्चों को लेकर बीच घर में आ गयी। वह सोच ही रही थी कि बच्चों को किस स्थान पर सुलाया जाए, कि उतने में पति कंधे पर बिस्तर लादे आ गये। इस चिंता से मुक्त होने से उसे संतोष हुआ। बिस्तर खोलकर देखा तो उसमें गौने के समय अपने मायके से मिले दो कंबल, दो दरी, तकिया और काली शाल थी। एक कंबल तो पार्वती और रामण्णा के पेशाब कर देने से गल जाने की स्थिति में था और दूसरा कंबल आधा जीर्ण हो चुका था। दोनों बच्चों को एक कंबल पर सुलाकर, इनके ही बगल में अपने लिए एक दरी बिछाकर एक तकिया रख लिया। पति के लिए दूसरे कमरे में बिछा दिया।

पति खड़े-खड़े देख रहे थे। तपाक से बोले—"मेरा बिस्तर अपने बिस्तर के पास क्यों नहीं लगाया ?"

वह कुछ नहीं बोली। रामण्णा को लिटाकर थपकी देती रही।

"क्या मैं बिस्तर ढोकर इतनी मुश्किल से इसलिए लाया कि तू उसे अलग बिछाये ?"

"वह फिर भी नहीं बोली।"

"क्यों री छिनाल, चुप क्यों है ?"

सहन-शक्ति न खोने के विचार से अब वह बोली—"मेरे गर्भ को छह महीने भर गये हैं।"

"भरे तो क्या हुआ ?" उन्होंने कहा और अपना बिस्तर पत्नी की दरी के पास खींच लाये। जलती चिमनी लेकर रसोई घर में जाकर देखा तो वहीं से चिल्लाये—"मेरे लिए कुछ भी नहीं है, क्यों ?"

"दोपहर को आपने क्या बचा रखा था ?" बाहर से ही उसने उत्तर दिया। उसने इसका जवाब नहीं दिया। सूप में जो डेढ़ पाव आटा था उसमें नमक डाला। चूल्हा जलाया। तवे पर दो मोटी रोटी बनाई अपने हिसाब से ही सेंक पाये। गरम-गरम रोटी खाकर मटका उठाकर पानी पिया। फिर चिमनी लेकर बीच घर में आये। अब तक दोनों बच्चे सो चुके थे। पत्नी आंखें मूंदे लेटी थी उसने अपने को मुलायम बिस्तर पर फैलाया। नंजम्मा को नींद नहीं आयी थी। आ भी नहीं सकती थी। सुबह से कुछ न गिरने से उसके पेट में आग-सी जल रही थी। दुविधा और आतुरता में वह डूबी हुई थी। पापी पेट को एक दिन न मिले तो कितना तड़फाता है—अपने आपसे उसने पूछा। इतनी भूख लगने पर भी उसे पेट भारी लग रहा था। "गर्भवती को भूखा नहीं रहना चाहिए। हम तो रह सकते हैं लेकिन गर्भ को खुराक कहां से मिलेगी ? मुझे आज कम से कम वह बचा हुआ आधा लोंदा खा लेना चाहिए था—विचार आया। फिर यह सोच संतोष किया कि मैं खा जाती तो रात को बच्चों को भूखा रहना पड़ता। बचे हुए डेढ़ पाव आटे की रोटी सेंक कर खा लूं तो फिर कल सुबह उठकर बच्चे रोने लगेंगे तो क्या दूंगी ? अब उसी आटे की रोटी इन बच्चों को पैदा करने वाला बाप, खुद बनाकर खा आया है। शाम को चार लोंदे निगले हुए इन्हें इतनी जल्दी भूख कैसे लग गयी। कुछ लोगों की पाचनशक्ति तीव्र होती है। दोपहर को पत्तल

में स्वयं ने परोसकर खाते समय उन्हें पत्नी के पेट की याद नहीं आयी ! अब रोटी खाते समय भी नहीं ! खाकर बगल में आकर लेट गये ! तबीयत कैसी है, कितने महीने हुए, सुबह से खायी है या नहीं, शरीर में शक्ति है या नहीं—इन्हें किसी प्रकार का ख्याल ही नहीं। मन में आया कि कह दें दूर जाकर पड़े रहिये।

इस पति ने ही तो अपनी मां के साथ रहने को कहा था। लेकिन दोपहर में यहां आकर लोंदे निगल गया, रोटी खाकर, मेरे पास सोने के लिए ही बिस्तर ले आया। उन्हें अब पास न फटकने दूं तो मुझे और बच्चों को छोड़कर फिर मां के पास चले जायेंगे। वह मां के साथ नहीं रहेंगे, यह केवल दो दिन के लिए था, महादेवय्याजी की बात का शायद यही अर्थ था। यह सोचकर वह चुप रही कि अपने परिवार को बचाने के लिए यह कर्म भी निभाना पड़ेगा। सण्णेनहळ्ळी हो आने की थकान, सुबह से की मेहनत और गर्भवती होते हुए भी पेट में एक टुकड़ा रोटी नहीं—ऐसा शरीर लेटा पड़ा था। चेन्निगराय के थकने का कोई कारण ही न था।

उसे एकाएक अपने पिता का स्मरण हुआ। पिता दैत्य-स्वभावी हैं। किसी की परवाह नहीं। गुस्सा आने पर पत्नी हो, बच्चे हों, मां हो, वे मरें या जियें, बिना देखे-समझे मारने की यम-बुद्धि है। लेकिन अंतःकरण भर आने पर उतने ही दुखी होते। कहते हैं जब कल्लेश को प्लेग हुआ तो उसका सिर अपनी गोद में रख रात भर बैठे रहे थे। हे भगवान, पति-पत्नी को मारे तो कोई बात नहीं—वह खायी या उपवास है, बच्चों के पेट के लिए क्या किया, इतना भी पूछने का अंतःकरण जिस पति के पास न हो, उसके साथ कैसा जीवन ? ऐसे परिवार में क्यों जिये ? उसके मन ने प्रश्न किये। अक्कम्मा की याद आयी। सुना है कि पैदा होने के बाद मैंने मां का दूध पिया ही नहीं। इधर मैं पैदा हुई और मां ने उधर आंखें मूंद लीं। तब अक्कम्मा ने ही मुझे पाला। मेरे प्रति किसी की आत्मीयता है तो अक्कम्मा की। वह पचहत्तर से ज्यादा की हो गयी। कम-से-कम उसे ही बुला लेना चाहिए। लेकिन हमें ही खाने को नहीं, तब उसे बुलवाकर क्या खिलायेंगे ? तो जचकी कौन करेगा ? अब नागलापुर जाना तो बंद ही हो गया। अक्कम्मा को यहीं बुला लिया जाये तो एक महीना मुझे और बच्चे को तेल-पानी तो डालेगी। पर घर में तो खाने को कुछ नहीं। एक बूंद एरंडतेल, थोड़ी सीकाकाई का पाउडर तक नहीं। इन्हीं विचारों के साथ यह भी स्मरण हुआ कि सुबह उठते समय मटके

खाली हैं। बच्चों को क्या दूंगी। अपनी भूख की भी अनुभूति हुई। एक ही करवट लेटे रहने से दाहिने भाग में दर्द उठ गया। बायीं ओर करवट बदली तो बगल में पतिदेव हाथ-पैर फैलाये खुर्राटे भर रहे थे। उसे यह असह्य हो उठा। अपनी दरी और तकिया उठाकर अंधेरे में बच्चों के दूसरी तरफ बिछाकर पार्वती पर बांया हाथ रखकर लेट गयी।

[6]

सुबह उठकर पानी का घड़ा खींचा। हाथ-मुंह धोया। बच्चों के भी हाथ-मुंह धुलाकर साड़ी से पोंछा। धीरे से रसोईघर में जाकर चूल्हे की राख निकाल कर छानी। कल जिन मटकों में खाना पकाया था, उन्हें धोया। कल जिस मटके में रोटी बनायी थी, उसमें पानी न डालने से भीतर से सूख गया था। उसमें पानी भर कर बीच घर में आयी तो भी पति महोदय रास्ते के दरवाजे की ओर पैर पसारे बेफिक्री से खुर्राटे भर रहे थे। रास्ते का दरवाजा आधा खोलकर, सिर्फ पानी डालकर सामने का भाग पोंछा। रांगोली नहीं थी, इसलिए पड़ौसी चिन्न-शेट्टी की बहू से मांगकर दरवाजे में एक नट्टी रांगोली काकर डाली और बाकी अंदर रख बैठ गयी। और कोई था भी नहीं। यह भी समझ नहीं पा रही थी कि आज जठराग्नि को शांत कैसे किया जा सकेगा ?

रास्ते में एक भैंस के रंभाने से चेन्निगराय जाग उठे—"युत् इसकी मां की ···" कहते हुए उठे। बिस्तर पर बैठकर 'कौसल्या सुप्रजा राम' कहकर हाथों को रगड़ा। 'पंचकन्याः स्मरेन्नित्यं' कहकर उठे और चढ़ान की तरफ गये। नंजम्मा बिस्तर लपेटकर रख रही थी कि महादेवय्याजी कंधे पर एक थैला लादे हुए आये और उसे खंभे के पास रखकर बोले—"मैं भिक्षा के लिए देहात जा रहा हूं। इसमें बीस सेर मडुआ, चार सेर लोबिया दाल है, बनाकर खा लेना।"

यह जानते हुए भी कि आज का दिन कैसे जायेगा और अब जबकि घर में अनाज के आने से खुशी होते हुए भी वह बोल उठी—"अय्याजी, आपने कल भी दिया, आज और ले आये। आप तो गांव-गांव जाकर भिक्षा लाते हैं। यह सब मैं कैसे वापस दे पाऊंगी ?"

"बहन, तुम जानती ही हो न, कि मैं कैसे खर्च करता हूं ? गांव में मुझ जैसा

कोई साधु-संत आये तो देता हूं। यह आप लोग आठ-दस दिन खायेंगे तो क्या होगा ! पकाकर खाइए। आगे शिव कोई और रास्ता दिखायेगा।" कहकर वहां से वे चल दिये।

महादेवय्याजी कल जो सूप लाये थे, वह घर पर ही था। उसमें दो सेर मडुआ डालकर पीसने बैठ गयी। घर में ही खोदी हुई चक्की, ओखली आदि थे। लेकिन पाव भर पीसते-पीसते ही वह थक गयी। यह याद आकर कि कल कुछ खाया नहीं, पांच मिनट आराम करने के लिए बैठ गयी। इतने में पतिदेव आ गये। यह मडुआ कहां से आया, क्या किया—उन्होंने कुछ नहीं पूछा। चुपचाप खंभे से टिककर बैठ गये और जेब से तांबूल निकाल, तंबाकू मसलने लगे।

"मुझसे पिसाता नहीं है। जरा इतना-सा पीस देंगे ?" नंजम्मा ने पूछा।

उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। पत्नी ने फिर पूछा। अब गरजकर बोले—"मर्द चक्की चलाते हैं क्या ? मुझे औरत समझती है या मर्द ?" इस संकल्प का स्मरण होते ही कि सहनशीलता नहीं खोनी चाहिए, नंजम्मा फिर कुछ नहीं बोली। जुलाहा मोहल्ले में जाकर पुट्टव्वा को बुला लायी। दो पैसों में एक सूप मडुआ पीस देने के लिए राजी होकर पुट्टव्वा चक्की के सामने बैठ गयी। नंजम्मा चन्नशेट्टी की दुकान पर गयी और मिर्ची, धनिया, नमक, तेल आदि कुल एक रुपये का सामान लेकर आयी। उसने अब खाना पकाना शुरू किया। ग्यारह बजे के करीब लोबिये की दाल, मडुओं का लोंदा और रामण्णा के लिए रोटी तैयार हुई। उसने कल भी स्नान नहीं किया था। कुएं से पानी खींचा। बच्चों को नहलाया, फिर स्वयं नहायी और दूसरी साड़ी पहन अंदर आयी। पतिदेव कल की ही भांति पत्तल बिछाये आटे का लोंदा निगल रहे थे। यह देखकर भी नंजम्मा ने उसके और बच्चों के लिए छोड़ने का नहीं कहा। वह तीन लोंदे छोड़कर उठ गये। उसने सात लोंदे बनाये थे। नंजम्मा दाल लेकर पार्वती के साथ खाने बैठी। उसने डेढ़ लोंदा खाया और पार्वती आधे से अधिक न खा सकी। रामण्णा रोटी खाते-खाते बीच में चार बार पानी पीकर 'अन्न-अन्न' कहकर रोने लगा। 'दुकान से डेढ़ आने का एक सेर चावल भी लाना चाहिए था' सोचते हुए नंजम्मा खाना अब तक खा चुकी थी। पेट में लोंदे गिरते ही उलटी-सा जी होने लगा। वह बाहर दरी बिछाकर लेट गयी।

रात को खाना पकाने के लिए लकड़ी नहीं थी। कल महादेवय्याजी जो

लाये थे, वह अब खत्म हो गयी थी। पति महोदय लेटे थे। उनसे उसने कहा—"जाकर थोड़ी लकड़ी ला दें तो अच्छा है।"

"मैं पूछने जाऊं ? छोड़ !"

"ऐसे कैसे चलेगा ? बाड़ी में किसी से मांगकर थोड़े नारियल के तने और पत्ते बांधकर ले आइये।"

"जरूरत हो तो तू ही ले आ, मुझसे यह नहीं होगा।" और लोंदे पचाने के लिए निद्रादेवी की प्रतीक्षा में करवट बदलकर लेटे गये।

लकड़ी मांगने वह किसी की बाड़ी में नहीं गयी। पड़ोस के चिन्नय्य की पत्नी से ही पूछा तो उसने एक बड़ी टोकरी-भर नारियल की नट्टी, दस-बीस नारियल के पत्ते, चार नारियल की जटा आदि दे दिये। फिर चन्नशेट्टी की दुकान पर गयी—"चावल कैसे दिए, चन्नशेट्टी ?"

"बारीक चावल रुपये के नौ सेर, मोटा बारह सेर।"

चवन्नी देकर तीन सेर मोटा चावल लेकर घर आयी। इसमें से आधा सेर चावल पकाया। पार्वती, रामण्णा दोनों ने बड़ी खुशी से चावल खाये। चिण्णय्या की पत्नी रंगम्मा ने आधी पतीली छाछ दी थी। बच्चों के खाने के बाद चेन्निगराय भी खाने आ गये। यह सौभाग्य ही समझा गया कि बच्चों के भोजन के पहले वे नहीं आये।

महादेवय्याजी का दिया अनाज आठ-नौ दिन चलेगा, उसके बाद क्या होगा—यह विचार उसे सताने लगा। लेकिन कोई उपाय नहीं सूझा। तो उसने यह निश्चय किया कि कल रामसंद्र का बाजार लगेगा। वहां जाकर एक-दो बर्तन, पीतल की थालियां खरीद ली जायं। दूसरे दिन सुबह खाना खाया। फिर दोपहर तीन बजे के लगभग बच्चों को लेकर बाजार के लिए चल दी। वह यह जानती थी कि गांव से पौना मील दूर पेड़ों के झुंड में तिपटूर के मुसलमान अल्यूमिनियम के बर्तनों का बाजार लगाते हैं। पूछताछ कर वह वहां पहुंची। खाने की थाली, पीने के लिए चार लोटे, एक कड़छी और स्नान करने के लिए एक लोटा उसने खरीदा। कुल सवा रुपये खर्च हुए। रोते हुए बच्चों के लिए एक-एक पाई की शक्कर-काड़ी और एक-एक झुनझुना खरीद कर दिया। लौटते समय रास्ते में पटेल गुंडेगौड़जी मिल गये। उन्होंने पूछा—"घर में सब खैरियत है बहन ?"

"सब ठीक है। चलिए, घर चलिए।"

बर्तनों को गौड़जी ने उससे ले लिये। रामण्णा को कंधे पर बिठा वह पीछे-पीछे चलने लगी। घर आकर ताला खोला। गौड़जी ने भीतर आकर नजर दौड़ाते हुए पूछा—"पेट-पूजा के लिए क्या है ?"

"मैं आपसे ही कहना चाहती थी !"

"उसी समय क्यों नहीं कहा ? बीस-पच्चीस सेर मडुआ दिला देता न !"

"उससे कितने दिन निकलते ?" फिर कुछ सोचकर वह बोली—"आप ऐसा मत कीजिए। मैं एक बात कहती हूं। उससे आपको भी कष्ट नहीं होगा और मुझ पर उपकार भी हो जायेगा।"

"वह क्या, बहन ?"

"आपका कुल लगान कितना है ? अस्सी रुपये न ?"

"क्यों ?"

"एक काम कीजिए। इस वर्ष की लगान की रकम में से पचास रुपये प्राप्त हुए-लिखाकर इनसे रसीद ले लीजिये। इन पचास रुपयों में हमें मडुआ, लोबिया दाल, मिर्ची और धान हो तो थोड़ा धान दे दीजिए। हमारा गुजारा हो जायेगा।"

"रसीद लिखवा लूंगा तो बाद में ये सरकारी रकम कैसे भरेंगे ?"

"हमें वर्षासन के एक सौ बीस रुपये मिलते हैं न, उसमें से सरकार काट लेगी।"

गौड़जी को यह जंच गया। "तुममें तो दीवान बनने की बुद्धि है"—कहकर अपनी स्वीकृति दे दी। वह जानती थी कि पतिदेव महादेवय्याजी के मंदिर में बैठे तंबाकू खाते होंगे। पार्वती को यह कहकर बुलाने भेजा कि गुंडेगौड़जी घर आये हैं और आपको तुरंत बुलाया है। वह घर लौटे। पटेल गुंडेगौड़जी से तंबाकू मांगकर खायी। अब गौड़जी ने पूछा—"तुम्हारी खनौनी कहां है, निकालो ?"

"वह यहां कहां है !"

"तो कहां है ?"

"मां के घर में।"

"अरे पटवारी-कार्य को तुमने क्या बच्चों का खेल समझ रखा है ? जहां तुम रहते हो, वहीं इन पोथियों को रखना चाहिए। हिसाब-किताब रखने के लिए मैंने तुम्हें घर दिया—सरकारी कानून तुम जानते हो न ? चलो, जाकर जल्दी से पोथियां ले आओ।"

पटवारीजी हनुमान के मंदिर में गये। किंतु गंगम्मा ने हिसाब-किताब की

गठरी नहीं दी। जब उसने बताया कि पटेल गुंडेगोड़जी ने कहा है, तो वह खुद आयी। उसे बताया कि यह सरकारी नियम है तो वह बोल उठी—"मैं भी यहीं आकर रहूंगी।"

"रहिए, मेरा क्या जाता है!"

लेकिन नंजम्मा बोल पड़ी—"यह नहीं होगा। एक बार हमें अलग रहने का कह, बाहर धकेल दिया तो अब आप अलग ही रहिए। हम भी अलग रहेंगे।"

"देखा गुंडेगौड़जी, इस कुलटा छिनाल को ?"

"गंगम्मा, मैंने यह घर दिया है पटवारी-कार्य के रिकार्ड रखने के लिए, हिसाब-किताब लिखने वाली इस बहन को; दूसरों को नहीं। तुम बेकार गालियां मत दो।" गौड़जी ने कहा तो गंगम्मा जोर से गालियां देती हुई हनुमान मंदिर लौट पड़ी। पटवारी हिसाब-किताब के रेकार्ड चार बार सिर पर रखकर लाये। लेकिन गंगम्मा ने वह पेटी नहीं दी जिसमें ये किताबें रखी जाती थीं।

सब लाने के बाद गुंडेगौड़जी ने पूछा—"अरे बछड़े के ताऊ, इतने सालों से पटवारी-कार्य किया। सरकार ने भंगी को रखा है, नहीं जानता क्या ?"

पटवारी ने उत्तर नहीं दिया। पटेल ने फिर पूछा—' इन किताबों को तुम सिर पर ढोकर लाये न ? भंगी को बुलाकर उससे नहीं कह सकते थे ? तुम क्या गेंद खेलने का अधिकार चला रहे हो ? अच्छा, कागज-पेंसिल लेकर लिखो। क्या लिखाना है बहन, तुम ही बोलकर लिखा दो।"

पटवारी ने लेखनी पकड़ी। पत्नी बोलती गयी—"रामसंद्र उपविभाग कुरुबर-हळ्ळी के पटेल गुंडेगौड़जी से उनके वार्षिक राजस्व लगान से पचास रुपये प्राप्त हुए। वसूली के समय इस रकम को काटकर शेष रकम वसूल करके आपके रिकार्ड में लिख दूंगा।—पटवारी चेन्निगराय। दिनांक ···।"

पटवारी ने ऐसे ही लिखकर गौड़जी के हाथ में थमा दिया। लगभग दस मिनट तक उसे समझ में नहीं आया कि जो कुछ लिखा गया है, उसका क्या मतलब है ? फिर याद करते हुए बोले—"पैसे कहां हैं जी ?"

"पैसा कहां जायेगा ? मुझसे मत पूछो, चुप रहो।" इतना सुनने के बाद भी पटवारीजी बड़बड़ाते रहे।

उसके दूसरे ही दिन गुंडेगौड़जी गाड़ी लाकर घर में बोरे उतरवाकर नंजम्मा से बोले—"देख बहन, चार खंडी मड़ुआ अर्थात् चौबीस रुपये। एक पल्ली

लोबिया आठ रुपये की, एक मन मिर्ची तीन रुपये की। कुल कितने हुए ?"

"पैंतीस !"

"यह लो पांच रुपये। अब चालीस हुए न ? बाकी दस रुपये का खोपरा दे दूंगा। हमारे यहां शायद धान नहीं रहेगा। तुम दुकान से चावल ले लेना।"

नंजम्मा को संतोष हुआ। इन पांच रुपयों को अपने पास के दो रुपयों के साथ मिलाकर एक कपड़े के टुकड़े में बांध शहतीर के ओट में छिपा दिया।

[7]

गर्भ को आठवां महीना चल रहा था। एक दिन दोपहर के समय नंजम्मा बैठी-बैठी मर्दुमशुमारी रजिस्टर में रेखाएं खींच रही थी। गर्भ काफी बड़ा हो जाने से उकडूं बैठकर रेखाएं खींचना मुश्किल हो गया था। फिर भी बड़ी कठिनाई से भंगिमा बदल-बदलकर काम करती रही। चेन्निगराय वहीं एक कमरे में सोये मंद-मंद खर्राटे भर रहे थे।

एकाएक गंगम्मा घर के भीतर घुस आई। गुंडेगौड़जी ने जिस दिन पटवारी-कार्य की पोथियां मंगाई थीं, उस दिन के अलावा वह कभी इस घर में नहीं आयी थी। अब आई तो उसने न किसी से कुछ पूछा और न ही कुछ कहा। एक कोठी का ढक्कन निकालकर साथ लायी थैली में मडुआ भरने लगी। दो-एक मिनट देखते रहने के बाद नंजम्मा बोली—"मांजी यह क्या कर रही हैं ?"

"क्या कर रही हूं ? मडुआ ले रही हूं। तू पूछने वाली कौन होती है री ?"

"पहले थैली वहां रख दें और फिर दूर खड़ी होकर बात करें। बिना पूछे हमारे घर का अनाज क्यों छुआ ?"

"किसका घर है ? तेरे बाप ने बंधवाया था ? सुना तूने, शिखंडी रांड के बेटे ? आज घर में कुछ नहीं होने से मैं चूल्हा नहीं जला सकी। अब मडुआ ले जाने आई तो ऐसा बोलती है ! मानो इसके बाप ने ला दिया है। कुरुबरहळ्ळी गुंडेगौड़जी हमारा पटेल है। तेरा भड़ुवा नहीं है जो मुफ्त में दे गया !"

इतने में चेन्निगराय जाग कर बोले—"लेती है तो ले जाने दो, तेरी मां का ···"

"गुंडेगौड़जी ने आपको मुफ्त में नहीं दिया। लगान से पैसे काट लेने के वायदे पर मैंने मंगवाया है।"

"पटवारी-कार्य मेरे पति का है, तेरे बाप का नहीं। समझी, भोसड़ी, छिनाल?" सास ने कहा।

"घोड़े पर आकर मेरे बाप ने ही दिलवाया था। नहीं तो वह हाथ नहीं आता, समझ लीजिए। अब आंखों में तेल डाल-डालकर रात भर हिसाब-किताब लिखती हूं मैं। मेरे घर का अनाज छुआ तो गुंडेगौड़जी को कहला भेजूंगी!"

"मैंने आज सुबह से कुछ नहीं खाया है! क्या करूं रे छिनाल के बेटे?"

"जाकर शिवेगौड़ या काशिंबड्डी से मांगिये। या रेवण्णाशेट्टी से मांगिये।" नंजम्मा ने उत्तर दिया।

उसके इस व्यंग्य को गंगम्मा न समझ सकी। थैली वहीं छोड़ सीधे शिवेगौड़ के घर पहुंची। उसके जाने के बाद नंजम्मा बेचैनी महसूस करने लगी। सुबह से उपवास रहने की बात सुनकर भी मुझे खाली हाथ नहीं भेजना चाहिए था—यह सोचकर अंदर गयी और एक सूप में तीन सेर के करीब मडुआ-आटा डालकर उसे दे आने के लिए पति से कहा। बेटा सूप लेकर मां के घर गया।

गंगम्मा ने सीधे शिवेगौड़ के घर जाकर पूछा—"क्या पटेल, आज सुबह से चूल्हा नहीं जलाया है मैंने। पच्चीस सेर मडुआ दे दो।"

"तुम्हारा दिमाग फिर गया है क्या? कहां से आयेगा पच्चीस सेर मडुआ?"

"घर नाश हो रांड के बेटे, मेरी जायदाद हड़पकर ऐसा कहता है? देख लेना, तेरा वंश नहीं बचेगा!"

"जायदाद हड़पने के लिए पैसे नहीं बहाये छिनाल? जबान संभालकर बात करेगी या गर्दन पकड़कर धकेलवा दूं?"

शिवेगौड़ की पत्नी गौरम्मा बीच में आकर पति से बोली—"उसने ऐसा कहा तो आप क्यों ऐसे बोल रहे हैं? चुप रहिए। आप पछीत हो आइये।"

गौरम्मा को भय था कि यह बूढ़ी रास्ते में खड़ी होकर मिट्टी फेंककर शाप देगी, और घर पर कोई-न-कोई विपत्ति आयेगी। पटेल को भी गंगम्मा को मुंह नहीं लगना चाहिए था। पत्नी ने जो बहाना बताया, वही पर्याप्त था। चप्पल पहनकर वह पछीत की ओर चल पड़ा। गौरम्मा दो सूप-भर मडुआ एक टोकरी में डाल उसके सामने रखते हुए बोली—"उनके कहने का आप बुरा मत मानिए। यह ले जाइए।"

क्रोध से तिलमिलाती गंगम्मा यह लेगी भी या नहीं, कहना कठिन था। लेकिन

गौरम्मा के दुबारा कहने पर टोकरी सिर पर रख अपने निवास-स्थान, मंदिर की ओर चल दी।

चेन्निगराय मडुवे का आटा भरा सूप अप्पण्णय्या को देकर महादेवय्याजी के मंदिर में जाकर बैठ गये। नंजम्मा गर्दन झुकाये रजिस्टर में लाल स्याही से रेखाएं खींच रही थी। घर में किसी के आने की छाया पड़ी। सिर उठाकर देखा तो मडुवे के आटे का सूप हाथ में लिये गंगम्मा खड़ी थी। क्यों, क्या, पूछने से पहले ही आटा बहू के सिर पर फेंक दिया और सूप मुंह पर पटककर बोली—"तू समझती है तेरे घर की भीख का लोंदा खाऊंगी ? री भिखारी, छिनाल, गंगम्मा को क्या समझ रखा है ?" तेजी से लौट पड़ी।

सिर, हाथ-पैर, पुस्तक, लाल स्याही की बोतल सब-का-सब मडुवे के आटे से सराबोर हो गये। नंजम्मा की इच्छा हुई कि जाकर सास को पकड़ लूं और दो-एक सज्जनों को दिखाऊं ! लेकिन नहीं, घर का झगड़ा बाहर न जाये। वरना गांव वालों को हंसने का मौका मिलेगा। आज भी न जाने कितने लोग हंसते होंगे ? ऐसा सोच वह चुप रही। उठकर साड़ी का पल्ला झाड़ा। किस्मत से सारा आटा ताड़ की चटाई पर ही गिरा जिसपर वह बैठी थी। पुस्तकें झाड़ीं। फिर आटा बटोरकर छाना। स्नान किया। दवात और लेखनी धोयी। चेन्नशेट्टी की दुकान से तीन देढ़िया देकर लाल स्याही की दो पुड़ियां लाकर स्याही बनायी और पुनः रेखाएं खींचने बैठ गयी।

[8]

इस घटना के तीसरे दिन सुबह करीब दस बजे नंजम्मा खाना पका रही थी कि बाहर से 'नंजु' पुकारने की आवाज आई। आवाज अक्कम्मा की समझकर वह जल्दी से बाहर आई। देखा तो अनुमान सही निकला। सिर पर साड़ी की एक गठरी रखे झुकी पीठ वाली अक्कम्मा खड़ी थी। उसके पीछे दो मजदूर एक-एक बोरा लादे खड़े थे। पोती को देखते ही अक्कम्मा ने उन मजदूरों से बोरे नीचे रख देने के लिए कहा। "नंजु, तूने गर्भवती होने की खबर मुझे क्यों नहीं भेजी ? सुख-दुख की बातें नहीं बतानी चाहिए क्या ?"

"मैं खबर भेजने की सोच ही रही थी। चलो, अंदर चलो। कपड़े बदलेंगी न ?"

"मेरा कपड़ा बदलना बाद में होगा। खाना तैयार हो तो इन दोनों को परोस दे। उन्हें गांव लौटना है।"

दाल बन रही थी। आटे का लोंदा बांधना बाकी था। भीतर जाकर नंजु ने आग तेज की और पंद्रह मिनट में दाल, आटा तैयार हो गया। तालाब से हाथ-पैर धोकर मजदूर अब तक आ चुके थे। उन्हें परोसते समय अक्कम्मा ने पूछा—"छाछ नहीं है क्या ?"

"कहां से आयेगी ?"

उनके खाना खा लेने के बाद एक मजदूर से अक्कम्मा बोली—"होन्न, देख, लक्का कुछ कहेगा, इसलिए उसे दुबारा कह देना। घर जाते ही कल्लेश से कहना कि यहां घर में दुहती गाय नहीं है। जच्चा के लिए दूध नहीं है। अपने घर में सफेद गाय है न, जो एक महीने पहले ही ब्याही है, उसे भेज दे। इस गाय की मां नंजु की शादी में दी गयी थी लेकिन यहां भेजी नहीं थी। उससे कहना कि मैंने कहा है कि अब कम-से-कम उस गाय की संतान ही यहां भेज दें।"

मजदूर चले गये। अक्कम्मा ने ठंडे पानी से स्नान किया, फिर गीली लाल साड़ी लपेटकर, माथे पर विभूति लगायी। तीन बार आचमन किया। रसोईघर में आकर गीली साड़ी सुखाती हुई चूल्हे के सामने बैठ गयी। नंजु ने पूछा—"तुम्हें कैसे पता लगा ?"

"अपने गांव के जुलाहे तम्मय्या शेट्टी को इसी गांव की लड़की दी गयी है ! सात-आठ दिन पहले तालाब पर गयी थी तो तिरूमलम्मा भी वहां गयी थी तो उसने बताया कि तुम लोग कुरनबरहळ्ळी पटेल के घर में रहते हो; सात-आठ महीने की गर्भवती है; तेरी सास ने एक बर्तन तक नहीं दिया तुझे। कल्लेश ने पहले ही मुझे बता दिया था कि जमीन जाने वाली है।"

"तुम गांव से कब निकली ?"

"कल ही निकली। शाम को बड़ी जोर की बारिश आ गयी। रास्ते में टीले के उस पार हूविनहळ्ळी गांव है। वहीं पटेल के घर के बरामदे में हम तीनों सो गये थे। पटेल के घरवालों ने उन दोनों को खाना खिलाया और मुझे पिसा हुआ नारियल और गुड़ दिया।"

बच्चे बाहर खेलने गये थे, वे आ गये। पार्वती अक्कम्मा को भूली नहीं थी। रामण्णा की स्मृति में रहना संभव न था। लेकिन आध घंटे में ही वे दोनों उसके

पास चले गये। खाने के वक्त चेन्निगराय घर आ गये। 'अच्छे हैं ?' पूछने के अतिरिक्त उन्होंने दादी-सास से और कुछ नहीं पूछा। दादी ने भी कोई ध्यान नहीं दिया। खाने के बाद वह घर पर न सोकर महादेवय्याजी के बरामदे में चले गये। अक्कम्मा ने लायी दोनों गठरियां खोलीं। एक में तांबे-पीतल के बर्तन थे। चार छोटी-बड़ी परात, पीतल के दो लोटे, एक घड़ा, तांबे के दो पंचपात्र, दो डेगची, पतीली आदि। जिनको एक आदमी ढो सके, उतने बर्तन थे। दूसरे में पोहा, कुरमुरा और गुड़ की भेलियां थीं। इनके अलावा लगभग पंद्रह सेर बासमती चावल था।

"अक्कम्मा, यह सब क्यों लायीं ?"

"कल्लेश ने कहा कि बच्चों वाला घर है, पोहा, कुरमुरा बनाकर ले जाओ। खेतों में गन्ने का कोल्हू पड़ा है। गणेश भेलियां घर में तीन बड़े-बड़े घड़ों में भर गये हैं। उसी ने गुड़ दिया और चावल भी बांध दिया।"

"ये बर्तन ?"

"देख, कल्लेश पुलिस की नौकरी में था न, तब दान में आये बर्तनों को मैंने पीपों में भरकर छत पर रख दिया था। यह कोई नहीं जानता था। तेरी हालत सुनी तो कमलु जब कभी तालाब की ओर जाती, उसे थोड़ा-थोड़ा निकालकर होन्ना की पत्नी के यहां भिजवा देती रही। अभी आते समय सबकी आंखें बचाकर उन्हें लक्का के हाथों देकर चौडेनहळ्ळ के छोर पर होन्ना तक पहुंचा देने के लिए मैंने कहला भेजा था।"

"फिर भी तुम्हें यह सब नहीं लाना चाहिए था, अक्कम्मा। मालूम पड़ गया तो कल्लेश भैया थोड़े ही चुप रहेगा ?"

"उसे भी पता नहीं लगेगा। चुप रह। कंठी को दान में मिले थे।" कहते समय बेटे की याद आकर बूढ़ी की आंखें डबडबा आयीं। फिर बोल पड़ी—"हरामखोर न जाने कहां चला गया ! क्या कर लिया ! शुरू से ही, न जाने क्या-क्या करता रहा है। घर में बैठ भगवान का दिया खा नहीं सकता !"

पिता के स्मरण से नंजु भी विकल हो उठी—"बाबा की कुछ खबर मिली कि नहीं ?"

"कुछ भी मालूम नहीं। लोग कहते हैं वह अब कहां है, मर गया होगा ! लेकिन वह कैसे मरेगा ! वह राजा भोज की तरह रहने वाला है।"

"मरा नहीं। यह सब झूठ है।"—पोती ने कहा तो दादी को सांत्वना मिली।

अक्कम्मा थकी हुई थी। घर में चटाई नहीं थी। शुद्ध आचरण की होने के कारण वह ताड़पत्र की चटाई पर नहीं सोती। इसलिए फर्श पर ही लेट गयी।

"अब भाभी कैसी है ?" नंजु ने पूछा।

"हीन भंवरी मुड़वाने पर थोड़े ही जाती है ! तेरे बाप की जल्दबाजी को क्या कहूं। न पीछे देखा, न आगे। चार जगह पूछताछ भी नहीं की। यहां आया, तुझे दे दिया। वहां गया, उसे ले आया। वह मजे से खाती है। दूध दुहकर रखती हूं तो चुरा-चुराकर पी जाती है। चोरी से मक्खन निगल जाती है। हफ्ते में एक बार तेल मलकर पानी खुद डाल लेती है। मेरे हाथों नहीं डलवाती। इतना सब कर लेने पर भी कुलटा, छिनाल को गर्भ नहीं ठहरा !"

"पति-पत्नी की अच्छी निभती है न ?"

"निभना ! छोटे कमरे में सोते समय चार दिन पिश-पिश बोलते रहते हैं। और चार दिन पत्नी को पकड़कर खूब पीटता है। वह यह कहकर मुझे शाप देती है कि मैं पोते से कहकर पिटवाती हूं। जब बेटे से कहती हूं 'रे, पत्नी को इस तरह नहीं मारना चाहिए' तो वह यह कहकर मुझे ही डांटने लगता है—'उस छिनाल को न मारें तो ठीक कहां रहती है ! तुम चुप रहो।' केंपी को जानती है न, अछूत काळा की बेटी को ?"

"जानती क्यों नहीं ?"

"कुछ लोग कह रहे हैं कि कल्लेश उसके साथ गन्ने के खेत में रहता है। कोली मोहल्ले का मायग था न, वह तीन साल पहले मर गया। उसकी औरत और दो छोटे बच्चे हैं। कहते हैं उसके घर जाकर बैठा रहता है। और भी न जाने लोग क्या-क्या कहते हैं ! मैंने एक दिन पूछा कि यह सब क्या हो रहा है, तो बोला; 'किस रांड के बेटे ने तुझसे ऐसा कहा। उसे चप्पलों से ऐसा मारूंगा कि बाल उड़ जायेंगे।' मैं क्यों कुरेदूं, कहकर चुप रह गयी।"

"घर में पत्नी के होते हुए भी वह ऐसा क्यों करता है ?"

"हल्कट, छिनाल है री वह। शादी के बाद पति के साथ अच्छी तरह से रहती तो वह क्यों ऐसा करता। तू ही बता ?"

दादी ने पोती के सुख-दुख की बातें पूछीं। आने के बाद से खाना बनाने की जिम्मेदारी उसी ने संभाल ली। नंजु का गर्भ आठ महीने का हो गया था। रात में

अक्कम्मा के साथ चटाई बिछाकर सोने लगी। बच्चे अक्कम्मा के दोनों ओर एक-एक लिपटकर सो जाते थे। दादी-पोती नींद आने तक इधर-उधर की बातें करतीं। चेन्निगराय को घर में सोने में कंटाला आ गया था। एक दिन रात को खाने के बाद अपना बिस्तर उठाकर महादेवय्याजी के मंदिर के बरामदे में चले गये।

अक्कम्मा के आने के आठ दिन बाद, कल्लेश खुद सफेद गाय और बछड़े को हांकता हुआ आ पहुंचा। दो दिन बहन के घर रह गांव लौट गया। नौ महीना भरने के बाद नंजु ने लड़के को जन्म दिया। शरीर से हृष्ट-पुष्ट बालक स्वस्थ एवं सुलक्षण था। नामकरण कराने के लिए पास में पैसे भी नहीं थे। लेकिन रस्म-रिवाज छोड़ा नहीं जा सकता था। अक्कम्मा गुड़-चावल तो लायी ही थी। उसके पास पांच रुपये भी थे। वही खर्च करके गांव के चार ब्राह्मणों और दो पुरोहितों के परिवारों को आमंत्रित कर शास्त्रानुसार विश्वनाथ नाम रख दिया। उस दिन गंगम्मा और अप्पण्णय्या गांव में नहीं थे। एक दिन पहले ही दूसरे गांव चले गये थे।

आठवां अध्याय

अक्कम्मा ने चार महीने तक जचकी की। उसके पोती को कोई काम न करने देकर भी वह दूसरे महीने ही उठ बैठी। रायशुमारी, विवरण की किताब में लाइन डालने और असिंचित खेतों में जाकर अपने पति द्वारा लिखकर लायी हुई मर्दुमशुमारी का गोशवारा तैयार करना तो बंद नहीं हुआ।

अक्कम्मा को वापस ले जाने के लिए कल्लेश आया। अगली सुबह रवाना होने की सोच रहे थे कि उस दिन पटवारी को बुलाने कारिंदा आया—"दुकानदार चन्नशेट्टी के घर पंचायत बुलायी गयी है, उसमें आपको भी बुलाया है।"

"कैसी पंचायत?"

"कहते हैं चन्नशेट्टी ने अपनी बहू नरसो के साथ बुरा व्यवहार किया है, इसलिए उसके पति ने पंचायत बुलायी है।"

"ठीक है, प्रमुख लोगों को बुला लो। उन्हें बता देना कि हमारे घर मेहमान आये हुए हैं, इसलिए मैं नहीं आ सकूंगा।"

"सभी ने कहा है कि पटवारीजी को जरूर आना चाहिए।"

गांव के न्याय, पंचायतों में पटवारी के रहने का रिवाज है। सब जानते थे कि चेन्निगराय को न्याय-स्थान पर बिठाने पर वे 'अ-आ' भी नहीं जानते। वे कैसे भी हों, लेकिन पटवारी को रहना ही पड़ेगा न! चेन्निगराय निकल पड़े। बहनोई के पीछे-पीछे कल्लेश भी चला गया। ऐसे न्याय के लिए पूछताछ करने में उसके जितनी जानकारी और किसे होती?

चन्नशेट्टी के घर के भीतरी आंगन में गांव के प्रमुख व्यक्ति बैठे हुए थे। पटेल शिवेगौड़, उसका साला भूतपूर्व पटवारी सिर्वालिंग, रेवण्णशेट्टी, पंचायत के चार सदस्य, दो पुरोहितों के अलावा अन्य दस-पंद्रह लोग एकत्र हुए थे। सबके लिए पान-सुपारी, तंबाकू, बीड़ी लाकर बीच में रख दी गयीं। पंचायत प्रारंभ करने से

पहले प्रश्न उठा कि न्यायपीठ पर कौन बैठे ? किसी ने पटवारी का नाम लिया, तो पटेल शिवेगौड़ बोला —"वह बुद्धू क्या समझता है ?" किसी ने पटेल का नाम सुझाया। तो रेवण्णशेट्टी ने यह कहकर विरोध किया कि 'व्यक्ति स्थानीय नहीं होना चाहिए।' "कल्लेश जोइस, पुलिस में रह चुके हैं और पटवारीजी के साले भी हैं, इसलिए उन्हें बिठाया जाये।"—मुद्दई गिरिया ने कहा तो सबने स्वीकृति दे दी। सर्वसम्मति से कल्लेश मध्म-स्थान पर बैठ गया। तंबाकू खाकर उसने पूछा—"शिकायत क्या है ? अन्याय किसके साथ हुआ है ? सब कुछ पंचायत के सामने बताइये।"

"मेरा बाप मेरी औरत के साथ सोया था। दोनों को सजा मिलनी चाहिए।" गिरियाशेट्टी बोला।

"आपके पिता कौन हैं ?"

"वही है जो उस कोने में बैठा है, हल्कट।" कहकर खंभे के पास सिर झुकाये बैठे चन्नशेट्टी की ओर उंगली से इशारा कर गिरिया ने कहा।

कल्लेश के विस्तार से पूछने पर पता लगा—गिरिया खेत में जोतने जाता है और चन्नशेट्टी सदा दुकान में बैठकर धंधा करता है। घर के बरामदे में ही दुकान है। गिरिया की पत्नी नरसी घर में ही रहती है। उसकी शादी हुए आठ साल हो गये।

कल्लेश ने कहा कि इस तरह के न्यायों में संबंधित हर पक्ष से बयान सुन लेना चाहिए।

चन्नशेट्टी की पत्नी को मरे बीस साल हो गये। उसने दूसरी शादी नहीं की। मां के प्यार के अभाव में पला गिरियाशेट्टी को कुछ ढीठ ही कहना होगा।

कल्लेश ने न्चनशेट्टी से बयान देने के लिए कहा। सिर झुकाए उसने कहा—"महोदय, मैंने मानो रांड के बच्चे को जन्म दिया। मेरी बेइज्जती करने के लिए, दूसरों की बात सुनकर इस मेरे बेटे ने पंचायत बुलायी है। अपनी दुकान की आमदनी से इस बेवकूफ को एक दमड़ी भी नहीं दूंगा। अपनी जमीन भी नहीं दूंगा।"

"मां की कसम, मैं झूठ नहीं बोलूंगा। मैंने स्वयं देखा है।" गिरियाशेट्टी ने प्रमाणित करना चाहा।

"अच्छा, अब तेरी पत्नी का बयान सुनना होगा। बुलाओ उसे।" न्यायपीठ से कल्लेश बोला।

"यहां आओ, बहन !" अय्याशास्त्रीजी ने बुलाया। लेकिन नरसी नहीं आयी। "पंचायत बुला रही है, तुम्हें आना चाहिए," उन्होंने आग्रह किया। पटवारी चेन्निगराय ने मुंह में पीक न होते हुए भी 'हुं-हुं' कर दिया। नरसी रसोईघर के द्वार के पास आकर खड़ी हो गयी। उस गांव में ऐसा कोई नहीं था जिसने उसे न देखा हो। उसे देखते ही कल्लेश अचंभे में पड़ गया। लाल, गोल चेहरा, तनी छाती, ऊंचा शरीर लिये खड़ी उसकी भंगिमा में ही कल्लेश समझ न पाया कि क्या न्याय सुनाया जाय। नरसी के आकर खड़ी हो जाने के बाद अय्याशास्त्रीजी बोले—"बहन, तुम्हारे ससुर पिता के समान हैं और बहू उनकी बेटी के समान होती है। फिर ऐसा हुआ है क्या ? अगर ऐसा हुआ हो तो गांव में बारिश-फसल होगी ही ? मैं जो कह रहा हूं, समझ में आता है न ? आं, क्यों चन्नशेट्टी ?"

अण्णाजोइसजी ने मंत्रों के उद्धरण देकर, धर्माधर्म का विवेचन कर व्याख्यान देना शुरू कर दिया। इन दो पुरोहितों की धर्म-व्याख्या के बीच दूसरे भी बोल रहे थे। पटवारी चेन्निगराय अभी-अभी खायी तंबाकू का स्वाद अनुभव कर रहे थे। रेवण्णशेट्टी बोले—"दूसरों की बात नहीं सुनी जाये, यह बहन क्या कहती है वह पूछिये।"

"हां-हां ! तुम क्या कहती हो बहन ?" कल्लेश ने पूछा।

"महाशय, आप लोग इतना सब कहते हैं न, तो मैं एक बात पूछती हूं जवाब देंगे ?" नरसी ने पुरोहित-द्वय से प्रश्न किया।

"पूछ, पूछ ! अवश्य पूछ !" दोनों ने मिलकर कहा।

"बारह आदमी-भर के गहरे कुएं में छह आदमी-भर लंबी रस्सी उतारें तो पहुंचेगी क्या ?"

"आं"—उत्तर न सूझ, अय्याशास्त्रीजी सकपका गये। शेष पंचायत सदस्य भी स्तब्ध रह गये। रेवण्णशेट्टी ने कल्लेश से कहा—"महोदय, अब आप फैसला सुना दीजिए।"

"इस कुलटा, छिनाल के साथ मैं अब नहीं रहूंगा।" गिरियाशेट्टी ने अपना आखिरी फैसला सुना दिया।

कल्लेश ने पांच मिनट सोचा। फिर फैसला सुनाया—"पति कहता है कि अब वह पत्नी के साथ नहीं रहेगा। उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे रहने के लिए

कहना न्यायोचित नहीं है। लेकिन वह कहता है कि ससुर-बहू का परस्पर अवैध संबंध है और चन्नशेट्टी इसे झूठ बताता है। तो किसी पर असत्य दोषारोपण भी नहीं करना चाहिए। फिर भी इस बच्ची को संतोष हो, इस दृष्टि से ऐसा करना पड़ेगा कि ससुर और बहू अलग-अलग रहें। अब क्योंकि पति ने पहले ही कह दिया है कि वह पत्नी के साथ नहीं रहेगा, इसलिए वह अकेली अलग घर में रहे। अपनी बहू होने के कारण चन्नशेट्टी उसे एक कोठा घर बंधवाकर दे और पिता-पुत्र जैसा चाहें, रह सकते हैं।"

इस फैसले की धर्म-व्याख्या अन्यों के समझ में नहीं आयी। वे सब सकपका गये।

"यह कैसा न्याय है?" शिवेगौड़ ने प्रश्न किया।

"कल्लेशजी को हमने न्यायपीठ पर बिठाया है। वे जो कहेंगे, सुनना पड़ेगा और कोई कुछ नहीं बोलेगा। तू चुपचाप मान ले, बहन। मैं कहता हूं।" नरसी की ओर मुड़कर रेवण्णशेट्टी बोले।

"जब चार यजमानों ने कह दिया है तो मैं कैसे न मानूं?" कहकर न्याय-निर्णय को नरसी ने स्वीकार कर लिया।

और कोई बात उठने से पहले ही रेवण्णशेट्टी खड़े हो गये। कल्लेश भी न्याय-पीठ से उठ गया। फिर सबने अपनी जगह छोड़ दी।

घर लौटने के बाद चेन्निगराय ने कल्लेश से पूछा—"उसने कुछ कहा न, क्या कहा?"

"समझ में नहीं आयी?"

"नहीं।"

"इसीलिए तुम्हें न्यायपीठ पर नहीं बिठाया था। नहीं समझे न, वही ठीक है। तुम्हें क्या है, छोड़ो।"

चेन्निगराय ने फिर तंबाकू मसली और मुंह में डाल ली।

[2]

रेवण्णशेट्टी ताश खेलने के लिए कोडिहळ्ळी जाया करता था। गांव के पटेल चिक्केगौड़ के घर के सामने गौशाला की छत ताश खेलने के लिए सुविधाजनक

जगह थी। चिक्केगौड़, रेवण्णशेट्टी के अतिरिक्त कबनकेने के अध्यक्ष, लिंगददेव, ताड़ी के ठेकेदार चिन्नस्वामी, चमड़े का व्यापारी हयातसाबी भी वहां मिला करते थे।

एक दिन रेवण्णशेट्टी ने चिक्केगौड़ से पूछा—"एक पचास रुपये हों, तो दे दीजिए। नारियल बेचकर दे दूंगा।"

"तुम अब तक कितना ले चुके हो, याद है ? अब मेरे पास पैसे नहीं हैं।"

"ऐसा मत कहिए, दे दीजिए।"

इसे उधार देने से चिक्केगौड़ घाटे में नहीं रहता था। उस रकम का एक हिस्सा खेल में उसे ही मिलता था। प्रोनोट का फार्म और रेवेन्यू स्टैंप लेनदेन करने वाले चिक्केगौड़ के पास रहते ही थे। उस पर पचास रुपये की रकम, तारीख और रेवण्णशेट्टी का हस्ताक्षर लेकर, एक साल का ब्याज के छह रुपये काटकर चवालीस रुपये उसे दे दिये। लेकिन यह रकम एक बार भी रेवण्णशेट्टी की जेब में न जा पायी। सीधे खेल की चटाई पर बैठ गये। चवालीस बहुत छोटी रकम होने के कारण तीन पत्ते डालने के लिए वह तैयार नहीं हुआ।

एक रुपया मेज के हिसाब से डालकर अट्ठाईस का खेल शुरू किया। उस दिन और कोई खेल नहीं आया था, इसलिए रेवण्णशेट्टी और चिक्केगौड़ ही खेले। शाम को छह बजे तक चवालीस रुपये चिक्केगौड़ की जेब में ही चले गये। रेवण्ण-शेट्टी उस दिन फिर खेलकर उस रकम को जीतने की जिद्द पर था। गौड़ ने फिर उधार देने से इंकार कर दिया। "वहन ··· इस खेल का, जो हुआ सो हुआ और पचासेक दीजिए। कागज लिखकर दूंगा।" प्रोनोट पर हस्ताक्षर करके फिर चवालीस रुपये लेकर रात के ग्यारह बजे तक खेले। यह रकम भी गौड़ की जेब में चली गयी। उसने अपनी रुमाली भाड़ी और कंधे पर डाल गांव की ओर चल पड़ा।

घर में सर्वक्का अपने पांच बच्चों के साथ सो रही थी। दरवाजा खटखटाया। पत्नी को जगाकर खाना परोसने के लिए कहा। उसने कांसे की थाली में ठंडा लोंदा, पालक का साग परोसा तो पत्नी को फटकार दिया—"गरम-गरम क्यों नहीं बनायी ?"

"गरम-गरम बनाकर ही रखी थी। आप इतनी देर से आये तो ठंडे हो गये।"

"हत् तेरी मां की ···मैं कब आता हूं—यह पूछने के लिए तू कौन होती है री

भोसड़ी, बहन ··· ? छाती पर एक लात लगाऊगा।"इतना कहकर लोंदा मुंह में रखा। सख्त होने के कारण निगलते समय गले में कष्ट हुआ तो उठकर पत्नी को लात जमाकर हुक्म दिया—"गरमागरम लाओ।"

"चावल नहीं हैं।" दर्द के साथ आती हुई रुलाई के बीच उसने सिसकियां भरीं।

"हमेशा नहीं-नहीं करती रहती है दरिद्र, छिनाल कहीं की।" दुबारा लात मारी। फिर थाली में जो सूखा लोंदा था, उसे ही तोड़-निगलकर खाट पर फैल गया। सर्वक्का ने थाली धोकर रखी और नीचे फर्श पर छोटे बेटे रुद्रेश के पास लेट गयी।

[3]

जब कभी नंजम्मा के समझ में नहीं आता, वह किताबें कारिंदा निंगा के हाथों लदवाकर तिम्लापुर चली जाती। द्यावरसय्यजी सिखाते और हिसाब में जो फर्क पड़ता, वह स्पष्ट कर देते। वसूली करते समय सामान्यत: गांव का पटेल साथ रहता है। शिवेगौड़ ने तो रामसंद्र की वसूली को अपना ही बताया। उसकी धारणा थी कि लगान वसूली पटेल का काम है। पटवारी को चाहिए कि पटेल जैसा बोले, वैसा हिसाब लिखे। इससे टकराने की शक्ति गांव में किसी की नहीं थी, इसलिए ऐसा अब तक चल रहा था। भूमि राजस्व पटेल को जाने के कारण इन्हें एक आना भी नहीं मिलता था। इस गांव की कोई खरीदी आदि की रजिस्ट्री करानी हो तो लोग भूतपूर्व अस्थायी पटवारी सिवलिंग के पास ही जाते थे; चेन्निगराय को कोई घास नहीं डालता था। चेन्निगराय को दस्तावेज लिखना भी तो नहीं आता था। एक तो यही कारण था और दूसरे पटेल के यह कहने से डरना कि "उस औरत से लिखवाकर वह किससे हस्ताक्षर लेगा?" यद्यपि नंजम्मा रजिस्ट्री के कागज-पत्र शिवलिंग की अपेक्षा अच्छा लिख सकती थी, फिर भी लोगों की यह धारणा बनी हुई थी कि सरकारी-पत्र औरत के हाथों लिखाने से कल्याण नहीं होता। इस प्रकार रामसंद्र गांव से इन्हें एक पाई की भी आमदनी नहीं होती थी।

कुरुबरहळ्ळी का विश्वास था। पटेल गुंडेगौड़जी वसूली के दिन साथ रहते और चेन्निगराय वसूल करता। गुंडेगौड़जी प्रमुख लोगों से लगान के मुताबिक पटवारी की दस्तूरी दिलाने के साथ-साथ स्वयं भी दो रुपया देते। इस गांव से

चालीस रुपये की आमदनी होती। साथ ही गुंडेगौड़जी ने विश्वास दिलाया था कि अलग होने के बाद अपने गांव से सुग्गी (दूसरी फसल) के बाद एक खंडी मड़ुआ और पचास सेर लोबिया दिला देंगे। यह निभा भी रहे थे। कुरुबरहळ्ळी में खरीदी, गिरवी-पत्र आदि व्यवहार बहुत ही कम होता था। इसलिए इससे कोई अधिक आमदनी नहीं होती थी।

इनके विभाग का लिंगापुर तीस घरों का प्रमुख गांव था। कुछ हद तक यहां सभी रईस थे। इस गांव का रामसंद्र के शिवेगौड़ से दूर का संबंध था। इसलिए यहां भी शिवेगौड़ के इस तर्क का सब पर असर था कि पटवारी को दस्तूरी क्यों दी जाय? पटेल पुरदप्पा ने जिद्द की कि दस्तूरी उसे भी मिलनी चाहिए। चेन्निगराय के पिता रामण्णाजी जब पटवारी थे तब इस गांव के हर घर से एक रुपये के हिसाब से दस्तूरी मिलने का रिवाज था। आज भी गांव के बुजुर्ग इस बात का सबूत देते थे। लेकिन अब समय बदल गया था। इसलिए इस गांव से कोई आमदनी नहीं होती।

नंजम्मा कुरुबरहळ्ळी में वसूली के लिए जाया करती थी। अन्य दो गावों में वहां के पटेल ही वसूल करते। हिसाब-किताब तो वह घर पर बैठकर ही लिखा करती थी। खेतों पर जाकर मर्दुमशुमारी और प्रमुखों को लाकर रायशुमारी आदि चेन्निगराय ही अंकित करते थे। उसके गोशवारा से लेकर जमाबंदी के हिसाब तक का काम नंजम्मा निभा रही थी। जब कभी कोई बात समझ नहीं पड़ती तो तिम्लापुर चली जाती। चेन्निगराय कोट पहन, सिर पर रूमाल बांध, गर्दन में लिपटे उतरीय को ओढ़कर जमाबंदी के लिए जाते तो वहां हाथ-पैर कांपते; हैडक्लर्क को भेंट चढ़ाते, फिर साहब का हस्ताक्षर ले सीना ताने गांव लौटते। गांव में इलाकेदार या अमलदार आते तो नंजम्मा बच्चों का पेट काटकर बचाये हुए घी, अन्न, स्वादिष्ट दाल, साग, पापड़ परोसकर विनती करती है—"हम गरीब हैं। हिसाब में गलतियां हों तो महाशय सुधारकर हमारा मार्गदर्शन करें।" लेकिन उसने यह कभी नहीं कहा कि वह स्वयं लिखती है।

इसके साथ-साथ इस पति को संभालना भी एक काम था। सालभर मेहनत करके उसने हिसाब-किताब लिखकर दिया तो वर्षांत में वर्षासन लेने के लिए गये हुए चेन्निगराय पंद्रह दिनों तक नहीं लौटे। आये तो बताया कि पांच रुपये बचे हैं। उसे भी पत्नी नंजम्मा को न देकर तिपटूर से लाये टिन के संदूक में रख

ताला लगाकर चाबी अपनी जनेऊ से बांध ली। अमलदार, रिश्तेदार, हैड़-क्लर्क, तालुका क्लर्क और चपरासियों को नियमित रूप से देने के बाद भी कम से कम सौ रुपये बचने चाहिए थे। उसमें से पटेलगौड़ से लिए हुए पचास रुपये काट देने के बाद भी पचास रुपये घर पहुंचने चाहिए थे। "रुपये कहां गये ?" चेन्निग-राय बोले—"तेरी रोटी, लोबिया, सालन खा-खाकर मेरा मुंह बिगड़ गया था, छिनाल ! छिनाल ! पंद्रह दिन होटल में आलू, कांदा, भाजी, वड़ा, दोसा, मैसूर-पाक खाकर आराम से रहा।"

"आप तो खाते रहे लेकिन घर में बच्चों ने एक दिन भी मैसूरपाक देखा तक नहीं ! यह खाने को आपका दिल कैसे मान गया ?"

चेन्निगराय को उत्तर सूझा तो 'छिनाल, थू: ! छिनाल, छिनाल, छिनाल, मादर··· छिनाल बात मत कर, चुप रह री, हल्कट, छिनाले गालियां देकर महा-देवय्याजी के मंदिर की ओर चल पड़े।

अव सालभर गुजारा कैसे होगा ? तीसरा बच्चा विश्व अब आठ महीने का हो गया। उसके पेट में दो-तीन महीने का और एक हो गया है। वर्षासन सालाना आता है। वह भी ऐसा हुआ तो बच्चे भूखे मरेंगे। बड़ों के लिए भी दिन में दो लोंदा न मिले तो शरीर में प्राण कैसे टिक पायेंगे ? अगर सरकार से निवेदन किया जाय कि वर्षासन उसे ही मिले तो न जाने ये क्या कहेंगे ? लेकिन और रास्ता ही क्या है ? दो दिन वह सोचती रही। आखिर एक उपाय सूझा।

दूसरे दिन उठी। स्नान कर बच्चों को भी स्वच्छ कपड़े पहनाकर रोटी-चटनी देकर पार्वती और रामण्णा को जुलाहा मोहल्ले की पुट्टव्वा के पास छोड़कर, विश्व की गोद में ले कुरुबरहळ्ळी गयी। गुंडेगौड़जी के घर पहुंची। भीतरी आंगन में गंगम्मा एक खाट पर बैठी थी। सामने फैलायी लाल साड़ी पर गौड़जी की पत्नी लक्कम्मा सूप से मडुआ उड़ेल रही थी। गौड़जी दीवार से टिककर बैठे थे और पान-सुपारी की थैली में हाथ डालकर कुछ टटोल रहे थे। बहू को वहां आयी देख गंगम्मा को गुस्सा आ गया। "मैं भिक्षा मांगकर पेट भर रही हूं। उसमें भी बाधक बनने के लिए आ गयी, कुलटा ?" तपाक से बोली। नंजम्मा बिना बोले, चुपचाप खड़ी रही।

गौड़जी ने कहा—"आओ बहन इधर आओ, बैठो।" वह चटाई पर बैठ गयी। गंगम्मा साड़ी में मडुआ बांध चलती बनी।

लक्कव्वा बोली—"तुम्हारी सास ने तुम्हारी दो टोकरी-भर शिकायत की है। कहती थी कि तुम उसे देखकर जलती हो, पति को उंगली के इशारे पर नचाती हो, अपने को पुरुष समझकर रास्ते पर घूमती रहती हो। और भी न जाने क्या-क्या कहती थी। कहती थी कि पटवारी के अधिकार में कोई हिस्सा नहीं मिलने का।"

"उसे कहने दो। तुम चुप रहो।" पत्नी से कहने के बाद गौड़जी ने पूछा—"कैसे आना हुआ, बहन! वर्षासन मिला?"

"गौड़जी, आपसे वही कहने के लिए आई हूं।" नंजम्मा ने पति की सारी करतूतें बता दीं।

"उसकी गर्दन पकड़कर दो मारना था।" लक्कव्वा बोली।

"मारने से उसे अक्ल नहीं आयेगी। अब तुम ही बताओ बहन कि क्या किया जाय? तुमसे अधिक मैं थोड़े ही जानता हूं।"

"वर्षासन के रुपये उनके हाथ न लगने दें तो सब ठीक हो जायगा।"

"तो क्या सरकार वाले तुम्हारे हाथ में देंगे?"

"उसकी जरूरत नहीं। कुछ वर्षासन एक सौ बीस रुपये होते हैं। उनमें से वर्षासन देते समय अमलदार, शिरस्तदार और अन्यों को कुल पंद्रह रुपये जाते हैं। उसे छोड़ दीजिए। बाकी सौ रुपये के लिए जैसाकि परसाल किया था, अभी से उनसे रसीद लिखवा लीजिए कि लगान के रुपये पहले ही ले लिये हैं। अस्सी रुपये आपका ही लगान निकलता है और बीस के लिए किसी और का लिखवा लीजिए। उसे वर्षासन देते समय काट देंगे। उनके हाथ में पैसे नहीं मिलेंगे। उस पैसे से आप मेरे मांगने पर मडुआ, धान, मिर्ची और पांच-दस रुपये देते रहिए।"

"अच्छा, अच्छा! तुममें दीवान बनने की अक्ल है! इस सांड को जो नियंत्रण में रख सकता है, वही मैसूर-राज्य पर शासन कर सकता है। कल-परसों मैं आता हूं, तब लिखवा लेंगे।"

नंदी मंदिर में खाना पकाकर खाने के बाद जाने के लिए लक्कव्वा ने बहुत आग्रह किया। लेकिन बच्चों को गांव छोड़ आने का कारण बताकर रुकने की असमर्थता बताकर नंजम्मा निकल पड़ी। लक्कव्वा द्वारा बच्चों के लिए दिये गये दो बाटी खोपरा और दो टुकड़े गुड़ को साड़ी के पल्लु में बांध लिया था। घी, गुड़ दूध में डालकर बच्चे को पिलाया और फिर स्वयं भी पीकर गांव लौट पड़ी।

घर में चेन्निगराय ने पूछा तक नहीं कि पत्नी कहां गयी। बल्कि अब तक खाना न बनने से कुपित हो गये। उसके पल्लू में बंधा खोपरा-गुड़ देख, वही खोलकर खाने लगे। पुट्टव्वा के घर से पार्वती और रामण्णा के आने से पहले ही वे दो टुकड़े खोपरे के और दो मेली गुड़ साफ कर चुके थे और चिकने हाथ धो लिए थे।

गुंडेगौड़जी दूसरे ही दिन वहां आ गये। उनके कहे मुताबिक नंजम्मा ने पति के सामने रसीद-कागज और स्याही, कलम रख दी। गौड़जी ने आदेश दिया—"जैसा यह बहन बोलती है, वैसा लिखो ?" "कुरुबरहळ्ळी पटेल गुंडेगौड़ के राजस्व लगान से संबंधित केवल अस्सी रुपये प्राप्त हुए।" नंजम्मा बोलकर लिखवा रही थी कि पटवारी ने लेखनी नीचे रख कर पूछा—"ऐसा क्यों लिखूं ? मैं नहीं जानता। वर्षासन में मेरे हाथ कुछ नहीं लगेगा।" और बैठ गये।

गौड़जी गुस्से से बोले—"क्या कहता है नहीं मिलेगा ! मुंह बंद कर लिखता है या नहीं ?" इस पर भी पटवारी ने लेखनी नहीं उठायी। "नहीं लिखेगा ? मेरे गांव आये तो पैर तुड़वा दूंगा ! क्या समझ रखा है ?"

"मेरे खर्चे के लिए क्या होगा ?"

"वह मैं दूंगा, लिखो।"

खैर, लगान के सौ रुपये की रसीद लिखकर उन्होंने हस्ताक्षर कर दिये।

"तो मुझे कुछ दीजिए !" गौड़जी ने अपने कमर की अंटी में हाथ डालकर दो रुपये निकालकर उनके सामने पटक कर कहा—"ले, जमीन-चुंगी का पैसा तुझे अभी दे रहा हूं।"

पटवारी महोदय ने तत्परता से उसे जेब में डाल लिया। गौड़जी गांव लौटे। अगला दिन, शुक्रवार था। सुबह रोटी खाकर चेन्निगराय कंबनकेरे के साप्ताहिक बाजार में पहुंचे। तिपटूर के लोग इस साप्ताहिक बाजार में होटल डाला करते थे। तिपटूर नगर में बनने वाले बटाटा भाजी, मसाला दोसा, मैसूरपाक, केला भजिया आदि बनाते।

[4]

नंजम्मा जल्दी ही समझ गयी कि केवल पटवारी-कार्य से ही गुजारा नहीं हो सकता। जिनके पास बाप-दादों की जमीन-जायदाद नहीं, उनका गुजारा इससे

नहीं हो सकता। फिर किया क्या जाय ? जब वह तिम्लापुर गयी थी तो वहां द्यावरसय्यजी के यहां पड़ोसियों को पलाश के पत्तों से पत्तलें बनाते हुए पाया था। ऐसे कई बंडल उसने देखे थे। कहते हैं कि उन्हें तिपटूर भेजते हैं, और वहां सौ के छह आने के हिसाब से दुकानदार खरीदते हैं। उसने सोचा कि घर के कामकाज, पटवारी के हिसाब-किताब के साथ-साथ, सौ-पचास पत्तलें बना लूं तो अच्छा रहेगा।

रामसंद्र के ब्राह्मण, चोळेश्वर के टीले के पास रेतीले नाले से पलाश के पत्ते लाते हैं, जो तीन मील दूर है। चोळेश्वर का टीला उसके मायके नागलापुर के रास्ते पर ही पड़ता है। इस बार फागुन में जो पलाश के पत्तों का मौसम होता है, पत्ते लाने वह निकली। स्त्री होकर इतनी दूर अकेली जाना ठीक नहीं था, तो साथ किसे ले जाय ? पति को बुलाकर देखा तो वे क्यों आने लगे ! बोले—"जिसे संसार पालने की खुजली हो, वही यह सब करे; हमें इसकी चाह कहां !" तो वह जुलाहा मोहल्ले की पुट्टव्वा को साथ ले, सुबह कौवों की 'कांव-कांव' होने से पहले ही चटनी-रोटी बांध, बोरी लेकर निकल पड़ी। छोटे बच्चों को पड़ौसी चिन्नशेट्टी के घर छोड़ दिया। पुट्टव्वा को दिन की तीन आने मजूरी मिलती। दोनों जल्दी-जल्दी चलकर सूरज उगने से पहले ही पटापट पलाश के पत्ते तोड़-कर कमर से बंधी झोली में रखती जाती। आठ घंटों तक तोड़ने के बाद दोनों रोटी खाकर तलैया का पानी पीतीं और फिर पत्ते तोड़ने लग जातीं। बोरे में दबा-दबाकर भरतीं और फिर मुंह बांधकर सिर पर रख जल्दी-जल्दी गांव लौटतीं। घर आकर बोरा खोलकर पत्ते बाहर निकालतीं। फिर मोटी सुई में मोटा धागा पिरोकर पार्वती को देतीं। वह पत्तों के डंठल के पास से सुई निकालकर माला गूंथती। रामण्णा भी धीरे-धीरे एक माला गूंथ देता। इतनी देर में नंजम्मा खाना पका लेती। खाते समय यजमान घर आते। हरे पलाश के पत्ते पर खाना उन्हें बहुत पसंद था। एक बड़े पत्ते को दोना-सा बनाकर पालथी मारकर बैठकर दबाकर खाना खाते। उसके बाद वे आराम के लिए लेट जाते। नंजम्मा बर्तन धोकर बचे हुए पत्तों को गूंथकर माला बनाती और बचे हुए पत्तों को शाम की धूप में सुखाने डाल देती। इतने में दिन बीत जाता। दूसरे दिन सुबह अपने और पुट्टव्वा के लिए तथा घर में पति और बच्चों के लिए रोटी बनाकर चटनी पीसकर रखना चाहिए। पौ फटने से पहले उठना है, इसीलिए रात को जल्दी सो जाना चाहिए।

पहली बारिश से पहले ही पत्ते फटकर छेद होने से पहले ही एक सौ पचास गट्ठे बना लिये। सभी पत्ते लगा देंगे तो कम-से-कम एक-एक सौ के दो सौ गट्ठे बनते। एक गट्ठे के छह आने के हिसाब से पचहत्तर रुपये मिलेंगे जिसके लिए सालभर सींकें चीर-चीरकर हथेली की चमड़ी चुभानी पड़ेगी। मेहनत के बिना जीवन बीते भी कैसे ! पत्ते लाकर जमा करते-करते लगान वसूली का समय आ गया। चौथी किस्त में कुरुबरहळ्ळी वाले दस्तूरी देते हैं। इतने में उसके गर्भ के छह महीने भर गये। "तू क्यों आती है ? मैं नहीं जानता क्या ?" पति के मना करने पर वह वसूली के दिन निकल पड़ी। दस्तूरी के सारे पैसे एकत्र कर गुंडेगौड़जी ने अपने पास रख लिये। पटवारी के हाथ में पांच रुपये रखकर बोले--"तुम्हें जब पैसे की जरूरत पड़ेगी तब दे दिये जायेंगे। अभी और क्यों चाहिए ?" उन्हें निगल जाने की भावना से एक बार देखा और मुंह तक आई गालियां देने की हिम्मत नहीं हुई। परंतु घर पहुंचने पर गुंडेगौड़जी और नंजम्मा पर व्यभिचार का आरोप लगाकर, गालियां देकर अपने क्रोध को शांत कर लिया। पांच रुपये मिले ही थे। वसूली के लिए तिपटूर जाकर सुख पाने की कल्पना से मन-ही-मन खुश हो रहे थे। कहते हैं अब तिपटूर में गुब्बीबीरण्ण के नाटक खेले जाते हैं। ऐसे दृश्य दिखाते हैं मानो राजमहल हो ! छह आने देकर देखना चाहिए। आज रात भोजन के बदले केवल बंबई बोंडा ही खाना चाहिए। रांड का बच्चा ! गुंडेगौड़ ने सौ रुपये की रसीद लिखवा ली। वर्षासन के पैसे से तालुका आफिसवालों के देने के बाद हाथ में चार या पांच ही बचे। पास में और पांच रुपये थे ही। कुल दस रुपयों में कितने दिन खाया जा सकता है ? एक मैसूरपाक का नौ पैसा। चार आना देने पर छह देते हैं, हरामखोर ! और दो दे-दे तो इसके बाप का क्या जाता है ? इनकी मां को···"

इतने में रामसंद्र में सरकारी प्राइमरी स्कूल खुला। स्कूल के लिए मकान न होने से सरकार ने गांव के मुखियों से पूछा कि स्कूल कहां चलाया जाये ? शिवेगौड़ ने राय दी कि हनुमान मंदिर उपयुक्त रहेगा। इसका मतलब गंगम्मा, अप्पण्णय्या उसे खाली करें। गंगम्मा को पता चला तो वह शिवेगौड़ के घर के सामने मुट्ठी में मिट्टी लेकर खड़ी हो गयी। जब मंदिर के पुजारी अण्णाजोइस ने कहा कि मंदिर को स्कूल नहीं बनाया जा रहा है तो गंगम्मा निश्चित हो गयी। शिवेगौड़ का एक घर खाली था। सरकार ने उसे ही छत्तीस रुपये वार्षिक भाड़े पर ले

लिया। उसी ने यह करवाया। किक्केरी के सूरप्पा नामक मास्टर भी आ गये। कुछ लड़कों को भर्ती कर लिया। लेकिन लड़कियों को पढ़ने के लिए भेजना चाहिए या नहीं. इसकी चर्चा अब भी चल रही थी। "लड़कियों को भी पढ़ायें। चिंता न करें। अब बड़े-बड़े गांवों में लड़कियां हाईस्कूल में जाती हैं।" मास्टर ने कहा। लेकिन और कोई सहमत नहीं हुआ। मास्टर फिर बोले—"बहन, आप पढ़ी-लिखी हैं, आपको क्या बताया जाये! मुसीबत में दो अक्षर पढ़ी लड़की भी बीस रुपया पा लेती हैं।" इस पर नंजम्मा ने पार्वती को भर्ती करा दिया। "देखा, उस बहन के साहस को?" सारा गांव यह कहकर आपस में बातें करता रहा। पार्वती के साथ रामण्णा को भी स्कूल में भेज दिया गया। यह कहकर कि इस स्कूल में मास्टरजी नहीं मारते, रेत पर नहीं लिखवाते, स्लेट पर लिखाते हैं।

इस बार भी जचकी के लिए अक्कम्मा आयी। लेकिन नंजम्मा की नवजात लड़की बाहर आते ही आध घंटे में चल बसी। "नंजा, इस गर्भावस्था में पलाश की इतनी पत्तलें लगाना ठीक नहीं था। उष्णता से बच्चे को न जाने क्या हो गया? पैदा होते ही मर गया।" अक्कम्मा बोली।

नंजु कुछ नहीं बोली। चुपचाप अपने आप पर रो रही थी। "मत रो बेटी, सब ठीक हो जायेगा। अब तुझे कुछ होगया तो इन बच्चों का क्या होगा?"—अक्कम्मा के दो दिन समझाने के बाद उसने ढाढ़स बांधा। गंगम्मा ने मंदिर में ही रहकर दस दिन का मत्सर और तीन दिन का सूतक मनाया, लेकिन बहू के घर आकर एक शब्द भी सांत्वना के नहीं कहे। बच्चे के मरने के बाद भी अक्कम्मा ने तीन महीने तक पोती की देखभाल की। गांव लौटने के पहले दिन पोती से बोली—"तेरे पति के ये गुण हैं! अपने ही पैदा किये बच्चों पर उसका स्नेह नहीं। अपने और अपने पेट के अलावा वह कुछ नहीं जानता। बच्चों को पालना तेरे लिए भी कठिन काम है। अब उसे अपने बिस्तर के पास न आने देना।"

नंजु कुछ नहीं बोली। अक्कम्मा ने फिर कहा—"वह नाराज होता है तो हो लेने दे। दूर रखा कर।" अब नंजम्मा बोल पड़ी—"अक्कम्मा, यह सब प्रारब्ध-कर्म है। मैं वैसा करूं तो वे बेशर्म हो जाते हैं। रास्ते में खड़े होकर बुरी-बुरी गालियां देने लगते हैं। इससे पहले ही मैंने ऐसा करके देख लिया है।"

"हाय रे किस्मत!" कहकर अक्कम्मा चुप हो गयी।

अक्कम्मा अठहत्तर की थी तो भी पैदल ही जाने का निश्चय कर लिया। एक

कारिंदे को साथ भेजने के लिए कहा। लेकिन पोती ऐसे कैसे भेजती ? तीन रुपया दिया, एक लाल साड़ी पहनायी और डेढ़ रुपये में एक भाड़े की गाड़ी तय करके भेजा।

[5]

एक दिन दोपहर को एक बजे के करीब रेवण्णशेट्टी की पत्नी सर्वक्का ने आकर पूछा—"नंजम्माजी, इस समय घर में सब खाली हो चुका है। दो सेर आटा देंगी क्या ?"

"पिसा हुआ आटा तो नहीं है सर्वक्का। आओ, बैठो।"

"दो सेर मड़ुआ ही दे दीजिये।"

सर्वक्का डिब्बा लायी थी। उसमें दो सेर मड़ुआ नापकर डाल दिया। सर्वक्का और कुछ न बोलकर चली गयी। उसी दिन शाम को वह फिर आई। नंजम्मा पलाश की पत्तलें बना रही थी। पास बैठकर सर्वक्का बोली—"सोच रही थी कि किसके पास जाऊं ? बच्चे भूखे थे। उपवास कर-करके मैं भी तंग आ गयी थी। आपने मड़ुआ देकर आज हम सबकी भूख मिटायी है।"

"यह क्या सर्वक्का, आप ऐसा कहती हैं ? जमीन-जायदाद वाले आप लोग ऐसा कहें तो कोई कैसे विश्वास करे ?"

"सच कहिए, आप कुछ नहीं जानतीं ?"

"थोड़ा बहुत सुना है। लेकिन यह नहीं मालूम था कि घर में खाने के लिए आटा भी नहीं है।"

"मेरी क़िस्मत ! पूर्वजन्म में शिव की अच्छी पूजा नहीं की होगी !" सर्वक्का ने आंसू बहाते सारी बातें बता दीं।

रेवण्णशेट्टी कोडिहळ्ळी में जाकर ताश खेलते थे। उसमें हारकर तीन हजार रुपये का प्रोनोट लिख दिया। इसके बदले में शेट्टी अपना खेत लिख देगा। एक दिन मारने के लिए लाठी लेकर आये थे तो चिक्केगौड़ ने पकड़ लिया था। कहते हैं कि वहीं से तुरंत तिपटूर जाकर रजिस्ट्री करायी और प्रोनोटों को फाड़कर आया। अब उनके पास सिर्फ डेढ़-दो एकड़ जमीन बची है। बारिश होगी, तालाब भरेंगे और तब जोतने पर फसल आयेगी। उसमें कम-से-कम बारह खंडी धान होना

चाहिए। सफेद धोती पहनकर, चमकते चप्पल डालकर चलने वाला फुटकर वकील रेवण्णशेट्टी खेत कैसे जोतता ? इस तरह पट्टेदारी में दिये गये खेतों से चार खंडी आता था। कहते हैं कि उस खेत को भी काशिबड्डी महाजन के पास गिरवी रखकर आठ सौ रुपये उठा लिये हैं।

"गिरवी रखने जैसा कौन-सा खर्च आया ? रुद्राणि की शादी-वादी कहीं जम गयी है क्या ?"

"नंजम्मा, यह तो तब हो न, जब उन्हें इसकी फिक्र हो। घर में शादी के लिए सयानी बेटी है। पति को छोड़ी हुई वह व्यभिचारिणी है न, ससुर से संभोग करने वाली बहू !—वह अब गांव में झाड़ी के पास खपरैल का छोटा घर बनवाकर दुकान चला रही है। उसके पास पैसे कहां से आये ? सुना है कि ये आठ सौ रुपये इन्होंने उस छिनाल के मुंह में डाल दिये हैं। अब उनके पास पचास पेड़ों वाला बगीचा बचा। नारियल तैयार होने से पहले ही गिराकर बेच देते हैं। नहीं तो रेवण्णशेट्टी की सफेद धोती, कालर वाली कमीजें धोने के लिए साबुन, दाढ़ी बनाने के लिए ब्लेड, पीने के लिए पीलाहाथी सिगरेट के लिए पैसे कहां से आयें ?"

नरसी अब गांव के आगे ग्रामदेवी की झाड़ी के पास तीन कमरे वाला स्वतंत्र घर बनवाकर दुकान चला रही थी। कोई ऐसा नहीं जो उसके बारे में न जानता हो। उसका ससुर चेन्नशेट्टी अपमानित होकर रामसंद्र ही छोड़ गया। अब वह तिपटूर के उस पार चन्नापुर में दुकान चला रहा था। उसका पति गिरियाशेट्टी भी गांव छोड़कर कहीं चला गया था। कुछ लोग कहते हैं कि अरसी केरे के पास वह किसी गांव में घरेलू नौकर के रूप में काम कर रहा है।

रेवण्णशेट्टी को समझाने वाला कोई नहीं था। उसकी जबान के सामने कोई ठहरना ही नहीं चाहता था। सर्वक्का के मायके में छोटे बड़े भाई थे। उन्होंने बहन और उसके बच्चों के लिए बहुत कुछ किया भी। अब उनकी भी अपनी गृहस्थी है। यह भी उनके सामने अपना दुखड़ा कितना रोयेगी ? एक बार बहनोई को समझाने के लिए उसका बड़ा भाई आया था तो मां, नानी, काकी आदि को गालियां सुना दीं तो उसने अब कभी इनसे बात न करने की कहकर चला गया।

सर्वक्का बोली—"नंजम्माजी, बच्चों को जनने की गलती कर बैठी ! अब उनका पालन किसी तरह करना ही चाहिए ! आप लोगों की तरह हमें पत्तल लगाना नहीं आता। आप मुझे सिखा दीजिए। सीख लूंगी तो इस साल जब आप पत्ता लाने

चोलेश्वर के टीले पर जायेंगी तब मुझे भी ले चलिए।"

"आप पत्ता ढोयेंगी तो शेट्टीजी चुप रहेंगे ?"

"चुप नहीं रहेंगे तो क्या करेंगे ? आज दोपहर को आपके घर से ले गयी मडुआ पीसकर लोंदा बनाकर दिया तो कुत्ते की तरह नहीं खा गये। क्या ?"

दूसरे दिन से सर्वक्का रोज थोड़ा-थोड़ा समय देकर पत्तल बनाना सीखने लगी। सींक को किस तरह तोड़ना चाहिए, पत्ते का डंठल तोड़कर पानी छिड़ककर किस तरह जोड़ना और उस पर पाट रखकर फिर भारी पत्थर रखना चाहिए, बीच में किस तरह का गोल पत्ता रखकर पास में और पत्ते रखकर कैसे लगाकर सींक तोड़नी चाहिए, आदि समझाने पर कुछ हद तक पत्तल बनाना वह सीख गयी। "इस तरह बनाने का अभ्यस्त होने के बाद जल्दी-जल्दी बना सकोगी।" नंजम्मा के यह विश्वास दिलाने के बाद उसे कुछ तसल्ली मिली।

[6]

एक दिन दोपहर को नंजम्मा गांव के सरकारी कुएं से पीने का पानी खींचने गयी। गांठ छूटने से गगरी कुएं में पड़ी। घर में एक ही गगरी थी। अब कंबन-केरे के कासिम साबी के आने के बाद ही कुएं से गगरी निकाली जा सकेगी। अब घर जाकर घड़ा लाना पड़ेगा। सरकारी कुएं से घड़े में पानी ले जाने में उसे संकोच हो रहा था। लेकिन क्या करे ? ऐसा सोचते हुए घर लौटी तो कल्लेश बैठा हुआ था। बच्चे उसके द्वारा लायी हुई चाकलेटें अपने जबड़ों में भरकर चटकारा भर रहे थे।

"ये कहते थे कि तू पानी लाने गयी है। हाथ खाली क्यों लौटी ?" उसने पूछा।

"रस्सी की गांठ छूटने से गगरी कुएं में गिर पड़ी।"

"चल, मैं निकालता हूं" कहकर वह चल पड़ा। नंजु ने उसका अनुसरण किया। कुएं में डुबकी लगाने वाले मामा को देखने की उत्सुकता से बच्चे भी आ गये। नंजम्मा ने घर को ताला लगा दिया।

गांव के अन्य कुओं का पानी तनिक खारा था, इसलिए सरकार ने दो साल पहले यह कुआं खुदवाकर पत्थरों से बंधवा दिया। इसका पानी मीठा था और शुद्ध भी। डोम-चमारों के अलावा सभी मतावलंबी यहीं से पीने के लिए और

खाना बनाने के लिए पानी ले जाते थे। ब्राह्मण, लिंगायत, सुनार, वैष्णव आदि उच्च जाति की स्त्रियां पानी खींचने के लिए अपनी-अपनी रस्सी लातीं और कुएं में छोड़ने से पहले घर से लाये हुए पानी से घिर्री को एक बार शुद्ध करतीं।

कल्लेश ने रस्सी का एक छोर कुएं में डाला और दूसरा छोर घिर्री के लोहे के खंभे से बांध दिया। पहनी हुई धोती और कमीज-कोट उतारकर नीचे रख, बहन से उन पर नजर रखने के लिए कह दिया। वह रस्सी पकड़ कर नीचे उतरा। उस कुएं में पानी पाताल जितनी गहराई का था। वह कुआं दो गज लंबा और दो गज चौड़ा था। लेकिन उतरने-चढ़ने के लिए कोनों में जबान-से छोटे-छोटे नुकीले पत्थर लगा दिये गये थे। कुएं के तह तक पहुंचकर वह एक गगरी निकालकर लाया। रस्सी के फंदे में इसे बांध 'ऊपर खींच लो' चिल्लाया। नंजु ने रस्सी खींची, लेकिन वह उसका कलश नहीं था। "उसे वहीं रख लो, कोई भी आये, उसे मत देना। रस्सी नीचे छोड़ो।" जोर से बोलकर फिर फिर डुबकी लगायी। दूसरी गगरी मिली। पानी में टटोलते समय अंदर दस-बारह गगरियां मालूम पड़ीं। सब निकाल लाया।

रस्सी पकड़कर, नुकीले पत्थरों पर पैर रखकर ऊपर आने तक कुएं पर बीस से भी अधिक स्त्री-पुरुष एकत्र हो गये।

"नंजा, अपनी गगरी अलग रख लो।" बहन से कहने के बाद कल्लेश ने अन्यों से कहा— "जिनकी गगरी हो वे गगरी के आठ आने देकर अपनी गगरी ले जायें। नहीं तो मैं ये सब अपने गांव ले जाऊंगा।"

कुछ लोग पैसे लाने के लिए घर गये। भूतपूर्व अस्थायी पटवारी शिवलिंग भी आया हुआ था। उसने प्रश्न किया—"हमारे गांव के कुएं में उतरकर गगरी निकालने का अधिकार किसने दिया ?"

"तो मैं इन सबको पानी भरकर फिर से कुएं में डाल देता हूं। सांस रोककर, क्या मुफ्त में कूदा था ?"

शिवलिंग इसका कोई उत्तर नहीं दे सका। सबने आठ-आठ आने दे दिये। कल्लेश को साढ़े छह रुपये मिले। पैसे कोट की जेब में रखे और धोती, कमीज और कोट हाथ में ले, भीगी निकर में ही घर के लिए चल दिया।

नंजु ने सोचा कि बहुत दिनों के बाद भाई आया है तो दो दिन तो अवश्य ही रहेगा। कल कुछ विशेष खाना पकाने की सोची। सेवंई बनाने के लिए सामान

लायी। दोपहर के खाने के बाद कुछ समय सोया वह, और फिर उठने के बाद बोला—"यह क्या लेकर आयी ?"

"सोचा सेवंई बनाऊं, तुझे भाती हैं न ?"

"मैं नहीं रहूंगा। सूर्यास्त के समय चला जाऊंगा।"

"यह क्या ? इधर आये, उधर चल दिये। रहो-रहो।"

"नहीं, बड़ा जरूरी काम है। तुझे देखने के लिए आया था। मुझे एक लोटा कॉफी बना दे, बस।"

रामण्णा को दुकान पर भेजकर छह पैसे का कॉफी का पाउडर मंगाया। उसमें गुड़ डालकर कांसे का लोटा भरकर काफी दी। उसे पीकर कल्लेश निकल पड़ा। इतने में सूर्यास्त के कारण अंधेरा हो रहा था। वह भी अपने पिता के समान अंधेरे में तनिक भी नहीं डरता था।

उसके जाने के थोड़ी देर बाद सर्वक्का आई। बोली—"नंजम्मा, कहते हैं चोलेश्वर टीले के पास के पलाश के पत्ते सोने के पत्ते के समान हैं। मंदिर के महादेवय्याजी हूबिनहळ्ळी भिक्षा के लिए गये थे तब देखकर, मन न मानने के कारण तोड़कर लाये थे। मैंने भी देखा है।"

"माघ मास अब भी बीता नहीं न, सर्वक्का ?"

"अगहन के महीने में इस साल बारिश हुई न। इसलिए जल्दी शुरू हो गया। कल ही चलें।"

यह सोचकर कि नये पत्तों के आने तक जल्दी-जल्दी इकट्ठा न किया तो कहीं जल्दी ही पहली बारिश पड़ गयी तो वह काल भी खोना पड़ेगा। नंजम्मा चलने के लिए राजी हो गयी। दूसरे दिन कौआ बोलने से पहले ही तैयार होकर आने का कहकर सर्वक्का अपने घर चली गयी। उसके लिए यह पहला दिन था। अतः रात भर नींद नहीं आयी। किसी तरह रात बिताकर 'कांव-कांव' सुनते ही उठी और बोरा तथा रोटी की गठरी हाथ में लेकर सिर पर कपड़ा डालकर नंजम्मा के घर के द्वार पर दस्तक दी। नंजम्मा भी तैयार होकर निकली। अब भी चांदनी थी। नंजम्मा को शंका हुई कि शायद चांदनी के प्रकाश के कारण ही कौआ बोला होगा, लेकिन सर्वक्का ने 'नहीं जी, धूप चढ़ी तो मुश्किल होगी, चलिए' कहा तो वह आगे चलने लगी। दोनों ने गांव की सीमा पार की तो झाड़ी के पास बने नरसी के घर का दरवाजा खुलता-सा लगा। कोई पुरुष धीरे से 'जरूर' कहकर

बाहर निकला और इनके मार्ग से ही सर्र से आगे बढ़ गया। नरसी ने दरवाजा बंद कर लिया।

नंजम्मा तुरंत समझ गयी कि यह पुरुष कल्लेश ही है। सिर पर पल्लू और कंधे पर बोरा डालकर चलने के कारण कल्लेश समझ नहीं पाया कि इन दोनों में एक अपनी ही बहन है। ये कौन होंगे, इसकी परवाह किये बिना ही वह जल्दी-जल्दी चला गया। अपनी चाल थोड़ी धीमी कर नंजु पीछे रह गयी। इसका कारण सर्वक्का को न बताने की इच्छा से वह चुप रही। सामने चलने वाला व्यक्ति इनकी दृष्टि से ओझल हो जाने के बाद सर्वक्का ने पूछा—"वे आपके भैया हैं न?"

"न जाने कौन था?"

"हुंहुं, वे ही थे। सुना है कि दस-पंद्रह दिन में एक बार आते हैं। रात को अंधेरे में आते हैं और सुबह मुर्गे के बांग देने से पहले ही निकल जाते हैं। कहते हैं कि वह नरसी ही सबसे यह कहती है।"

नंजम्मा कुछ नहीं बोली। वह चुपचाप ऐसे कदम बढ़ाने लगी मानो उसने यह सुना ही न हो।

नौवां अध्याय

जब बहुत दिनों तक कोई किसी जगह पर रहें तो वह जगह वहां रहने वालों के नाम से जानी जाने लगती है; ऐसे ही पहले जो हनुमान मंदिर था, अब गंगम्मा और अप्पण्णय्या के रहने के कारण इनके नाम से प्रसिद्ध हो गया। इसी प्रकार मंदिर की पूजा में अण्णाजोइस का अधिकार भी घटा नहीं, लेकिन अब उसे हनुमान मंदिर न कहकर लोग गंगम्मा का घर कहने लगे।

गंगम्मा और अप्पण्णय्या अकसर गांव आते-जाते। रामसंद्र के शिवेगौड़ का नाम आसपास तीन मील के आगे कोई नहीं जानता था। अब वह बीस मील तक परिचित हो गया था। मां-बेटे गांव-गांव घूमते तो 'हमारी सारी जायदाद एक पापी रांड का छोकरा धोखा देकर निगल गया; हमें जीवन बिताने का कोई आधार मिलने तक मदद करें।'—हर घर में यही बोलते। इस तरह कहकर गंगम्मा अपनी पुरानी लाल साड़ी जमीन पर फैला देती। लोग सूप में मडुआ; लोबिया, मिर्च आदि लाकर डाल देते। वह उन्हें बांधकर ले आती। फिर सब जगह का सामान बोरे में भरकर अप्पण्णय्या सिर पर रखकर गांव लाता। महादेवय्याजी भी ऐसा ही करते थे। लेकिन इनके लिए भिक्षा मांगने का कोई कारण नहीं था। वे थे ही जंगम। लाल कुरता और लाल लुंगी पहन, सिर पर लाल फेंटा बांध, भभूति लगाये संन्यासी थे वे। देहली के बाहर खड़े होकर 'भिक्षा, गुरु रेवण्णजी की शिक्षा' कहना ही इनका काम था। एक अंजलि-भर मडुआ झोली में गिरता। लेकिन गंगम्मा हर घर में अपनी रामकहानी कहती और शिवेगौड़ के वंश को शाप देती। देने वाले कम से कम आधी अंजलि तो देते ही थे और न देने वाले शाप लेते।

गंगम्मा के घर में भी संदूक है। संदूक-भर मडुआ है। दो कोठी लोबिया और एक हंडा मिर्ची का भरा है। शिवेगौड़ जीता है तो मैं कहां मरी हूं—कहकर

गंगम्मा धर्म-कर्म के समगुणों की बात करती।

एक दिन दोपहर में लगभग एक बजे हनुमान मंदिर के सामने दो बैलगाड़ियां आकर रुकीं। एक तेली शिंगशेट्टी की थी और दूसरी लेपक मुक्कण्णा की। इन दोनों गाड़ियों में बर्तन, बिस्तर, पेटियां, छतरी, पाट, चटाई आदि गृहस्थी का सभी सामान था। इनके पीछे-पीछे पचास वर्ष की एक विधवा वृद्धा, पच्चीसेक की एक औरत, सात साल की लड़की और चार साल का एक लड़का आया। इन्हें आते देख अप्पण्णय्या चोर की भांति मंदिर के पीछे से निकलकर घास की पंक्तियों के बीच खिसक गया। गाड़ी छोड़कर मुक्कण्णा ने कहा—"यही है बहन, गंगम्मा का घर।" और वह सामान उतारने लगा। वृद्धा ने संकोच के साथ घर में प्रवेश किया। गंगम्मा पहचान न पायी। वृद्धा बोली—"हम नुग्गीकेरे के हैं।" यजमानजी गुजर गये। दो साल हो गये हैं। सातु और बच्चे आपके साथ रहना चाहते हैं, इसलिए ले आयी हूं।"

यह सब समझने में गंगम्मा को दो मिनट लगे। इतने में सातु दो बच्चों के हाथ पकड़कर आ गयी। गंगम्मा की कल्पना बिजली-सी दौड़ी। "क्यों री छिनाल, यह बड़ी लड़की तो अपने बाप की पैदाइश है। यहां रहते समय ही तू उससे गर्भवती हो गयी थी। यह दूसरा लड़का किस मर्द से पायी रांड? पटवारी रामण्णाजी के वंश पर कलंक लगाने यहां आयी है क्या? ठहर, देख अभी तुझसे क्या कराती हूं?" उठी और कोने में पड़ी कचरे की टोकरी लाकर खड़ी हो गयी।

"ऐसी बुरी बातें क्यों कहती हैं? आपका बेटा ही हमारे गांव आया था। मेरी बेटी बदचलन नहीं है। चाहें तो अपने बेटे से ही पूछ लीजिए। नामकरण में आने के लिए चिट्ठी लिखी थी। आप लोग क्यों नहीं आये?" समधिन ने प्रश्न किया, लेकिन गंगम्मा के कानों में पड़ा ही नहीं।

सातु मंदिर के बाहर आ गयी। दोनों बच्चे डरकर मां के पीछे पल्लू पकड़े खड़े रहे। सातु की मां "ऐसी औरत मैंने कहीं नहीं देखी भई, खूब रही" इतना कहकर बाहर आ गयी। सातु बोली—"मां, उनसे मिले बिना नहीं जायेंगे। मेरी जेठानी अलग रहती है। फिलहाल हम उन्हीं के घर चलें।" मां मान गयी। मुक्कण्णा और शिंगशेट्टी दोनों ने गाड़ियां जोतीं और नंजम्मा के घर के सामने छोड़कर सारा सामान उतार दिया। नंजम्मा ने इनके आने का कारण नहीं पूछा। सातु की मां के कपड़े देखकर ही मालूम होता था कि यजमान गुजर गये हैं। न

जाने कैसी मुसीबत में हैं ! पहले अंदर बुलाकर खाने-पीने के बाद ही समाचार पूछे जाने चाहिए न ! उसने सबको अंदर बुलाकर बिठाया । इस बालक को देखकर उसे भी आश्चर्य हुआ । लेकिन अगर वह अपने पिता का न होता तो अपने साथ लाने की हिम्मत कैसे करती ?—उसका यह विश्वास कम नहीं हुआ । सातु आंसू बहाती रही । उसकी मां नंगम्मा बोली—"अप्पण्णय्या दो बार आया था और पंद्रह-पंद्रह दिन रहा । तभी रामकृष्ण पैदा हुआ । चांडालिन ने जोर-जोर से चिल्लाकर कहा कि मेरी बेटी बदचलन है, ताकि रास्ते के लोग भी सुनें ।"

"अच्छा, पहले कपड़े बदल लीजिए । यजमानजी को गये कितने दिन हुए ?"

"दो साल हो गये । जब तक वे थे, पौरोहित्य में आराम से जीवन बीता । उसके बाद हम अनाथों को कौन पूछता ? पत्नी को चाहिए कि वह अपने पति के साथ रहे । जब अप्पण्णय्या आया था, तो उसने कहा था कि आकर ले जाऊंगा । जब वह नहीं आया तो हमें ही आना पड़ा । तिपटूर से मोटर में आये हैं । गोबर लेकर ये दोनों गाड़ियां खेत के पास आयी थीं । चार-चार आने लेकर सामान लाये ।"

"सातु, पहले बच्चों के कपड़े बदलो । वे भूखे हैं ।" नंजम्मा इतना कह पायी थी कि इतने में "इन छिनालों को चप्पल से पिटवाकर सिर के बाल नहीं झड़ाये और गांव छुड़ाकर नहीं भगाया तो मेरा नाम गंगम्मा नहीं"—गरजती हुई गंगम्मा वहां आयी और "क्यों री छिनाल, इसके साथ तू भी शुरू करने के विचार से इसे घर में जगह दी तूने ? तुझे भी ठीक नहीं कराया तो नाक कटा लूंगी, देख छिनाल !" चिल्ला रही थी कि पीछे अय्याशास्त्रीजी और अण्णाजोइसजी दिखाई पड़े । एक ही मिनट में शिवेगौड़ और शिवलिंग भीतर आये । दस तक गिनती गिनने तक रेवण्णशेट्टी भी आ गया और पांच-छह आदमी उतनी ही उत्सुकता से इकट्ठे हो गये, मानो भीतर कोई रीछ नाच रहा हो । वहां उपस्थितों के मन में इस बात की शंका नहीं रही कि इन सबको गंगम्मा ही बुलाकर लायी है ।

आग-बबूला होकर, नंजम्मा ने एक बार सोचा कि पूछूं, मेरे घर आप लोग क्यों आये ? आप लोगों को किसने बुलाया ? लेकिन गांव के इन मुखियों से शत्रुता मोल लेना नहीं चाहती थी । किसी को अंदर आने के लिए नहीं कहा, और न ही बैठने के लिए चटाई बिछायी । चेन्निगराय नींद से उठ चुके थे । उन्होंने उठकर दो पाटे बिछाये । पुरोहितों के लिए अलग पाटा बिछाया । सातु,

दो बच्चे और तंगम्मा रसोईघर में चले गये।

"इधर आ, अंदर क्यों जा रही है रांड, छिनाल, पंचायत के सामने आ।" गंगम्मा चिल्लायी।

"न्याय! न्याय!! यहीं आओ, बहन।" धर्म-प्रतिनिधि से रेवण्णशेट्टी ने आदेश दिया।

"रेवण्णशेट्टी ही बुला रहे हैं, आओ री।" गंगम्मा फिर चिल्लायी।

रेवण्ण का यहां आना और महान धर्मात्मा बनकर न्याय की बात करना, नंजम्मा से सहा नहीं गया। लेकिन इनका मुंह बंद कर भगाने का उपाय भी नहीं सूझा। एक रास्ता दिखायी पड़ा। उसी समय स्लेट-पुस्तक लिये पार्वती और रामण्णा स्कूल से लौटे। "री पार्वती, मंदिर के महादेवय्यजी और तुम्हारे मास्टर हैं न, उन्हें बुला ला। उन्हें अभी ही आने के लिए कहना। भागते जाओ।" नंजम्मा बोली। दोनों बच्चे दौड़ पड़े।

"क्यों बहन, हम न्याय दें तो नहीं चलेगा?" नंजम्मा का मुंह देखते हुए रेवण्ण-शेट्टी बोला। वह भीतर चली गयी। "भीतर क्यों चली गयी री वकीलन?" गंगम्मा ने व्यंग्य कसा। फिर भी वह बाहर नहीं आयी।

अण्णाजोइस और अय्याशास्त्री अपने धर्मशास्त्र का ज्ञान व्यक्त करने के लिए तैयार हुए। अण्णाजोइस ने कोई मंत्र कहा।

"मन-धर्मशास्त्र में लिखा है कि व्यभिचारिणी का सिर काटना चाहिए, वेद में लिखा है कि हजार अशर्फी खर्च कराके प्रायश्चित कराना चाहिए। उससे प्राय-श्चित करा लेने से पहले उसे घर में प्रवेश देना नंजम्मा की गलती है।" अय्या-शास्त्री जी ने भाषण दिया।

इतने में महादेवय्यजी आ गये। गंगम्मा गांव में घूम-घूमकर ढिंढोरा पीटती रही जिससे सारा गांव घर के सामने मेले के समान जमा हो गया। महादेवय्यजी बीच में रास्ता बनाते हुए आये। उन्हें विषय समझाने की जरूरत नहीं थी। दर-वाजे के झरोखे से उन्हें आते हुए देखकर नंजम्मा बाहर आकर बोली—"अय्याजी आप धर्म-कर्म जानने वाले हैं। न्याय के लिए पूछताछ आप करें। दूसरे लोगों में से हर कोई न बोले। वह भीतर बैठी, भगवान की कसम खाकर अब भी कहती जा रही है कि अप्पण्णय्या आया था और उसी से उसे गर्भ ठहरा।"

महादेवय्यजी समझ गये कि क्या माजरा है। "अप्पण्णय्या को बुलवाओ।

उसके बाद न्याय की बात होगी।" उन्होंने कहा।

"मेरे लाल का कोई कसूर नहीं। वह ऐसी छिनाल की संतान नहीं है।" गंगम्मा बीच में बोल पड़ी।

"कसूर है या नहीं, पूछताछ करेंगे। पति अगर पत्नी के घर गया हो तो कोई कसूर नहीं।" उसे तसल्ली की बात कहकर दरवाजे के पास खड़े लोगों से बोले—"अप्पण्णय्या जहां भी हो, बुला लाइये।" दस-बारह लोग अन्वेषणोत्सुकता से दौड़े इस बीच चर्चा प्रारंभ करने वाले पुरोहित-द्वय से बोले—"अप्पण्णय्या आने तक कोई नहीं बोले।" यह कहकर सबका मुंह बंद करा दिया।

पंद्रह मिनट में ही अप्पण्णय्या आ गया। पता लगा कि वह बसप्पशेट्टीजी की घास के ढेर में छिपा बैठा था। आंख बचाकर भागने की ताक में था लेकिन ढूंढ़ने आये दो व्यक्तियों की गिरफ्त में आ ही गया। उसे पकड़कर सभा में लाया गया। गांठ छूटने के कारण बालों ने मुख ढंक लिया था। महादेवय्यजी ने उससे कुछ नहीं पूछा। उन्होंने भीतर भगवान का फोटो लगाकर दीप जलाकर आने के लिए नंजम्मा से कहा। नंजम्मा ने भीतर एक पाट रखा। उस पर श्रीराम की फोटो रख, दीप जलाया। महादेवय्यजी ने सिंदूर की डिबिया मांगी। डिबिया मिली, तो उससे सिंदूर निकाल अप्पण्णय्या के माथे पर लगाया। फिर भगवान का फोटो उसके हाथ में देकर पूछा—"देख भाई, झूठ बोलेगा तो भगवान तेरे हाथ-पैर काट देगा। सुंकल-माता तुझे खत्म कर ले जायेगी। सच-सच बताना। तू अपनी मां की आंख बचाकर, अपनी ससुराल गया था कि नहीं?"

अप्पण्णय्या मौन रहा। "मेरे लाल से जबर्दस्ती झूठे प्रमाण क्यों मांग रहा है जंगम?" गंगम्मा बोल पड़ी। लेकिन इसे अनसुनी कर महादेवय्यजी बोले—"उत्तर देना होगा। सच नहीं कहेगा तो तेरे हाथ-पैर में लकवा मार जायेगा। वहां जो दीप जल रहा है, घू-घूकर तुझे जला देगा। शनि माहात्म्य देखा है? राजा विक्रम के हाथ-पैर किस तरह काट दिये गये थे! हूं! जबान खोलो।"

अप्पण्णय्या के मन में भय समा गया। नार्यिसिंगे ग्राम के दोंबीदासजी ने जो शनि माहात्म्य यक्षगान प्रस्तुत किया था, उसमें विक्रम जांघ कटने और विलाप करने का दृश्य उसकी आंखों के समक्ष नाच उठा। महादेवय्यजी जी ने फिर कहा—"झूठ कहेगा तो शनिदेव…।" उनके वाक्य पूरा करने से पहले ही वह बोल पड़ा—"मैं झूठ नहीं बोलता जी, मैं दो बार नुग्गीकेरे गया था।"

"कितने-कितने दिन रहा ?"

"एक बार पंद्रह दिन, और दूसरी बार का मुझे याद नहीं।"

"अभी कितने दिन पहले गया था ?"

"दूसरी बार प्लेग आया था न, तब।"

मतलब कि लगभग छह साल हो चुके। नंजम्मा भीतर गयी और सातु के बेटे का हाथ पकड़कर बाहर लाकर खड़ा कर दिया। करीब पांच साल के उस बालक और अप्पण्णय्या के चेहरे में साम्य था।

"हरामखोर, जावगल जाने का बहाना बनाकर तूने ऐसा किया है! कल से तू वहीं रह। मैं तुझे रोटी नहीं डालूंगी। व्यभिचारिणी रांड की औलाद कहीं का!" गंगम्मा सुनाकर चलती बनी। अब आगे कोई मजा न समझ दोनों पुरोहित और गांव के प्रमुख एक-एक कर चल दिये।

[2]

उसी दिन गंगम्मा बेटे को साथ लेकर देहात निकल पड़ी। उसका इस तरह जाना कोई नयी बात नहीं थी। अण्णाजोइस के पास मंदिर के द्वार की दूसरी चाबी रहने से उसे यह कहने में सुविधा होती थी कि उनकी अनुपस्थिति में वह द्वार खोलकर उसकी पूजा किया करता है।

सातु और उसके दोनों बच्चे नंजम्मा के पास ही रह गये। इनके लिए पर्याप्त मडुआ, लोबिया तो नंजम्मा के घर में था, लेकिन मडुए की रोटी खाने से उनके पेट में गड़बड़ी शुरू हो जाती थी। लोबिया दाल के साग से पेट में वायु हो जाती थी। रोज अन्न और अरहर की दाल बनाने की शक्ति नंजम्मा में नहीं थी। कभी कोई त्यौहार आता तो मोटा लाल चावल का अन्न पकाती और इलाखेदार आदि कोई उच्च अधिकारी आता तो बारीक सफेद चावल का अन्न और अरहर की दाल बना लेती। इतनी ही उसमें शक्ति थी। फिर भी दूसरा कोई चारा न समझ, नाराजगी प्रकट न कर नंजू उन्हें रोज अन्न और अरहर की दाल परोसती। अन्न देखने पर उसके बच्चे भी मचल उठते। चेन्निगराय क्यों चूकते? इन सबके लिए अन्न पकाये तो क्या बचा पायेगी? इस प्रकार घर खर्च निभाना उसके लिए मुश्किल हो गया था।

पंद्रह दिन बाद मां-बेटे गांव लौट आये। नंजम्मा को खबर लगी तो रात में दीप जलाकर पार्वती से बोली—"तू अपने चाचा को बुला ला। दादी के सामने मत कहना।" इस बारीकी को समझकर लड़की बुलाने गयी और अप्पण्णय्या को साथ लेकर ही लौटी। यहां उसने अपनी पत्नी को देखा तो एक ओर तो इच्छा हुई किंतु दूसरी ओर भय होने लगा। शर्म से एक खंभे के पास खड़ा हो गया। नंजम्मा ने उससे बातें कीं और बिठाया। सातु अंदर खाना बना रही थी।

"अप्पण्णय्या, यहीं भोजन कीजिए।" नंजम्मा बोली।

"मां…!"

"वे कुछ नहीं कहेंगी। रात को वे फलाहार में रोटी खा लेती हैं। उठिए, हाथ-मुंह धो लीजिए। चेन्निगराय भी उठे। नंजम्मा ने बच्चों को बिठाकर सातु से परोसने के लिए कहा। 'बस' या 'चाहिए' कहने में भी अप्पण्णय्या को संकोच हो रहा था। पूछने में सातु को भी शर्म आ रही थी और साथ ही अपमान या तिरस्कार महसूस कर रही थी। खाना खाते समय नंजम्मा और तंगम्मा आंगन में थीं। उसके बाद दोनों भाइयों ने तांबूल खाया। नंजम्मा भीतर गयी और थोड़ी देर तक सातु के कान में कुछ कहा। विधवा तंगम्मा भी उस बातचीत में शामिल हो गयी।

घर में धान आदि भरकर रखने के लिए एक कमरा था जिसमें अंधेरा रहता। द्वार वाले कमरे को साफ कर नंजम्मा ने चटाई बिछायी। सातु ने अपने साथ लाये हुए में से दो बिस्तर साथ-साथ बिछाये। अप्पण्णय्या जाने के लिए उठा तो नंजम्मा बोल उठी—"आज यहीं सोइये।"

इस अनपेक्षित व्यवहार से उसे खुशी तो हुई, किंतु डर भी लगने लगा। अनजाने ही कह उठा—"मां…!" नंजु बोली—"चाहें तो पार्वती और रामण्णा को मां के पास भेज देती हूं। उन्हें अकेली रहने में डर नहीं लगता। आप उस कोठार में जाकर सो जाइए।" लेकिन चेन्निगराय ने यह "सब सिरदर्द…तुझे करना है?" पत्नी से कहकर आंखें दिखायीं। रीछ द्वारा शिवपूजा भंग करने जैसी पति की भूमिका देखकर नंजू पति को आंखें फाड़कर देखती हुई बोली—"आप मुंह बंद करके बैठे रहिए। तिरुमले गौड़जी के घरवालों ने पीयूष दिया है। अंदर खीर बन रही है। बोलिए, आपको चाहिए कि नहीं?"

पीयूष की खीर का नाम सुनते ही चेन्निगराय तुरंत रसोईघर में घुस गये।

अप्पण्णय्या कोठार में प्रविष्ट हुआ। नंजू रसोईघर में आकर पति से बोली—"तैयार होने पर हम आपको बुला लेंगी। तब तक आप एक बार और तंबाकू खा लीजिए।" इस प्रकार पति को बाहर भेज दिया। अब सातु को अप्पण्णय्या के पास भेजकर नंजम्मा ने बाहर से दरवाजा बंद कर दिया।

इस प्रकार पीयूष की बात कहकर उसने समय का सदुपयोग कर लिया था। लेकिन अब वह सोचने लगी कि किस गाय या भैंस को लाकर पीयूष दुहकर खीर बनायी जाये ? फिर भी उसने विवेक नहीं खोया। आंगन में बिस्तर बिछाकर बच्चों को लिटा दिया। एक नारियल घिसा और चावल के साथ पीसकर उसमें दो भेली गुड़ मिलाकर खीर बनाने के बाद थोड़ा सादा दूध डाल दिया। तंगम्मा को बाहर भेज पति को अंदर बुलाया। पटवारीजी सोये नहीं थे, इंतजार में बैठे हुए थे। बुलाते ही उठकर अंदर गये और उकडूं बैठने के बाद, खीर का भगोना उसके सामने रखकर एक अल्यूमिनियम थाली रखकर बोली—"आप परोसकर खाइए। उनके घर की भैंस ब्याहे अब पंद्रह दिन हो गये। वह पीयूष फटा ही नहीं। फिर भी खीर अच्छी बनी है।"

चेन्निगराय ने एक कड़छी खीर थाली में डालकर चखी। पीयूष की मीठी खीर चटकार-चटकार कर खाने लायक थी। "मैं जाऊं आप खा लेंगे ?" नंजम्मा ने पूछा तो उसने 'हूं' कहने तक की जरूरत नहीं समझी।

सुबह उठते ही अप्पण्णय्या तालाब के चढ़ान की ओर गया। बाद में मंदिर में आकर मां से बोला—"मां, उन्हें भी यहीं बुला ले।"

"किसको ?"

"उन नुग्गीकेरे वालों को।"

गंगम्मा अवाक् रह गयी। एक मिनट में वह सारी बात समझ गयी। "हत् रांड के बच्चे, मैं सोच रही थी कि तू रात को द्यावलापुर में कोई यक्षगान देखने गया होगा ! क्या व्यभिचारिणी के साथ सोया था ?"

अप्पण्णय्या सिर झुकाये खड़ा था। दस-एक मिनट मनमानी ढंग से आशी-र्वचन देने के पश्चात् गंगम्मा बोली—"उसी व्यभिचारिणी ने कहा होगा कि हमें भी वहीं ले जाओ ?"

अप्पण्णय्या कुछ साहस कर बोला—"वह क्या कहेगी, मैंने ही कहा। ले आयेंगे, उन्हें वहां क्यों छोड़ें ?"

"हरामखोर, तू कहीं उन्हें यहां ले आने का वचन तो नहीं दे आया है ? ठहर, अण्णाजोइसजी से कहकर तुझे बताती हूं।" इतना कहकर वह तुरंत उठकर जोइस के घर जाकर छत के नीचे खड़ी होकर—"जोइसजी, जरा यहां आइए तो!"

यह पुकार सुनकर आसपास के सात-आठ आदमी इकट्ठे हो गये। जोइसजी बाहर आये तो वह बोली—"कल रात वह उस व्यभिचारिणी के साथ सोकर आया है। अब उन्हें भी हमारे घर में ले आने की आज कहता है। आप ही बताइए, क्या मंदिर में पति-पत्नी रह सकते हैं?"

"हनुमानजी तो पहले ही ब्रह्मचारी हैं। उनके मंदिर में पति-पत्नी का साथ रहना धर्म-निषिद्ध ही है। उसकी मति भ्रष्ट हो गयी है। ऐसा करेगा तो सबको मंदिर से बाहर निकाल दूंगा। ऐसा काम होगा तो गांव में पानी, फसल होनी चाहिए या नहीं?" कहकर अण्णाजोइस, मंदिर आकर इन्हें चेता कर चला गया। अप्पण्णय्या का चेहरा फक्क पड़ गया। लेकिन रात को प्राप्त सुख की कल्पना में पत्नी को छोड़कर रहना भी असह्य-सा लगा। अपूर्व धीरज बटोरकर भाभी के घर गया और उन्हें सारी घटना बतायी। उसके पीछे-पीछे गंगम्मा भी आ गयी और दरवाजे के बाहर खड़ी होकर चेन्निगराय और नंजम्मा को 'सहस्त्रनाम' सुनाये। चेन्निगराय जो सोये हुए रात की खायी खीर पचा रहे थे अब उठ बैठे। वे शायद पत्नी को डांटते, लेकिन तालाब की चढ़ान पर जाने की जल्दी में बिना कुछ कहे भागते-से चल दिये। गंगम्मा अपने बेटे को भी खिलाफ समझकर तुरंत अपने घर लौट पड़ी।

[3]

अप्पण्णय्या उस दिन भी भाभी के घर में ही रहा। इन दो-तीन दिनों में इस निर्णय पर पहुंचा कि वह अपनी पत्नी-बच्चों के साथ अलग रहेगा। उसकी सास भी साथ रहेगी, इसका निर्णय अलग से लेना जरूरी नहीं था। वह इतने वर्षों तक मां के साथ देहात-देहात घूमकर देशांतर जाने का अभ्यस्त हो चुका था, इसलिए उसने अब जीवनोपाय के लिए यों हिम्मत की कि भिक्षा लाकर बाल-बच्चों का पालन-पोषण करूंगा; मैं क्या मर्द नहीं हूं! रहने के लिए जगह की व्यवस्था की भी सोची।

इस गांव में कुरुबरहळ्ळी के गुंड़ेगौड़जी की बाड़-रहित एक बाड़ी थी जो हनुमान मंदिर से तीस गज की दूरी पर थी। न कोई उसके पत्तों को इकट्ठा करता और न कोई उपयोग ही। अप्पण्णय्या को लेकर नंजम्मा कुरुबरहळ्ळी गयी और गुंड़ेगौड़जी से बात की। उन्होंने स्वीकृति देते हुए कहा कि "अगर अप्पण्णय्या अपने ही खर्च से झोंपड़ी बांधकर रहना चाहे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।" अप्पण्णय्या चेन्निगराय के समान आलसी नहीं था। कोई उत्साहित करे और मार्ग दिखाये तो मेहनत करने की शारीरिक शक्ति और उत्साह दोनों उसमें थे। बहुत दिनों से विरत पत्नी के सहवास ने उमंग पैदा की। नंजम्मा का मार्गदर्शन मिला। सातु ने अपने पास का सेर-भर चांदी का पंचपात्र पच्चीस रुपये में बेचकर इन्हें पैसे दिये। अब उसने दस बांस, दस गाड़ी मिट्टी, पत्थर के दो खंभे खरीदे। खुद अप्पण्णय्या ने नाप लेकर, कमर तक दीवार उठायी। पत्थर के खंभों को गाड़कर बांस और बल्लियां बांधी। और इन पर लोगों से मांग कर छह-सात सौ घास की पिंडियां और नारियल के पत्ते फैला दिये। सुनार ने तीन रुपये में चार गज ऊंचा एक दरवाजा और कुंडी बना दी। शुभ दिन देखकर दूध उबला कर गृह-प्रवेश भी कर लिया। प्रवेश तक इन सबका खाना नंजम्मा के यहां ही पकता रहा था।

अब तो जीवन-मार्ग निर्धारित होना चाहिए। यही सोचकर, मां को छोड़, अप्पण्णय्या अब देहात की ओर अकेला ही जाता। घर-घर में शिवगौड़ को शाप देकर, कुछ न कुछ देने का आग्रह करता। वह द्वार पर झोली फैलाकर मांगने वाला भिक्षुक नहीं था, इसलिए देने वाले आध सेर से कम नहीं देते थे। इतने में सुग्गी (दूसरी फसल का मौसम) आ गयी। वह खेत में जाता। राशिपूजा के समय आगंतुकों को दान दिया जाय तो राशि बढ़ती है, ऐसे उनके मंतव्य थे। इस भावनावश अप्पण्णय्या को सूप-भर मिलता। कई बार एक ही खेत में गंगम्मा और अप्पण्णय्या दोनों मिल जाते, तो मां बेटे से बात नहीं करती और वह भी सिर उठाकर मां को नहीं देखता। 'दोनों अलग-अलग हैं, यह दिखाने के लिए वेश बदल कर आये हैं! दो-दो बार हम कहां से दें!' यह कहकर चिढ़ाने वाले किसान भी थे और बिना कुछ कहे, दोनों को देने वाले भी।

यही हाल देहातों में भी होता था। पहले जिन घरों में मां-बेटे साथ जाते थे, अब उन घरों में कोई एक पहुंच जाता। कुछ दिनों के बाद कुछ लोगों ने तो कह

दिया—"मां-बेटे अलग-अलग आयेंगे तो दो-दो बार हम कहां से देंगे !" यह जानकर गंगम्मा आस-पास के देहातों में पहले पहुंचने की कोशिश करती और चक्कर काटकर लौट आती। आखिर उसका तो एक ही पेट था, अर्थात् कम खर्च। अब उसके पास मड़ुआ, दाल, मिर्च आदि इतना जमा हो गया कि तीन वर्ष बैठकर खा सकती थी। अप्पण्णय्या को तो पांच पेट भरने थे और इसके अतिरिक्त एक विधवा। बूढ़ी के मांगने पर लोगों में जो दया उपजती थी, वह एक हृष्ट-पुष्ट पुरुष के मांगने पर नहीं उपज सकती थी। इसलिए अप्पण्णय्या से ऐसे पूछने वाले भी मिल जाते थे—"क्या हाथ-पैर टूट गये हैं। जो मजदूरी करके नहीं खा सकते ?"

शुरू-शुरू में पत्नी के साथ रहने में अप्पण्णय्या में बड़ा उत्साह रहा। चार दिन बीतने पर वह कुछ घट गया। दिन भर देहातों के चक्कर काटना, घरों की देहली चढ़कर उनकी बातें सुनना—उसके मन को अब हितकर नहीं लगता था। पहले मां के साथ रहता था तो मांगना मां का काम था। लाल साड़ी में बांध एक जगह लाकर वह दे देती थी तो अप्पण्णय्या उसे एक बोरे में भर कर ढो लाता था, यही उसका काम था। अब स्वयं मांगने की 'किट्-किट्' से वह मन ही मन व्यग्र हो उठता था।

एक दिन नंजम्मा अप्पण्णय्या के घर आयी। अप्पण्णय्या देहात की ओर गया हुआ था। इधर-उधर की बातें करने के बाद नंजम्मा कहने लगी—"आपकी जयलक्ष्मी और हमारी पार्वती हम उम्र हैं। उसे भी स्कूल में भर्ती करा दीजिए। रामकृष्ण को भी भर्ती करा दीजिए। चार अक्षर न सीखें तो बच्चों का क्या होगा ?"

"भर्ती करा देना चाहिए ?"

"मैं आपसे और एक बात कहना चाहती थी। सुना है कि लाये हुए मड़ुआ आप लोग बेच देती हैं, तो ऐसा न करें। सुग्गी के समय और उसके दो-तीन महीने बाद तक लोग धान देते हैं। जेष्ठ-आषाढ़ बीतने के बाद कोई भी धान का एक दाना नहीं देता। धान अब यदि खत्म हो जाय तो बाद में बड़ी मुश्किल होगी। सण्णेनहळ्ळी से मिट्टी के दो-एक कोठी मंगाकर इकट्ठा कर लिया करें।"

"इस बेकार मड़ुए को रखकर क्या करेंगे ? इसे कौन खाता है ?" विधवा गंगम्मा बोली।

नंजम्मा जानती थी कि मडुआ खाने से इन्हें पचता नहीं। लेकिन इस गांव में मडुआ न खाकर चावल खाने वाले कितने हैं? धीरे-धीरे आदत डालें तो अभ्यस्त हो जायेंगे। ऐसा किये बिना जीवन बिताना केवल जमींदारों के लिए संभव है। ये ऐसा कहें तो कैसे चलेगा? नंजम्मा ने अपनी तरफ से विवेक की बात की। विवेक की और भी दो-चार बात कह देना वह जरूरी समझती थी। उन सब को काफी पीने की आदत थी। कहते थे कडूर प्रदेश के होने के कारण बचपन से ही आदत थी। सातु पहली बार आयी थी तब सास के डर से किसी तरह दूर रही। अब काफी पीने वाले रामसंद्र में भी अधिक हो गये थे। रईस पी भी सकते हैं, लेकिन अप्पण्णय्या के चार सदस्यीय परिवार अगर दो बार भी काफी पियें तो कहां से लाया जाय?

"अगर आप लोग यह छोड़ दें तो बड़ी बचत होगी।"

"हम से यह नहीं होगा बाबा! सुबह उठकर खाली पेट कैसे रहा जाय? आप लोग तो केवल रोटी खाकर रह जाते हैं। हम ऐसे कभी नहीं रहे।" तंगम्मा बोली। नंजम्मा ने विषय को फिर वहीं रोक दिया।

एक दिन सातु जेठानी के घर आकर बातें कर रही थी। नंजम्मा पटापट सींके तोड़कर दो-तीन मिनट में एक के हिसाब से पत्तलें बनाकर डाल रही थी। "बहन, आप इतना सारा काम करती हैं! घर के काम के साथ, पटवारी की पोथियां भी लिखती हैं। पत्ते ढोकर लाती हैं और फिर पत्तलें बनाती हैं! हमसे नहीं होगा इतना!"

नंजम्मा बोली—"देख, दो-तीन महीनों से मैं तुझसे कहना चाहती थी लेकिन तुम लोग न जाने क्या सोचोगे, इसलिए चुप रही।"

"क्या बात है, कहिए?"

"तुम लोगों के घर में खाने वाले पांच हैं। कमाने वाला एक। वह भी भिक्षा मांग-मांगकर कब तक जीवन बिता सकेगा! कुछ अपना ही काम-धंधा करना पड़ेगा। स्वयं कुछ करने जाते, तो यह परिवार इस हालत में क्यों पहुंचता? तुम लोग भी कुछ करो। घर में तुम दो औरतें हो। घरेलू काम करके भी रोज आसानी से तीन सौ पत्तलें बना सकती हो, अभी सौ पत्तलों का सात आने का भाव है। सुना है तिपटूर से बहुत-सी लारियां बंगलूर जाती हैं। अगर महीने में तीस रुपये की भी कमायी हुई तो बहुत हुआ न!"

"लगातार ढाक के पत्ते लगाने से उष्णता नहीं होगी ?"

"आदत लगायें तो कुछ नहीं होता। उष्णता होने पर भी रात को सोते समय तलुवों में अरंडी तेल मल लें तो ठीक हो जाता है।"

तब सातु ने भी पत्ते लगाने का निश्चय कर लिया। दूसरे दिन जेठानी के घर आई और उसके साथ पत्ते जोड़ने लगी। नंजम्मा ने सौ पत्तलें बनाईं तो सातु अट्ठारह ही बना पायी। नंजम्मा ने प्रोत्साहन देते हुए कहा—"अभ्यास हो जाने पर जल्दी-जल्दी लगा सकोगी।" लेकिन अगले दिन उसके हाथ-पैर जलने लगे तो तंगम्मा ने बेटी को समझाया—"पति को चाहिए कि वह बाल-बच्चों का पालन-पोषण करे। तू पत्ते-वत्ते मत लगा बेटी।" बस, उसका पत्ता लगाना खत्म हो गया, इस बीच उसका मासिक धर्म बंद हो गया, उल्टियां शुरू हो गयीं।

सातु के पिता श्यामभट्टजी पुरोहित थे; और पुरोहित घराने के थे। अतः पवित्रता-अपवित्रता, आचार-विचार, कर्म आदि के बारे में तंगम्मा को अधिक जानकारी थी। गंगम्मा के घर में पहले से ही पवित्रता का अभाव था और नंजम्मा जो थोड़ा-बहुत करती थी, तो वह केवल बाहर के लिए था। भीतर वह भी नहीं निभा पाती थी। वह मटकी में दाल बनाती। अन्न पकाती, तो मिट्टी के पात्र में, क्योंकि पीतल के बर्तन की अपेक्षा उसे ठंडा समझती थी। किसान के लिए तो यह ठीक है, लेकिन ब्राह्मण भी ऐसा करते हैं! नंजम्मा के बच्चे कई बार महादेवय्यजी द्वारा दिया खा चुके हैं। तीसरी संतान चार साल का विश्व, महादेवय्यजी द्वारा स्वजातियों के घरों से प्राप्त भिक्षांत उनकी गोद में बैठकर कई दिनों तक खाता रहा है। यह जानते हुए भी नंजम्मा ने बच्चों को मार-पीटकर समझाया नहीं। तंगम्मा को यह सारी बातें पसंद नहीं आती थीं। सातु को भी नहीं।

ग्राम के पुरोहितद्वय अय्याशास्त्री और अण्णाजोइस की पत्नियां तो आचार-व्यवहार, पवित्रता का पालन करने वाली महिलाएं थीं। अण्णाजोइसजी की पत्नी मासिक धर्म का पालन करती तो पति की दृष्टि में ही नहीं पड़ती। नंजम्मा तो मासिक धर्म के दिनों में भी छिपकर खाना पकाती। अण्णाजोइस की पत्नी वेंकटलक्ष्मी ने जब यह बताया कि वह झूठमूठ ही बोलती है कि पार्वती ने बनाया है तो तंगम्मा ने निश्चय किया कि अब कभी उसके घर नहीं जायेगी। अन्य जातियों की औरतें मासिक धर्म के पहले दिन ही स्नान करके अंदर जाकर खाना

पकाती हैं। ब्राह्मण होकर ऐसा कर्म करने के लिए निम्न जातियां मिट गयी हैं क्या ? थू:! "

एक दिन तंगम्मा और सातु दोनों अण्णाजोइसजी के घर गयीं तो जोइसजी ने एक बात उठा दी। "पैतृक जायदाद है तो दोनों भाइयों को सामान हिस्सा मिलना चाहिए। है न ? शेष जायदाद तो चली गयी। पटवारी अधिकार का उपयोग केवल चेन्निगराय कर रहा है। अप्पण्णय्या को कुछ नहीं मिले, यह कैसा अन्याय है ? उसका वर्षासन दोनों भाइयों में बंटना चाहिए। सरकार का कानून भी है। इस तरह कितने दिन तक वे धोखा दे सकते हैं ?"

तंगम्मा के कान खड़े हो गये। हमें जो मिलना चाहिए, उसके बारे में एक शब्द भी न कहकर, हमेशा विवेक की बात करने वाली जेठानी नंजम्मा के प्रति सातु के भीतर ही भीतर ईर्ष्या पैदा हो गयी सारा दिखावा इसी का है—वह मन ही मन बोली—

"आप और अप्पण्णय्या पूछ लें। अगर वे इंकार करें तो तिपटूर जाकर अमलदार साहब के पैर पड़कर निवेदन करें। वे दिलवा देंगे।" जोइसजी ने सलाह दी।

उस दिन शाम को अप्पण्णय्या देहात से लौटा तो सातु ने सारी बातें बता दीं। "हमारे भी बच्चे हैं। हमें भी पैतृक भाग में से कुछ नहीं मिलना चाहिए क्या ? एक सौ बीस रुपये वर्षासन के आते हैं तो उसका आधा साठ रुपया मिलना ही चाहिए। इसके अलावा दस्तूरी भी आती है, वह अलग।"

अप्पण्णय्या कुछ जानता नहीं था, लेकिन उसने यह सुना था और देखा भी था कि पटवारी-कार्य, पटेल-कार्य बड़े बेटे को मिलता है। लेकिन सरकार का कानून भिन्न हो सकता है। यह सोचकर कि अण्णाजोइस की अपेक्षा मैं अधिक क्या जानूं, वह रात में ही जोइसजी के घर जाकर पूछने लगा। जब उन्होंने बताया कि "बड़े-छोटे भाइयों को समान हिस्सा मिलना चाहिए, इतने साल तेरी आंखों में धूल झोंककर वे खुद खा गये, "तो वह आग-बबूला हो उठा। दौड़ा-दौड़ा भाई के घर आया। चेन्निगराय घर पर नहीं थे। मिट्टी के तेल के दीये के सामने बैठी पार्वती और रामण्णा को पढ़ाती हुई भाभी के सम्मुख खड़े होकर पूछने लगा—

"ये सब धोखे अब मैं नहीं सह सकता। वर्षासन में आधा मुझे भी देना चाहिए।"

नंजम्मा ने उसकी बात समझ न सकने के कारण पूछा—"किस वर्षासन में ? आप क्या कह रहे हैं ?"

"पटवारी-कार्य का। मेरे बाप ने सिर्फ चिन्नय्या को ही पैदा नहीं किया, मुझे भी पैदा किया है। अगर आधा हिस्सा नहीं दिया तो मैं अमलदार के पास जाऊंगा, समझे?" फिर यह सोचकर कि भाई महादेवय्यजी के मंदिर में होगा, वह वहां गया। रास्ते-भर उसकी जबान बड़बड़ाती रही—'मेरे बाप ने मुझे भी पैदा किया है, मुझे भी वर्षासन में आधा मिलना ही चाहिए। मैं देहातों में चक्कर काट-काटकर भिक्षा मांगूं और ये हरामखोर वर्षासन हजम कर, ऐशोआराम करें!' उसकी यह बड़बड़ाहट इतनी जोर की थी कि लोग भी सुन लें।

नंजम्मा को पता नहीं लगा कि वह महादेवय्यजी के मंदिर में गया है। आखिर यह माजरा क्या है, यह समझने के लिए वह अप्पण्णय्या के घर गयी तो वह वहां नहीं था। उसने सातु से ही पूछा—"अप्पण्णय्या हमारे घर आये थे। कहते थे कि वर्षासन में हमें भी आधा मिलना चाहिए और भी न जाने क्या-क्या कह गये हैं? आखिर बात क्या है?"

"दोनों भाई-भाई हैं तो इन्हें नहीं मिलना चाहिए क्या? अगर इन्हें अब तक मालूम नहीं था तो आपको ही आधा हिस्सा नहीं देना चाहिए था? इस जमाने में किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता!" सातु बोली।

"सरकारी कानून ऐसा नहीं है। तुम लोगों को किसने भड़काया है? वर्षासन एक सौ बीस रुपये जरूर आते हैं, लेकिन उसके लिए खर्च कितना होता है पता है? हिसाब-पुस्तकों और स्याही में कितना खर्च होता है। रात की नींद हराम कर, लाइनें खींच-खींचकर कितना लिखना पड़ता है? बिना सोचे-समझे अप्पण्णय्या का रास्ते-भर इस तरह चिल्लाना क्या ठीक है?"

"हिसाब का क्या लिखना! चाहें तो मैं लिख दूंगी। स्वयं मरे बिना स्वर्ग कहां दिखता है?"

अब बात न बढ़ाने के विचार से नंजम्मा घर लौट आई। चेन्निगराय मंदिर में नहीं थे। तालाब की चढ़ान के रास्ते घर लौटकर संध्यावंदन के लिए बैठे थे। बच्चे लैंप के प्रकाश में अभ्यास कर रहे थे। संध्यावंदना में बाधा न डालने की सोचकर नंजम्मा भीतर गयी। रसोईघर में झाड़ू लगायी, थाली रखी, भगवान के समक्ष दीप जलाया और प्रदक्षिणा लेकर हाथ जोड़े। अप्पण्णय्या के स्वभाव से वह अपरिचित नहीं थी। लेकिन सातु के व्यवहार से उसे आश्चर्य हुआ। उसी ने पति के कान भरे हैं, लेकिन उसे किसने भड़काया होगा? कोई भी हो, किंतु इसे

इस तरह नहीं बदलना चाहिए था। इस जमाने में किसी की मदद नहीं करनी चाहिए। लोग खाये नमक की याद ही नहीं रखते। इस तरह सोचती हुई वह चुपचाप बैठ गयी।

इतने में अप्पण्णय्या के आने की आवाज हुई। यह भी लगा कि उसके साथ आठ-दस लोग और भी आये हैं। पीछे से सास गंगम्मा की आवाज भी सुनाई पड़ी। नंजम्मा ने बाहर आकर देखा तो अण्णजोइस, अय्याशास्त्री, रेवण्णशेट्टी, तेली शिंगा, भूतपूर्व पटवारी शिवलिंगा आदि पूरी पंचायत इकट्ठी हुई है। लेकिन पटेल शिवेगौड़ नहीं था। चेन्निगराय बीच के कमरे में बैठकर संध्यावंदन पूरी कर उठे। पंचपात्र रसोईघर के भीतरी द्वार पर रखा और पंछा ओढ़ लिया। नंजम्मा का बाहर आना हुआ ही था कि गंगम्मा ने शुरू कर दिया—"दूसरी जमीन होती तो दादी का हिस्सा नहीं निकालते? पुण्यात्मा ने इन दोनों को पैदा किया था, यह सच है; लेकिन क्या यह झूठ है कि उन्होंने मेरे गले में मंगलसूत्र पहनाया था? वर्षासन में मुझे भी एक हिस्सा मिलना चाहिए। रेवण्णशेट्टी, तुम ही कहो!"

रेवण्णशेट्टी बोला—"शिवलिंग पटवारी कार्य कर चुके हैं, इसलिए वे सारी बातों से वाकिफ हैं। उन्हें ही न्यायासन पर बैठने दीजिए।"

शिवलिंग फुर्ती से उठा और खंभे के पास बैठकर पूछा—"चिन्नय्या, तुम क्या कहते हो?" चेन्निगराय अब तक यह सब कुछ समझ तो गये थे लेकिन क्या कहे यह उनकी समझ में नहीं आ रहा था। तो उन्होंने पत्नी की ओर संकेत कर 'उससे पूछिए' कहकर बैठ गये। "आप ही बताइए बहन" अपलक दृष्टि से नंजम्मा का चेहरा देखते हुए रेवण्णशेट्टी बोला। फिर एक मिनट बाद उसने कहा—"डरिये नहीं!"

सातु और तंगम्मा दोनों आकर बाहर दरवाजे के पास खड़ी हो गयी थीं। नंजम्मा का क्रोध भड़का। सबको एक साथ बोली—"आप लोगों को यहां किसने बुलाया है? दूसरों के घर के बारे में तो दौड़े आते हैं, क्यों नहीं अपने-अपने घरों के हाल देखते और इज्जत से रहते? अब आप सब बाहर जाते हैं या इज्जत उतारूं?"

ऐसे व्यवहार की किसी को अपेक्षा नहीं थी। तेली शिंगा, बाह्य मोहल्ले का गुरुवय्या और कुछ लोग विषय से पूरी तरह परिचित नहीं थे। "पंचायत बैठानी है,

आइए" अप्पण्णय्या ने इतना कहकर रास्ते पर से इन्हें बुला लाया था और ये भी आ गये थे। "गांव का पटवारी-कार्य का हिसाब इनके पास है। हम शत्रुता क्यों मोल लें।" इतना कहकर वे सब चलते बने। उनके जाते ही अन्यों का धैर्य भी कम हो गया। "आप लोग चुपचाप चले जाते हैं या नहीं ?" नंजम्मा ने दुबारा कहा तो शिवलिंगा, रेवण्णशेट्टी भी चल दिये। "अप्पण्णय्या किस वरफोड़ू ने आपको भड़काया है ?" नंजम्मा ने फिर पूछा। अप्पण्णय्या ने कोई उत्तर नहीं दिया। लेकिन अण्णजोइस उठते हुए बोले—"संध्यावंदन का समय हो रहा है। अपने-अपने घर का मामला है। मना करने पर भी अप्पण्णय्या ने सारे गांव को बुला लिया। इसे अक्ल कब आयेगी ?" और चल दिये। अय्याशास्त्रीजी ने भी ओढ़ी हुई शाल ठीक करते हुए उसका अनुसरण किया।

"अप्पण्णय्या, पटवारी-अधिकार सदा बड़े बेटे का होता है। चाहें तो आप तिपटूर जाकर पूछ आइए।" नंजम्मा के कहते ही वह उठा। पंचों के चले जाने पर उसे पानी में डुबाया-सा लगने लगा था। "इस छिनाल की जबान देख! गांव के लोगों को नीचा दिखाया न! दिखाने दो, मैं अपना हिस्सा थोड़े ही छोड़ूंगी।" कहती हुई गंगम्मा चली गयी।

खाना खाते समय चेन्निगराय ने इस संबंध में कोई बात नहीं की। "आपने उनकी चालें देखीं ?" नंजम्मा ने कहा तो मानो इस विषय से उनका कोई संबंध ही न हो, इस रुख से वे बोले—"कहने दो उनको" और दोपहर के हरे पत्तों की भाजी थाली में उंडेल ली। उस दिन रात को नंजम्मा को ठीक तरह से नींद नहीं आयी। एक ओर तो सास के बदलते रंग को देखकर व्यथा हो रही थी और दूसरी ओर शंका भी उठ रही थी कि कहीं सचमुच उनको हिस्सा न देना पड़े। आधी रात को सूझा कि तिम्लापुर जाकर द्यावरसय्यजी से पूछना चाहिए।

पौ फटते ही पति को उठाया तो वे चादर के अंदर से ही बड़बड़ाये—"मुझसे नहीं होगा। तू ही हो आ।" पार्वती और रामण्णा को उठाया। हाथ-मुंह धुलवा-कर, थोड़ा सत्तू मिलाकर खिलाया और फिर उन्हें अपने साथ लेकर घर से निकल पड़ी।

वृद्ध द्यावरसय्यजी की तबीयत आजकल अच्छी नहीं रहती थी। इसलिए ठंडी में सोये ही रहते थे। सूर्योदय के समय नंजम्मा को आई देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। गत दो वर्षों से वह यहां नहीं आई थी। लेकिन वे नंजम्मा से खुश थे कि

वह स्वतंत्र रूप से पटवारी-कार्य का हिसाब-किताब संभाल रही थी। अब उसके आने का उद्देश्य जानकर वे बोले—"इसमें कोई शंका नहीं है, मैं यह अच्छी तरह जानता हूं। केवल ज्येष्ठ पुत्र का ही इस पर अधिकार है। महाराज का सिंहासन भी वैसा ही है न? राज्य को दो भाइयों में बांटते हैं क्या?"

नंजम्मा और बच्चों के स्नान के बाद इन्हें नाश्ते कराकर वे बोले—"तुम्हारे मन को तसल्ली होनी चाहिए। कंबनकेरे अधिक दूर तो नहीं है, यहां से तीन मील है। तुम वहां जाकर इलाखेदार से पूछ लो। उसके बाद मन में कांटा भी नहीं रहेगा।"

उन्होंने इन्हें रास्ता दिखाने के लिए एक आदमी साथ भेज दिया। बच्चों को पैदल चलाकर नंजम्मा ने तालुका-स्थान कंबनकेरे की ओर कदम बढ़ाये। इलाखेदार को वह पहचानती थी। जब भी वे रामसंद्र आते तो उसी के यहां ठहरते थे। अन्न, दाल, चटनी बनाकर उन्हें परोसती थी। काफी नरम स्वभाव के थे। नंजम्मा को 'बहन' कहकर ही वे खाना शुरू करते। इसलिए बिना भय और हिचकिचाहट के उनके घर पहुंची। इन्हें देखकर उन्होंने तड़ाक से कहा—"क्यों बहन, यह पूछने ही आई है न कि पटवारी के वर्षासन में से छोटे भाई को भी हिस्सा देना चाहिए या नहीं?"

नंजम्मा को आश्चर्य हुआ। उसे मूकवत् खड़ी देखकर वे फिर बोले—"अभी आधा घंटा भी नहीं बीता होगा, तुम्हारा देवर अप्पण्णय्या और उसकी पत्नी यहां आये थे। मुझसे बोलने से दोनों डरते थे। दरवाजे के बाहर ही हाथ जोड़कर आड़ में खड़े रहे। अण्णाजोइसजी, शिवलिंगे गौड़ इन दो व्यक्तियों ने उनकी ओर से बातें कीं। मुंह पर थूककर चारों को साथ भेज दिया। आप कोई चिंता न करें। इस बात को कौन नहीं जानता कि इस पर केवल ज्येष्ठ पुत्र का ही अधिकार होता है। इतनी बात पूछने के लिए इतनी दूर पैदल चलकर क्यों आयीं?"

नंजम्मा के मन को शांति मिली। "धूप में आयी हैं अंदर चलिए।" कहने के बाद अपनी पत्नी से बोले—"सबको भोजन कराना।" फिर धूप घटने पर उन्हें जाने की अनुमति दी। घर आई हुई इस सुहागन को तांबूल के साथ एक चोली का कपड़ा, नारियल और बच्चों के हाथ में गुड़ के टुकड़े दिये गये।

सीधे चलने पर भी कंबनकेरे और रामसंद्र के बीच पांच मील का रास्ता था। रास्ते में बच्चे पैर दुखने पर हठ करने लगे थे। इलाखेदार की बातों से मिली

तसल्ली के जोश में बच्चों का साहस बंधाती हुई दोनों हाथों से दोनों बच्चों के हाथ पकड़ धीरे-धीरे बढ़ती रही और अंधेरा छाने से पहले ही गांव पहुंच गयी।

[4]

जब से अप्पण्णय्या पत्नी के साथ अलग रहने लगा था तब से गंगम्मा को अकेलापन अखरने लगा। यह भावना भी उठी कि अपने कोख से जन्मे बेटे ने ही अपने को दूर कर दिया। इस पराजय को वह कैसे सहती ? उसने यह भी अर्थ लगाया कि बेटे को मुझसे अलग करने में बड़ी बहू ने ही झोंपड़ी बांध लेने में उसकी मदद की थी।

उसकी सास, पत्नी, बच्चों को आये डेढ़ साल हो गया। देहातों में चक्कर काटकर, भिक्षा मांग कर, लोगों की अनेक बातें सुनकर वह भी ऊब गया था। एक दिन वह कॅचेगौड़ ग्राम के कल्लेगौड़ के घर गया। गौड़ घर पर था, लेकिन इसे बैठने के लिए पाट नहीं दिया। गौड़ के बिना कहे ही वह जमीन पर ही बैठ गया। थोड़ा मडुआ देने के लिए निवेदन किया ही था कि गौड़ गरजा—"तुम पागल तो नहीं हो ! तुम्हारी मां अभी ले गयी, और अब तुम आ गये ! मडुआ मुफ्त थोड़े ही आता है ! रोटी देते हैं, आओ खेत में काम करो। दो सेर धान भी ले जाओ।"

अप्पण्णय्या मौन बैठा रहा। गौड़ फिर बोला—"चुपचाप उठकर जाते हो या गर्दन पकड़कर बाहर धकेल दूं ?"

अप्पण्णय्या का दुख उमड़ आया। गत डेढ़ वर्षों से वह इस तरह की बातें तो कई घरों से सुन चुका था, लेकिन गर्दन पकड़ कर धकेल देने की बात अब तक किसी ने नहीं कही थी। अप्पण्णय्या अपने सामने रखी हुई कोंछ और छोटे बोरे को उठाकर बाहर आ गया। बाहर निकलते ही उसे रोना आ गया। आंसू पोंछते हुए दस कदम आगे बढ़ा कि सामने कोंछ भर मडुआ बांधे गंगम्मा मिली। इतने बड़े बेटे के आंसू बहते देखकर उसका कलेजा बिंध गया। "क्यों मेरे बेटे, रो क्यों रहा है ?" मां का पूछना था कि उसकी रुलाई और बढ़ गयी। फिर सारी बातें बताकर पूछा—"कल्लेगौड़ को ऐसा कहना चाहिए था ?"

"अप्पण्णा, आ। नंदी मंदिर में बैठकर बातें करेंगे।" बेटे को साथ लेकर और मंदिर के बरामदे में बिठाकर बोली—"मां और बेटा दोनों मांगने जाते हैं। वे भी क्या करें ! बेटा, तू क्यों वहां मांगने गया ?"

"न जाऊं तो गुजारे के लिए क्या करूं ?

"हाय री मेरी किस्मत ! मेरी कोख से पैदा होकर तू गुजारे के लिए मुसीबत झेल रहा है ! इतने दिनों तक राजकुमार की तरह तेरा पालन नहीं किया ! देहातों में चक्कर काट-काटकर भिक्षा मांगी ! इन छिनालों को पालना यह कैसी तेरी किस्मत है ? तू उनकी चिंता में दिन भर घूम-घूमकर भिक्षा मांग मडुआ लाता है और ये उसे बेचकर बारीक चावल खरीद कर अन्न, तूवर दाल का सांभर बनाकर भर पेट खाती हैं ! साथ उन सबको काफी चाहिए ! इन छिनालों की रंग-रंगीली साड़ियां देख और स्वयं लपेटी हुई इस पुरानी धोती को भी देख ! रांड को अपने सुख के अलावा भड़वे के सुख-दुख का क्या करना ?"

अप्पण्णय्या को मां की बात सही लगी। पत्नी और बच्चों के आने से पहले उसने कभी भिक्षा नहीं मांगी। उसकी मां ही मांगा करती थी। वह तो गांव के बाहर, तंबाकू खाते हुए घूमता रहता और जब मां मांग-मांगकर धान लाती तो एक बोरे में भर कर लाना उसका काम था। इस प्रकार तीन महीने देहात घूमे तो मां-बेटे का परिवार साल-भर बैठकर सुख से खा सकता था। "अपनी पत्नी समझकर तू उसे पालता है। बेशर्म होकर बैठी, उस छिनाल सास को तू क्यों पाल रहा है ?"

उस दिन अप्पण्णय्या मांगने दूसरे के घर नहीं गया। मां ने जो कुछ जमा किया था, वह अपने बोरे में भरकर बांधकर सिर पर रख लिया। वजन ढोना उसके लिए कोई मुश्किल काम नहीं था। रास्ते में गंगम्मा बोली—"वह महादेवय्य तो जन्म देने वाली मां का नाड़ा खोलने वाला हरामखोर है। उसने तुझसे झूठा प्रमाण करा लिया और तू मान भी गया ! तू उस गांव में एक-दो बार भले ही गया हो, लेकिन तू कैसे जानता है कि वह बच्चा तुझसे ही जन्मा है या सातु उसी समय गर्भिणी हुई थी ?"

अप्पण्णय्या ने कोई उत्तर नहीं दिया। चुपचाप भार ढोये चलता रहा। गांव नजदीक आने पर गंगम्मा बोली—"तू मेरे पास आ जा। पहले जैसे ही सुख से रह।"

बेटा फिर से मां के पास रहने आ गया। उसने कोई काम नहीं किया। चुपचाप सो गया। गंगम्मा ने कांदा और एक फांक लहसुन छीलकर पीसा। लोबिया दाल का साग बनाया। मडुए का गरम-गरम लोंदा तैयार होने पर बेटे को जगाया।

वह खाने बैठा तो उसे मानो डेढ़ वर्ष पहले जैसा स्वर्ग-सुख लगा। लोंदा पहले से ही उसे बहुत भाता था। छिलका निकाली लोबिया दाल के साग से बढ़कर इस संसार में और कौनसा भोजन है? उसकी पत्नी और सास ने घर में एक दिन भी लोंदा नहीं बनाया था। कहते हैं लोबिया दाल वायु-विकार युक्त है, दूसरे लोग ही खाते हैं। बहन···, छिनालों को··· ! मन-ही-मन गालियां देकर, भरपूर साग के साथ लोंदा खाया।

उस दिन के बाद वह पत्नी के घर नहीं गया। पहले दिन तो पत्नी ने सोचा कि देहात से नहीं लौटे, लेकिन बाद में पता लगा कि वे मां के पास रहने लगे हैं। वह खुद वहां जाकर नहीं बुला सकती थी ; इसीलिए तीसरे दिन अपने लड़के रामकृष्ण को भेजा तो उसे हनुमान मंदिर के दरवाजे में ताला लगा मिला। मां-बेटे पंद्रह दिन तक गांव नहीं लौटे। बेचने के लिए घर में मडुआ नहीं था। चावल जितना था, खत्म हो गया था। काफी पाउडर भी नहीं था। तालाब के पीछे गन्ने के कोल्हू की कढ़ाई उतारते समय जयलक्ष्मी और रामकृष्ण की लायी हुई गुड़ की भेलियां अवश्य बची थीं। लेकिन गुड़ से ही तो काफी नहीं बनती। ! अप्पण्णय्या का मां के साथ फिर से रहने की खबर इनसे पहले गांव वालों को लग गयी थी। दुकान से उधार भी नहीं मिलता। अब क्या किया जाय? उपवास भी नहीं रहा जा सकता! काफी पिये बिना सिरदर्द नहीं उतरता। घर में एक बड़ा पंचपात्र था, उसे ही काशिबड्डि महाजन के पास गिरवीं रख दो रुपये लिये। एक रुपये के आठ सेर चावल, दो आने का काफी पाउडर और एक आने का दूध खरीद कर लाया गया।

अप्पण्णय्या मां के साथ गांव लौटा। वह पत्नी के पास नहीं आया। सातु चार महीने की गर्भवती थी, इसीलिए रामकृष्ण को पति के पास भेजा। "कह देना कि वह अब नहीं आयेगा। जिस भडुवे से उसने तुझे जन्म दिया है, उसी से अनाज लाकर डालने के लिए कहे।" ऐसा कहकर गंगम्मा ने बच्चे को लौटा दिया।

लड़के ने घर आकर मां से दादी की कही बातें बता दीं। सातु को गुस्सा आ गया। उसकी मां तंगम्मा भी आग बबूला हो उठी। "मां, तुम बीच में न पड़ो।" बेटी के कहने पर भी तंगम्मा हनुमान मंदिर के सामने खड़ी होकर गुस्से में बोली —"इतने दिनों से घर में खाने को नहीं है। बीवी-बच्चों को पालने का सामर्थ्य नहीं था तो किस पुरुषार्थ के लिए शादी की।"

"व्यभिचारिणी पत्नी के साथ मेरा बेटा जिंदगी नहीं गुजारेगा, समझी पुरोहि-

तानी !" गंगम्मा ने उसी आवाज में जवाब दिया।

"मेरी बेटी व्यभिचारिणी क्यों बनने लगी ! तूने ही व्यभिचारिणी बनकर बेटे को जन्म दिया होगा! हमने तुझे इज्जत दी, लेकिन तू अपना कुतिया-स्वभाव थोड़े ही छोड़ेगी !" तंगम्मा कह रही थी कि सातु आ पहुंची। "मां, तुम क्यों बीच में पड़ती हो। उन्हें कुछ भी कहने दो। उनका पाप उन्हें ही खायेगा।" मां को समझाने लगी कि गंगम्मा बोली—"अप्पण्णय्या, सुनी तूने इसकी बात ? पहले तो मां को पढ़ाकर भेजा और अब वह मेरी बात को पाप कहती है। पति की गैरहाजिरी में बच्चे को जन्म देना पाप नहीं है ?" अप्पण्णय्या गुस्से से भरा बाहर आकर चिल्लाया—"री, तेरी चप्पल से पूजा करता हूं, देख छिनाल ! तू समझती है कि मैं नहीं जानता तेरे चालचलन !" तंगम्मा और सातु डरकर अपने घर की ओर भागीं। गंगम्मा बोली—"तू वहां देख रहा है ? उसका मंगल-सूत्र छीन ला और इस गांव से भगा दे उन्हें। वह घर तेरा बांधा हुआ है, लगा दे आग उसमें।"

अप्पण्णय्या उन्हें भगाने गया। सातु झुककर दरवाजे से अंदर जाना ही चाहती थी कि अप्पण्णय्या का हाथ उसके गले पर पड़ गया। पीछे जो मणिमांगल्य था, उसके हाथ में आते ही एक झटके में खींचा तो धागा टूट कर मणियां जमीन पर बिखर पड़ीं। मांगल्य बंदूक मणियां धागे में ही रह गयीं। गर्दन के दाहिने भाग से खून निकलने लगा तो सातु "ताय ! हाय ! मैय्या !" चिल्लाती हुई नीचे गिर पड़ी। अप्पण्णय्या सीधा अंदर घुसा। रसोईघर में चूल्हा जल रहा था। जलता हुआ एक नारियल का तना उठाकर। छत के नारियल के पत्तों में लगा दी। छत भीतर से जल उठी। धुआं फैलने और ज्वालाएं ऊपर उठने लगीं। शोर-गुल मच गया। रास्ते के लोग एकत्र हो गये।

"हमारा सारा सामान जल रहा है, बाहर निकालो कोई !" तंगम्मा चिल्लाई। लोग मदद करने लगे। अंदर से बर्तन, कपड़े, टोकरी, पाट, चक्की जो भी मिला, जल्दी-जल्दी बाहर लाकर दूर पटकने लगे। नारियल के पत्तों के घर में लगी आग पानी से बुझाना बेकार ही था। वैसे भी पास में पानी नहीं था। डेढ़ साल पहले अप्पण्णय्या ने ही कुदाली चलाकर, मिट्टी की दीवारें बनाई थीं और इधर-उधर से नारियल के पत्ते इकट्ठे करके जो घर बांधा था, वह अब उसकी हाथों से लगी आग से आध घंटे में राख बनकर ढह गया। केवल चारों ओर की दीवारें और

पत्थर के दो खंभे लपटों से काले होकर खड़े थे।

"देखा छिनाल, क्या किया मैंने ?" अप्पण्णय्या शेर-सा गरजा।

"तेरा हाथ टूट जाये"—गंगम्मा कह रही थी कि होश में आकर दूर खड़ी सातु बोली—"मां, तुम कुछ मत बोलो, तुम्हें मेरी कसम है।"

"उस हरामजादी के मंगलसूत्र को छीन लिया है, अब से वह मेरी पत्नी नहीं और मैं उसका पति नहीं। व्यभिचारिणी कहीं की"—कहते हुए और हाथ में पकड़े मंगलसूत्र को ऊपर उठाकर दिखाते हुए अप्पण्णय्या ने गांव की गलियों का एक चक्कर काट दिया।

घर में आग लगने पर नंजम्मा भी दौड़ी आयी थी। दूसरे के साथ उसने भी भीतर से चीजें बाहर निकालने में मदद की थी। अब क्या करना चाहिए, क्या कहना चाहिए—उसे समझ नहीं आ रहा था। सातु ही पास आकर बोली—"दीदी, आप ही मेरा सहारा हैं।" नंजम्मा समझ न पायी कि वह किस तरह इनका बन सकती है। वह यह जानती है कि ऐसी स्थिति में अप्पण्णय्या से कुछ कहना समझदारी नहीं होगी और सास गंगम्मा से बोलना तो बस की बात नहीं।

"मैं क्या करूं, तुम ही बताओ ?" उसने पूछा।

"अभी दो-एक दिन आपके घर में रहेंगे और उसके बाद कुछ किया जा सकता है।"

'ना' करना नंजम्मा के लिए असंभव था। "इन सारे सामानों को हमारे घर तक पहुंचा दो भाई" वहां उपस्थित लोगों से नंजम्मा ने निवेदन किया और स्वयं भी हाथ बंटाया। सारा सामान घर के एक कोने में रख दिया गया। नंजम्मा रसोईघर में घुसी। वे मडुए की रोटी खाने वालों में नहीं है! इसलिए उसने त्यौहार-बार के लिए रखे चावल ही निकालकर भिगोये। घर में तूअर की दाल भी नहीं थी। पार्वती को भेजकर, चार आने की एक सेर दाल मंगवायी।

बड़ी बहू के घर उन सबके जाने से गंगम्मा तिलमिला उठी। 'वह जादूगरनी हरामजादी है! फिर कुछ करके मेरे लाड़ले को जाल में फंसायेगी।' उसने सोचा। तुरंत अण्णाजोइस के घर जाकर पूछा—"जोइसजी, खबर मिली न ?"

"नहीं तो! क्या बात है ?" गंगम्मा के मुंह से ही सविस्तार जानने के ख्याल से जोइस बोला।

बेटे द्वारा पत्नी का मांगल्य छीन लेने का साहस सविस्तार बताने के बाद

गंगम्मा बोली—"जिसका मांगल्य निकाल दिया है, उसे बड़ी बहू ने अपने घर में प्रवेश दे दिया है। तो पंचायत बुलाकर दंड नहीं देना चाहिए क्या ? आप ही बताइए ?"

जोइसजी को मानो धर्मशास्त्र का एक नया विषय मिल गया। उसने मन ही मन निश्चय किया कि पंचायत बुला कर नंजम्मा को कम से कम पच्चीस रुपयों का जुर्माना कराना चाहिए। लेकिन वह उस दिन वर्षासन में आधे हिस्से के लिए बुलाई गयी पंचायत को नंजम्मा द्वारा खरी-खोटी सुनाये और दूसरे दिन इलाकेदार के हाथों प्राप्त मंगलारती की याद आने पर क्षण भर के लिए हिचकिचाया। तब वह अपमानित हुआ था। अब उसने उसका बदला लेने का निश्चय किया। गंगम्मा को वहीं बैठने के लिए कहकर वह अपने चाचा अय्याशास्त्रीजी के घर गया। ऐसे सुसंदर्भ में वृद्ध शास्त्रीजी चुप बैठने वाले नहीं थे। 'यह ब्राह्मणत्व का प्रश्न है, ब्राह्मण-धर्म बचना चाहिए या मिटना चाहिए ?'

ये दोनों धर्मपालक गांव के अन्य चार ब्राह्मणों को साथ लेकर नंजम्मा के घर आये। साथ में गंगम्मा और अप्पण्णय्या भी थे। नंजम्मा क्या जाने कि ये सब न्याय करने के लिए आये हैं। अण्णाजोइसजी ने बात प्रारंभ की—"मांगल्य खोई हुई स्त्री, विधवा के समान है। लेकिन पति के होते हुए वह विधवा कैसे हो सकती है, इसीलिए वह जीवित रहकर भी मृतक समान है। ऐसी स्त्री का मुंह भी नहीं देखना चाहिए। और आपने तो उसे घर में प्रवेश दे दिया है। यह गलती की। उसका प्रायश्चित करना चाहिए। आपको जुर्माना भरना होगा।"

यह सुनकर चेन्निगराय घबरा गये। "मैं कुछ नहीं जानता जी ! यही उन सब को लायी है। मैं, चाहूं तो अब भी उसे गर्दन पकड़ कर बाहर धकेल सकता हूं।"

"तब तो ठीक है, लेकिन अब जो प्रवेश करा दिया है, उसका जुर्माना तो देना ही पड़ेगा।"

"कितना देना होगा ?"

"कितना, चाचाजी ?" अण्णाजोइसजी ने पूछा तो अय्याशास्त्री जी बोले—' "बिचारे वे भी गरीब हैं ! पच्चीस काफी होगा !"

"इतना पैसा हम कहां से लायें ! थोड़ा कम कीजिए शास्त्रीजी !"

"चिन्नय्या, तुम समझते हो कि यह पैसा हमारे बाप के घर जायेगा ? नहीं, यह तो शृंगेरीमठ जायगा।"

अब क्या कहे। चेन्निगराय पत्नी की ओर मुड़कर गरजे—"तुझ छिनाल को यह सब क्या सूझा ? इन अनिष्टों को क्यों लायी ? अब इनकी गर्दन पकड़कर बाहर करती है या नहीं ?"

तंगम्मा रसोईघर के द्वार पर खड़ी सब कुछ सुन रही थी। अब उसने बाहर आकर पूछा—"जोइसजी, आज तक आप हमारे संबंधी थे, अब ऐसा क्यों कर रहे हैं ? हमने आपका क्या बिगाड़ा है ?"

"बहन, आपसे हमारा कोई द्वेष नहीं है। धर्मशास्त्र ऐसा कहता है। देखकर भी हम चप रहे तो शृंगेरीमठ वाले हमें ऐसे ही थोड़े छोड़ेंगे ?" अण्णाजोइसजी बोले।

अब तक चुप खड़ी नंजम्मा बोल उठी—"मांगल्य तोड़ा अप्पण्णय्या ने। शास्त्र में पत्नी का मांगल्य तोड़ने का अधिकार उनको है क्या ? दंड-विंड लेना हो तो उनसे लो। जब घर जल गया हो और औरत-बच्चे बेघर हो गये हों तो उन्हें आश्रय न देकर क्या करना चाहिए था ? आपके धर्मशास्त्र में ऐसी मुसीबत की घड़ी में तनिक मदद करने का मना लिखा हुआ है क्या ?"

दोनों धर्मपालक सकपका गये। यह झगड़ा जादूगरनी बहू को अपने बेटे पर ही न्याय उलटवाती देख, गंगम्मा को मानो अपने पर ही वज्र प्रहार लगा। "मांगल्य उसने बांधा था, उसने उतरवा लिया"—वृद्धशास्त्री कह रहे थे कि अण्णाजोइसजी बोल उठे—"चाचाजी, आप चुप रहिए। कहते हैं कि सातु ने ही यह कहकर मांगल्य लौटा दिया था कि तुम्हारा बंधा मांगल्य मुझे नहीं चाहिए। क्यों गंगम्मा ?"

"हां-हां, इसी हरामजादी ने 'यह मांगल्य नहीं चाहिए' कहकर तोड़कर फेंक दिया था।"

तंगम्मा ने पूछा—"पाप की बात क्यों करते हैं ? आप लोग प्रमाणित करेंगे ?" गंगम्मा ने उत्तर दिया—"जिसे सारे गांव ने देखा है, उसके लिए प्रमाण चाहिए, झगर। ?"

इस तरह न्याय कहीं से कहीं भटक गया। इनका पक्ष लेकर जोर से तर्क करने वाला कोई पुरुष होता तो कुछ और ही नतीजा निकालता। यह जानने वाली नंजम्मा बोली—"जोइसजी, घटना आपने अपनी आंखों से नहीं देखा है। बेकार दूसरों के घर में झगड़ा कराकर तमाशा देखते हैं। यह काम इज्जतदारों का नहीं है। आप लोगों को किसी ने बुलाया नहीं। चुपचाप चले जाइए। और हां, भविष्य

में हमारे घर कोई न्याय-व्याय कहकर न आयें।"

"देख लिया न जोइसजी, इस हरामजादी का अहंकार!" गंगम्मा बोल रही थी कि रसोईघर के भीतरी दरवाजे पर खड़ी सातु पास पड़ी झाड़ू हाथ में लेकर आई—"इस घरफोड़ू छिनाल के कारण यह सब हुआ?" कहकर झाड़ू गंगम्मा के मुंह पर फेंक दी। गंगम्मा क्षण भर के लिए अवाक् रह गयी। अप्पण्णय्या आग-बबूला होकर खड़ा हो गया। परिस्थिति यहां तक आ पहुंची देखकर नंजम्मा ने घबराकर सातु और तंगम्मा को रसोईघर में छोड़ दरवाजा बंद कर दिया और सामने खड़ी होकर बोली—"अब आप सब लोग यहां से जाते हैं या नहीं?"

दोनों पुरोहितों ने जगह छोड़ दी। यह समझकर कि इस बात में अपनी कोई जिम्मेदारी नहीं, अन्य ब्राह्मण भी उठ खड़े खड़े हुए। इतने में गंगम्मा में जोश आया। एक कोने में रखे मूसल को लेकर रसोईघर की ओर लपकी। नंजम्मा दरवाजे के सामने खड़ी होकर गरजी—"हमारा घर पटवारी का घर है। कुछ अनहोनी हुई तो इलाकेदार से कहकर पुलिस बुला लूंगी।" गंगम्मा घबरा गयी। अप्पण्णय्या तो पसीने-पसीने हो गया। "मां, चलो, इन छिनालों की संगत नहीं करनी।" मां के हाथ का मूसल खींचकर रखा और वह बाहर आ गया। तुरंत निकलने पर अपनी प्रतिष्ठा पर आंच आने की समझ से उसने पहले दस गालियां दीं और फिर बेटे के कहे का अनुसरण किया।

अन्न-दाल तैयार होते हुए भी सातु और तंगम्मा ने नहीं खायीं। अब जीवन कैसे बितायें, यह प्रश्न मां-बेटी को खाये जा रहा था। दोपहर की घटना से दोनों मूक थीं।

[5]

रात भर मां-बेटी बातें करती रहीं। सुबह उठते ही तंगम्मा नंजम्मा से बोली— "अब यहां रहने में कौन-सा सुख है? गांव में हमारा भी एक घर था, लेकिन यहां आने से छह महीने पहले उसे भी बेच दिया। अब पौरोहित्य के कुछ देहात हैं। रामकृष्ण आठ का हो चुका है। वहीं किसी से जनेऊ-संस्कार कराकर, पुण्यावर्तन, नवग्रह दान करवाया जाये तो गुजारा हो सकता है। किसी पुण्यात्मा की जगह में एक झोपड़ी बनवा लेंगे।"

नंजम्मा उन्हें कोई सलाह देने की स्थिति में नहीं थी। इन मां-बेटी को मेहनती काम करके, गरीबी की लोंदा-रोटी खाने की आदत नहीं थी। आदत डालने का यत्न भी नहीं किया था, कभी यत्न करतीं तो शायद अप्पण्णय्या ऐसा नहीं करता। इनके गांव लौटने पर भी इनकी आदत बदलने वाली नहीं। लेकिन स्वयं भी कुछ नहीं कर सकती। यही सोचकर नंजम्मा ने उनकी योजना को अपनी सहमति दे दी। उनका मन शीघ्र ही इस गांव को छोड़ने के लिए आतुर हो उठा। सातु अपनी दो बालियां बेचने निकली। नंजम्मा की एक पड़ौसिन ने पच्चीस रुपये में खरीद ली। यह रास्ते भर का खर्च हुआ। इस दिन नंजम्मा ने खीर बनाकर खिलायी। सातु और जयलक्ष्मी के माथे पर सिंदूर लगाया। अगले दिन गाड़ी में सारा सामान भरवाकर, उनके साथ मोटर के रास्ते तक खुद भी गयी। तिपटूर की ओर जाने वाली मुदलियर मोटर आने से थोड़ा पहले आंसू पोंछती हुई सातु बोली—"दीदी, हम दोनों इस घर में बहुएं बनकर आयीं। आप तो किसी तरह निभाती जा रही हैं, लेकिन मेरी किस्मत में यह बदा था।"

नंजम्मा ने इस पर कोई प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त की। शादी होकर जब से इस गांव में आयी है तब से घटी सारी घटनाएं एक-एक कर याद आने लगीं। मन में प्रश्न उठ रहे थे कि न जाने क्यों हमने जन्म लिया, क्यों इस घर से हमारा संबंध हुआ ? मोटर के ऊपर सारा सामान रखवाने के बाद वे सब भीतर बैठ गये। "आप एक बार हमारे गांव आयें।" कहते समय भविष्य में एक-दूसरे से मिलने का कोई विश्वास नहीं था।

खाली गाड़ी पर बैठकर नंजम्मा घर लौटी। थोड़ी देर बाद सूरप्पा मास्टर की पत्नी रुकम्मा आयी। इधर-उधर की बात-चीतें करने के बाद बोली—"कहते हैं कि आप पर बहिष्कार डालने के लिए अण्णाशास्त्रीजी ने अगेरी को पत्र लिखा है।"

"लिखकर क्या करेंगे ?"

"अरे ! आप नहीं जानतीं ! मठ की आज्ञा होगी कि इनके घर कोई भी नहीं आये-जाये; आग-पानी न दें। जब बिरादरी वाले ही बहिष्कार कर दें तो जीवन कैसे कटे ?"

इस बात से नंजम्मा पहले तो सहम गयी, फिर यह ख्याल आते ही कि बिरादरी ने उसका अब तक कौन-सा उपकार किया है और करने जा रहा है ! कोई

भले ही घर न आये ! साहस बटोरकर चुप रही।

पंद्रह दिन बाद अण्णाजोइसजी और अय्याशास्त्रीजी नंजम्मा के घर आये। उसे एक चिट्ठी थमायी। शृंगेरी प्रदेश के सर्वाधिकारी के हस्ताक्षर के साथ पत्र में लिखा था—"जिस औरत ने यह कहकर कि पति ही नहीं चाहिए और अपना मांगल्य तोड़कर फेंक दिया हो, उसे अपने घर में प्रवेश देने वाले पटवारी चेन्निगराय के परिवार का बहिष्कार किया गया है। इस मठ को एक सौ रुपये का दंड देकर दूर्वा से जबान जलाकर और स्थानीय पुरोहित से प्रायश्चित करा लेने तक कोई भी इस परिवार से आग-पानी का संबंध नहीं रखे। जो इसका उल्लंघन करेगा, उसका भी बहिष्कार कर श्रीमठ के साथ सहयोग दें।" मठ की मुहर भी लगी हुई थी।

नंजम्मा के पत्र पढ़ लेने के बाद अय्याशास्त्रीजी ने पूछा—"अब क्या करोगी ?"

"इतने साल तक रामनवमी के दिन किसी तरह शर्बत, कोशिबिर बनाकर आप सबको दिया करती थी, अब नहीं बनाऊंगी।" नंजम्मा ने उत्तर दिया।

"बनाओगी तो भी हम नहीं आयेंगे।"

"आपकी मर्जी !"

"राजमहल का सामना कर जी सकोगी ? गुरुगृह बहिष्कार डाल दे तो जी नहीं सकते, इतना समझ लो।" कहकर दोनों चले गये। नंजम्मा ने इसे अपमान तो समझा, लेकिन भयभीत नहीं हुई। दूसरे दिन सारी घटना का विवरण कि मां की बातों में आकर बेटे ने ही पत्नी का मंगलसूत्र तोड़ा, इसमें पत्नी का कोई कसूर नहीं था; लेकिन यह सच है कि अनाथ औरत-बच्चों को एक दिन के लिए आश्रय देकर उन्हें गांव भेज दिया; इसमें हमारी कोई गलती नहीं है—लिखकर अंत में पति का हस्ताक्षर लिया। सोमवार के दिन जब डाकिया आया तो लिफाफा लेकर उसी से पता लिखवाकर भेज दिया। लेकिन बहुत दिन बीत जाने पर भी मठ से कोई उत्तर नहीं आया।

पौष मास में उसके ससुर का श्राद्ध था। अब तक यह बड़े बेटे चेन्निगराय के घर पर ही कराया जाता था। खर्च में किसी तरह का हिस्सा न देकर अप्पण्णय्या यहीं आकर कर्म समाप्त होने के बाद चला जाता था। अपसव्य करना ज्येष्ठ पुत्र का काम था। कुश की पवित्रता रखते हुए चुपचाप बैठे पुरोहितजी कहने पर नमस्कार करना ही कनिष्ठ पुत्र का कर्त्तव्य था। इनके अलग होने के बाद गंगम्मा

पति-श्राद्ध के प्रसाद के लिए भी यहां नहीं आयी। बाद में वह श्राद्ध के दिन आने लगी थी। पुरोहितों ने पहले ही कह दिया कि इस साल बहिष्कृत किये जाने के कारण श्राद्ध कराने या पूर्वपंक्ति भोजन के लिए वे नहीं आयेंगे। चेन्निगराय दुविधा में पड़ गये। इन सबका कारण कौन है? पत्नी न? "उन लोगों को घर में जगह क्यों दी, हरामजादी?" पत्नी को गालियां दीं। वह चुप रही। पत्नी को गालियां देने से समस्या हल नहीं हुई।

दोनों पुरोहितों ने निश्चय किया कि इस बार श्राद्ध गंगम्मा के घर ही हो, अप्पण्णय्या व्रत रखे। अपसव्य का अर्थ यजमान-पद पाना। अप्पण्णय्या ने एक तरह का आनंदानुभव किया कि वह भी एक गण्यमान्य व्यक्ति बनने वाला है। इसके अलावा, अपने ही घर में श्राद्ध मनाया जाये तो बचे हुए बड़े, पूड़ियां, रवे के लड्डू आदि कम-से-कम आठ दिन खाये जा सकते हैं। लेकिन उसके दिमाग में यह नहीं आया कि सारा खर्च उसे ही करना पड़ेगा।

गंगम्मा की चिंता यह नहीं थी। पंद्रह-सोलह रुपये तो कहीं से भी जुटाये जा सकते थे। पति के श्राद्ध के लिए उन देहातों में जाये जहां वह भिक्षा के लिए जाती है तो पुण्यात्मा चार आने, दो आने के साथ नारियल और जिनके पास तीसी, उड़द, दाल, लोबिया है, दे दें तो तीन श्राद्ध मनाये जा सकते हैं। लेकिन बड़े बेटे के रहते हुए उसके हाथों पिंड न दिलाकर, छोटे बेटे से पिंड दिलाने पर उसे स्वर्ग से कौए के रूप में आने वाले पति स्पर्श करेंगे या नहीं! जिस तरह सरकारी नियम है कि पटवारी-कार्य बड़े बेटे को मिलना चाहिए, उसी तरह श्राद्ध-पिंड भी बड़े बेटे के हाथों दिलाना होगा न! वह तुरंत जोइसजी के घर गयी। जुर्माने के रूप में एक सौ एक रुपये देने की क्षमता किसी में नहीं है। इनकी गलती के लिए अपने स्वर्गीय पति रामण्णाय्याजी साल में एक बार मिलने वाला भोजन न पाकर उपवासे रह जायेंगे। फिर गलती की है उस हरामजादी बहू ने। मेरे बेटे चिन्नय्या ने नहीं। इसके लिए कुछ तो करना ही होगा।"

उसके तर्क को दोनों पुरोहितों ने मान्य किया। निश्चय हुआ कि मामूली दंड लेकर चेन्निगराय को बिरादरी में ले लिया जाय और केवल उसकी पत्नी-बच्चों का बहिष्कार किया जाय। दंड देने के लिए चेन्निगराय के पास हो तब न! सोचकर पुरोहितों ने तय किया। गांव में अण्णाजोइसजी का कुल नौ रुपये आठ आने राजस्व लगान होता था और अय्याशास्त्रीजी का छह रुपये तीन आने पांच

पाई। चेन्निगराय ने दोनों को अलग-अलग रसीद दे दी कि इन दोनों से इस साल का सरकारी लगान मिल चुका है। रकम अपने वर्षासन से काटने का क्रम तो है ही। खैर, पटवारी चेन्निगराय ने अपने पिता का श्राद्ध करने का धार्मिक अधिकार प्राप्त कर लिया। यह भी निश्चय हुआ कि वे अकेले मां के घर आकर श्राद्ध करें और उनकी पत्नी तथा बच्चे को उस ओर न आने दें।

अण्णाजोइस को पूर्वपंक्ति में बैठना था, इसलिए उस दिन सुबह से उपवास करना पड़ा। वैसे उस दिन करने लायक कोई काम भी नहीं था। पत्नी वेंकटलक्ष्मी रसोईघर में हरी सब्जी काट रही थी। शायद उपवास रहने के कारण ससुराल में खाई घी की पूड़ी ने जोइसजी की याद को ताजा कर दिया। वे पत्नी से बोले—"तुम्हारी माताजी ने एक बार घी में तलकर पूड़ी बनायी थी। उसका स्वाद ही निराला था ! तुमने तो एक बार भी वैसी बनाकर नहीं खिलायी ?"

"आप उतना घी ला दीजिए। आप जो भी चाहेंगे, घी में तल दिया करूंगी।"

"सेर के चार आने हैं, कहां से लाऊं ?"

"तो फिर चाह क्यों रहे हैं ? मैं कहती हूं चुप भी रहिए !"

जोइसजी ठंडे पड़ गये। फिर एक उपाय सूझा। पत्नी से बोले—"आज मक्खन से बने घी में तला हुआ भक्ष खाऊंगा, देखना !"

"आपको बनाकर नहीं परोसेंगे तो उनका नुकसान होगा ? चुप रहिए।" पत्नी ने व्यंग्य किया।

"चाहे तो देख लेना" कहने के बाद "अरे नरसिंह, तुरंत दौड़ और अप्पण्णय्या को अपने साथ लिवा ला, जा।" बेटे को आदेश दिया।

अप्पण्णय्या, शुचि पहने गीला टावेल बांधे रसोई में मां की मदद कर रहा था। जोइसजी के बुलाने पर आधे नग्न शरीर में ही दौड़ पड़ा। "देख अप्पण्णय्या, मेरी तबीयत ठीक नहीं है। सर्दी बुखार है। मैं ब्राह्मणार्थ के लिए बैठ नहीं सकता !"

"अब ऐसा कहेंगे तो कैसे चलेगा जोइसजी ? अब तो समय भी काफी हो चुका है। अब किसे लायेंगे ?"

"अपनी मां को बुलाओ, बताता हूं।"

गंगम्मा दौड़ी आयी। दूर से ही जमीन छूकर गिड़गिड़ायी—"जोइसजी, मेरे पति का उपवास मत करवाइये।"

"अच्छा, जब तुम इतना कहती हो तो 'ना' नहीं किया जाता। ब्राह्मणार्थ में

आकर भक्ष खाये बिना रहना शास्त्र-सम्मत नहीं है। तो एक काम करो। हर भक्ष घी में तलो, तो मैं खा सकूंगा।"

"अब इतना घी कहां से मिलेगा जोइसजी ?"

"पैसा ले आओ। मैं ग्वालों के बाड़े से मक्खन दिलवा देता हूं। अभी मेरा स्नान भी तो नहीं हुआ है !"

गंगम्मा घर गयी। एक ब्राह्मण को घी में तला भक्ष परोसा तो दूसरे को तेल का तला नहीं परोसा जा सकता। हमें तो तेल का चलेगा। इन दोनों के लिए पूड़ी, बड़ा, गोल चिक्की आदि तलने के लिए डेढ़ सेर घी चाहिए, अर्थात् छह-सात सेर मक्खन। घर में दो रुपये से अधिक पैसा नहीं था। चांदी का एक पंचपात्र घर में था और जो गंगम्मा को अपनी शादी में मिला था, वही अप्पण्णय्या के हाथ कांशिबड्डी महाजन के यहां भेजा। उसने वजन किया तो बारह तोले चांदी का दो रुपया दिया, जिस पर एक दिन का दो दमड़ी ब्याज।

मक्खन से बने घी में तले भक्ष को जोइसजी ने खूब पेट भर खाया। जो बचा था, उसे बच्चों के नाम पर मांगकर पत्तल में बंधवा, घर लौटकर जोइसजी ने पत्नी से कहा—"लो, तुम भी खा लो", तो वह बोली—"औरों के घर के श्राद्ध का प्रसाद हम कैसे खा सकते हैं ?"

"कुछ नहीं होगा, खा लो। बच्चों को भी दे दो।"

"देखिए, मैं लौकिकों के घर में जन्मी हूं। शास्त्र-संबंध से हम बहुत डरते हैं। पुरोहितों को कोई भक्ष नहीं है !" कहकर वह हंसी, तो जोइसजी अपने साहस पर फूले नहीं समाये।

[6]

ब्राह्मणों के भोजन के बाद श्राद्ध-कर्म की समाप्ति पर चेन्निगराय ने 'देव पत्तल' के सामने बैठकर पेट भर 'प्रसाद-भोजन' किया। तत्पश्चात् कमीज पहन, चढ़ान की ओर चल दिया। इस समय दोपहर का साढ़े चार बजा होगा। मध्याह्न के स्नान के बाद से उन्होंने तंबाकू नहीं खायी थी। हनुमान मंदिर में भी पान-सुपारी नहीं थी। खरीदने के लिए पास में दमड़ी नहीं थी। चढ़ान से उतरकर देवी की झाड़ियों से होते हुए गांव की ओर आते समय नरसी की दुकान पड़ती थी। उसने

बनवाये खपरैल के तीन कमरों के मकान में अगले कमरे में उसकी दुकान थी। अंदर के कमरे में वह सामान रखती थी। कहते थे पिछवाड़े के कमरे की अट.री पर भी दुकान का सामान भर रखा है।

पटवारीजी के आने के समय वह दुकान में ही बैठी थी। उसके सामने ही, खुले पान का बंडल था। पान और तंबाकू की तलब में खुद ही उसके पास जाकर पूछा—"नरसी, एक-दो पान, सुपारी का एक टुकड़ा और तंबाकू देगी?"

नरसी भी तांबूल चबा रही थी। बड़ी-बड़ी आंखें और बड़े चेहरे पर उसका मुंह पान के बीड़े से सदा भरा रहने पर इतना समृद्ध दीखता मानो तांबूल-रस अधरों से बह रहा हो। जीवन में किसी कष्ट का अनुभव न की हुई वह जब हंसती तो उसकी आंखों में ऐसी चमक नाच उठती कि सामने खड़ा व्यक्ति देखता ही रह जाये। उसने पूछा—"यह क्या पटवारीजी, मुझसे पान पूछ रहे हैं! क्या आपकी पत्नी नहीं देगी?"

"घर में पान नहीं था। हमारे पिता के श्राद्ध-कर्म से निपटकर तालाब के चढ़ान की ओर गया था। वहीं से लौट रहा हूं।"

"आइए, आइए, देती हूं। आप हैं गांव के पटवारीजी। आपको ना कैसे कहूं!" आंख नचाकर हंस पड़ी। गांव में अपने अधिकार को कम-से-कम इसने स्वीकार तो किया है, इस विचार से संतुष्ट होकर वे दुकान में घुसे। "अंदर ही आ जाइए" कहकर उन्हें वह भीतर के कमरे में ले गयी। भीतर की धुंधली में उन्हें कुछ भी साफ-साफ दिखायी नहीं दिया। दुकान के सामान की दस-बीस गठरियां थीं। दीवार से सटकाकर रखी खाट पर बिस्तर बिछा था। "यहां बैठिए" उसने कहा। "अंधेरा है न?" कहकर वे टटोलने लगे। "अंधेरा हुआ तो क्या हुआ? आइए, बैठिए।" पास आकर, उनकी दोनों बाहुओं को पकड़, खाट पर खींचकर बिठा लिया और खुद भी बगल में बैठ गयी। बाहर से आने के कारण पटवारीजी की आंखों की धुंधलाहट अब कुछ हटने लगी थी। लेकिन अनजाने ही उनका शरीर इस तरह कांपने लगा मानो भयानक ठंडी पड़ रही हो। क्षण भर में ही कंपन असीम हो, दोनों जबड़े मिलकर कट-कट करने लगे।

"इस तरह कांप क्यों रहे हैं?"

"तू-तू तेरा इस तरह मुझे छूना ठीक था?" सांस बटोकर उन्होंने पूछा।

"मेरे पास आकर आपने पान पूछा न?"

वे उसकी बात का अर्थ नहीं समझे। "प-प-पैसे नहीं थे, इसलिए पूछ लिया।"

"तो मैंने कोई पैसा नहीं पूछा आपसे !"

"फ-फ-फिर मुझे क्यों छ-छ-छुआ ?"

उनकी बांह पकड़ कर बाहर लाकर बोली—"चुपचाप घर चले जाइए।"

भय से कांपते हुए वे शीघ्रता से बाहर निकले। "एक मिनट रुकिए" उसने कहा तो उतने ही भय से वे रुक भी गये।

वे आकर दुकान के सामने खड़े हो गये। एक बंडल पान, मुट्ठी-भर सुपारी, दो बड़ी पुड़िया तंबाकू की निकालकर उनके हाथ में देकर बोली—"इसे ले जाइए, घर में नंजम्मा के साथ बैठकर चूना लगाकर खाइएगा। देखिए, आप-जैसों को चाहिए कि घर में पत्नी के कहे मुताबिक चलें। समझ गये ?"

पटवारीजी को थोड़ा गुस्सा जरूर आया, लेकिन वे तुरंत समझ नहीं सके कि उसे कैसे गालियां दे। हाथ में पान-सुपारी और तंबाकू लेकर उन्होंने गांव की ओर कदम बढ़ाया। सीधे घर पहुंचे तो हिसाब की पोथी देखती हुई पत्नी ने उनसे कोई बात नहीं की। ये भी कुछ नहीं बोले। खंभे के पास बिछी चटाई पर लेटकर तांबूल और तंबाकू चबाने लगे।

दसवां अध्याय

नंजु को जब यह पता चला कि पति को बिरादरी में लेकर, केवल उसको ही बहिष्कृत कर रखा है तो उसमें दुख की अपेक्षा तिरस्कार भाव अधिक प्रबल हुआ। धर्म-कर्म, श्राद्ध आदि विषयों में दूसरों से भिन्न उसका अभिमत था। उसके पिता कंठीजोइसजी को गांव में ही क्या, इस सारे क्षेत्र में दूसरों को मात देने जैसी पुरोहिती ज्ञान था। शुभाशुभ कर्मों के बारे में जिसे कोई शंका होती, तो वह उनके पास ही आकर शंका-समाधान कर लौटता था। वे खुद अपने पिता का श्राद्ध नहीं करते थे। जब कोई पूछता तो कहते—"मैं गया जाकर पिंडदान कर आया हूं, इसलिए इसकी फिर जरूरत नहीं।" एक श्लोक भी सुना देते जिसमें बताया गया है कि गया में पिंडदान करने के पश्चात् हर साल श्राद्ध करने की आवश्यकता नहीं। लेकिन किसी को यह विश्वास नहीं था कि वे सचमुच गया गये थे; और गये भी हों तो वहां पिंडदान किया होगा। खुद अक्कम्मा को विश्वास नहीं था। लेकिन कंठीजोइसजी के सामने बात करने की हिम्मत किसमें थी ?

'अगर पिता होते तो इस गांव के पुरोहितों की दुम नहीं बढ़ती। हमारी जमीन भी नहीं जाती। एक बार गरजते तो पति, सास सभी डरकर उनके कहे मुताबिक करते; और जमीन भी बचती। न जाने कहां चले गये ? मरे वे अवश्य नहीं हैं। कहते हैं, जब मैं बच्ची थी तो इसी तरह गांव छोड़कर चले गये थे और चार साल तक नहीं लौटे थे। कहते हैं काशी, रामेश्वर आदि स्थानों का चक्कर लगाकर आये थे। न जाने फिर कहां गये ? लेकिन इस बार गये नौ साल होने को आया ! पार्वती आठ या नौ महीने की थी तब वे गये थे। अब उसे नौवां चल रहा है। परदेशों में चक्कर काटना उनकी किस्मत में लिखा है या हमसे दूर रखना हमारी किस्मत में है।' वह सोचती रहती।

श्राद्ध के दिन पति के मां के घर जाने से उसका मन तिलमिला उठा। यहीं

घर में श्राद्ध-कर्म होता तो वह उपवास करती, सिर नहाकर खाना बनाती। 'लेकिन अब दूर रखा है तो क्या कुछ खा सकती हूं या नहीं ? घर की बड़ी बहू हूं ! पति अपसव्य कर श्राद्ध-कर्म कर रहे हैं ! मैं कैसे कुछ खा सकती हूं ?'—यही सब सोचकर उसने बच्चों को चटनी-रोटी खिला दी। श्राद्ध अगर यहां किया जाता तो बच्चे भी खा सकते थे !

उसे शंका थी कि मध्याह्न के प्रसाद के लिए बच्चों को बुलायेंगे भी ! वह यह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि बच्चों के लिए खाना बनाया जाये कि नहीं ! आखिर उसने आठ-दस रोटियां बनायीं। वे अगर बुलायेंगे तो रोटी खराब नहीं होंगी; और नहीं बुलायेंगे तो बच्चे यह खा लेंगे !

सब बच्चे स्कूल गये हुए थे। पार्वती, रामण्णा दोनों चौथी कक्षा में थे। विश्वनाथ दूसरी में था। नंजु बैठी पत्तल बना रही थी। मध्याह्न सास के घर में अपर-कर्म प्रारंभ होने का समय था। महादेवय्यजी यहां आये। यद्यपि वे यहां अकसर आते थे किंतु ऐसे वक्त कभी नहीं आये थे, क्योंकि यह उनका गुरू भिक्षाटन से लौटकर खाना खाने का समय था और यदि भिक्षा के लिए देहात की ओर निकल जाते तो अभी तक गांव से बाहर ही रहते। वे अब तक खाना खा चुके हैं, ऐसा नहीं लगा। चेहरा काफी नीरस लग रहा था। 'हम ठहरे संसारी। सुबह उठे कि व्यर्थ दुख सताता है। न जाने इस संन्यासी के चेहरे की निराशा के लिए क्या घटी होगी !' ऐसा सोचते हुए नंजम्मा ने चटाई बिछाकर पूछा—"क्यों, आज आप कुछ अन्यमनस्क लग रहे हैं।"

"बहन, मैंने निश्चय किया है कि स्वजातियों के घर से भिक्षा नहीं लूंगा।"

"क्यों क्या हुआ ?"

"देहात घूमकर मडुआ ढोकर लाता हूं। परदेशी या साधु-संन्यासी इस गांव में आते हैं तो मंदिर में उन्हें सारी चीजें तैयार कर देता हूं। गांव में रहता हूं तो भिक्षा से गुजारा हो जाता है। लगता है इस गांव के व्यापारी मुहल्ले के लोगों ने कुछ तय कर लिया है। अभी भिक्षा के लिए गया था। चार घरों में गया तो सबने यही कहा—'इस अय्याजी को सुबह भिक्षाटन की गुरू भिक्षा चाहिए और मध्याह्न में भिक्षाटन का लोंदा, साग भी चाहिए।' इसी मनस्ताप से चुपचाप चला आया हूं।"

नंजम्मा को दुख हुआ। महादेवय्यजी देहात से अन्न-धान्य लाकर बेचकर गांठ

बांधकर नहीं रखते थे। इस संसार में उनका अपना कुछ भी नहीं था। वे मेहनत करके भिक्षाटन करते थे तो परदेशियों को खिलाने के लिए।

"अय्याजी, आप मंदिर जाकर खाना नहीं पकायेंगे ?"

"इच्छा नहीं है बहन। वैसे भूख अवश्य लग रही है। तुम कुछ दोगी तो खा लूंगा।"

नंजम्मा को अधिक आश्चर्य नहीं हुआ। इस जंगम संन्यासी ने अब तक कभी एक बूंद पानी भी यहां नहीं पिया था। लेकिन आज वे खाने की इच्छा प्रकट कर रहे हैं। "अच्छा, बैठे रहिए। जल्दी ही थोड़ा भात और साग बनाती हूं।" वह बोली तो उन्होंने कहा—"उसकी जरूरत नहीं, जो तैयार है परोस दो बहन।" नंजम्मा भीतर गयी और बनाई हुई चटनी-रोटी, एक अल्यूमिनियम थाली भर छाछ सामने रख दी। वे उठे और हाथ धोकर रोटी तोड़ी ही कि नंजम्मा की सास के घर अपने ससुर का श्राद्ध-कार्य होने का याद आया। उस समय वहां ब्राह्मण भोज शुरू हो गया होगा ! वह उनसे बोली—"अय्याजी, आज हमारे ससुरजी का श्राद्ध है। आप जानते हैं मुझ अकेली का अब भी बहिष्कार कर रखा है !"

"जानता हूं, जानता हूं ! सुना है कि ब्राह्मणोत्तम ने कहा है कि सब चीजें घी में तली हुई होनी चाहिए, नहीं तो भोजन नहीं करूंगा। तब अप्पण्णय्या चांदी का पंचपात्र काशिबड्डी की दुकान में दो रुपये में गिरवी रखकर मक्खन लाया है। नौ-दस बजे के करीब मैं मंदिर के सामने बैठा था कि रास्ते में मुझे देखकर अप्पण्णय्या ने कहा—"जोइसजी को बुखार आ रहा है, इसलिए वे घी के ही बड़े, लड्डू खायेंगे—तेल का बना नहीं।"

"अब यह कहने की जरूरत नहीं कि वे ब्याज देकर चांदी का बर्तन छुड़ा लेंगे ! अय्याजी, यह श्राद्ध-श्राद्ध सब सच है क्या ? ऐसे पुरोहितों को बुलाकर भोजन कराना तो सब दिखावा लगता है।"

"कौन जाने, सच है या झूठ ? सच भी हो सकता है। जब रामण्णा पटवारी थे, तुम्हारी सास एक दिन भी शाम तक रोटी नहीं दिखाती थी। पति की देख-भाल तक नहीं की उसने। वही अब देहात से भिक्षा लाकर श्राद्ध कराती है !"

"हमारे ससुरजी जीवित थे तब आप इस गांव में थे ?"

"चिन्नय्या पैदा होने से तीन साल पहले मैं यहां आया था।"

"तो आप किस गांव के हैं ?"

"कोई भी हो तो क्या ? शिवजी ने पैदा किया है तो मरने तक एक ही गांव होना चाहिए क्या !" लेकिन अपने गांव का नाम नहीं बताया और कोई भी नहीं जानता कि वे किस गांव के थे। कहते हैं कि पहले-पहल जब वे इस गांव में आये थे तो इनकी बोली हुबली-धारवाड़ की उत्तरी सीमा के लोगों की जैसी थी। लोग कहते थे कि इनकी बातचीत बोरे बाजार, रामनाथ यात्रा, आदि स्थानों में बैल-जोड़ी खरीदने आने वाले उत्तरी सीमा के लोगों की भांति थे। शुरू में मडुए का लोंदा निगलना नहीं जानते थे। केवल रोटी खाते थे। एक-दो वर्षों में ही यहां के लोगों की बोली में बात करने लगे थे; और लोंदा तोड़ना भी सीख गये थे। कोई इनसे गांव पूछता तो रामसंद्र का चोलेश्वर मंदिर कह देते।

बाद में उनसे सभी ने यह प्रश्न पूछना छोड़ दिया। क्योंकि चेन्निगराय जैसे अधेड़ उम्र के लोगों की अपेक्षा वे बुजुर्ग थे। नंजम्मा ने उनके गांव के संबंध में आगे कुछ नहीं पूछा।

इतने में अय्याजी खाना खा चुके थे। दोपहर में, खाने के लिए बच्चे घर आये। मां की दी हुई चटनी-रोटी चुपचाप खाकर पानी पीकर फिर स्कूल चले गये। नंजम्मा ने कुछ नहीं खाया। बच्चों के खाने के बाद बचा भी कुछ नहीं था। और बनाने के लिए मन नहीं था। अय्याजी बाहर बैठे थे। वह भी बाहर आ गयी। बहुत दिनों से एक प्रश्न पूछने की सोच रही थी, सो अब पूछ ही लिया—"अय्याजी, मैं एक प्रश्न पूछना चाहती हूं, उत्तर देने की इच्छा हो तो दीजिएगा; नहीं तो न दें। "घरबार छोड़कर आप यों क्यों चले आये ?"

"घरबार छोड़कर कहां आया, बहन ? गृहस्थी थी ही कहां ? संन्यासी बनकर जन्म लिया। इसी तरह गांव-गांव घूमता रहा। यहां रहने की इच्छा हुई, रह गया।" इतना ही उन्होंने कहा। उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। यह बात रहस्य बनकर ही रह गयी कि आखिर उनकी घर-गृहस्थी थी भी या नहीं !

उनके पूर्व-जीवन के बारे में सोचकर वह बैठी रही। शादी की थी या नहीं, शादी की थी तो क्या गृहस्थी छोड़कर निकल आये ! कहते हैं कि वे बल्लारी प्रदेश के हैं। पत्नी ने कोई अनहोनी काम किया, तभी दुखी होकर सब-कुछ छोड़कर निकल पड़े—यह बात पड़ोसिन पुट्टव्वा ने एक दिन नंजम्मा को बतायी थी। "यह तू कैसे जानती है ?" उससे पूछने पर वह बोली थी—"ऐसा कुछ लोगों को कहते सुना है—जब वह छोटी थी तब की बात है। तब ये अय्याजी बूढ़े नहीं

थे।" पुट्टव्वा की बात पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता। अय्याजी ने स्वयं तो इस विषय पर कभी किसी के सम्मुख मुंह नहीं खोला। न कहें तो कोई बात नहीं, न जाने उनके मन में कौनसा दुख है—यह सोचकर वह चुप रह गयी।

कुछ समय तक दोनों चुपचाप बैठे रहे। आखिर महादेवय्यजी ने मौन भंग किया—"क्या सोचती हुई बैठी हैं बहन ?"

"कुछ नहीं।"

"इतने दिन इस गांव का ऋण था, अब और कहीं जाने की सोच रहा हूं।"

"अय्याजी, आप ठहरे संन्यासी। किसी ने नासमझी में आपको कुछ कह दिया तो क्या दुखी होना ठीक है ? और आप जहां कहीं भी जायेंगे, वहां भी इसी तरह के लोग मिलेंगे !"

"सच है बहन।" उन्होंने कहा। शायद वे अधिक बोलने की मनःस्थिति में नहीं थे। कुछ देर के बाद उठकर मंदिर पर चले गये।

[2]

महादेवय्यजी उस दिन जो सुबह देहात की ओर निकले, दो-तीन महीने बीतने पर भी रामसंद्र नहीं लौटे। नंजम्मा इससे व्याकुल हो उठी कि वे यह गांव ही छोड़कर चले गये हैं। इस गांव में अगर कोई 'अच्छा' व्यक्ति था तो वे अकेले ही थे। अब वे भी दुखी होकर चले गये हैं। कौन जाने, अब आयेंगे भी या नहीं ! लेकिन उनका सारा सामान तो मंदिर में ही था। दो-तीन पल्ला मडुआ, दो कुलथी, एक हंडा मिर्ची, कुछ अल्यूमिनियम के बर्तन, चार-पांच चटाइयां आदि कमरे में रखकर ताला लगा दिया था। कहते हैं कि चाबी ले गये हैं। इससे उसे एक दिन उनके लौट आने का विश्वास था। उनके जाने के बाद से मंदिर उदास लग रहा था। नंजम्मा वहां कभी नहीं गयी। अब चेन्निगराय जैसों को भी वहां बैठने के लिये जाने में कोई आकर्षण नहीं था।

पार्वती और रामण्णा ने प्राइमरी स्कूल पास कर लिया। रामण्णा बहुत होशियार लड़का था मास्टर सूरप्पाजी ही कह रहे थे कि सारे स्कूल में पहला था। गोल-गोल मोती-से सुंदर अक्षर लिखता था। पटवारी-कार्य की पुस्तकों में सिलसिले से रेखाएं भी खींचता। अल्पप्राण, महाप्राण, ह्रस्व-दीर्घ की गलती किये

बिना कन्नड़ में सब कुछ पढ़ लेता। तीनों बच्चों को नंजम्मा ने 'शांताकारं भुजगशयनं भजगोविंदं मूढमते' आदि अनेक श्लोक घर पर ही सिखा दिये थे। 'नलचरित्र', लवकुश युद्ध भी पार्वती और रामण्णा ने कंठस्थ कर लिये थे। पटवारी-कार्य के लिये इससे अधिक विद्या और क्या चाहिए ? लेकिन नंजम्मा कुछ और ही सोच रही थी। यह काम अपने बच्चों को नहीं कराना चाहिए। इन्हें पढ़-लिखकर कोई और नौकरी करनी चाहिए। कम-से-कम इलाकेदारी करने योग्य विद्या पायें !

सूरप्पा मास्टरजी ने भी कहा था कि रामण्णा को भविष्य में मिडिल स्कूल की शिक्षा कराइए, छुड़ाइए नहीं। मिडिल स्कूल कंबनकेरे में है जो रामसंद्र से पांच मील के फासले पर है। कहते थे कि उस गांव मे ब्राह्मणों के पंद्रह-बीस घर हैं। कोई आदमी वहां जाकर 'साप्ताहिक खाने' की व्यवस्था करा दे तो लड़का वहीं रहकर पढ़ सकता है। शनिवार को गांव आकर सोमवार का खाना साथ ले जायेगा। इससे उसे कुल चार दिन खाना मिला, तो बस है। शनिवार दोपहर में कोई खाना देगा तो अच्छा है। इलाकेदार से पूछें तो एक दिन दे देंगे, लेकिन शेष चार दिनों के लिए किससे पूछा जाय ! वहां सूरप्पा मास्टरजी या द्यावरसय्यजी के पहचान वाले होंगे !

लेकिन दूसरों के घर खाने के लिए रामण्णा तैयार नहीं हुआ। लड़के को शायद संकोच या भय था। उसने कह भी दिया कि वह रोज कंबनकेरे से गांव आया करेगा। मतलब कि जाने के पांच मील और आने के पांच मील। और वह भी रामसंद्र की मां काली मंदिर के आगे पुराने आम के पेड़ के नीचे से गुजरकर कळ्ळिळ टेकड़ी पर चढ़कर उतरना होगा और फिर बमीठे टीले के बगल से चलना होगा। उस टीले-भर में केवल बमीठे ही बमीठे हैं। न जाने उनके भीतर कितने सांप होंगे। सींग की भांति निकले हुए उनके मुंह देखकर ही डर लगने लगता है। उनके उस पार गौडनकोप्पल है। आगे पापासुकळ्ळी गलियारे से जायें तो कंबनकेरे मिलता है। रामण्णा अभी दस साल का ही थी। इस रास्ते से उसे अकेले ही आना-जाना होगा। लेकिन बिना कष्ट उठाये विद्या भी कैसे आयेगी ? सूरप्पा मास्टरजी का दिया हुआ प्राइमरी स्कूल प्रमाणपत्र भगवान के सामने रख, पूजा की। फिर आंखों से लगाकर उसके हाथ में देकर चटनी-रोटी बांधकर उसे दी। स्कूल में भर्ती करा आने के लिए चेन्निगराय मान गये थे। जिस दिन भर्ती के लिए जाना था, उस

दिन सात बजे चादर में से ही बोले—"कल चले चलेंगे।" लेकिन पंचांग देखकर जो दिन तय किया गया, उसे नंजम्मा बदलना नहीं चाहती थी। इसलिए बेटे के साथ नंजम्मा ही चल पड़ी। भगवान, मां, दीदी और पार्वती को रामण्णा ने नमस्कार किया। सोये हुओं को नमस्कार नहीं करना चाहिए, इसलिए बाबा को नमस्कार नहीं किया। मां-बेटे दोनों स्कूल पहुंचे। पालक की जगह मां की स्वीकृति और आठ आने प्रवेश-शुल्क लेकर हैडमास्टर ने लड़के को स्कूल में भर्ती कर लिया। वहां के और बच्चों को देखने पर नंजम्मा को लगा कि अपने बेटे को भी एक लुंगी और धोती लाकर देनी चाहिए ; सिर पर एक काली टोपी चाहिए। यह मिडिल स्कूल है, चड्डी पहनकर नहीं चल सकता।

लुंगी कम से कम दो चाहिए। एक धोने पर दूसरी पहनने के लिए। दो लुंगी, एक टोपी के लिए दो रुपये चाहिए। पुस्तकें भी चाहिए। पैंसिल, कापियां और चटनी-रोटी रखने के लिए एक रंगीन थैली भी चाहिए। इस तरह सात-आठ रुपये लगेंगे। घर में इतने पैसे नहीं। छत पर पत्तलों की गड्डियां रखी हुई थीं। इस साल शादी के दिनों में गांव वाले घर से पत्तलें ले गये थे। जो बची थीं, वह छत पर रखी थीं। घर आकर नंजम्मा ने छत पर चढ़कर पत्तलें गिनीं। कुल एक सौ गड्डियां थीं। एक गड्डी का सात आने के हिसाब से चवालीस रुपये बारह आने हुए सभी एक साथ बेच देनी चाहिए। लेकिन केवल एक सौ गड्डियों के लिए तिपटूर तक गाड़ी बंधवाने का मतलब है व्यर्थ ही गाड़ी-भाड़ा भरना। फिर तुरंत पैसे कहां से आयेंगे ? उसने सर्वक्का को बुलवाया। सर्वक्का के पास भी लगभग अस्सी गड्डियां थीं। दोनों की मिलाकर भिजवा दें तो गाड़ी-भाड़ा आधा-आधा बांटा जा सकता है। सर्वक्का बोली—"कल किसी कोर्ट के काम से वे गाड़ी तिपटूर ले जा रहे हैं। कमानदार गाड़ी में वे अकेले जायेंगे तो उसमें डालकर भेज देंगे।"

"सर्वक्का, भेज तो सकते हैं, लेकिन आपके यजमान के स्वभाव को तो आप जानती हीं। हैं !"

"यह भी सच है।" उसने भी हामी भरी। आखिर उसे एक उपाय सूझा। दोनों की पत्तलें गाड़ी में रखकर पति के साथ सर्वक्का भी जाये और इन्हें बेचकर पैसे सुरक्षित ले आये। सर्वक्का ने यह सलाह मान ली। नंजम्मा ने रामण्णा के लिए लुंगी, टोपी, पुस्तकें, थैली आदि खरीद की सूची बनाकर उसे थमा दी।

दूसरे दिन गाड़ी में पति के साथ सर्वक्का गयी। पत्तलें बेचकर पैसे लिये और फिर नंजम्मा के बताये हुए सामान खरीदकर रात में ही गाड़ी से चल दी। रास्ते में वह ऊंघती रही। गांव सुबह लौटी। जब घर के सामने गाड़ी से उतरी तो पास में खरीदा हुआ सामान तो था लेकिन गले में लटकायी हुई पैसों की थैली नदारद थी। पति से पूछा तो रेवण्ण उल्टे उसी पर बरस पड़े—"गधी की नाईं पड़ी-पड़ी ऊंघती रही। रास्ते में कहीं गिरा दी छिनाल!" सर्वक्का आंसू बहाती नंजम्मा के पास दौड़ गयी और सारी स्थिति बता दी। नंजम्मा समझ न पायी कि क्या कहे? नंजम्मा का सामान खरीदने में उसने साढ़े छह रुपये खर्च किये थे। इसके बाद भी सवा अड़तीस रुपये देने थे। उस थैली में उसके भी पैंतीस रुपये थे।

"नंजम्माजी, अपने गले के ताबीज की कसम खाकर कहती हूं, आप मुझे चोर न समझें।"

नंजम्मा ने धैर्यपूर्वक चार-छह प्रश्न सोच-समझकर उससे किये और फिर बोली—"आप कुछ भी कहिए, रुपये अभी भी कहीं नहीं गये हैं। जब आप ऊंघ रही थीं, तभी आपके यजमानजी ने निकाल लिये हैं।"

सर्वक्का को भी नंजम्मा की बात सच लगी। सीधी घर आकर पति से बोली—"आपने ही रुपये लिये हैं। कम से कम नंजम्मा के रुपये तो दे दीजिए।" इस पर रेवण्णशेट्टी ने वीरभद्र के मेले में नाचते हुए भूत की भांति उत्तेजित होकर उसे पकड़कर उसकी हड्डी-पसली टूटने तक पीटा। कोर्ट में साक्षी देने वाले सज्जन को यदि चोर कहा जाये तो वह कैसे सह सकता है!

बेहद मार पड़ने पर भी सर्वक्का ने मन ही मन कुछ निश्चय किया। दूसरे दिन सूर्योदय से पहले उठी और अपनी बेटी रुद्राणी को साथ ले अपने मायके शिवगेरे के लिए चल दी। उसके गले में मायके की दी हुई स्वर्ण ताबीज था। यह भी शायद भगवान के भय से या इस ओर रेवण्णशेट्टी की नजर न पड़ने के कारण बच गया था। एक सुनार के हाथों उसे डेढ़ सौ रुपये में बेचकर आठ रुपये की चांदी का ताबीज बनवाया। फिर दो दिन पश्चात गांव लौटी। नंजम्मा की जो रकम देनी थी, उसे दे दी और शेष उसके हाथ में रखकर बोली—"घर में भूखे रहने की जब नौबत आयेगी तो रुपये-आठ आने ले जाया करूंगी। आप यह रख लीजिए।"

"इतनी बड़ी रकम मैं कहां रखूंगी सर्वक्का ? अनहोनी हुई तो मेरा क्या हाल होगा ?"

"एक मटके में डालकर छत पर पत्रावली में रख दीजिए, कोई नहीं जानेगा।"

नंजम्मा ने ऐसे ही किया।

रेवण्णशेट्टी आठ दिन घर पर रात में नहीं सोया। घर में दिन में आकर नींद लेता।

[3]

जब से रामण्णा मिडिल स्कूल जाने लगा तब से पार्वती घर में ही रही। उसके बारे में अब तक जो चिंता नहीं थी, वह अब नंजम्मा के मन में उठकर सताने लगी। वह बारह साल की हो गयी थी। उसका भी अपनी ही तरह ऊंचा, भरा-पूरा शरीर था जिससे वह अधिक उम्र की लगती। शादी करनी है। कौन वर ढूंढ़ेगा ? पैसे कहां से इकट्ठे करूंगी ? आज तक तो केवल गृहस्थी चलाती आयी हूं ! अब रामण्णा की पढ़ाई का खर्च भी देखना है। इसके साथ बेटी की शादी करना भी कोई हंसी-खेल नहीं है। लेकिन किये बिना भी नहीं रह सकते !

पार्वती ने स्कूल जाने के दिनों में ही मां जिन गीत-पदों को गाती थी, कंठस्थ कर लिया था। त्यौहार का भोजन भी नंजम्मा अब उसी से बनवाती। स्कूल के बाद घर बैठकर वह क्या करती ? इसलिए सुबह से शाम तक दो सौ पत्तलें बनाती। बड़ी होने वाली लड़की थी। थोड़ा घी-दूध देना चाहिए। विश्व के प्रसव के बाद अक्कम्मा की लायी हुई गाय की बछिया ब्याही थी। उसकी देखभाल भी नहीं होती। उसे बाहर छोड़कर न चराने के कारण इतनी अच्छी नस्ल की गाय केवल तीन पाव दूध दे रही थी। खाते समय तीन चमचे दही न दे तो यजमान चिल्लाने लगते। जो बच जाता उसमें से किस बच्चे को कितना दे ? रोज पलाश की इतनी पत्तलें बनाने से लड़की को गर्मी चढ़ जायेगी। दिन में दस मील चलकर स्कूल जाने वाला बेटा था और गांव में ही स्कूल जाता बड़ा होने वाला छोटा बेटा इनमें से किसे कम करे और किसे ज्यादा दे ?

उस साल ज्येष्ठ-आषाढ़ में भी वर्षा नहीं हुई। किसी ने बताया कि वन-प्रदेश में भी बारिश नहीं हुई है। केवल पश्चिमी हवा बह रही थी। गर्मी के दिनों में सूखी

धरती पर हरी घास का तिनका भी नहीं दिखाई देता था। भूखी गाय जो पाव भर दूध देती थी, वह भी धीरे-धीरे बंद हो गया। घर में छाछ का नाम नहीं। किसी ने खेत नहीं जोते। देहातों में यह व्याकुलता व्याप्त थी कि इस साल की सारी फसल मारी जायेगी। नहीं तो कम से कम ईशान्य से आने वाली बारिश से मडुए की फसल हो सकेगी। नये साल के लगान के लिए नंजम्मा ने पहले जैसे ही पटेल गुंडेगौड़ और अन्य दो व्यक्तियों से सौ रुपये अग्रिम लेकर पति के हाथों रसीद लिखवा दी, लेकिन बारिश की हालत देखकर गौड़जी बोले—"बहन, मेरे भूतल गोदाम में जो मडुआ है, वह घरवालों और नौकरों के लिए एक साल के लिए पूरा पड़ जायेगा, लेकिन पता लगा है कि हमारे जम्मेहळ्ळी समधि के घर में एक दाना भी नहीं है। इसलिए उन्होंने कहला भेजा है कि उन्हें कम से कम चार-पांच खंडी चाहिए। मैं दुविधा में पड़ा हूं न दे सकता हूं और न दिये बिना रह सकता हूं। तुम रसीद के रुपये ले लो, लेकिन इस साल मडुआ नहीं मिलेगा।"

उसी समय रुपये लेकर मडुआ खरीद लेती तो बुद्धिमानी होती। वह भी थोड़े ही जानती थी कि आगे ऐसा होगा! घर में और भी थोड़ा बचा था। वह खत्म होते होते और दो महीने बीत गये। अब भी बारिश नहीं पड़ी। अब मडुए का दाम बढ़कर एक रुपये का आठ सेर हो गया। कहां तीन रुपये का ढाई मन अर्थात् एक पल्ला और अब बारह रुपये में एक पल्ला! उसकी छाती धड़कने लगी। रुपया पूछने के लिए कुरुबरहळ्ळी गयी तो गुंडेगौड़जी बोले—"मैं सोच रहा था कि तुम्हारे घर में मडुआ रहा होगा, इसलिए तुम नहीं आयी। अभी जो भाव में मिलेगा, खरीद कर रख दो। एक महीने के बाद तो बीज के लिए भी मडुआ नहीं मिलेगा।"

"तो आप ही कहीं से दिलवा दीजिए।"

कुरुबहळ्ळी के बगल में ही नागेनहळ्ळी के चिक्कतम्मेगौड़जी ने अब तक भी भूतल गोदाम नहीं खोला था। खुलने की सूचना पाकर गौड़जी ने पांच पल्ला मडुआ खरीद कर भिजवा दिया। अब दाम और भी बढ़ गया था। एक पल्ला का सोलह रुपया, अर्थात् रुपये के छह सेर। गुंडेगौड़जी के लगान के नौ रुपये पूरे हो गये। बचे बीस रुपये, तो छोटे-मोटे खर्च के लिए चाहिए ही। नंजम्मा ने नकद रुपये ले लिये।

पांच व्यक्तियों को एक दिन में कम से कम चार सेर मडुआ चाहिए। दूध,

छाछ, तरकारी, दाल आदि भरपूर हो तो आटा कम खर्च होता है। इन सबके अभाव में केवल उसी से पेट भरना हो तो चार सेर अवश्य ही चाहिए। सुबह की रोटी बंद कर दी जाये तो एक सेर की बचत होती है। लेकिन स्कूल जाने वाले रामण्णा को रोटी बांधकर देनी पड़ती थी। उसे रोटी और आंवले का अचार देते तो विश्व नहीं मानता। बढ़ती हुई पार्वती को कैसे ना कहा जाये! बच्चे का पेट तो काट सकते हैं लेकिन यजमानजी को समझाना खिलवाड़ नहीं। उठते ही रोटी न मिली तो वे घर के बाहर सड़क पर खड़े होकर ऐसा अभिनय करने लगते हैं मानो यक्षगान (कर्नाटक की संवादपूर्ण नृत्य नाटिका) के अभिनेताओं और फिर जोर-जोर से चिल्लाकर रांड, 'छिनाल' आदि मंत्रोच्चारण शुरू कर देते हैं। सुबह उठते ही घर की इज्जत गांव भर बेचना, वह नहीं चाहती और बड़े हो रहे बच्चों के कानों पर बार-बार ऐसे शब्द पड़ने से बचाने की भी भरसक कोशिश करती।

परिणाम यह होगा कि दिन का चार सेर खर्च हो तो पांच पल्ला मडुआ चार महीने में समाप्त हो जायेगा। और लेने के लिए पैसे नहीं। इसलिए भविष्य की कमाई केवल पत्तलें बनाकर ही संभव है। बस. मां-बेटी दोनों मिलकर रोज लगभग चार सौ पत्तलें रोज बना देती। इस साल मर्दुमशुमारी लिखने का काम नहीं था। जब कहीं किसी तरह की फसल न हो, और सारे खेत जलकर भस्म हुए मैदान से लग रहे हों, तब मर्दुमशुमारी क्या लिखे? लेकिन हिसाब की किताब सीकर शीर्षक देना, ऊपर से नीचे और बायें से दायें लाल स्याही से रेखाएं डाल लेनी चाहिए थी। हर सर्वे संख्या और खाता-संख्या के कालम में कम से कम 'खाली' लिखना ही चाहिए। सरकारी हिसाब तो हिसाब है। बागाईत संख्या में नारियल और आम को 'खाली' नहीं लिखा जा सकता था। नंजम्मा पलाश की पत्तलें बनाने और गृहकार्य के साथ यह भी निभाती रही।

पौष-माघ आते-आते लोगों का हाहाकार मवेशियों पर भी छा गया। कहीं भी पीने का पानी नहीं। चराने के लिए घास नहीं। जब फसल ही नहीं तो मवेशियों के लिए घास कहां से मिलेगी? जिनके पास अधिक घास थी, उन्होंने छत पर डाल दी। ऐसा नहीं करते तो चोरी होने का डर था। जो कुछ था, उसे रोज आधी पिंडी के हिसाब से डालकर, लोगों की भांति ही मवेशी को जिलाये रखने का प्रयास किया जा रहा था। जिनके पास घास नहीं थी, उनके मवेशी मर रहे थे। नंजम्मा अपने बछड़ों को बड़े होते ही बेच देती थी। दो गायें और एक बछड़ा

था जो घास के अभाव में मरने की स्थिति में पहुंच गये थे। उन्हें नागलापुर भेज देने की सोचने लगी। लेकिन पता लगा कि वहां भी ऐसी ही हालत है। दुष्काल केवल रामसंद्र तक ही सीमित नहीं था। तमकर, हासन, कोलार आदि मैदानी प्रदेशों में भी इस साल अनावृष्टि थी। नालों के मैदानी प्रदेश ही भाग्यशाली थे। कई लोग गन्नी, श्रीनिवासपुर आदि स्थानों से पचास रुपये में गाड़ीभर घास खरीद लाये थे। वे दूसरी बार वहां गये तो एक गाड़ी घास का भाव पैंसठ रुपये हो गया। नंजम्मा कुछ समझ ही नहीं पा रही थी। एक दिन अपनी दोनों गायें और बछड़ा हांककर कुब्बरहळ्ळी ले गयी और गुंडेगौड़जी के सामने खड़ी होकर बोली—"गौड़जी, इन्हें यह समझकर स्वीकार कर लीजिए कि मैं गोदान कर रही हूं। दिन में मुट्ठी भर घास डालकर जिंदा रखिए। बच गये तो भविष्य में आपके पोते-पोतियां दूध पियेंगे। उन्हें मरते हुए मैं देख नहीं सकती।"

"बहन, किसान होकर मैं गोदान लूं।"

"तो तीन के तीन पैसे दे दीजिए। रस्सी पकड़कर खरीदी समझकर आपको सौंप रही हूं। उनकी जान बचाना मुख्य उद्देश्य है।"

गौड़जी के यहां भी घास का अभाव था। वे प्रतिष्ठित वंश के थे और इसीलिए उन्हें अगले साल तक के लिए आवश्यक चीजों का संग्रह रखना पड़ता था। अगले साल भी वरुण अगर इसी प्रकार आंख-मिचौनी खेले तो क्या हाल होगा? लेकिन अगले साल की अनिश्चितता से डरकर अपने गृहद्वार पर आई हुई नंजम्मा जैसी महिला की इच्छा को वे कैसे अनसुनी कर सकते थे! यह केवल पटवारिन के निवेदन का प्रश्न नहीं था, अपितु तीन गौ प्राणियों के जीवन का प्रश्न था। "अच्छा, मैं इन्हें पालूंगा। न दान चाहिए, न खरीदी ही। बाद में इसकी बछिया मुझे दे देना। सफेद बहुत सुंदर है।"

नंजम्मा की चिंता दूर हुई। वह गांव लौटी। रामसंद्र में कई गायें मर गयीं। जो बची थीं, वे मरने की स्थिति में पहुंच गयी थीं।

मां-बेटी के जल्दी-जल्दी पत्तलें बनाने के कारण इस साल की पत्तलों की गड्डियां मार्गशीर्ष तक समाप्त हो गयीं। घर में जो मडुआ था, वह भी अब खत्म हो गया। आटे के सारे बर्तन खाली पड़े थे। छत पर चढ़कर गिनती की तो बीस हजार से भी अधिक पत्तलें थीं। अब दाम बढ़ गया होगा। सब सामानों का दाम बढ़ गया है तो इसका बढ़े बिना रहेगा! सौ के आठ आने के हिसाब से गिने, तो भी एक

सौ रुपये हुए। नंजम्मा ने दो गाड़ियों में पत्तलें लाद दीं और रामण्णा और सर्वक्का को साथ लेकर तिपटूर पहुंची। सर्वक्का की छह हजार पत्तलें थीं। इतनी पत्तलें आयीं देखकर कंजूस व्यापारी शेट्टी बोला—"बहनों, सर्वत्र दुर्भिक्ष है। खाने के लिए ही जब कुछ न हो तो पत्तलें कौन खरीदेगा ? आप लोग लायी हैं, इसलिए लिये लेता हूं। सौ के चार आने के हिसाब से।"

"यह क्या शेट्टी जी ? ऐसा क्यों कह रहे हैं ? हमने सिर पर ढोकर, गूंथकर, सुखाकर और उसके बाद बनाई हैं। इतनी मेहनत की तो चार आना कहना, कहां का धर्म है ?"

"धर्म-कर्म की बात नहीं। चाहें तो और कहीं पूछकर देख लीजिए।"

दूसरी दुकानों पर पूछा तो सौ के तीन आने बताये। पहली दुकान वाले को ही दोनों गाड़ियां पत्तल की बेचकर रकम ली और आपस में बांट ली। गाड़ी-भाड़े के नंजम्मा ने साढ़े तीन रुपये और सर्वक्का ने डेढ़ रुपये दिये। नंजम्मा ने अपने और बेटी के लिए तीन-तीन रुपये की दो साड़ियां, रामण्णा के लिए एक कमीज, विश्व के लिए एक कमीज और एक चड्डी खरीदी। सब निकालकर अब उसके पास सैंतीस रुपये बचे थे। साथ में जो रोटियां लायी थीं, वही खायीं और गांव के लिए लौट पड़ी। अब एक पल्ला मडुआ का भाव बीस तक चढ़ गया था। इस इस हिसाब से सैंतीस रुपये का मडुआ कितने दिन चलेगा ?"

[4]

उसी समय सर्वत्र प्लेग-मैया आ गयीं। इस बार झाबेबाली मारी मां नहीं आई। किसी को उसके आगमन का संकेत भी नहीं मिला। अचानक फैला यह सांसर्गिक रोग गांवों में आहुतियां लेने लगा। आसपास के हर गांव में चूहा गिरने की खबर मिलती। कई गांवों में तो चूहे गिरने की बात सुनने से पहले ही लोग मर गये। रामसंद्र में भी कुछ लोगों के गांठ निकल आयीं। सबने जल्दी से गांव खाली कर दिया। जिनके अपने खेत या बाड़ी थी, उन्होने वहां झोंपड़ी कर ली। सारी जमीन से हाथ धोयी बैठी नंजम्मा गंगम्मा, सर्वक्का आदि ग्रामदेवी के मंदिर की शरणागत हो गयीं।

नये साल में बारिश न होने पर भी पलाश के पौधे अंकुरित हुए, लेकिन अच्छे

पत्ते नहीं आये। पुराने पत्ते चमड़े की तरह सख्त बन गये थे। उन्हें तोड़कर लगा नहीं सकते थे। झोपड़ी में बैठकर भी क्या करते? तिपटूर में बेची गई पत्तलों से प्राप्त रुपयों में जो मड़ुआ खरीदा गया था, अब वह भी खत्म होने को आया। तीन दिन बाद तो चूल्हा भी नहीं जला सकेंगे। कुछ लोग तो रात में दूसरों के नारियल के बगीचों में घुस जाते और पेड़ पर चढ़कर कच्चा या पक्का जो मिले, नारियल तोड़ लेते और अपने पेट की ज्वाला शांत करते। यह देखकर बाड़ी के मालिकों ने रात में पहरा देना शुरू कर दिया, तो उन पर पत्थर बरसने लगे। जान बचाने के विचार से उन्होंने पहरा देना ही छोड़ दिया। जिनके पास पेट की ज्वाला शांत करने का और कोई चारा नहीं था, उनके घरों का सोना-चांदी कार्शिबड्डी महाजन की दुकान में पहुंचने लगा। इसके बाद तो पीतल-तांबे के बर्तन तक एक-एक महाजन के पास पहुंच गये।

नंजम्मा के घर में मड़ुआ खत्म हो गया। दूसरे दिन रामण्णा ने हठ किया, लेकिन उपवास ही स्कूल चला गया। उसका स्कूल कंबनकेरे गांव के बाहर दो फर्लांग दूर ऊंची टेकड़ी पर था, इसलिए उसे छोड़ने का कोई कारण ही नहीं था। पढ़ने-लिखने में रामण्णा में बड़ा लगाव और उत्साह था। पुस्तक के अगले पाठों को वह अपने आप पढ़ लिया करता था। पुस्तक में दिये गये उदाहरणों को देखकर ही अगले अध्याय के गणित हल कर लिया करता था। अंग्रेजी पुस्तक का प्रथम भाग कंठस्थ हो गया था। एक दिन भी स्कूल से अनुपस्थित नहीं रहा और न ही उसे वैसा करना अच्छा लगता था। आज उपवास ही, पांच मील चलकर स्कूल में पहुंचा और भूख से भ्रमित-सा बैठा रहा। डेढ़ बजे गांव के लड़के अपनी-अपनी झोपड़ियों पर खाने चले गये। तालाब के सूखे हिस्से में एक गहरा कुआं खोदा हुआ था। रामण्णा स्कूल के पिछवाड़े पेड़ के नीचे सिमटकर बैठ गया।

बेटे के भूखे ही स्कूल जाने से नंजम्मा बेहद बेचैनी महसूस कर रही थी। पार्वती मुंह लटकाये एक ओर बैठी थी तो विश्व खाने के लिए मचलकर मां का पल्ला खींच रहा था। उपवासे एक दिन रह सकते हैं, दो दिन रह सकते हैं, लेकिन इस तरह कितने दिन रह सकते हैं! अभी तक नंजम्मा ने कार्शिबड्डी महाजन के पास एक भी पात्र गिरवी नहीं रखा था। वैसे भी जिन पात्रों को खरीदने में बीस रुपये लगते थे, उन पर वह दो रुपया देता था। मड़ुए के दाम भी बढ़ गये। रुपये में दो सेर मिल रहा था। दो रुपये का चार सेर मड़ुआ एक दिन, और अधिक से अधिक

डेढ़ दिन चल सकता था। इसके बाद फिर दूसरा बर्तन गिरवी रखना। इस प्रकार पंद्रह-बीस दिनों में ही घर के सारे बर्तन बेचकर भी उपवासे से छुटकारा नहीं मिलेगा! भगवान समय को ऐसे ही नहीं रखेगा। मडुआ मिलने का वक्त भी आयेगा। लेकिन बेचे गये पात्र फिर से खरीदना, संभव नहीं होगा और ये तो अक्कम्मा के दिये हुए हैं!

—नंजम्मा का दिमाग इसी तरह सोच रहा था। लेकिन पेट और दिमाग के बीच काफी दूरी है। पार्वती सो गयी थी। रो-रोकर, ऊधम मचाकर थकने के बाद विश्व, मां को तंग कर बिना बोले एक कोने में पड़ गया था। उसके पेट में भी भूख की आग उठने लगी थी। यजमानजी दोपहर से कहीं गये हुए थे। शायद अपनी मां के यहां गये होंगे और वहीं कुछ निगलने को मिल गया होगा। गंगम्मा के पास अब भी मडुआ बचा हुआ था। मां-बेटे दो ही प्राणी थे और पहले का इकट्ठा किया हुआ काफी रखा था। वे पिछले तीन महीने में दो बार नहर सिंचित खेती-प्रदेश की ओर भिक्षाटन के लिए गये थे और चावल की गठरी लाये थे। रामण्णा स्कूल से अभी तक नहीं लौटा था। काफी अंधेरा हो चुका था। "लड़का खाली पेट गया था। चलने में असमर्थ हो कहीं गिर न पड़ा हो! कंबनकेरे रास्ते पर कुछ दूर तक जाकर देखना चाहिए। लेकिन मैं अकेली औरत अंधेरे में कैसे जाऊं? पार्वती उठने में असमर्थ थी, भूखी जो सोयी थी। उसे साथ ले जाऊं तो झोपड़ी में विश्व अकेला कैसे रहेगा? इतनी रात गये झोपड़ी का दरवाजा बंद करके जाना भी खतरे से खाली नहीं! कोई घुसकर बर्तन उठाकर ले जा सकता है। ऐसे दिनों में कोई भी चीज चोरी जा सकती है।'—वह सोचती रही।

पार्वती और विश्व को घर छोड़, 'यहीं तालाब तक जाकर आती हूं' सोचकर वह बाहर निकली। कंबनकेरे मार्ग में तीन फर्लांग की दूरी पर आम का पुराना पेड़ था। न जाने किस जमाने का था! कोटरों भर उल्लू थे। रात में उनकी आवाज इनकी झोपड़ी तक सुनाई देती। इनकी 'गुग्गू-गू' गुद्ली ला' की आवाज अपशकुन की सूचक समझी जाती। जिसके घर की छत पर बैठकर ये 'गुद्ली ला' बोल दें, उसके घर का छोटा बच्चा या लड़का मर जाता। बड़े मरते हैं तो जलाते हैं और छोटों को गाड़ा जाता है। कोई ब्राह्मणेत्तर मरे, तो उसे गाड़ते हैं। इसलिए उल्लू अगर ब्राह्मणों की छत बैठकर बोले तो केवल लड़के मरते हैं और अन्यों की छत पर बोले तो किसी की भी मौत का सूचक हो सकता है। उस पेड़ के पास

आने पर नंजम्मा को डर लगने लगा। लौट चलने का विचार भी आया। लेकिन रामण्णा इसी पेड़ के नीचे से गुजरता है, वह दस साल का लड़का कैसे साहस करेगा?

वह न तो वापस आ सकती थी और न ही वहां रह सकती थी, इसलिए दो फर्लांग और चली। रास्ते पर एक बड़ा पत्थर था। उस पर चढ़कर, जिस मार्ग से रामण्णा को आना था, उसी ओर ताकते हुए खड़ी हो गयी। आधा घंटा बीत गया, पर वह नहीं दिखा। उसे डर लगने लगा। हरिश्चंद्र की कहानी याद हो आई। चंद्रमति इसी तरह रोहिताश्व की बाट जोह रही थी लेकिन रोहिताश्व तो सांप के डसने से मरा पड़ा था। जब उसके साथियों से खबर मिली तो चंद्रमति न जाने कितनी जोरों से रोयी होगी! नंजम्मा भी रो पड़ी। कंबनकेरे मार्ग में भी बमीठे हैं। कव्बळ्ळी टेकड़ी के उस पार, बल्मीक टीले के बगल से ही रास्ता जाता है। सारे टीले पर बमीठों के सींग ही खड़े हैं। कहते हैं कि आसपास के नालों में मेंढ़क पकड़ने के लिए आने वाले सांप उन बमीठों में रहते हैं। लौटते समय लड़के ने कहीं देखते हुए किसी सांप को ठोकर मार दी हो! या बमीठे से मुंह बाहर निकाले सांप को कंकड़ मार कर छेड़ दिया हो! हे भगवान, ऐसा कुछ न हो। रामण्णा होशियार लड़का है। ऐसा मजाक नहीं करता। मस्ती करना तो विश्व की आदत है।

यह सब सोचती हुई वह कुछ देर तक ऐसे खड़ी रही। फिर सोचने लगी कि झोपड़ी पर जा कर किसी पुरुष को ढूढ़ने भेजूं और मैं भी साथ चलूं। पति का दोपहर से पता नहीं था। झोपड़ी पर लौटने के लिए वह मुड़ गयी। फिर कुछ देर और इंतजार करनी चाही। दृष्टि राह पर ही टिकी थी। जहां वह खड़ी थी, वह जगह भी अच्छी नहीं थी। तीन साल पहले चन्नेहळ्ळी के पटेल शिद्दगौड़ का खून इसी पत्थर के बगल में हुआ था। सुना था कि उसे पत्थर के ऊपर लिटाकर सिर पर गोल पत्थरों से प्रहार कर मार डाला गया था और शिद्दगौड़, पिशाच बनकर अंधेरे में इसी पत्थर के पास चक्कर काटता रहता है। एक बार तो तिपटूर से गाड़ी में आनेवालों ने भी उसे जोर से रोते हुए सुना था।

नंजम्मा डर गयीं। सारा शरीर कांप उठा। लौटने की सोची, लेकिन बेटा अभी तक घर नहीं आया है। जब मैं ही डरने लगूं तो छोटा बालक अकेले कैसे आ पायेगा? यह विचार आने पर वह फिर बाट जोहती खड़ी रही। लेकिन अंधेरे में दृष्टि दूर तक नहीं जा पाती थी।

कहते हैं कि पिशाच एक ही जगह नहीं ठहरता, आसपास घूमता रहता है। यह

विचार भी आया कि यहां से कंबनकेरे की ओर जाकर अकेले आते हुए रामण्णा को पकड़ लिया हो तो ? लेकिन मन ने तुरंत सांत्वना दी—पिशाच-विशाच सब भूठ है। मेरे पिता और कल्लेश कितना भी अंधेरा क्यों हो, अकेले ही तीस-चालीस मील नहीं चलते थे क्या ? पिशाच होता तो उन्हें क्यों कुछ नहीं होता ? मन को इन विचारों से तसल्ली मिलने पर भी, उसे यह स्मरण होने पर कि रामण्णा तो छोटा बालक है, भय ने घेर लिया।

इतने में कोई आता दिखायी दिया। हां, आदमी ही था। लेकिन उसके सिर पर कोई बड़ी गठरी-सी लगी। स्कूल गये बालक के सिर पर गठरी कहां से आती ! वह रामण्णा नहीं है, कोई और होगा। लेकिन वह आदमी तो उस मार्ग को छोड़कर बाड़ी की ओर मुड़ गया। फिर कुछ देखकर, डरा-सा जल्दी-जल्दी चलने लगा। साहस बटोरकर नंजम्मा ने पुकारा—"कौन है ?" लेकिन वह कुछ नहीं बोला। दुबारा पुकारा "कौन उस तरफ जा रहा है ?" तो वह वहीं रुक गया। "कौन, मां ?" उसने पूछा तो नंजम्मा समभ गयी कि रामण्णा ही है।

"मैं हूं बेटे। कंकड़-कांटे भरे उस रास्ते से कहां जा रहा है ?"

रामण्णा पास आया। उसके सिर पर बड़े-बड़े कटहल थे। खजूर की डंडी में बांधे उन कटहलों को अपनी लुंगी की जूड़ी बनाकर सिर पर रख लिया था।

"उस तरफ क्यों गया मुन्ने ?" मां ने पूछा।

"वहां दूर से कुछ काला-सा दिखाई पड़ा था। वहां पत्थर के पास ही चन्नेनहळ्ळी शिद्दगौड़ का खून हुआ था न ! कहते हैं न कि वह पिशाच बन गया है। यह सोच कर कि पिशाच ही है, उस तरफ मुड़ गया था। मैं थोड़े ही जानता था कि तुम हो।"

"इन्हें कहां से लाया ? ला दे, मैं ले चलती हूं।" और उससे लेकर अपने सिर पर रख लिया।

"वहां रास्ते में गौडनकोप्पला मिलता है न, उसकी एक बाड़ी में कच्चे कटहल दिखे। जानबूभ कर अंधेरा होने के बाद स्कूल से निकला। धीरे से बाड़ा तोड़कर घुसा और इन तीन कटहलों को तोड़ लाया। कंबनकेरे के पास खजूर की डंठी काट कर थैली में डाल दिया था। भाजी बनाकर खायेंगे तो पेट भरेगा न, मां !"

वह समभ न पायी कि बेटे की हिम्मत और अक्ल को क्या कहे ! उसने बच्चों को सिखाया है कि चोरी करना, भूठ बोलना पाप है। रामण्णा मिडिल स्कूल में पढ़ता है। वह पाप पुण्य से अनभिज्ञ नहीं। इस समय वह बेटे को समभाने नहीं

आई थी। दोनों ने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये। घर में बच्चे भूखे थे। रामण्णा दस मील चल चुका था। कच्चे कटहल की भाजी ही पेट का आधार बनेगी।

नंजम्मा के घर लौटने तक यजमान आकर, बिस्तर बिछा सोये खुर्राटे ले रहे थे। उसे इतना अनुभव था कि पेट भरा न होता तो खुर्राटे कैसे भरते ? यह जानकारी रामण्णा को भी थी। दोनों में से कोई भी नहीं बोला। उन्हें उठाया भी नहीं। पार्वती और विश्व दोनों सिकुड़े हुए नींद ले रहे थे। हसुए से डंठलों को काटकर नंजम्मा ने तीनों कच्चे कटहलों को जल्दी-जल्दी काटा। छिलके और डंठल निकालकर, कुछ कड़क बीजों को पकाने रखा। उसमें मुट्ठी भर पिसी मिर्च डाली।

पकते समय रामण्णा ने धीरे से पूछा, "मां, किसानों के घर की रोटी खाने से क्या पाप लगता है ?"

"क्यों मुन्ने ?"

"दोपहर को खाने के लिए कुछ नहीं था। पेड़ के नीचे बैठा था कि मेरा एक मित्र आया। कंगलापुर का नरसेगौड़। उसकी रोटी बची थी। उसने मुझसे रोटी न खाने का कारण पूछा, लेकिन मैंने नहीं बताया। तब उसने ही कहा 'मेरी रोटी खाने से कुछ नहीं होगा और मैं किसी से कहूंगा भी नहीं, लो खा लो।' उसने एक रोटी और तिल की चटनी दे दी। हथेली-सी मोटी-रोटी थी। मैं खा गया। उसने हाथ मिलाकर वचन दिया कि किसी से नहीं कहेगा।"

मां कुछ नहीं बोली। रामण्णा ने फिर पूछा—"बता न मां, यह पाप है ? भगवान कुछ नहीं करेगा न ?" अब नंजम्मा बोली—"विश्व, महादेवय्यजी की थाली में नहीं खाता था क्या ?"

"वह बालक है, मैं बड़ा हूं न ?"

वह समझ न पायी कि बेटे के इस प्रश्न का क्या उत्तर दिया जाये। जो पाप-पुण्य बच्चों के लिए नहीं है, वह बड़ों के लिए कैसे और क्यों ? इस प्रश्न पर मन सोच रहा था। रामण्णा ने फिर नहीं पूछा। उसने कटहल के टुकड़े पकने के बाद उसमें नमक डालकर उन्हें चूल्हे से उतार दिया। पार्वती और विश्व को जगाया। "कटहल की भाजी खायेंगे ?" पति से पूछा तो उन्नींदी आंखों में ही कह दिया—"मुझे कुछ नहीं चाहिए" और फिर खुर्राटे भरने लगे। न जाने भाजी कितनी स्वादिष्ट थी कि बच्चे पेट भर कर खा गये और मां ने भी खूब खायी। रात को

लेटने के बाद वह रामण्णा से बोली—"अब कभी उस बाड़ी में मत जाना। चोरी होने का पता चलने पर वे चोर को पकड़ने की ताक में रहते हैं।"

[5]

जैसे-जैसे आहार का हाहाकार बढ़ा, वैसे-वैसे समस्या हल करने का प्रयास भी बढ़ा। तालाब सूखे थे, उसके आसपास के मैदान की काली मिट्टी फट गयी थी। कोली माटा ने खोज की कि तालाब तट की मिट्टी खोदने पर शतमूली मिलती है। एक दिन वह उसे ले आया। बस, फिर क्या था। सारा गांव उस ओर लपक पड़ा। हर एक ने एक-एक जगह खोदनी शुरू कर दी। अंगूठे जितने मोटे कंद की तरह एक इधर तो एक उधर मिल जाती थी। सुबह से शाम तक एक आदमी मिट्टी में खोजे, तो चार आदमियों लायक पर्याप्त कंद मिल जाते थे। कुदाली, टोकरी लेकर नंजम्मा और पार्वती भी साथ में निकल पड़ीं। पत्तल बनाने के बदले अब यह काम। सिर पर आंचल ओढ़ लेने पर भी कड़ी धूप शरीर को झुलसा देती थी। पहले दिन कंद लाकर, कुएं के पानी से रगड़-रगड़कर साफ किया और नमक-मिर्च डालकर पकाया तो उसकी बदबू खाने ही नहीं देती थी। लेकिन पेट भी नहीं मानता था। खैर, जो पकाया, उसमें से कुछ भी नही बचा। मां-बेटी ने निश्चय किया कि कल सुबह सूर्य चढ़ने से पहले ही निकल जायेंगी।

अगले दिन ये निकलीं तो सर्वक्का भी आ मिली। तीनों मिट्टी खोद रही थीं कि नंजम्मा बोली—"देखिए, महादेवय्यजी चले गये, इसलिए गांव की यह दशा हुई। इसीलिए कहते हैं कि साधु-संतों का शाप अच्छा नहीं है।"

"किन्हीं चार चुड़ैलों ने ऐसा कहा तो गांव में अनिष्ट छा गया।"

"कहते हैं कि आपके लोगों ने ही उन्हें ऐसा कहा था।"

"नंजम्माजी, आपको अब तक भी भीतरी बात मालूम नहीं है। कहते हैं हमारे घरवाले ने ही ऐसा कहने के लिए हमारे लोगों को सिखाया था। ऐसे वकीली प्वाइंट तो ये ही जानते हैं न!"

"देखिए, मुझे लगता है कि वे फिर से आ भी सकते हैं। मंदिर में अभी भी बर्तन, मडुआ, दाल मिर्च आदि उनका रखा हुआ है। चाबी भी उन्हीं के पास है।"

सर्वक्का सात-आठ दिन उनके साथ कंद खोदने आयी। एक दिन वही छिपा-

कर नंजम्मा की झोंपड़ी में पांच सेर मड़ुआ और एक सेर चावल ले आयी। बोली—"किसी से मत कहिएगा नंजम्माजी, वे दो बोरा मड़ुआ, पच्चीस सेर चावल, काफी के बीज आदि लाये हैं। कहते हैं कि कोर्ट के काम से तिपटूर गये थे।"

इस मड़ुए को रखकर करीने से उपयोग करें तो स्कूल जाने वाला रामण्णा और छोटा लड़का विश्व, दोनों को सुबह के समय रोटी बनाकर दी जा सकती है। कंद खाकर पेट जलने लगा है। कम-से-कम एक दिन भात बनाकर इमली के झोल के साथ खाना चाहिए। सर्वक्का की सहानुभूति से नंजम्मा को खुशी हुई। रेवण्णशेट्टी में कितने ही दुर्गुण क्यों न हों, समय आने पर अक्ल से काम लेता है। किसी कोर्ट के ग्राहक को बात के जाल में फंसाया होगा। नहीं तो दो बोरा मड़ुआ, पच्चीस सेर चावल, आदि लाने के लिए रुपये कहां से आते? लेकिन उसकी सारी कमाई घर को ले डूबने वाली है—ऐसा सोचकर नंजम्मा मड़ुआ पीसने बैठ गयी।

पांच-छह दिन बाद गांव के वाणियों और गड़रियों के प्रमुखों तथा अन्य मतावलंबियों के बीच झगड़ा होगया। बहुत से लोग जानते थे कि महादेवय्यजी मंदिरके अपने कमरे में मड़ुआ, दाल आदि छोड़ गये है। सहज ही नंजम्मा ने सर्वक्का को बताया था और बाद में सर्वक्का ने अपने पति से कहा। उसके मन में यह आशा अवश्य रही होगी कि वह सारा अनाज अपने घर आ जाये। ऐसे मामलों में रेवण्णशेट्टी की अक्ल बड़ी काम करती थी। उसने सोचा कि एक दिन मंदिर में जाकर, उस कमरे का ताला तोड़कर सारा अनाज मार लेना चाहिए। लेकिन खाली किये गये गांव में अकेले जाने से डरता था। संकुल देवी गांव भर में चक्कर काट रही थी और इस कार्य के लिए तो रात के समय जाना पड़ेगा। ईश्वर मंदिर के भीतरी आंगन में घुसकर ताला तोड़ना चाहिए। सुंकल देवी ईश्वर की पत्नी पार्वती ही है न? उसके मंदिर में जाने पर वह चुप नहीं रहेगी। खून-उल्टी कराकर ही छोड़ेगी। लेकिन वहां रखे अनाज की लालसा को तिलांजलि भी नहीं दे सकता था। यह सोचकर कि एक से भले दो, अपनी योजना अपने मुद्दई पुट्टण्णशेट्टी को बताई। पुट्टण्णशेट्टी उस दिन रात को अपनी पत्नी के कानों में फुसफुसाया। इस तरह सब वाणियों को मालूम हो गया। बात यहां तक पहुंची कि 'महादेवय्यजी हमारी जाति के हैं, अनाज को हम सब बांट लें।' इसकी खबर गड़रियों के प्रमुख को लगकर, किसान, गड़रिये, जुलाहे, कोली—अर्थात सारे गांव में फैल गयी।

"अय्याजी केवल वाणियों के घरों से ही भिक्षा नहीं लेते थे, हमारी जातिवालों ने भी दान दिया है। हमें भी हिस्सा मिलना चाहिए।" हरेक ने जिद्द की। यह जिद्द झगड़े में बदल गयी और हाथापाई शुरू हो गयी। अंत में गांव के पटेल शिवेगौड़ ने न्याय निर्णय सुनाया कि मडुए को समान रूप से सब में बांटा जाये। सबको मानना पड़ा। हरेक को दो-दो सेर मडुआ इससे मिलना था।

एक दिन दोपहर को हर घर से एक आदमी के हिसाब से लोग गांव में गये। मंदिर में प्रविष्ट हुए तो देखा कि महादेवय्यजी के कमरे में ताला ही नहीं था। भीतर देखा तो न मडुए के बोरे हैं और न दाल की कुठिया ही और एक मटके में जो मिर्ची थी, वह भी गायब थी। केवल एल्यूमिनियम के बर्तन रह गये थे।

"मेरे बेटे किसी ने साफ कर दिया है"—सबका यह निष्कर्ष तो था लेकिन वह कौन बेटा ऐसा है, इसका पता न लगा सके। निराश होकर सब लौट पड़े।

तालाब की शतमूली खत्म हो गयी। तालाब के आसपास के मैदान की अंगुली-भर जगह भी बाकी नहीं बची थी जिसे लोगों ने न खोदा हो। इतने में कहते हैं, कि किसी ने केतकी के पौधे को काटकर उसका कंद लाकर पकाकर खा लिया। जब पता लगा कि वह भी शतमूली के समान है, तो सारा गांव आसपास की केतकी के पौधों को निर्मूल करने निकल पड़ा। शतमूल को हासिल करने के लिए तो खोद-खोदकर बहुत खोज करनी पड़ती थी, लेकिन केतकी कंद मोटा होने के कारण उतना प्रयत्न करने की जरूरत नहीं थी। इसलिए सबने पेट भर खाया।

खाने के दूसरे ही दिन गांवभर को दस्त लगने शुरू हो गये। पहले ही पेट खाली थे और उस पर दस्त। मानो वे गिरने लगे। गांव के सोलह व्यक्ति काल कवलित हो गये। दूसरों ने दस्त का कारण जानकर केतकी कंद काटना छोड़ दिया।

[6]

एक दिन नंजम्मा, पार्वती और सर्वक्का, तीनों तालाब के पास शतमूली ढूंढ़ रही थीं कि पार्वती को सिर दर्द शुरू हो गया। सिर पर आंचल ओढ़ लेने पर भी धूप का ताप न सह सकी। "बेटी, तू घर जा, मैं और नंजम्मा थोड़ी देर मेंआती हैं।" सर्वक्का बोली। नंजम्मा ने भी कहा तो पार्वती घर की ओर चल दी।

गर्मी से फटी पड़ी तालाब तट की मिट्टी पर चलती हुई, मंदिर के बगल से

होते हुए चढ़ान पर चलकर वह घर की ओर आ रही थी कि चढ़ान के छोर पर नरसी मिली। दिशा ही बता रही थी कि वह पानी की तरफ गयी थी। उसने पार्वती से पूछा—"शतमूली निकालकर लायी बेटी ?"

"अभी नहीं जी, सिर दर्द करने लगा तो मैं आ गयी।"

"चलो, मेरी दुकान पर चलें। थोड़ा चना देती हूं, खा लो।"

पार्वती कुछ नहीं बोली। घर की ओर मुड़ने की जगह आ गयी तो चुपचाप चल पड़ी। नरसी बोली ही थी कि 'शरमाओ मत, हमारे लोगों के चने खाने से कुछ नहीं होगा', झोपड़ी के पास खेल रहा विश्व दीदी के पास आ गया। नरसी ने फिर चने की बात की तो वह भी हठ करने लगा—"चलो दीदी, लेकर आयेंगे।" दोनों दुकान पर आये। नरसी ने दोनों को दो-दो मुट्ठी तला चना और एक-एक टुकड़ा गुड़ दिया। विश्व अपना हिस्सा लेकर खाने लगा। पार्वती ने थोड़े चने मुंह में डाले कि उसकी आंखों में आंसू भर आये। "क्यों रो रही है बेटी ?" नरसी के इस प्रश्न से उसके आंसू बढ़ गये और वह सिसक-सिसकर रोने लगी। नरसी पास आकर पीठ पर हाथ फेर कर पूछने पर बोली—"हमारा रामण्णा भूखा ही कंबनकेरे गया है।"

नरसी को दुख हुआ और दो मुट्ठी चना, एक टुकड़ा गुड़ पार्वती के पल्लू में डालकर बोली—"उसके आने पर उसे दे देना।" पार्वती के आंसू थमे। "हम जाते हैं जी", कहकर विश्व का हाथ पकड़कर झोपड़ी की ओर चल दी। ताला खोलकर अंदर आई और चटाई बिछाकर लेटने के बाद वह सोचने लगी—इससे पहले मैंने कभी नरसी से बात नहीं की। कहते हैं वह बुरी है। आज उसी ने बुलाकर चने दिये। मुझे खाना नहीं चाहिए था। मां को मालूम होने पर वह डांटेगी। निश्चय किया कि मां को नहीं बताना चाहिए। लेकिन रामण्णा के लिए दिये हुए गुड़-चने की याद हो आयी। उसके आकर पूछने पर कि यह कहां से आया तो क्या कहेगी ? यह विश्व तो मां के आते ही कह देगा। अब क्या करना चाहिए ?—आधे घंटे तक सोचती रही। अंत में एक उपाय सूझा। पल्लू में जो गुड़-चना था, वह खोलकर विश्व को देती हुई बोली—"ले, इसे तू ही खा ले।"

"रामण्णा को ?" उसने पूछा।

"उसके आने तक मां कंद पका देगी। उसे गुड़-चना अच्छा नहीं लगता, तू ही खा ले।"

विश्व के 'थोड़ा तुम, थोड़ा मैं' कहने पर भी न मानकर उसे ही खिला दिया। लोटे में पानी भरकर उसके पीने के बाद, पास बिठाकर बोली—"देख, अगर मां को पता लग गया कि हमने नरसी की दुकान से लाकर खाया है, तो मारेगी। तू किसी से न कहना।"

"क्यों मारेगी ?"

"क्यों ! सब को कहते सुना नहीं कि नरसी खराब औरत है ? तू किसी से मत कहना।"

"हुं !"

"तो कसम खाओ।"

विश्व ने एक बार दीदी की हथेली पर अपनी हथेली मारकर, चिमटी लेकर वचन दिया। लेकिन इससे उसे पूर्ण विश्वास नहीं हुआ। उसे पास के ग्राम देवी काली के मंदिर ले जाकर, बंद द्वार की देहली स्पर्श कराकर कसम दिलाकर डराया—"अब तूने देवी की कसम खायी है, तू कहेगा तो मंदिर में रहने वाला 'व्याताळ' (भैरव) आकर तुझे निगल लेगा।"

"मैं नहीं कहूंगा, मैं नहीं जानता !" उसने कुछ बिगड़कर कहा तो वह चुप हो गयी।

शाम को मां आई। कंद धोकर पकाने लगी। सूर्यास्त बाद रामण्णा आया। चेन्निगराय जो कहीं गये हुए थे। वे भी लौट आये थे, कंद खाने बैठे तो विश्व आधे में ही न कहकर उठ गया। "क्यों रे, क्या खाया है ?" मां ने पूछा तो पार्वती का तो मानो दम घुटने लगा।

"आज अच्छा नहीं है मां, बास आती है।" और सबके खा लेने के बाद वह दीदी को घर के बाहर ले जाकर बोला—"मैंने बताया ?"

"नहीं, तू होशियार है।" उसकी तारीफ करके वह भीतर आ गयी।

[7]

आसपास का प्लेग रुकने से सब लोग झोपड़ियां छोड़कर वापस अपने गांव लौट आये। रामसंद्र वाले भी आ गये। गांव के बाहर और अंदर रहने में कोई बड़ा अंतर नहीं पड़ता था। वहां भी भूखे थे, यहां भी भूखे।

नंजम्मा को एक उपाय सूझा। अप्पण्णय्या ने झोपड़ी बांधी थी, लेकिन बाद में उसमें आग लगाकर जला डाली थी, वह जगह गुंडेगौड़जी की थी। उस साल सर्वत्र फसल नहीं हुई थी इसलिए दुर्भिक्ष के कारण नहर से सींचे हुए खेतों को छोड़कर, अन्य खेतों का लगान सरकार ने माफ कर दिया था। उस वर्ष वसूली के लिए कुरुबरहळ्ळी नहीं गये थे। अब साल के वर्षासन से काट देने के लिए गुंडेगौड़जी द्वारा दिये गये और दिलाये गये अग्रिम रुपयों का क्या होगा ?

चेन्निगराय पिछले आठ दिनों से गांव में नहीं थे। कोई नहीं जानता था कि कहां गये ?

नंजम्मा कुरूबरहळ्ळी गयी। गुंडेगौड़जी से बोली—"गौड़जी, इस साल लगान नहीं मिलेगा। आपके रुपये अगले साल के हिसाब में लिख लेती हूं।"

"अच्छा, छोड़ो बहन। अगर मैं अब रुपये मागूंगा तो तुम कहां से लाकर दोगी ?"

"और एक बात। आपकी बाड़ी है न ? उसमें बाड़ लगवाकर मैं थोड़ी तरकारी तैयार करूंगी।"

"कर लो। मेरा क्या जाता है।"

घर आयी हुई सुहागिन को गौड़जी ने एक नारियल, एक सेर मडुए का आटा देकर बिदा किया। उन्हें और भावी पीढ़ी को आशीष देती हुई नंजम्मा गांव लौटते समय मन में सोचने लगी—इस साल का लगान तो सरकार ने माफ कर दिया, लेकिन पटवारी का वर्षासन तो मिलेगा ही। वर्षासन की पूरी रकम अगर यजमानजी के हाथ लग गयी तो खत्म होने तक वे तिपटूर का होटल नहीं छोड़ेंगे। ऐसा कुछ करना चाहिए कि रुपये उन्हें न मिलें। किसकी मदद ली जाय ? अंत में इस निश्चय पर पहुंची कि कंबनकेरे जाकर इलाकेदारजी को हाथ जोड़ना होगा और कोई मदद करने में समर्थ भी नहीं होगा।

यजमानजी आठ दिनों से गांव में नहीं थे। गंगम्मा, अप्पण्णय्या भी नहीं थे। वे नहर से सींची खेती वालों के यहां भिक्षाटन के लिए गये थे। शायद यह सोचकर वे भी मां और भाई के साथ हो गये होंगे कि रोज आराम से खाना मिलेगा !

दूसरे दिन रामण्णा को लेकर वह कंबनकेरे गयी। मां-बेटे दोनों ने इलाकेदार के घर पहुंच, हाथ जोड़ नमस्कार किया। उन्होंने पूछा—"कैसे आना हुआ बहन ? इस साल न वसूली है और न मर्दुमशुमारी ही। देखना है अगले साल क्या होता है ?"

नंजम्मा ने अपने पति के बारे में बताया। हर साल कुम्बरहळ्ळी के पटेल गुंडेगौड़जी और अन्य लोगों के लगान वर्षासन की रकम के बदले लिखवा देने की बात बताकर इस साल लगान माफी के कारण उत्पन्न समस्या पर प्रकाश डाला।

"देख बहन, चेन्निगराय की सारी कहानी मुझे मालूम है। इस इलाके में ऐसा कोई पटवारी नहीं है जो उनके बारे में बात न करता हो। लेकिन कानूनन मैं कुछ नहीं कर सकता। साहेब से बात करके देखूंगा।"

"आप कुछ-न-कुछ करके मेरे बच्चों का खाना बचा लें।"

इलाकेदार की पत्नी अपने पति से बोली—"आज आप तिपटूर जा ही रहे हैं। इन्हें भी साथ ले जायें और साहेब से सारी बात आप ही बता दें। वे भी चेन्निगराय के चरित्र को समझ लें।"

उन्होंने बताया कि ग्यारह बजे की मुदलियर मोटर से वह उनके साथ तिपटूर चले। बड़ी ही शर्मिंदा होकर नंजम्मा ने कहा कि मोटर की टिकट के लिए पैसे नहीं हैं, तो वे बोले—"परवाह नहीं। आपका चार आना, लड़के का आधा टिकट चार्ज करने के लिए कह देता हूं। छह आने मैं दे दूंगा, चलिए।"

मां-बेटे दोनों ने उनके यहां उपमा खायी और काफी पी। फिर मोटर में चढ़े। लगभग बारह बजे तालुका दफ्तर पहुंचे। इलाकेदार ने इलाका-क्लर्क से पूछताछ की तो उसने बताया—"रामसंद्र उपविभाग का वर्षासन दिये आठ दिन हो गये, सर!"

नंजम्मा का दिल धक् से रह गया। इलाकेदार बोले—"अब क्या करें बहन?"

"तो वे इसी गांव में रहेंगे जी! पूरी रकम अब तक भी खर्च नहीं हुई होगी? आप दया करके उन्हें डाटेंगे तो वे दे देंगे।"

इलाका-क्लर्क ने कहा—"सर, वे माधव भट्ट के होटल के पास ही रहते हैं। आप चाहें तो अभी वहां जाइए, वे अंदर भोजन करते हुए मिलेंगे।"

वे तीनों पीपल के ठंडे वृक्ष के पास स्थित होटल में गये। नंजम्मा और रामण्णा दोनों बाहर खड़े रहे। इलाकेदार ने भोजन-कक्ष के दरवाजे पर खड़े होकर झुककर देखा तो क्लर्क की बात सच निकली। पाट पर बैठे, अग्र पंक्ति में आलू, बैंगन, कांदे का सांभर से मिलाया हुआ ढेरों भात खा रहे थे। भात के ढेर के आसपास भाजी, चटनी, अचार, पापड़ आदि थे। इलाकेदारजी ने उनसे कुछ नहीं कहा। बाहर आकर एक कुर्सी पर बैठ गये। आधे घंटे तक नंजम्मा और

रामण्णा बाहर और इलाकेदारजी अंदर इंतजार करते रहे। भोजन कर पटवारीजी बाहर आकर इलाकेदार को देखते ही हाथ जोड़कर बोले—"हाथ जोड़ता हूं हुजूर !"

"कैसे आना हुआ पटवारी जी ?"

"य-य-य-यहीं थोड़ा क-क काम था, हुजूर।"

"पहले उन्हें भोजन के पैसे दीजिए। आपसे थोड़ा काम है।"

चेन्निगराय दस आने देकर बाहर आये तो पत्नी और बेटे खड़े मिले। इलाकेदार बोले—"देखिए, आप पर पुलिस वारंट है। आपको गिरफ्तार करने के लिए भेजा है।"

चेन्निगराय कांप उठे। इलाकेदारजी ने कहा—"किसानों से लगान की अग्रिम रकम लेकर वर्षासन से कटवाने की बात कहकर यहां सारी रकम खर्च कर रहे हैं ! यह अपराध है न ?"

"गलती हुई हुजूर—य-य-यह" कुछ गाली देना चाहते थे लेकिन जबान रोककर—"इसने कहा न हुजूर ?"

"कोई भी बोले। साहब के दफ्तर चलिए।"

"अ-अ-आपके पैरों पड़ता हूं हुजूर, पुलिस को मत दीजिए, मैं इज्जतदार हूं।"

"अच्छा, अब आपके पास कितने रुपये हैं ? निकालकर मुझे दीजिए। इसी क्षण निकालना चाहिए, हुं !"

"देता हूं जी, अंदर हैं।"

"कोई बात नहीं। यहीं देना चाहिए।"

चेन्निगराय ने अपनी कमीज उठाकर, लांग की धोती की गांठ के भीतर हाथ डालकर लंगोट के साथ बंधी एक चिंदी की पोटली निकाली। उसमें दस-दस के छह नोट और पांच का एक नोट था। रुपये गिनकर इलाकेदारजी बोले—"बाकी रुपये कहां हैं ?"

"खर्च हो गये जी !"

"घर में पत्नी-बच्चों को भूखा छोड़कर, यहां सूअर-सा खा रहा है। शर्म नहीं आती तुम्हें ? भूखे कुत्ते को डाल दें तो वह भी ले जाकर अपने बच्चों को देता है। और तुम···" इस तरह डांटकर उन्होंने रुपये नंजम्मा को दिये और चेन्निगराय से कहा—"पटवारी कार्य करना, हिसाब-किताब लिखना तुम्हें नहीं

आता, यह मैं जानता हूं। यह सब बहन ही लिखती है। और कभी ऐसे ही पत्नी-बच्चों से छिपकर वर्षासन लेकर खर्च करोगे तो तुम्हें गिरफ्तार करवा दूंगा। अगर मेरी तब्दीली हुई तो आनेवाले इलाकेदार से कहकर जाऊंगा। साहब से भी कहूंगा।"

चेन्निगराय रास्ते पर ही झुककर, इलाकेदार के पैर पकड़कर कांपते हुए बोले—"साहब से मत कहिए जी, मैं गरीब हूं।" "बहन, बस चार बजे की है। तब तक आपको कुछ सामान खरीदना हो तो खरीद लीजिए। मुझे तालुका दफ्तर जाना है। मैं भी उसी बस में आता हूं।" इलाकेदार जी कहकर चले गये। अपमानित हुए-से चेन्निगराय पीपल के चौपाल पर सिर पकड़े बैठ गये। रामण्णा बोला—"मां, मैंने होटल में कभी खाना नहीं खाया, आज खिलाओ न।"

"मुन्ने, गांव में दीदी और विश्वनाथ भूखे हैं न! सुबह एक-एक रोटी खायी थी!"

वह फिर कुछ नहीं बोला। चेहरे पर निराशा खेल गयी। मां का कलेजा बिंध गया। बेटे को भीतर ले जाकर पूछा—"इस बालक का खाने का क्या लेंगे?" उन्होंने बताया—'छह आने' तो बोली—"इसे खाना दीजिए।" रामण्णा बोला—"मां, तू नहीं खायेगी तो मुझे भी नहीं चाहिए।" वह भी खाने बैठ गयी। महकता खाना बना था। "सारा सामान हो तो घर में हम भी ऐसा बना सकते हैं। तू बड़ा होकर पगार लायेगा न, तब मैं इससे बढ़िया बनाकर दूंगी।" कहती हुई नंजम्मा ने खाना खाया। दोनों का एक रुपया हुआ। बच्चों के लिए चार आने की खारी सेव, चार आने का चना-कुरमुरा, आठ आने का मैसूरपाक बंधवाकर पास की एक बड़ी दुकान में जाकर पूछा तो पता लगा कि एक पल्ला महुए का भाव तीस रुपया। रामसंद्र में तो पचास का भाव चलता है। साठ रुपये देकर दो पल्ला महुआ खरीदा और दुकानदार से निवेदन किया कि उसे बस पर चढ़ा दे। इलाकेदार जी भी उसी बस से आ रहे थे। उनके कहने पर बस वाले ने महुए के बोरों का चार्ज नहीं लिया। चेन्निगराय कहां गये, किसी को पता नहीं चला।

गांव से एक मील दूर रास्ते में बोरों को उतारकर बस आगे बढ़ गयी। रामण्णा गांव जाकर कारिंदे से कहकर एक बैलगाड़ी लिवा लाया। नंजम्मा तब तक बोरों पर नजर रखे रास्ते के किनारे खड़ी रही।

दूसरे दिन चेन्निगराय पैदल ही गांव लौटे। नंजम्मा उनसे कुछ नहीं बोली। रामण्णा ने पिता से व्यंग्य-भरी बातें करनी चाही, तो मां ने "मुन्ने, वे कुछ भी करें, आखिर तेरे बाबा हैं। तू होशियार लड़का है। ऐसा उन्हें नहीं कहना चाहिए।" कहकर चुप करा दिया।

घर में दो पल्ला मड़ुआ आने से सबको इतनी प्रसन्नता हुई मानो कामधेनु ही आ गयी हो। इन उपवास के दिनों में नंजम्मा सूखकर कपास का पौधा बन गयी थी। पार्वती, रामण्णा जो हृष्ट-पुष्ट हो बढ़ रहे थे, अब दुबले बंदर-से हो गयेथे। विश्व पहले से ही शरीर में गोल-गप्पा था। अब उसे देखा नहीं जाता था। यह केवल इनका हाल नहीं था। गांव में लगभग पचहत्तर प्रतिशत लोगों का ऐसा हाल था। शेष पच्चीस प्रतिशत लोगों का हाल कुछ अच्छा था। यद्यपि चेन्निगराय का शरीर तनिक उतरा था, किंतु दूसरों की अपेक्षा अच्छा था।

पेटभर खायें तो सारा मड़ुआ दो महीने में समाप्त हो जायेगा। इसलिए नंजम्मा ने तय किया कि दिन में दो सेर से अधिक खर्च न किया जाये। यह सोचकर कि इस साल अब तक बारिश नहीं हुई, इससे भी बुरा समय आ सकता है, वह पार्वती से बोली—"सुबह एक जैसी सात रोटी बनाओ। सबको एक-एक रोटी। रामण्णा एक स्कूल ले जायेगा। दोपहर को तू और विश्व आधा-आधा खा लेना। फिर रात तक कुछ नहीं। रात के लिए एक सेर मड़ुआ पीसकर आटा डालकर एक ही तरह के पांच लोंदे बना। कोई चाहे या न चाहे, उससे अधिक नहीं मिलेगा।"

इस व्यवस्था से बच्चों का तो पेट भर जाता था। नंजम्मा भूख सहने के लिए तैयार ही थी। चेन्निगराय के पेट की मुसीबत थी। वे पत्नी पर बिगड़े तो रामण्णा ओर पार्वती ने पिता को आड़े हाथों लिया। साथ ही बालक विश्व भी बोला—"आप हमारे बाबा हैं न, चावल ला दीजिए; मैं भी भात खाना चाहता हूं।"

"अरे, उनकी मां की …"कहकर गालियां देते हुए वह तालाब के चढ़ान की ओर निकल गये।

रसोई और अन्य कामों को पूरी तरह पार्वती पर छोड़कर नंजम्मा बगीचे की तैयारी में लग गयी। जब से अप्पण्णय्या ने झोपड़ी जला दी थी, तब से काली दीवारें वैसी ही खड़ी थीं। उन सबको फावड़े से गिराने के पश्चात पूरे बगीचे को

सुबह-शाम कुएं से पानी खींच-खींचकर सींचा। एक साल से प्यासी एक फुट जमीन घड़ा-भर पानी पी जाती थी। मिट्टी नरम हुई तो, वह स्वयं एक ओर से खोदने लगी। अछूत बेलूरा को दो रुपये देकर एक गाड़ी बांस-कांटे मंगवाये। बगीचे के चारों ओर कतार में थूहड़ की डालियां रोपकर और मजबूती के लिए दो तरफ से बांस की खपच्ची लगाकर खजूर की डंठी से बांध दिया। बीच में हल्की-सी बबूल की कांटेदार टहनियां खोंसकर बाड़े को व्यवस्थित कर एक दरवाजा बनाकर ताला लगाने जैसा बना दिया। कंबनकेरे हाट जाकर सेम और बैंगन के बीज लायी और उंगली से गड्ढे करके बो दी। भूख लगने पर कम से कम तरकारी तो बना सकेगी। दोनों बार हरी सब्जी खानी चाहिए। वर्षारानी धोखा दे तो भी कुएं की गंगामैय्या अदृश्य नहीं हुई है—इस हठ से सुबह-शाम पानी खींचकर सींचती रही।

इस बीच सर्वक्का की बेटी रुद्राणी को उल्टी और दस्त शुरू हो गये। दो ही दिनों में बेचारी चल बसी। उसकी उल्टी, दस्त की खबर नंजम्मा को नहीं मिली थी। जब मिली तो नंजम्मा तुरंत सर्वक्का के घर दौड़ी गयी। तब शव की अर्थी चार आदमी चार कंधों पर उठाये लिये जा रहे थे। रेवण्णशेट्टी सिर झुकाये बेटी की अर्थी के पीछे-पीछे चल रहा था। उनकी पद्धति के अनुसार अर्थी के पीछे से एक व्यक्ति मुट्ठी भर-भरकर कुरमुरा फेंकता जा रहा था। सर्वक्का घर की देहली पर माथा मार-मारकर आंसू बहा रही थी। जोर से वह रो नहीं पा रही थी।

रुद्राणी पार्वती से चार साल बड़ी थी। शादी होती तो अब तक दो बच्चों की मां बन जाती। सर्वक्का की तरह ही भरा-पूरा शरीर और घने बाल। पीछे से देखें तो मां-बेटी में कोई अंतर ही नहीं दिखायी देता था। नंजम्मा पास बैठकर सूतक की सर्वक्का का हाथ पकड़कर सांत्वना देने लगी—"माथा मारकर क्या मिलेगा? ऐसा मत कीजिए। क्या हुआ बेटी को?" बेटी को खोई हुई मां की जबान से—"आया था उसके बाप का रोग" निकलने पर भी उस दुख में उसने जबान काट ली।

शव को जलाकर रेवण्णशेट्टी के घर लौटने तक नंजम्मा यहीं बैठी रही। आस-पास कई स्त्री-पुरुष खड़े थे। रेवण्णशेट्टी के आते ही स्त्रियां वहां से अपने-अपने घर ऐसे हटीं जैसे जोर से फेंके गये पत्थर की आवाज मात्र से भयभीत होकर

पक्षी उड़ जाते हैं। पुरुष वहीं रह गये। नंजम्मा भी अपने घर लौट आयी। सर्वक्का का घर तरकारी के बगीचे के पास पड़ता था। दूसरे दिन सर्वक्का को वहीं ले जाकर, बिठाकर नंजम्मा ने सांत्वना की बातें कीं—"किसकी जिंदगी अमर है? जिस दिन यमराज बुलाता है, जाना ही पड़ता है। मां-बेटी, हमारी संतान, हमारे माता-पिता, यह सब केवल माया है।" जितना जानती थी, कहकर समझाने पर भी सर्वक्का का दुख कम नहीं हुआ। वह स्वयं आकर नंजम्मा के बगल में बैठ जाती, लेकिन एक शब्द भी नहीं बोलती। नंजम्मा अपने घर के कुएं से पानी खींचकर एक घड़ा कमरे में रखकर और दूसरा दाहिने हाथ में लेकर आती और सब्जियों की क्यारी में और बैंगन के गड्ढों में डालती। बीच-बीच में वह बात करती जाती। लेकिन सर्वक्का न बोलती। एक दिन नंजम्मा के तरकारियों में पानी डालने के बाद सर्वक्का बोली—"पैदा करने वाला बाप ही बेटी को मार डाले, तो तकदीर क्या कर सकती है जी?"

"क्या मतलब है सर्वक्का?"

"जाने दीजिए।"

"मुझे बताइए तो, मैं किसी से नहीं कहूंगी, आपकी कसम है।"

"आपको थोड़ी-सी मडुआ देने के बाद एक दिन आपसे कहा था न कि कोर्ट में साक्षी देकर दो पल्ला मडुआ, पच्चीस सेर चावल आदि लाये थे…।"

"हुं!"

"पता लगा कि वह कोर्ट से नहीं था। कहते हैं कि वह परदेशी हरामखोर काशिबड्डी से जिसके बाल-बच्चे सब केरल के हैं, हमारे घरवाले ने रुपये लिए।"

"लिया तो क्या हुआ?"

'मैं और आप शतमूली खोदने तालाब के पास जाती थीं न, कहते हैं कि तब हमारे यजमानजी उसे हमारी झोपड़ी पर ले आये थे। रुद्राणी गर्भवती बन गयी।"

नंजम्मा को सर्वक्का की बात की ठीक तरह कल्पना करना भी कठिन हो गया। उसने सुना था कि इस बार गांव में आये दुष्काल में अनेक स्त्रियों ने अपनी इज्जत गवांकर पेट भरा था। लेकिन उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि कोई बाप अपनी बेटी से ऐसा करवा सकता है!

"हाथ पकड़े पति के बारे में ही झूठ बोलूंगी? बाप कहलाने वाले हरामजादे

ने कहा तो वह कैसे मान गयी ? शिवगेरे से एक संबंध आया था। मैंने कई बार कहा था कि शादी कर दें। भोजन खर्चे के लिए रुपयों का अभाव बताकर इन्होंने ही कहा था, "ठहर, बाद में करेंगे।"

"फिर क्या हुआ ?"

"मैं जानती ही नहीं। तीन महीने बाद पता लगा। 'छिनाल तेरी ही गलती है' कहकर उन्होंने उसे ही मारा। तब रुद्राणी ने मेरी कसम खाकर कहा "नहीं मां, पिताजी ने ही 'कोई डरने की बात नहीं। कहकर काशिबड्डी को अंदर भेजकर उन्होंने दूसरी तरफ से दरवाजा बंद कर लिया।' और क्या किया जा सकता था। इन्होंने ही उस नरसी से दवा लाकर तीन दिन पिलायी। केवल खून बहने लगा। रुका ही नहीं। तब मेरी बेटी मर गयी।"

सुनकर नंजम्मा गूंगी हो गयी। सर्वक्का पुनः एक बार जोर से रोकर आंसू पोंछ रही थी कि नंजम्मा का दिमाग पार्वती की ओर घूम गया। उसे बारह वर्ष पूर्ण होने जा रहे थे। यह दुर्भिक्ष न आकर भर पेट मिलता, तो शायद अब तक ऋतुमति हो गयी होती! अचानक ऋतुमति हुई तो क्या हाल होगा! ऐसी दुर्भिक्ष की स्थिति में शादी कैसे करते ? शादी कितनी भी गरीबी में ही क्यों न की जाये, एक साधारण घराने का संबंध भी क्यों न करना हो, तो भी कम से कम सात-आठ सौ रुपये चाहिए। जब दो जून रोटी मिलना भी दूभर है, तो आठ सौ रुपये कहां से लायें ?

"नंजम्माजी, आप किसी से न कहें।"

"भगवाग की कसम सर्वक्का, नहीं कहूंगी। आपकी इज्जत, मेरी इज्जत है।"

"इस पुरुष का सहवास नहीं चाहिए। सोचती हूं छोड़कर मायके चली जाऊं। लेकिन वहां जाकर भाभियों के अधीन रहना पड़ेगा। आप ही बताइए कि हम जीवित क्यों हैं ?"

सर्वक्का के प्रश्न से पहले ही नंजम्मा ने अपने से यही प्रश्न किया था। मेरे जीवन में क्या है! पति का प्यार ? सास की आत्मीयता ? मायके का सुख ? फिर भी मैं जीवित रही। बच्चे हुए। अब उस प्रश्न का उत्तर ढूंढ़ने लगती हूं कि मैं जीवित क्यों हूं, तो उत्तर में बच्चे सामने उपस्थित हो जाते हैं। बगीचे की तरकारी में पानी डालकर, पति से छिपाकर वर्षासन का धन खाने से रोककर, सुबह-शाम पलाश के पत्ते लगाकर एक रोटी, आधा लोंदा या मुट्ठी भर हरी

भाजी, छेदवाली अल्यूमिनियम थाली को कपड़े की चिंदी से ढककर परोसने के लिए ही जीवित रहना है ? बस, इस जीवन में और क्या रखा है ?—उसने सोचा।

[8]

प्लेग की सुंकलदेवी के पूरी तरह चले जाने के बाद बहुत से लोगों को चर्मरोग होने लगा। जिस किसी को देखो, खाज, व्रण, फोड़े उठ रहे थे। जिसे भी देखो वह उठते-बैठते, सारे शरीर का पोर-पोर खुजलाते मिलता। जिनकी जांघों पर फोड़ा उठता, वे लंगड़ाकर चलते। आग की सेंक देकर उसके फूटने तक उसकी पीड़ा असह्य हो जाती। जिसे व्रण होते, उनके हाथ, शरीर और उंगलियों के बीच मवाद भरा रहता।

नंजम्मा के घर में भी व्रण उठा। पहले रामण्णा को हुआ। तत्पश्चात् पार्वती, विश्व को लगकर मां को भी हुआ। धूप सेंकना या बाहर चूल्हे पर आग जलाकर आग के सामने व्रण भाग को पकड़कर 'हा' कहने तक सेंकना ही घरेलू उपचार था। कभी-कभी सुबह होते समय हथेली, कुहनी पर सफेद फोड़े निकलते। उसे वैसा ही छोड़ देना लड़कों से नहीं होता था। किसी तरह फोड़ा फोड़कर मवाद बाहर निकाल देना चाहिए। बबूल के कांटों से चुभोकर मवाद निकालना ही एक काम था। ऐसे मवाद निकालते समय आसपास के भागों में लगकर वहां व्रण फैल जाता। पहले तो पागल-सी बना देने वाली खुजली, उससे सहने में असमर्थ होकर खुजलाहट, और बाद की जलन सहने में असमर्थ होकर विश्व तो जोर से रो पड़ा। रामण्णा और पार्वती भी कभी-कभी रुलाई रोक नहीं पातीं। अब तक घर का सारा काम पार्वती पर था। दोनों हाथों में व्रण होने के बाद वह बर्तन नहीं धो सकती थी। खूटा पकड़कर चक्की नहीं घुमा पाती। उसी तरह नंजम्मा रस्सी पकड़कर बगीचे के लिए पानी नहीं खींच पाती। इतने दिन मेहनत से बनाये हुए बगीचे का साग-पात सूखने की स्थिति में आ गया।

गांव वालों ने नागदेव की मन्नत मानी। नंजम्मा ने भी आठ दिन लगातार बच्चों को ठंडे पानी से नहलाकर, स्वयं भी ठंडे से ही नहाकर, तम्मेगौड़ के घर से मांगकर लाया आधा लोटा दूध बमीठे में डालकर बच्चों से नमस्कार करवाया।

फिर भी नागदेव प्रसन्न नहीं हुए। व्रण, खाज के रोग और भी बढ़ने लगे।

इन सबको व्रण की पीड़ा शुरू होने के एक महीने बाद चेन्निगराय को भी यह रोग हो गया। प्रथम फोड़े में ही वे नाचने लगे। सारे गांव में व्रण फैलने पर भी पटेल आदि कुछ रईसों को कुछ नहीं हुआ था। गंगम्मा, अप्पण्णय्या को भी इसकी हवा नहीं लगी थी। हाथ की उंगलियों के बीच में मवाद निकलते हुए व्रण से चेन्निगराय मां के घर गये तो गंगम्मा बोली—"शृंगेरी गुरु से बहिष्कृत है, उस छिनाल ने प्रायश्चित नहीं किया। मासिक धर्म में बाहर नहीं बैठती, शुद्ध-अशुद्ध नहीं निभाती। मासिक धर्म की स्थिति में ही पाला-पत्ता क्यारी को छूकर पानी डाले तो नागदेव शाप दिये बिना रहेगा ! उस छिनाल से तुझे भी आ गया। चिन्नय्य, अगर तू उसे नहीं छोड़ेगा तो तू चंगा नहीं होगा !"

चेन्निगराय जानते हैं कि छोड़ने की धमकी देने पर भी पत्नी नहीं डरेगी ! उसे छोड़कर पेट-पूजा कैसे होगी ? वह जाकर कहीं इलाकेदारजी से कह दे तो ? इसलिए इस बात की ओर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। लेकिन व्रण के लिए कुछ करना ही होगा। मां-बेटा दोनों जोइसजी के घर गये। वे कुछ उपाय बता ही रहे थे। कि अय्याशास्त्रीजी भी आ गये। शास्त्रीजी उम्र में बड़े थे। वे जानते थे कि कौन घर किस संप्रदाय, शास्त्र को मानने वाला है। वे बोले—"गंगम्मा, तुम्हें याद है न कि तुम्हारे पति नागपूजा करवाते थे। पति के मरने के बाद एक बार भी तुमने पूजा करवायी ? नागदेव नहीं सतायेगा तो क्या होगा ?"

गंगम्मा को याद आयी। इस कार्य को बड़ी श्रद्धा-भक्ति से करना चाहिए। नियम है कि पक्ष के किसी षष्टि के दिन घरवाले बाड़ी में जायें, पहले दिन पुरुष बाड़ी में जाकर एक छोटा कुआं खोदकर आवे, उसमें निकले पानी से बड़ा, पूरण-पोली, खीर, भात, दाल, सांभर आदि रसोई बननी चाहिए। दो पुरोहित, उनकी पत्नियां, एक विधवा, एक विधुर, एक ब्रह्मचारी—बाहर से इन लोगों को भोजन के लिए बुलाना चाहिए। गेहूं और चावल का आटा मिलाकर, उसका फन-फैलाये नागदेव बनाकर उसकी पूरी पूजा-समर्पण के बाद ब्राह्मण, सुहागिन, विधुर, विधवा और ब्रह्मचारी को जैसे श्राद्ध के दिन कराया जाता है। वैसा ही परोसकर भोजन कराना चाहिए, और दक्षिणा के रूप में कम से कम एक चांदी का रुपया, पुरुषों को धोती, स्त्रियों को साड़ी, चोली का कपड़ा, ब्रह्मचारी को एक धोती, एक जनेऊ, फिर प्रसाद, रूप में भोजन करने के बाद शाम को नागदेव की महा-

मंगलारति करके उसे और बचे हुए चावल, दाल, आटे आदि को कुएं में डालकर कुआं बंद करके बिना पीछे मुड़कर देखे, झुरमुट के समय गांव लौटना चाहिए। "इतना करने पर व्रण, फोड़ा सब अपने आप भाग जाते हैं। तुम्हारे पति के रहते समय कभी ऐसा हुआ था ? तुम लोगों ने अपना कर्म भुला दिया। तो यह सब होता रहता है।" अपने भी व्रणग्रस्त हाथ को खुजाते हुए अय्याशास्त्रीजी ने पूछा तो गंगम्मा ने निश्चय किया कि कुछ भी हो, नागपूजा करा ही देनी चाहिए।

अण्णाजोइसजी बोले—"तुम दूसरी बातों की चिंता मत करो। ब्राह्मणों के रूप में मैं और चाचा अय्याशास्त्रीजी, चाची और मेरी पत्नी हैं। हमारा नरसिंह ब्रह्मचारी है ही। विधवा चाहे तो कोंडेनहळ्ळी से अपनी बहन को बुला लूंगा। रंगापुर में रहने वाले अपने विधुर साले को बुला भेजता हूं। दूसरे की तैयारी तुम कर लो।"

कुछ ही दिनों में परिवार की इस धार्मिक विधि को पूर्ण करने का विश्वास दिलाकर गंगम्मा घर लौटी। 'चेन्निगराय, अपनी पत्नी से आधा खर्च देने के लिए कह दे' गंगम्मा ने कहला भेजा। पति के मुख से सारा विवरण सुनने के बाद नंजम्मा ने हिसाब लगाया। इसके लिए कम से कम सौ रुपये चाहिए। आधे का मतलब है पचास। इसके साथ ही ये पुरोहित हमारे बहिष्कार का प्रश्न भी उठाकर दंड के रुपये मागेंगे। जब पेट भरना भी मुश्किल है, तब इन सबके लिए कहां से लायें ? उसने निर्णय किया कि इस नागपूजा की बात ही नहीं चाहिए। लेकिन इस बात का डर भी रहा कि कहीं उसी व्रण, फोड़ों के बहाने नागराज ने कुपित होकर किसी की आहुति ले ली तो ?

बहू, पोते-पोती को कुछ भी हो, गंगम्मा को यह चिंता सताने लगी कि अगर मुझे और अप्पण्णय्या को व्रण हो गया तो क्या करेंगे ? बेटे चेन्निगराय को भी साथ लेकर नदी-प्रदेश अक्कीहेब्बाळ की ओर भिक्षाटन के लिए निकल पड़ी। "भगवान का काम कराना है, दान दीजिए" कहकर देहात में घर-घर जाकर पूछने पर पैसे या दो सेर धान न दे तो उनको भी पाप लगेगा। इस तरह धान जमा करके उसे बेचकर एक महीने में कुल एक सौ रुपये इकट्ठा करके गांव लौटकर तीनों ने मिलकर नागपूजा के लिए दिन निश्चित किया।

काफी व्रण होते हुए भी रामण्णा एक दिन भी स्कूल गये बिना न रहा। अब वह अंग्रेजी की दूसरी कक्षा में पढ़ रहा था। उसके स्कूल में व्रण पीड़ित

विद्यार्थियों की कमी नहीं थी। जिस तरह गांव भर में प्लेग फैला था, उसी तरह अबसर्वत्र चर्मरोग फैल गया। व्रण वाले विद्यार्थियों को मास्टर अलग बिठाते थे। स्कूल के विद्यार्थियों की इस असह्य दशा को देखने में असमर्थ होकर एक दिन स्कूल के हैडमास्टर ने सरकारी अस्पताल जाकर डाक्टर को बताया। ग्राम पंचायत के अध्यक्ष और डाक्टर ने उच्चाधिकारियों को लिखकर मिल्क इंजेक्शन ट्यूब मंगवाये। डाक्टर ने हर विद्यार्थी को दो दिन इंजेक्शन लगाकर मलने के लिए मलहम देकर भेज दिया। गंधक का मलहम न लगाने पर भी इंजेक्शन लेने की वजह से विद्यार्थियों का व्रण अपने आप सूख गया और उसकी ऊपरी चमड़ी कुछ ही दिनों में झर गयी।

रामण्णा ने मां से कहा—"इंजेक्शन लगाते समय दर्द होता है, लेकिन देखो, मेरा शरीर कैसा चंगा हो गया है। आप सब लोग एक बार आ जाइए। अस्पताल में ही उसे लगवा लीजिये।"

एक दिन पार्वती और विश्व के साथ नंजम्मा कंबनकेरे पहुंची। अपने सुख-दुख की बातें बताने के बाद डाक्टर ने मुफ्त में ही सूई लगा दी। चार दिन बाद फिर सूई लेने से उनके शरीर के व्रण भी सूखने लगे। रामण्णा एक दिन बोला—"मां, हमारे हैडमास्टर ने बताया कि परसाल बारिश न होने के कारण किसी को दूध-दही नहीं मिला और भूख मिटाने के लिए कंदमूल जो भी मिला, वह खाने के कारण खून खराब होकर व्रण रोग हो गया। वे कहते हैं यह 'नागरू' (नागदेवता के शाप से आया हुआ चर्मरोग) झूठ है। गांव वाले इसी तरह इंजेक्शन लेंगे तो अच्छे हो जायेंगे।"

इतने में गंगम्मा, अप्पण्णय्या और चेन्निगराय जाकर पुरोहितों को श्रद्धा-भक्तिपूर्ण भोजन कराकर, धोती, साड़ी, दक्षिणा देकर नागपूजा कराकर आये। जब गंगम्मा को पता लगा कि नंजम्मा बच्चों के साथ जाकर इंजेक्शन और दवा ले आयी है तो बोली—"देव आया है तो छिनाल ने दवा ली है। देख लेना, हाथ-सड़कर मरेगी। वह नागदेव को क्या समझ बैठी है?"

नंजम्मा और उसके बच्चे चंगे हो गये और शरीर भर के दाग मिट गये। इस पर गांव के कई लोग एक-एक कर कंबनकेरे गये। एक इंजेक्शन का पांच रुपया।

[9]

ज्येष्ठ-आषाढ़ बीतने पर भी बारिश की एक बूंद नहीं गिरी। यह साल भी परसाल-सा ही दुर्भिक्ष के साथ गुजरना निश्चित था। गये साल जिन बड़े घर के लोगों के पास अनाज का संग्रह था, वे भी इस साल हैरान थे। आकाश में बादल मंडराते, लेकिन न जाने कहां से उठने वाली हवा उन्हें उड़ाकर ले जाती। पंचांग में ही लिखा था कि इस साल तीन घड़ी बारिश होगी तो नौ घड़ी हवा होगी! हवा बेहिसाब थी। लेकिन उसकी एक-तिहाई क्या, सौ में एक अंश भी बारिश नहीं हुई। व्रण अच्छा हो जाने के बाद सुबह-शाम नंजम्मा बगीचे में काम करती। कुछ समय से केवल एक सेर मडुए में सबका पेट भरने जैसी हरी भाजी, बैंगन, सेम आदि पकाकर खाया जाता। केवल इसने ही ऐसा उपाय किया था। वह जानती थी कि रात के समय अपने बगीचे में चोरी होना बहुत स्वाभाविक है, इसलिए रात में चार बार बच्चों को साथ ले जाकर देखती। गत साल बारिश न होने के कारण नारियल के पेड़ भी खाली हो गये थे। बाड़ी के मालिकों ने कच्चे नारियल निकाल कर तिपटूर में बेच दिये। इससे चोरों के लिए भी कुछ नहीं बचा।

एक दिन आधी रात में अचानक बारिश होने लगी। इतने जोर से टपाटप पानी बरसा, मानो आकाश से ओले पड़ रहे हों। नैॠत्य वर्षा का समय बीत गया था और अब ईशान्य वर्षा का समय भी बीता जा रहा था कि अचानक नैॠत्य वर्षा से भी अधिक जोरों का पानी बरस पड़ा। सारा गांव सोते से जाग उठा। सब अपने-अपने घर से बाहर निकलकर देखते हैं कि थोड़ी भी हवा नहीं, केवल बारिश ही बारिश है। सारे आकाश में कालिमा मानो बर्फ-सी जम गयी हो। ऐसा लग रहा था मानो पृथ्वी पर धड़ाधड़ पानी बरसाने के अलावा उसे और कोई काम नहीं। न जाने इतने बादल, पानी एक ही दिन में आकाश में कहां से इकट्ठा हो गये। ग्रामदेवता चोळेश्वर की कृपा है। नहीं तो काल बीतने पर वर्षा कहां से आती? आधे घंटे में गांव के नदी-नाले पानी से भर गये। पानी सड़क से बहने लगा। नंजम्मा को एक ओर तो यह चिंता थी कि बारिश का पानी बगीचे की हरी-भाजी, बैंगन, सेम आदि तरकारियों को बहा ले जायेगा, तो दूसरी ओर

खुशी भी कि बारिश से गांव भर में फसल होगी तो हमें भी रोटी मिलेगी। बह जाने पर बगीचे में फिर से बीज लगाये जा सकते हैं। बस, फसल होना जरूरी है।

बारिश का कहीं नामोनिशान न मिलने के कारण किसी ने घर की खपरैलों को हाथ नहीं लगाया था। जोरों की हवा से खपरैलें अपनी जगह से हट गयी थीं। इसलिए ऐसा घर कोई नहीं बचा जहां उस रात छत चूआ न हो। फिर भी लोगों में रंज-गम नहीं थे। वे सब यही सोच रहे थे कि चाहे छत टपकती रहे, दीवार गिर जाये, लेकिन बारिश तो आयी न, इतना ही बस काफी है।

सुबह होने से पहले वर्षा रुक गयी। सुबह-सुबह सभी अपनी-अपनी खेत-बाड़ी में चल दिये। एक रात की वर्षा से ही गांव का तालाब आधा भर गया। इसका मतलब था कि ऊंचे स्थानों पर बसे हुए गांवों में भी वर्षा हुई है।

नंजम्मा बगीचे में जा रही थी कि रास्ते में महादेवय्यजी मिल गये। उसने तो सोचा था कि गांव को ही छोड़ गये वे, अब कभी नहीं आयेंगे।

"अय्याजी, हम सबको छोड़कर इतने दिन कहां चले गये थे ?"

"काशी गया था, बहन। इतने दिन वहीं रहा। फिर यहां आने की इच्छा हुई, तो आ गया।"

महादेवय्यजी को वह घर लिवा ले गयी। चेन्निगराय बाहर गये हुए थे। नंजमम ने पूछा—"कब आये आप ?"

"रात हो गयी थी। मैं ही आकर आप लोगों को उठाना चाहता था की बारिश शुरू हो गयी।"

वे यह कह रहे थे कि किसी कारण से सर्वक्का आ गयी। उसके मन में तुरंत एक विचार जागा कि महादेवय्यजी लौट आये हैं, उनके आते ही बारिश हुई; उन्हें गये कितने दिन हो गये थे। हमारे व्यापारी स्वजातियों ने कहा था कि उन्हें भिक्षा नहीं देंगे। इसलिए नाराज होकर महादेवय्यजी चले गये थे। तब से बारिश नहीं हुई। कल रात को वे लौटे, तो बारिश आई। हमारे लोगों ने साधु-संतों को क्या समझ रखा है ! सर्वक्का ने पास आकर महादेवय्यजी के चरणों को प्रणाम किया।

"अय्याजी, नाराज होकर हमारा गांव छोड़कर क्यों चले गये ?" नंजम्मा ने पूछा।

"कहीं जाने की इच्छा हुई बहन। अपने जैसा एक साथी मिल गया। शिव-

नाथ का चरण, काशी गया। वहां एक जंगमवाड़ी मठ है। हमारे यहां से कोई भी जंगम वहां जाकर निश्चित रह सकते हैं। यहां जो भजन गाता था, वहां भी गाता रहा। फिर भी वह देश हमारा नहीं, लोग हमारे नहीं। हां, मठाधिकारी हमारे हैं। इच्छा हुई कि यहां लौट आऊं. आ गया।"

"अय्याजी, आपकी मडुआ, लोबिया आदि की चोरी हो गयी। देखा है आपने ?" सर्वक्का ने पूछा।

"रात को दियासलाई जलाकर देखा, नहीं था। आसपास दुर्भिक्ष था। जो भूखे थे, उन्होंने खा लिया होगा। कोई भी खाये मिट्टी ही होता है न !"

सर्वक्का नंजम्मा से एक सेर आटा लेने आयी थी, लेकर चली गयी। उसके घर मेहमान आये थे। सर्वक्का के चले जाने के बाद महादेवय्यजी बोले—"मैंने आपके पिताजी को देखा है !"

"कहां ?" नंजम्मा ने उत्सुकतावश पूछा। उसके पिता कंठीजोइसजी को अचानक अदृश्य हुए बारह साल होने आये। बारह साल मरने पर एकाएक कैसे देख गए। उसने कई बार सोचा कि जीवित हैं या नहीं !

"उन्हें काशी में ही देखा। अब से एक महीने पहले एक दिन सुबह मैं नदी-तट पर गया था। उस घाट का नाम है हनुमान घाट। हमारी तरफ के कई ब्राह्मण थे। हमारे यहां के ही क्यों, हिंदुस्तान-भर के लोग रोज काशी आते रहते हैं। वे श्राद्ध-कर्म कर रहे थे। आपके पिताजी जोर से मंत्र रट रहे थे। मैंने ही बात की। उसके दो दिन बाद वे ही जंगमवाड़ी मठ में मेरे पास आये। डरते-डरते उन्होंने पूछा था कि—'मुझे गिरफ्तार करने का पुलिस हुक्म अब भी जारी है क्या ?' मैंने पूछा 'कौनसा ?' तो वे बोले—'हमारे ग्राम के पटवारी श्यामण्णा की मृत्यु का।' मैं सारी बातें नहीं जानता था। जो मालूम थीं, बता दीं—'नहीं जी, कहते हैं कोर्ट में आप जीत गये थे। जीतने के बाद गांव क्यों छोड़ दिया आपने ?' उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। लेकिन कहा 'मेरे गांव छोड़े बारह साल होने को आये, अब मैं गांव लौटूंगा।' उसके बाद वे मुझे मिले ही नहीं। यह भी नहीं बताया कि कहां रहते हैं ?"

अब नंजम्मा सारी बातें समझ गयी। कोर्ट से गांव लौटने पर श्यामण्णा ने कहा था—"उस मेरे बेटे को मिलने दो, जज ही फांसी पर लटका देंगे।" इसी से डरकर वे देशांतर गये होंगे ! कहते हैं कि ऐसे केस बारह वर्ष तक जीवित रहते

हैं; उसके बाद उन कागजपत्रों को सरकार जला डालती है। यह सोचती हुई वह अंतर्मुखी हो गयी—क्या इस तरह घरबार छोड़कर देशांतर घूमना ही मेरे पिता के भाग्य में लिखा हुआ है? इतने में चेन्निगराय आ गये। महादेवय्यजी को देखकर उन्हें भी बहुत खुशी हुई। उनके भजन, लावणी आदि सुनते हुए उनका जीवन सुगमता से बीत जाता था। महादेवय्यजी अब तक कहां रहे, आदि विषयों के बारे में जान लेते समय काशी का नाम सुनते ही एक प्रश्न पूछने के लिए वे आतुर हो उठे। काशी के बारे में कइयों से उन्होंने बहुत कुछ सुन रखा था। लेकिन महादेवय्यजी के समान वहीं एक साल रहकर सारी बातें जानने वालों को नहीं देखा था।

"अय्याजी, कहते हैं कि वहां राजे-महाराजे रोज समाराधन करवाते हैं, और एक-एक लड्डू के पीछे एक-एक रुपया दक्षिणा देते हैं—सच है?" उन्होंने पूछा।

"वहां राजा-महाराजाओं की धर्मशालाएं तो बहुत हैं। आगंतुकों को एक-एक धर्मशाला में तीन-तीन दिन मुफ्त भोजन देते हैं। त्यौहार के दिन भी भोजन कराते हैं। एक-एक बार एक लड्डू खाने पर एक-एक रुपया भी देते हैं।"

"तो वहीं जाकर रहना चाहिए जी?"

"पटवारी जी, आप समझते हैं कि काशी में भिखारी नहीं हैं? वहां जाकर रहने की क्या जरूरत पड़ गयी? इस तरह रोज मुफ्त भोजन देना किस राजा से हो सकता है?"

"थूः, उस राजा की मां की योग्यता पर मेरे पैरों की जूती···। उस संपत्ति का वह कैसा राजा?"

महादेवय्यजी ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। न टीका ही की। कुछ देर बैठकर वे चलने लगे तो नंजम्मा बोली—"आपके मंदिर से मड़ुआ, दाल सब चोरी हो गया है। आज के लिए थोड़ा आटा-दाल, मिर्च पाउडर देती हूं। नहीं तो हमारे घर पर ही भोजन कर लीजिए?"

एक क्षण सोचकर वे बोले—"इस गांव में रहने के लिए आया हूं। आसपास के गांवों में झोली लेकर भिक्षाटन करूंगा। स्वजाति के लोगों का कोई लिहाज नहीं है। खाने के लिए यहीं आऊंगा। कहकर वे चल दिये।

उन्हें मंदिर लौटे आध घंटा भी नहीं हुआ था कि एक-एक कर वैश्य आने लगे। रेवण्णशेट्टी, शेट्टप्पा, मरुळप्पशेट्टी, लिंगदेव, सब साथ में आकर महादेव-

य्यजी के चरणों पर साष्टांग प्रणाम करने लगे। रेवण्णशेट्टी बोला—"अय्याजी, आप महान हैं। हमारे गांव से नाराज होकर 'चले गये थे। गांव में पानी नहीं बरसा, फसल नहीं हुई। कल रात घर लौटे, तो बारिश हुई। हमने आपको गलत समझकर पाप किया है। उसे भुलाकर आप हमारे घर रोज भिक्षाटन के लिए आइए।"

महादेवय्यजी तो उस घटना को भुला ही चुके थे। अब ये लोग ही ऐसा कह रहे हैं। मेरे चले जाने से ही यहां वर्षा नहीं हुई! केवल रामसंद्र में वर्षा नहीं हुई, ऐसी बात नहीं। पूरे प्रदेश में नहीं हुई। तमिल, तेलुगु प्रदेशों में भी नहीं हुई। रेल से आते हुए देखा कल उनके लौटने और वर्षा आने में कौनसा शिव संबंध है?—इस गांव के आसपास के अन्य क्षेत्रों में भी वर्षा हुई है। वे बोले—"हम महान नहीं हैं। पानी, फसल का आना-न आना शिव की इच्छा है। लोगों के पाप-पुण्य के मुताबिक शिव देता है। हम अपनी अपनी रोटी खाते हैं।"

लेकिन वे नहीं माने। रोज दोपहर को अपने घर भिक्षा लेने आने का और अपने को धन्य बनाने का निवेदन कर पुन: हाथ जोड़े। महादेवय्यजी ने 'ना' नहीं कहा। वे सुन चुके थे कि अब हर घर में तंगी है। फिर भी वे दोपहर के भिक्षाटन से लौटकर मंदिर में बैठकर खायें। नंजम्मा के घर रात को आने का कह आये थे। उसका बेटा विश्व महादेवय्यजी को आधा भूल चुका था। वह अब स्कूल भी जा रहा था। उनके खाते समय साथ बैठने के लिए अब उसका स्कूल का समय था।

यह विचार गांव भर में फैल गया कि महादेवय्यजी के गांव छोड़ जाने के कारण गांव में पानी-फसल नहीं हुई; कल रात उनके लौट आने के कारण ही पानी बरसा। कुम्हार, गड़रिये, सुतार, चमार आदि मंदिर आये और उन्हें नमस्कार किया। पटेल शिवेगौड़ जैसों ने इस पर विश्वास नहीं किया। उस दिन रात को मंदिर में महादेवय्यजी अकेले सोये थे। मध्य रात्री के समय किसी ने आकर 'अय्याजी, अय्याजी' पुकारा। महादेवय्यजी उठे और दियासलाई जलाकर देखा। वह था शिवेगौड़ के घर का नौकर गौरव। उनका चरण छूकर बोला—"मुझे शाप मत दो, मेरा कोई दोष नहीं।"

"क्यों, क्या हुआ उठो?"

"तुम्हारा मडुआ, लोबिया, सब हमारे गौड़जी रात के समय आकर ले गये

जब सारा गांव खाली किया हुआ था। उन्होंने ही ताला तोड़ा था। मैं तो सिर्फ ढोकर उनकी झोंपड़ी में ले गया था। मैं अपने घर कुछ नहीं ले गया।"

"अच्छा, छोड़। तेरा कोई दोष नहीं।"

"किसी से न कहिए कि मैंने बताया था।"

"नहीं कहूंगा।" उनके वचन देने पर गौरव चल दिया।

पटेल शिवगौड़ कैसा आदमी है, इसे महादेवय्यजी न जानते हों—ऐसी बात नहीं थी। उन्होंने भी अंदाज लगा लिया था कि खाली किये गये गांव में मंदिर के कमरे का ताला तोड़कर मडुआ आदि चुराने में किसी ऐसे का हाथ रहे बिना कोई भूखा चोर ऐसा नहीं कर सकता।

दूसरे दिन सुबह लगभग दस बजे एक विशेष घटना घटी। सौ पतंग मानों एक साथ उड़ी हों, कोई आवाज भी हुई। खेत-बाड़ी की मेंड़ पर चलने वाले लोग गर्दन उठाकर देखते हैं—आकाश में एक बड़ा सफेद गरुड़ पक्षी के समान उड़ रहा है। पंख नहीं हिलाता। उसकी चोंच भी नहीं। लेकिन पूंछ-सा कुछ है जो पंख के समान दोनों ओर फैला है। वह गांव के ऊपर आया तो उससे कुछ नीचे गिरा। आंधी में उड़ते सूखे पत्तों की भांति गांव भर पर बिखरे ये कागज के नोटिस थे। ऐसी वस्तु पहले कभी नहीं देखी थी गांव वालों ने। फिर भी बहुत से लोग समझ गये कि यह विमान है। नीचे गिरे हुए एक नोटिस को नंजम्मा ने उठाकर पढ़ा।

मैसूर राज्य के महास्वामी श्रीमान महाराज की धन सरकार ने इसे छपाया है। कहते हैं कि अब युद्ध चल रहा है, जर्मन लोग यूरोप में आगे बढ़ रहे हैं, जापान के लोग हिंदुस्तान को मिट्टी में मिलाने के लिए आ रहे हैं, हमारे मैसूर राज्य में भी बम गिर सकता है, विमान आते समय लोग बाहर आकर न देखें, जहां खड़े हों वहीं पेट के बल लेट जायें, शत्रुओं को मार भगाने के लिए युद्ध-निधि में मदद दें—और अंत में 'विजय' छपा था।

इसके एक सप्ताह बाद इलाकेदार रामसंद्र में आये। युद्ध-निधि के लिए धन-संग्रह करने की सरकार की आज्ञा हुई थी। फसल न होने के कारण उसी सरकार ने लगान माफ कर दिया था। लेकिन अब इंग्लैंड चक्रवर्ती धन के बिना युद्ध नहीं जीत सकते। लोग यथायोग्य दें। इलाकेदार भी आये हैं तो क्या करें? शिवगौड़, काशिबड्डी आदि लोगों से उनके कहे मुताबिक वसूल हुआ। गांव के बाहर

करियाने की दुकान चलाने वाली नरसी ने पांच रुपये दिये। रामसंद्र में कुल एक सौ रुपये वसूल हुए। 'आप लोगों के गांव की इज्जत बच गयी' कहकर इलाकेदार चले गये।

दूसरे दिन स्कूल से लौटते समय रामण्णा ने अपनी कमीज पर एक रंगीन कागज अंग्रेजी 'वी' आकार में छपे चिह्न को सुई से लगा रखा था। घर आकर बोला—"मां, इसे हमारे स्कूल के सब विद्यार्थियों ने मिलकर जुलूस निकाला। यह देख, मैं तुझे सिखाता था न, अंग्रेजी का 'वी' अक्षर!"

"इसका क्या मतलब है?"

" 'वी' का अर्थ है 'विक्ट्री' अर्थात् युद्ध में हम सबकी विजय हो। हैडमास्टर ने कहा है कि इसके लिए हर विद्यार्थी दो-दो आने लेकर आये।" रामण्णा समझा रहा था। मां सोचने लगी, दो आने लाये कहां से?

ग्यारहवां अध्याय

इतने साल बीतने पर भी कमलु के गर्भ नहीं ठहरा। जिस पोते को अक्कम्मा ने पाल-पोसकर बड़ा किया, उसकी संतान न होते देख वह अंदर ही अंदर घुट रही थी। बच्चे नहीं तो न सही, लेकिन वह तो अपने पति और दादी को भी चैन से रहने नहीं देती थी।

रामसंद्र में जब पानी नहीं गिरा और फसल नहीं हुई, तब नागलापुर की भी यही हालत थी। लेकिन कल्लेश चतुर गृहस्थ था। कम से कम एक साल का अनाज इकट्ठा करके रखता था। पिछले साल पानी न बरसने का संकेत मिलते ही खेत में कोदों की बुआई करायी। बारिश न होने पर भी खेत में तीन खंडी कोदे हुआ। घर में मडुआ तो था ही। कमी पड़ी धान की। कोदो का अन्न भी स्वादिष्ट होता है। लेकिन कल्लेश को वह नहीं भाता था। वायु-युक्त खाने से पहले से ही अनियंत्रित उसका बायां हाथ, कांपने लग जाता था। इसलिए नहीं खाता था वह। घर में जो एक पल्ला धान, उसे ओखली में डालकर समय-समय पर कूट लें तो पचपन सेर चावल आयेगा ही। रोज आधा पाव चावल का भात बनाये तो रोटी के साथ पूरा पड़ जायेगा। अक्कम्मा बूढ़ी थी, उसे कोदो खाने से किसी तरह की हानि नहीं थी। अक्कम्मा ने निश्चय कर लिया कि वह और कमलु दोनों कोदों ही खायेंगी।

दो तरह का अन्न बनाकर, पति को एक प्रकार का और उसे दूसरे प्रकार का अन्न परोसते हुए देखकर कमलु आग उगलने लगी। उसका प्रश्न था, वह क्यों श्रेष्ठ है और मैं क्यों कम हूं ? नागलापुर आये बारह साल होने पर भी वह यह नहीं भुला पायी कि वह हासन नगर की है। मानो इसी जिद्द से उसने एक दिन भूलकर भी मडुए की रोटी को छुआ तक नहीं था। अब कोदो का अन्न गले से कैसे उतरेगा ? एक दिन खाना बनाकर बगीचे में जाकर अक्कम्मा पपीते के पेड़

के नीचे बैठ गयी। कल्लेश बगीचे में काम कर रहा था। मडुआ, चावल दाल की दुर्भिक्ष रहे या ना रहे, बगीचा-भर तरकारी उगाने से कभी वह बाज नहीं आता था। चुपचाप बैठे रहना उसके स्वभाव में था ही नहीं। तरकारी के पौधों के पास की मिट्टी ऊपर निकालकर, भीतर गोबर, लाल मिट्टी भरकर, फिर उस पर पुरानी मिट्टी डालकर थाला बनाकर दो घड़ा पानी डालने के बाद सोचा कि अब खाने के बाद तय करेंगे कि किस पौधे को क्या करना चाहिए। "अक्कम्मा, चलो खाना परोसो।"

कल्लेश एक घड़ा पानी खींचकर कुएं के किनारे पत्थर पर खड़ा हो हाथ-पैर धो रहा था। अक्कम्मा ने भीतर जाकर देखा—कमलु चांदी की थाली में परोस-कर खा रही है। पति के लिए बनाया हुआ सारा भात उसकी थाली में है। भात का छोटा बर्तन खाली पड़ा है। भरपूर घी डालकर, मिश्रित दाल का पानी उंड़ेल-उंड़ेलकर खा रही है। अक्कम्मा भीतर आकर अवाक् खड़ी रह गयी। कमलु इस विचार से कि उसके आने से क्या बिगड़ता है, खाना खाती रही। इतने में कल्लेश भीतर आ गया। देखते ही उसे सारी बात समझ में आ गयी। सीधे चूल्हे के पास गया और पड़ी हुई कटी लकड़ी उठाकर पत्नी की पीठ, हाथ, जांघ पर उठा-उठाकर मारने लगा।

"खाने दो, इस तरह मत मारो, रे" अक्कम्मा छुड़ाने गयी तो उसके बायें हाथ के धक्के से वह दीवार के पास जाकर गिरी।

"मारता है, तेरा घर का खाना खा रही हूं इसलिए मार रहा है न? औरत को थोड़ा भात डालने की ताकत नहीं तो कोदो का भात खाने को कहता है? केवल मारना आता है, शर्म नहीं आती?" कमलु चिल्लाई।

कल्लेश की क्रोधाग्नि भड़क उठी। चेहरा देखे बिना ऐसे मारा कि लकड़ी ही टूट गयी। उसकी हथेली में फांस घुसने से खून आ रहा था। कमलु का सारा शरीर सूज गया था और कहीं-कहीं खून निकल रहा था। टूटी हुई लकड़ी वहीं फेंककर वह वहां से बाहर निकला और कमीज पहनकर बिना खाये चल दिया। उसका इस तरह घर छोड़कर जाना, कोई पहली बार नहीं था। ऐसे समय कोई यह निश्चित रूप से नहीं बता सकता था कि वह अमुक जगह जा रहा है! लेकिन वह कहां जा रहा है, यह अक्कम्मा भी जानती थी और कुछ-कुछ कमलु भी। मरुवनहळ्ळी की देवी के घर या होसूरु के पास वाले दोबरपाल्य की मुनिया के

घर, या नागलापुर की पुट्टी के घर, नहीं तो उसी गांव के पुलिस कांस्टेबल मम्मि-सावी की तीसरी पत्नी के पास या और कहीं जहां भी जाता हो। उसका खाना-पीना वहीं होता था। कहीं भी जाता है, लेकिन आधी रात के पहले लौट आता है; वहां एक दिन से ज्यादा नहीं रहता।

उसके चले जाने के बाद कमलु ने अक्कम्मा की ओर मुड़कर 'आशीर्वाद' दिया—"बूढ़ी छिनाल अपने पोते से कहकर मुझे इस तरह पिटवाया है? तेरे पेट में कभी अन्न न गिरे! तेरी लाश को रास्ते के कुत्ते खायें!"

अक्कम्मा कुछ नहीं बोली। स्वादिष्ट खाना बनाकर रखने पर भी, इस घर में इसका कोई विश्वास नहीं कि दोपहर में बैठकर अच्छी तरह से खा सकेंगे! कभी अकारण कल्लेश स्वयं बिगड़ उठता और नहीं तो उसकी पत्नी उसे बिगाड़ देती है। इसी तरह कुछ-न-कुछ होता रहता। लेकिन आज कुछ ज्यादा ही हुआ। वह उठी और बाहर जाकर पपीते के पेड़ की छाया में बैठ गयी।

पत्नी को मारते समय कल्लेश हाथ के साथ-साथ जबान का भी स्वच्छंद होकर उपयोग करता था। मार की आवाज आसपास के चार घरों तक सुनाई पड़ती, तो गालियों की गर्जना बीस घर तक पहुंचती। कल्लेश के कमीज पहनकर बाहर जाने के थोड़ी देर बाद ही पटवारी श्यामण्णा की बहू आयी। वह लगभग कमलु की ही उम्र की थी। गत पांच-छह सालों से दोनों में परस्पर घना स्नेह था। दोनों तालाब की ओर जाती थीं। कमलु कई बार उनके घर जाती। दो साल पहले श्यामण्णा की पत्नी मर गयी थी। अब बहू पुट्टगौरी ही घर की मालकिन थी। उसका पति जो उसकी पत्नी बोलती थी वही मान लेता। इसलिए एक तरह से वह कमलु की परामर्शदात्री ही थी। वह घर आती या जो कुछ करती, कल्लेश उसका विरोध नहीं करता था। अक्कम्मा ने तो कह दिया था कि वह यहां नहीं आये, लेकिन वह हठीली औरत नहीं मानती थी। घर आती, कमलु से बातें करती और फिर उसे अपने घर लिवा ले जाती। अक्कम्मा की कल्पना थी कि उसकी बहू का मन बिगाड़कर, सदा झगड़ा कराकर तमाशा देखने के उद्देश्य से ही श्यामण्णा अपनी बहू को यहां भेजता है। कल्लेश भी जानता था कि यह सही है। फिर भी उसके आने-जाने को लेकर विरोध करना, उसने अब छोड़ दिया था। अक्कम्मा इसका कारण समझ न सकी। उसका विश्वास था कि उस पुट्टगौरी की संगत छूटने पर कमलु को बहुत कुछ काबू में लाया जा सकता है।

उस दिन कल्लेश के जाने के बाद पुट्टगौरी आयी। कमलु अपने सोने के कमरे में जाकर चटाई पर चादर ओढ़े पड़ी थी। जहां-जहां मार पड़ी, वह वहां नमक का सेंक देकर, सहेली से सांत्वना की बातें कहने लगी और फिर शाम को अपने घर से एक बर्तन में अन्न, दाल मिलाकर लेकर आयी और कमलु को खिलाया। इससे बढ़कर इस घर का और कौनसा अपमान होना था? "कल्लेश जोइस के घर में पत्नी के खाने के लिए अन्न नहीं है, मैं जाकर दे आयी हूं।" चार घर में कहकर और बर्तन दिखाकर घर लौटी।

कल्लेश दूसरे दिन घर आया। पत्नी बगीचे की ओर से आई; हाथ-मुंह धोया; काफी बनाकर पी और फिर कोपगृह में लौट गयी। कल मार खाते समय कमलु ने देख लिया था कि उसके कान के दोनों कर्णफूलों के टुकड़े-टुकड़े हो गये थे। टुकड़े अक्कम्मा द्वारा झाड़ू देते समय या तो कचरे में मिल गये होंगे या फिर पोती के घर ले जाने के उद्देश्य से बूढ़ी ने निकाल रखे होंगे! अक्कम्मा कह रही थी—"मैं ऐसी चोर नहीं हूं, समझी?" कमलु बोल रही थी—"मेरी शादी में जो कर्णफूल मिले थे वे कहां गये? अब देखती हूं कैसे बनाकर नहीं देते? पिताजी को चिट्ठी लिखती हूं!"

घर लौटते वक्त कल्लेश का क्रोध भी थोड़ा उतर गया था। उस दिन सुबह झाड़ू देकर जहां कचरा फेंका था, वहां उसने खुद कचरा हटा-हटाकर ढूंढ़ा। पत्नी की इस बात पर कि अक्कम्मा ने पोती को देने के लिए छिपा रखा होगा, उसे विश्वास नहीं था। यह सोचकर पश्चाताप किया कि मुझे केवल पीठ पर मारना चाहिए था, कानों पर नहीं।

दो महीने कमलु खाली कानों के घूमी। पत्नी का इस तरह खाली कान रहना, पति की इज्जत के लिए अच्छा नहीं था। किसी तरह सत्तर रुपये जुटाकर कल्लेश ने श्वेत नग के एक जोड़ी कर्णफूल बनवाकर दिये।

[2]

करीब एक साल बीत गया। बारिश न होने से पीने के पानी का अभाव हो गया था। कमलु हमेशा एक मील दूर तालाब से मीठा पानी लाती। तालाब सूख जाने पर तालाब के बीच में चार छोटे-छोटे कुएं खोदे गये थे। एक तो तालाब

पहले ही दूर था, और अब तो गांव से और भी दूर जाना पड़ता था। एक दिन कमलु तालाब की ओर गयी। एकादशी होने के कारण अक्कम्मा गांव के बाहर स्थित केशव मंदिर में गयी हुई थी। पुट्टगौरी सिर पर और हाथ में एक-एक कलशी रखे कल्लेश के घर आयी। 'कमलु' पुकारती हुई भीतर आयी तो कोई भी नहीं मिला। पछीत तक जाकर देखने पर भी कोई दिखाई नहीं पड़ा। लौट चलने के विचार से वह फिर भीतर आयी तो लगा कि रास्ते की ओर का दरवाजा बंद है। 'यह क्या', कहकर वह मुड़कर देखा तो बगीचे की ओर का दरवाजा किसी ने बंद कर दिया। भीतर अंधेरे में अकेली मुंह से 'हाय-हाय' निकलने से पहले ही किसी ने उसका मुंह पकड़कर बंद कर दिया।

घर जाते समय उसकी छाती जोर से धड़क रही थी। कई लोगों को इसने कहते हुए सुना था कि कल्लेश जोइस ऐसा आदमी नहीं है; गांव के बाहर वह कुछ भी करे। मुझ ब्राह्मण स्त्री को, उस पर भी उसकी पत्नी को पानी के लिए बुलाने जाने पर इस तरह घर में बंद करना और चिल्लाने से पहले ही मुंह बंद कर देना था! उसके हाथ-पैर कांप रहे थे। असह्यता से सारा शरीर जल रहा था।

उसके घर पहुंचने से पहले ही कल्लेश के घर के आसपास चार-पांच लोगों ने आकर पूछा—"आप चिल्लायी थीं न, क्या हुआ?"

उसका ससुर श्यामण्णा और पति नंजुडय्या घर पर ही थे।

"कुछ नहीं। उनके घर की बिल्ली मुझ पर गिर पड़ी थी।"

"दुर्घटना समझकर हम दौड़े आये। रास्ते का दरवाजा भीतर से बंद था।"

और कुछ न सूझकर वह बोली—"हुं, कमलु पछीते में थी।"

लोग चले गये। उसी समय उनके घर के सामने से कल्लेश की पत्नी कमलु पानी लिये तालाब की ओर से घर आ रही थी। शंकित श्यामण्णा ने भीतर जाकर पूछा—"सच-सच बता किसी ने बेवकूफी की हो तो फांसी चढ़वा दूंगा बोल, डरो मत।"

"कमलु को ढूंढ़ती हुई मैं पछीते तक गयी। कोई नहीं था। वापस आ रही थी तो कल्लेश जोइसजी ने पूछा—'तू हमारे घर क्यों आई?' मैं डर गयी। चिल्ला-कर पछीते की ओर से दौड़कर जिस दरवाजे से गाय निकलती है, आ गयी। मुझे इस तरह उसका एकवचन से संबोधित करना ठीक था?"

श्यामण्णा ने विवेक से सोचा कि बहू की बात पर पूरा भरोसा करे या नहीं,

यह दूसरी बात है; लेकिन उस पर शंका करके शोर मचाने पर अपने ही घर की बेइज्जती होती है। उनके बेटे नंजुडय्या के पहले कुछ नहीं पड़ा। उसने पत्नी को सख्त आदेश दिया—"हरामजादे ने ऐसा कहा? तू अब कभी उनके घर न जाना!"

श्यामण्णाजी कल्लेश के घर आये तो कमलु मिली। अक्कम्मा अभी नहीं लौटी थी। कल्लेश कहीं निकल गया था। "मेरी बहू तुझे पानी के लिए बुलाने आयी थी तो तेरे पति ने बेइज्जती से बातें कीं। चाहूं तो उस पर मुकदमा चलाकर सजा दिलवा सकता हूं, लेकिन चुप हूं। अब कभी तू हमारे घर न आना। मेरी बहू भी तेरे घर नहीं आयेगी।" साफ-साफ कह कर श्यामण्णाजी चले आये।

कल्लेश दो दिन गांव नहीं लौटा। तीसरे दिन रात के दस बजे घर आया। अक्कम्मा उठी और अन्न तथा इमली का झोल बनाकर परोसा। उसके यह पूछने पर कि श्यामण्णा ने कुछ उपद्रव तो नहीं किया, तो अक्कम्मा धीरे से बोली ताकि बहू सुन न ले—"कहता था कि परसों उसकी बहू के आने पर तुमने यह पूछकर घर भेज दिया कि हमारे घर क्यों आयी? उसने कहा कि उसकी बहू के साथ ऐसा बर्ताव करना उचित नहीं था। चेतावनी दी है कि कमलु उसके घर में न जाये और उसकी बहू भी इस घर में नहीं आयेगी। जाने दो। बला टली। यही बात तुम चार साल पहले ही कह देते तो वह यहां आ-आकर इस बंदरिया को नशा न कराती। यह थोड़ी तो ठीक रहती!"

यह बात जानकर कल्लेश के मन को शांति मिली कि श्यामण्णा ने अधिक ऊधम नहीं मचाया। उसे लगा कि उसने कुछ ऐसा कर लिया है, जिसे अक्कम्मा भी नहीं जानती; शायद पत्नी को भी नहीं मालूम।

पुट्टगौरी और कमलु का संपर्क पूरी तरह टूट गया। एक दिन तालाब के कुएं के पास दोनों ने एक-दूसरे को देखा, लेकिन कमलु के बात करने पर भी पुट्टगौरी दूसरी ओर मुंह मोड़कर बिना देखे चलती बनी। उसे लग गया कि अब कभी दोनों परस्पर नहीं बोलेंगी। एक अभिन्न सहेली को खोने के खेद के साथ इस दुविधा का एक और कारण था। लेकिन वह इसका जिक्र भी नहीं कर सकती थी, और कहे बिना रह भी नहीं सकती थी!

आठ दिन अपने आप ही छटपटाने के बाद वह एक दिन सुबह उठते ही सीधे श्यामण्णा के घर पहुंची। वह जानती थी कि उस समय श्यामण्णा या नंजुडय्या घर

में नहीं होते। सीधे भीतर जाकर पुट्टगौरी के सम्मुख खड़ी होकर बोली—"उन्होंने शायद एक बात कही होगी, लेकिन उसके लिए क्या हम दोनों का स्नेह टूट जाना चाहिए ?"

पुट्टगौरी को तुरंत कोई जवाब नहीं सूझा। कुछ देर बाद बोली—"कहती है एक बात, बस-बस ! न तेरा स्नेह चाहिए और न तुम लोगों के घर आऊंगी। अगर तेरे आने की खबर कहीं मेरे ससुरजी को मिल गयी तो तेरे पैर काट डालेंगे ! चली जा चुपचाप।"

"जाती हूं, मेरा कर्णफूल और रुपये दे दे।"

"कौनसा कर्णफूल ? कैसे रुपये ?"—ऐसे बोली मानो कुछ जानती ही न हो।

"ऐसा क्यों कह रही है ? एक साल पहले जिस दिन उन्होंने मुझे पीटा था, मैंने नहीं दिया था ? पानी लाने जाते समय घड़े में लाकर दिये हुए चावल, काफी बीज इन सबका कुल पंद्रह रुपये नहीं देगी ?"

"कमलु, झूठ बोलेगी तो जबान में कीड़े पड़ेंगे। चल, चल ! आने वाले होंगे। हमारे घर में एक क्षण भी मत रुक। मेरे ससुरजी आने वाले होंगे।"

क्रोध से कमलु का सारा शरीर जलने लगा, अधर कांपने लगे। फिर भी कुछ नहीं बोल पायी। 'पुराना मजबूत कर्णफूल ! कम से कम अस्सी रुपये लगेंगे। पंद्रह रुपये और। यह छिनाल दोनों को निगल जाना चाहती है। पैसे खाने के विचार से व्यर्थ ही मेरे पति को बदनाम कर रही है और मुझसे बोलना छोड़ दिया है। इस छिनाल के पास अगर मैं रुपये छोड़ दूं तो मैं हासन की लड़की नहीं !'—इस तरह निश्चय करते हुए उसने चारों ओर नजर दौड़ायी। पीछे के कमरे से बड़े हंडे पर दृष्टि पड़ी। उसे इस बात का ज्ञान ही न रहा कि मैं क्या कह रही हूं और इसका परिणाम क्या होगा ? बड़ी शीघ्रता से भीतर जाकर हंडे का पानी फेंककर दोनों हाथों से पकड़कर "मेरे रुपये देकर अपना हंडा छुड़ा लेना" कहकर चलने लगी। पुट्टगौरी यों ही थोड़े छोड़ती उसे ! "हाय चोर, छिनाल, घर में घुसकर हंडा ले जाती है ?" आगे बढ़कर उसने उसे रोक दिया। लेकिन कमलु उससे अधिक ताकतवर थी। उसे जमीन पर गिराकर, वह घर से बाहर निकल गयी और हंडे के तले में लगी कालिमा न देख, हंडा सिर पर रख कर अपने घर दौड़ आयी।

कमलु को सिर पर बड़ा हंडा ढोकर जाते हुए पास के चार-आठ आदमियों

ने देख लिया था। इसमें किसी को कोई राज दिखायी नहीं पड़ा। वह घर आयी तो पति घर पर नहीं था। हंडे को रसोईघर के भीतरी द्वार के पास रखकर घर के सामने के दरवाजे को बंद कर दिया। अक्कम्मा कुछ न समझ पायी थी। उसने पूछा—"क्या है री ? यह हंडा किस घर का है ?" तो उसने कोई जवाब नहीं दिया। 'चोर, छिनाल कहीं की ? मेरा रुपया हड़प करने के लिए नाटक खेल रही थी। नहीं जानती कि उनका क्रोधी स्वभाव है ? उन्होंने पूछा होगा कि क्यों आई हो, तो वही बहाना बन गया रुपये हड़प करने का ? हंडा पूछने के लिए हमारे घर आने दो, धोखेबाज छिनाल को दिखाती हूं कि मैं क्या हूं !'—धीरे-धीरे बड़बड़ा रही थी। अक्कम्मा ने सुन तो लिया था लेकिन पूरी तरह समझ नहीं पायी थी।

इतने में बाहर रास्ते पर शोरगुल सुनाई पड़ा। श्यामण्णा चिल्ला रहे थे—"हमारे घर से हंडा चुरा लायी, चोर कहीं की !" बीस-तीस लोगों को साथ लिये आने की आवाज भी थी। श्यामण्णा ने रास्ते की ओर का दरवाजा खटखटाया। कमलु कह रही थी कि 'उनके' घर आने तक दरवाजा मत खोलिए, फिर भी अनजान अक्कम्मा ने जाकर दरवाजा खोल दिया। घर के सामने इतने लोग इकट्ठे हुए थे मानो कोई मेला लगा हो। श्यामण्णा बोले—"अक्कम्मा, आपकी बहू हमारे घर से हंडा ले आयी है, लौटा दीजिए।"

"अपने रुपये वापस मिलने तक मैं नहीं लौटाऊंगी।" कमलु भीतर से चिल्लाई।

कुछ न समझकर अक्कम्मा बोली—"कल्लेश बस्ती के आगे शौचादि के लिए गया है। कोई जाकर उसे बुला लाये। यजमान के आने तक मैं कुछ नहीं जानती।"

दो व्यक्ति बुलाने दौड़े। उन्होंने लौटते समय कल्लेश की पत्नी के कारनामे का विवरण सुना दिया। पत्नी के कार्य की पृष्ठभूमि न जानकर, उसने चुपचाप घर के भीतर आकर पत्नी से ही पूछा— "यह क्या है री ?"

"उस चोर छिनाल ने मेरे रुपये हड़प लिये हैं !"

"कैसे रुपये ? वे कहां से आये ? पूछ ?" श्यामण्णा बोला।

"मैंने अपने एक जोड़ी कर्णफूल और पंद्रह रुपये दिये थे।"

"कैसा कर्णफूल ? किसके बाप के घर का है वह ?"

"मेरा कर्णफूल टूट गया था, इसे ठीक करा देने के लिए ले गयी थी।"

"तेरा कर्णफूल टूट गया था तो अपने पति को देकर दुरुस्त कराना चाहिए था, उसके हाथ में क्यों दिया ? और पंद्रह रुपये किस बात के ?"

"मुझसे उसने चावल, काफी-बीज लिये थे।"

"सुन लिया ! कोई इस बात पर विश्वास करेगा ?" श्यामण्णा वहां जमा हुए लोगों से बोला।

"किसी के विश्वास करने से क्या ? मेरी रकम हड़प लेने के उद्देश्य से ही उसने झूठमूठ मेरे पति पर इल्जाम लगाकर मुझसे बोलना बंद कर लिया। मेरे पति ने उससे क्या कहा था ? उससे ही बुलवाइए। उसे अपने बच्चों को हाथ में लेकर कसम खाकर कहने दीजिए।"

"बांझ कहीं की ! तू किसको लेकर कसम खायेगी ?" श्यामण्णा बोला।

कल्लेश समझ गया कि बात किस तरफ बढ़ रही है। इस बात का डर भी हुआ कि कसम-प्रमाण की बात आने पर आगे-पीछे की सोचे बिना पुट्टगौरी सच-सच कह देगी। अक्कम्मा की ओर मुड़कर पूछा—"हंडा कहां है ?"

"रसोईघर में रखा है उसने।"

चुपचाप अंदर जाकर, और उसने हंडा लाकर श्यामण्णा के सामने रख दिया। "मेरे रुपये, कर्णफूल देने तक हंडा मत दीजिए" कहती हुई पत्नी बीच में आई तो उसे लात मारकर धकेल दिया।

"चोर, छिनाल कहीं की ! पकड़कर खोपड़ी के बाल झड़ने तक झाड़ू से पीटना चाहिए।" कहते हुए श्यामण्णा ने वहीं खड़े चौकीदार से कहा—"हंडा ले जा।"

भीड़ धीरे-धीरे घर के सामने से हटने लगी। लेकिन गांव में हुए ऐसे विशिष्ट कार्यक्रम को छोड़कर इतनी जल्दी अपने-आप जाने के लिए सभी तैयार नहीं थे। कल्लेश के घर के सामने वाले मोड़ को पार कर, फिर खड़े होकर उसी के बारे में हंसी-ठट्ठा करने लगे।

कल्लेश ने दरवाजा बंद कर लिया। फिर सामने पगहीं मिली तो उसे ही बल देकर पकड़ा। फिर जिस तरह गुनाहगार से गलती कबूल कराने के लिए पुलिस मारने लगती है, उसी तरह पगही उछाल-उछालकर पत्नी के शरीर पर जड़ने लगा। अक्कम्मा जानती थी कि इस समय छुड़ाने जायेगी तो उस पर भी एकाध पड़ जायेगी, इसलिए पछीते की ओर जाकर गाय के बाड़े में बैठ गयी। "छिनाल

बता कर्णफूल उसे क्या करने के लिए दिया था?" फिर पंद्रह-बीस बार मार खाने के बाद उसने मुंह खोला—"रंगमणि को देने के लिए रखा था।" रंगमणि कमलु की छोटी बहन है जो शादी लायक हो गयी थी।

"चावल, काफी के बीज क्यों और कैसे दिये?"

उसने जबान नहीं हिलायी। लगातार और एक दर्जन खाने के बाद बोली—"पानी लाने जाते समय घड़े में डालकर ले जाया करती थी।"

कल्लेश ने पगही फेंक दी। रसोईघर में जाकर एक कटी लकड़ी ले आया। यह देख वह भयभीत होकर चिल्लायी—"हाय, हाय मां! मुझे मार डाल रहा है, मैं मर रही हूं।" कल्लेश के घर के अगले मोड़ पर जो भीड़ खड़ी थी धीरे से घर के पास आ पहुंची। प्रहार की फट्-फट् आवाज, उसका चीत्कार, शाप और बीच-बीच में कल्लेश के मुख से निकलते मादर··· बहन··· जैसे अपशब्द बाहर खड़े लोगों के कानों में पड़ रहे थे। दूर से आये लोग दरवाजा खटखटाकर भीतर घुसने और छुड़ाने के विचार से आगे बढ़े। लेकिन पड़ौस के लोग जो इसे रोज की घटना समझते थे, उन्होंने हाथ के इशारे से उन्हें रोक दिया।

न जाने लकड़ी टूटने से या थक जाने से, कल्लेश ने मारना छोड़ दिया। रोने में भी असमर्थ पड़ी हुई कमलु की पीठ और भुजाओं से खून निकलने लगा। उसके कानों से पिछले साल बनाकर दिये कर्णफूल कल्लेश ने निकालकर छत पर रखी अपनी पेटी में रख दिये और ताला लगाकर चाबी अपनी जनेऊ से बांध ली। फिर रास्ते की ओर का दरवाजा खोलकर बाहर निकल गया। घर के पास खड़ी भीड़ को देखकर जोर से चिल्लाया—"यहां क्यों खड़े हो? अंदर कोई रीछ नाच रहा है?" वह इस ढंग से चिल्लाया कि भयभीत होकर भीड़ बिखर गयी।

पत्नी ने जोर-जोर से रोकर, दो घंटे तक सिसकियां लीं। फिर पति का हाथ सूजने, पैर टूटने, जेल में फांसी पर लटकाने का शाप देने के बाद, कमलु की बुद्धि ने सारी घटना का सिंहावलोकन किया। उसने अनुभव किया कि वह चोर छिनाल मेरे कर्णफूल और पंद्रह रुपये भले ही हड़प लेती, लेकिन मुझे उसके घर से हंडा नहीं लाना चाहिए था; हंडा लाने से ही परसाल जो कुछ किया था, उसका भंडा फूट गया; और इस हरामजादे ने मुझे ही मार-मारकर अधमरा कर दिया। उसने यह भी निश्चय किया कि इसे इसका सबक सिखाना पड़ेगा। चुप रहने से यह छिनाल का बेटा फिर भी मारेगा।

[3]

उस दिन कल्लेश मरुवनहळ्ळी की देवी के घर में रहा। दूसरे दिन सुबह उठकर गांव की ओर निकला। बाड़ी की केतकी के बीच से गुजरते वक्त 'शांय-शांय' करते हुए चार-छह पत्थर उस पर गिरे। गर्दन उठाकर देखा तो एक और पत्थर गिरा। "कौन है रे, तेरी मां···" एक बार वह गरजा। अब पत्थरों का आना बंद हो गया था। वह उस ओर जाने से डर रहा था। झिझक थी कि कहीं एक साथ अनेकों ने धावा बोल दिया तो! लेकिन अगर चुपके से निकल जाऊं तो कैसे पता चलेगा कि ये कौन लोग थे! खैर, दिन का समय है। साहस करके केतकी के बीच में से झांक कर देखा। बाड़ की ओट में बैठे हुए लोगों के चेहरे दिखायी पड़े। यह समझकर कि कल्लेश ने पहचान लिया है, वे धीरे से खिसककर भाग खड़े हुए।

वे सब श्यामण्णा के खेत में काम करने वाले नौकर, गांव के झाडू वाले और ग्राम-रक्षक थे। यूं ही आकर पत्थर फेंकने के लिए उनका मुझसे कोई द्वेष-भाव तो नहीं था। फिर ऐसा क्यों किया उन्होंने? सोचने पर वह समझ गया कि यह तो श्यामण्णा की ही करतूत है। इस पटवारी की आदत ही ऐसी है। खुद आगे आने की हिम्मत नहीं करता। दूसरों से ही कराता है। जब पिताजी थे तब भी एक दिन इसी तरह घर पर पत्थर फिंकवाये थे। इसीलिए पिताजी ने दिन-दहाड़े जाकर उनके घर की खपरैलें तोड़ दी थीं। लेकिन कल्लेश जानता था कि उसमें पिता की वह हिम्मत नहीं है। श्यामण्णा ने ऐसा क्यों करवाया? कमलु हंडा ले आयी थी, कहीं उसी के लिए तो ऐसा नहीं किया। लेकिन नहीं, ऐसा नहीं करेगा क्योंकि उसी ने तो हंडा वापस कर दिया था। उसकी बहू के साथ जो हुआ, शायद वह समझ न गया हो! अगर इस विषय को लेकर झगड़ा किया तो इससे उसके घर की ही इज्जत जाती है। खैर, जो हो, यह रांड का बेटा इसी तरीके से बदला लेने निकला है। इससे झगड़ना नहीं है, उपाय से काम लेना है। इस पुट्टगौरी की संगत में नहीं पड़ना चाहिए था। वह कौन-सी सुंदर है! लेकिन बहुत दिनों से इच्छा हुई थी और वह पूरी हुई। ऐसा सोचते हुए घर आया तो और एक घटना उसका इंतजार कर रही थी। अक्कम्मा बोली—"तू कल न

जाने कहां चला गया था, वह कल धमकी देती रही थी कि कुएं में गिर पड़ूंगी और तुझे और मुझे फांसी पर चढ़वा दूंगी। मैं रात भर पलकें न मूंद सकी। पटेदार होन्ना को बुलवाकर घर पर ही रोक लिया था।"

कमलु अब भी कोपगृह में ही थी। "क्यों री छिनाल ?" कल्लेश के कहने पर उसने भी क्रोध में ही उत्तर दिया—"तुझे फांसी पर लटकवाकर ही दम लूंगी।" तुरंत लकड़ी उठाने का विचार हुआ, लेकिन यह सोचकर छोड़ दिया कि कल इतना पिटने पर भी उस पर कोई असर नहीं हुआ। साथ ही, उसे उस दिन की घटना भी याद आयी जब पत्नी कुएं में गिरी थी। कुछ सोचकर पूछा—"क्यों री, कुएं में गिरना चाहती है ?"

"हां, रे !"

"तो आ !" उसकी बांह पकड़कर खींचते हुए कुएं के पास ले गया। "कुछ अनहोनी हुई तो हमें ही दोषी ठहराया जाएगा" कहकर बीच-बचाव करने अक्कम्मा आयी तो उसे दूर धकेल दिया। फिर कुएं के पास पड़ी नयी रस्सी का फंदा बड़ा करके उसकी कांख में डालकर कस दिया। वह बड़बड़ा रही थी। लेकिन कल्लेश ने अपने दोनों पैरों को कुएं की दीवार से टिकाकर नयी घिर्री से उसे कुएं के भीतर धीरे-धीरे छोड़ने लगा। वह 'हाय ! हाय !!' करती त्यो वह रस्सी और ढीली करते जाता। उसे पानी के निकट पहुंचा दिया उसने। वह रस्सी और ढीली करता गया तो उसके पैर, घुटने, जांघ कमर का भाग पानी में डूब गया। 'हाय ! हाय !!' चिल्लायी तो रस्सी ढीली छोड़ सिर तक डुबा दिया और फिर कांख तक पानी के ऊपर खींच लिया। भीतर से उसके पसीना छूटने लगा और वह कांपने लगी।

"कुएं में गिरेगी री", ऊपर से कल्लेश ने पूछा।

"नहींऽऽ, नहींऽऽऽ।"

"तू, 'तुझे' कहकर संबोधन करेगी अब ?"

' नहीं, नहीं ! आपके पैरों पड़ती हूं। ऊपर खींच लीजिए।"

कुएं की दीवार से दोनों पैर टिकाकर और जोर लगाकर वह रस्सी खींचने लगा, तो उसे महसूस हुआ कि अकेले नहीं खींच सकता और एक आदमी की मद्द लेनी होगी। इसके लिए अगर बाहर वालों को बुलाया तो शोरगुल मच सकता है। इतने में ही रास्ते का दरवाजा खटखटाने की आवाज आई। "ठहरो,

दरवाजा मत खोलो" कहकर वह अक्कम्मा से कह ही रहा था कि द्वार खटखटाने वाले ने पुकारा—"अक्कम्मा, कल्लेश, दरवाजा खोलो।" अक्कम्मा अपने बेटे कंठी की आवाज पहचान गयी। उठकर द्वार खोला और उनके भीतर आने पर फिर से बंद कर दिया। अपनी बायीं भुजा के पीछे और आगे, दोनों ओर से लटकायी हुई वजनदार शुची-थैली और हाथ की थैली उन्होंने नीचे रखी। बेटे के कुशल समाचार पूछने के पहले ही अक्कम्मा बोली—"जरा वहां जाओ, कुछ बोलना मत।" पिता-पुत्र ने मिलकर कमलु को ऊपर खींचा। भीगी साड़ी में ही वह कमरे में आई। फिर कुछ नहीं बोली। कोई शोरगुल नहीं हुआ।

एक-दूसरे के कुशल समाचार पूछे गये। जोइसजी ने संन्यासी की भांति दाढ़ी बढ़ा ली थी। उन्होंने बताया कि इतने दिन वे काशी में रहे। जाने का कारण पूछा तो कोई उत्तर नहीं मिला। इस गांव में प्रवेश करने से पहले आसपास के एक-दो गांवों में उन्होंने पूछताछ कर ली थी कि श्यामण्णा जीवित है या नहीं।

मां ने पूछा—"यह दाढ़ी क्यों बढ़ा ली ? संन्यास ले लिया है क्या ?"

"नहीं तो। अरे कल्लेश, हज्जाम को बुला ला।"

हज्जाम आया। कंठीजोइसजी ने पहले जैसे ही गांठ बांधने जितनी चोटी छोड़कर दाढ़ी-सिर मुंड़वा लिये। इन बारह वर्षों में उनमें किसी तरह का अंतर दिखायी नहीं पड़ रहा था। भरे शरीर में सुखी दिख रहे थे। स्नान के पश्चात्, संध्यावंदन से निपटकर उन्होंने जप किया। जप शायद काशी में सीखा था। खाना परोसते समय अक्कम्मा बोली—"कंठी, तुम्हें गये बारह साल बीत गये न ? लौटने पर, घर आने से पहले, किसी मंदिर में पहला मुखदर्शन होना चाहिए था।"

"काशी-गंगा साथ लाया हूं। उसके साथ रहते हुए और कुछ नहीं चाहिए। यह देख, गंगा समाराधन करना है।"

"इस जमाने में समाराधन कितना कठिन कार्य है ! परसाल बारिश न होने से घर खाली हो गया है।" कल्लेश बोला।

"मैं रुपये लाया हूं। अधिक से अधिक कितना खर्च होगा ?"

कंठीजोइसजी के लौट आने की खबर पाकर गांव के बहुत से लोग आये और मिलकर और बातचीत करके लौट गये।

बारह वर्ष काशी में रहकर लौटे हुए वे पहले की अपेक्षा अब और अधिक महापंडित हो गये थे। मन में काशी यात्रा करने की आकांक्षा रहते हुए भी

जिनकी इच्छा पूरी नहीं हुई, ऐसे कुछ लोगों ने उनका चरण छूकर नमस्कार किया। ऐसे लोगों को उन्होंने एक-एक काल-भैरव ग्रंथ दिया। आठ-दिन बड़ी धूमधाम से गंगा समाराधन संपन्न हुआ। समाराधन के दिन सब आये थे, लेकिन श्यामण्णा और उसके घर से कोई नहीं आया था।

जोइसजी ने गांव में घूम-घूमकर अपने पुराने मित्रों से मिलकर गांव के सारे समाचार जान लिये। गंगा समाराधन के दिन चांदनी रात में, कुएं के पास बैठकर उन्होंने अपने बेटे से पूछा—"कल्लेश, सुना है कि तेरी बहू तेरे पीटने के कारण क्रोध में आकर अपने कर्णफूल चुराकर अपने मायके तक पहुंचाकर अपनी छोटी बहन को देना चाहती थी, श्यामण्णा की बहू भी इसमें शरीक थी। क्या यह सच है ?"

"हुं !"

"कहते हैं कि तुमने उसकी बेइज्जती की है !"

"नहीं, उससे इतना ही कहा था कि हमारे घर मत आया करो।"

"देख, मैं काशी हो आया हूं। जन्म देने वाला बाप हूं। मुझसे सच-सच कहना। केवल 'हमारे घर मत आओ' कहा या और कुछ हुआ ?"

"आपसे क्या कहा गया ?"

"गांव भर में कुछ और भी बात चल रही है। कहते हैं कि असली बात मुंह खोलकर बताने में श्यामण्णा को शर्म आ रही है !"

"हुं !" कल्लेश गर्दन झुकाकर बोला—"इसकी नियत बिगाड़ने के उद्देश्य से ही श्यामण्णा बहू को भेजा करता था। ऐसे लोगों का और क्या किया जाये ?"

"देख, पुरुष जो चाहे वह पौरुष दिखाकर विजयी हो सकता है, लेकिन उसे एक 'काम' में संयम रखना चाहिए। इसमें वह शिथिल हुआ कि बस ! फिर और किसी पर वह विजय प्राप्त नहीं कर सकता। तूने गलत काम किया है।"

कल्लेश शर्मिंदा हुआ। लेकिन अपने कर्म के समर्थन के लिए बोला—"जिस दिन आप गांव लौटे, मैं मरुबनहळ्ळी होता हुआ आ रहा था। श्यामण्णा ने नौकरों को भेजकर मुझ पर पत्थर फिकवाये। यह कार्य उसके लायक था ?"

"अरे, इसकी मां··· हरामखोर कहीं का ! हमारे घर पर पत्थर फिकवाने के कारण तो इतना सब हुआ। क्या वह समझता है कि कंठीजोइस मर गया है। छोड़, मैं देख लेता हूं।" उन्होंने कुछ करने का फैसला कर लिया। क्या फैसला

किया, किसी को बताया नहीं।

दो दिन बाद शुक्रवार आया, अर्थात् नांगलापुर का साप्ताहिक बाजार-दिन। इस बाजार में आसपास के गांवों से लगभग सभी लोग आते थे। दोपहर के लगभग तीन बजे पटवारी श्यामण्णा अपने घर से निकलकर बाजार की ओर जा रहे थे। सफेद लांग की धोती, शरीर पर कमीज और एक उत्तरीय डाले हुए। माथे पर काला तिलक लगाये पटवारी के रौब में चले जा रहे थे। न जाने कहां छिपे बैठे थे कंठीजोइसजी, उसके सम्मुख आकर खड़े हो गये। ये लांग की धोती गेरुवे रंग की कमीज पहने हुए थे और माथे पर त्रिपुंड् लगाये, गले में जप माला धारण किये हुए थे। हाथ में एक मोटा मटका भी था। मटके से निकलने वाली बदबू आसपास सब की नाक बंद कर देती थी। "मेरे बेटे पर पत्थर फिकवाये तूने? नामर्द, नालायक।" कहते हुए उन्होंने हाथ का मटका उठाकर श्यामण्णा के सिर पर अभिषेक करते हुए उंड़ेल दिया। बदबू और रंग से आसपास उपस्थित लोगों ने समझ लिया कि यह मनुष्य की विष्ठा है। इतने प्रमाण में इन्होंने यह विष्ठा कहां और कैसे इकट्ठी की, उन सबको किस अनुपात में मिश्रित करके लाये, ये सारी बातें काशी-विश्वेश्वर ही जाने जिसकी इन्होंने बारह साल पूजा की थी। सब उंड़ेल दिये जाने के बाद श्यामण्णा की सफेद कमीज के चारों ओर रिसकर विष्ठा चिपक गयी। मटके को अपने शत्रु के सिर पर पटककर कंठीजोइसजी लोगों की भीड़ में गायब हो गये।

[4]

फिर एक महीना तक कंठीजोइसजी नांगलापुर में नहीं रहे। कोई नहीं जानता था कि किस गांव में हैं। कल्लेश तीन-चार दिन में एक बार कहीं जाकर लौटा करता था। इससे लोगों ने कल्पना की कि वह अपने पिता को यहां के हालचाल सुनाने ही जाता है। वह रात के समय जाता था, इसलिए उसका पीछा करने की किसी में हिम्मत भी नहीं हुई, और वह दिन में लौटता था। यह जानकर किसे पाना भी क्या था? गत बारह सालों की अनुपस्थिति में कंठीजोइसजी तो पुराण-पुरुष ही बन गये थे। अब गांव लौटकर गंगा समाराधन कराने के तीन दिनों बाद ही उन्होंने ऐसा साहसी कार्य कर दिखाया जिसे आसपास के किसी ने आज तक नहीं

किया होगा। श्यामण्णा उसी क्षण घर दौड़ा। गुसलखाने में घुसकर सीकाकाई की बुकनी डालकर, नारियल के रेशे के गुच्छे से रगड़-रगड़ कर सारा शरीर धोया। उनके साथ यह जो कुछ हुआ, उसे केवल दस-बीस लोगों ने ही देखा था। घर की ओर दौड़ते समय तीन-चार लोगों ने और पहचाना होगा। लेकिन गांव के सब लोग कहते थे कि उन्होंने स्वयं अपनी आंखों से सारी घटना देखी है, विष्ठा को कंठीजोइसजी द्वारा श्यामण्णा पर उड़ेलना, श्यामण्णा के मुंह में उसका जाना, मुहर्रम के बाघ के रंगसा सारे शरीर पर रिस जाना, आदि रंग-बिरंगे वर्णन सुनाते थे।

कंठीजोइसजी पर क्या मुकदमा नहीं चलाया जा सकता? श्यामण्णा ने सोचा लेकिन उन्हें किसी व्यक्ति का स्पष्ट स्मरण नहीं है जिससे घटना-स्थल पर प्रत्यक्ष सारी घटना देखी हो। 'उसने मेरे साथ ऐसा किया'—यह कहने में एक तरह की झिझक भी होती। उनके सामने तो इसका जिक्र कोई करता ही नहीं था। सोचा, इस विषय को कुरेदकर और प्रसार करना, बुद्धिमानी नहीं है। इसके अतिरिक्त यह भी याद आया कि इससे पहले एक बार कंठीजोइसजी पर मुकदमा चलाकर, नरसीपुर का चक्कर काटा था और मुकदमे के फैसले के बाद भी उनके हाथों मार खानी पड़ी थी। 'सोचा था वह हरामजादा मर गया है। उसके बेटे कल्लेश की पत्नी को दूर ही रखते तो कुछ नहीं होता! इस बुढ़ापे में और किस मुसीबत में फंसूं!' यह सोचकर भी एक और बात उनके मन को मसोस रही थी—कंठीजोइसजी का बेटा कल्लेश बाप की तरह ही काईयां है, कठिन समय आने पर षड्यंत्र भी रचता है, हिम्मत भी है; और इधर मेरा नंजुंड कायर, 'रणछोड़दास' है। अब दूसरों से झगड़ा मोल लेने के मेरे दिन बीत गये।

एक महीने बाद कंठीजोइसजी गांव लौट आये। उनसे किसी ने इस विषय में नहीं पूछा। उन्होंने भी कुछ नहीं कहा। गले में जपमाला डाले, माथे पर त्रिपुंड्र लगाकर मार्ग में निकलते तो लोग उन्हें गौरव की दृष्टि से देखकर कुछ दूर हट जाते।

बारहवां अध्याय

इस साल भी थोड़ी ही बारिश होने पर भी मडुए की फसल हुई। कहा जाता था कि यूरोप में अंग्रेज और जर्मनों के बीच घमासान युद्ध चल रहा है। इधर बर्मा में भी लड़ाई चल रही है। खाद्यान्न का सरकार ने राशन कर दिया है। एक दिन इलाकेदार गांव में आये। नंजम्मा को समझाया कि राशन क्या होता है और अगले बरस मर्दुमशुमारी लिखते समय फसल का अंदाज लगाने का क्रम भी बता दिया—अगर लगे कि एक एकड़ जमीन में छह खंडी मडुआ होगा तो उसके सोलह आने, साढ़े चार खंडी के बारह आने, तीन खंडी के आठ आने। इस तरह मडुआ, धान, कुलथी, लोबिया आदि की फसल का अंदाज लगाना चाहिए। सरकार उसी के मुताबिक हर किसान की फसल का निर्धारण करके, रायशुमारी के हिसाब से उनके घर का खर्चा निकालकर, बीज के लिए छोड़कर, शेष बचे को सरकारी दाम से खरीद लेगी। अर्थात्, हिसाब-किताब लिखनेवाले पटवारियों को नया अधिकार मिला।

नंजम्मा एक दिन कुरूबरहळ्ळी गयी और नये हिसाब का विषय गुंडेगौड़जी को बताया। उन्होंने कहा, "मेहनत हम करें और फल इन हरामजादों को दें !"

"सरकार ने कानून ही बना दिया है। कहते हैं नहीं तो पुलिस आयेगी।"

और लोगों को भले ही असुविधा हो, लेकिन नंजम्मा चाहती थी कि कुरूबरहळ्ळी को किसी तरह की हानि न हो। गांव को हानि पहुंचे तो गुंडेगौड़जी के पटेलत्व के गौरव के विरुद्ध होगा। जिस गांव ने उसकी संतान की देखभाल की है, उसकी हानि होते हुए वह कैसे सह सकती है ? लेकिन गांववालों के पास भेड़ हैं। हर साल खेत में भेड़ बांधने के कारण बहुत से लोग हर एकड़ में छह खंडी से अधिक फसल उगाते हैं। अंदाज में कम दिखाना पड़ेगा। लेकिन इलाकेदार ने बताया था कि पटवारी के अंदाज का निरीक्षण करने के लिए अमलदार स्वयं आकर खेतों का मुआयना करते हैं।

चर्चा करने के पश्चात नंजम्मा और गुंडेगौड़जी एक निर्णय पर पहुंचे—सामान्यतः आठ आने, नौ आने दाम के हिसाब से नंजम्मा मर्दुमशुमारी में अंदाज लिखेगी, सारे गांव से कुल लगभग सौ रुपये उठाकर इलाकेदारजी एवं उच्चाधिकारियों को देकर निपटा देना होगा। अनाज लेने आनेवाले सरकारी अधिकारियों को सरकारी दाम में ही दस-बारह खंडी बेच देना है।

वह साल उसी तरह चला। सौ रुपये नकदी और बारह खंडी मडुआ सरकारी दाम से देकर चालीस घरों के कुरुबरहळ्ळी वाले पार हो गये। इस गांव के इससे पहले भी दस्तूरी देते थे। अब इसके साथ ही दस सेर मडुआ भी देने लगे। आहार नियंत्रण आदेश से रामसंद्र और लिंगापुर पर वज्रपात हुआ। रामसंद्र का पटेल शिवेगौड़ या लिंगापुर का पटेल पुरदप्प नहीं जानते थे कि फसल का अंदाज लगाना किस चिड़िया का नाम है। नंजम्मा ने इन दोनों की मर्दुमशुमारी जितनी थी, उतनी ही लिखी। 'सुग्गी' काल समाप्त होना था कि एक दिन इलाकेदार दो चपरासी और दो पुलिस कांस्टेबलों के साथ गांव में आये। इलाकेदार के निर्देशन में चपरासी हर घर में घुसे। छत, पेटियां, मटका, हंडे सभी कुछ छान मारे। बांस जितनी लंबी लकड़ी को मडुए की कोठी में घुसाकर उसकी लंबाई-चौड़ाई का अंदाज लगाना, घर में कुल इतना अनाज है, उसकी कल्पना कर फिर मन में जो आये उतना नापकर बंधवाकर महादेवय्यजी के मंदिर के सामने डलवाना, छत पर चढ़ चपरासी का घर के यजमान से वहीं बीस, चालीस, पचास रुपये लेकर नीचे उतर कर 'कुल दो ही पल्ला है सर' कहना, आदि चलता रहा। उसके बाद इलाकेदार को चपरासी जो कुछ देगा और वह हड़पेगा, यह उसका ही काम था और अपने को प्राप्त रुपयों में से पुलिस में बांटना इलाकेदार का काम था।

एक ही दिन में रामसंद्र से कुल चार सौ और लिंगापुर से एक सौ पल्ला मडुआ भरवाकर इलाकेदार चले गये। किसानों को पटेल, पटवारी के सामने उनसे प्राप्त रसीद प्रस्तुत करके, संबंधित अधिकारियों को रिश्वत देकर उसके पैसे लेने थे। मडुआ नापने वाले चपरासी अपने द्वारा लाये गये सरकारी सेर और नापने वाले की चालाकी के साथ आठ सेर अधिक उड़ा लेते थे।

पंद्रह दिन बाद एक दिन पटेल शिवेगौड़ ने कारिंदे के हाथ नंजम्मा को बुलाया। पटेल के बुलाने पर पटवारी को जाना चाहिए या पटवारी के बुलाने पर पटेल को जाना चाहिए, यह उनकी अपनी जमीन-जायदाद, रौब आदि पर निर्भर

करता है। अब तक की रूढ़ि थी—शिवेगौड़ के बुलाने पर चेन्निगराय जाते थे, लेकिन आज उसने नंजम्मा को बुलाया था। नंजम्मा को गुस्सा तो आया, लेकिन सहनशीलता न गवांकर कारिंदे से बोली—"कुछ काम हो तो उन्हें ही यहां आने के लिए कह दो।"

कुछ देर बाद पटेल ही आया। उसके पीछे-पीछे आया कारिंदा, जो दरवाजे के पास खड़ा हो गया। खंभे के पास बिछी चटाई पर बैठ पटेल समझ नहीं पा रहा था कि बात किस प्रकार आरंभ करे। पांच मिनट की दुविधा के बाद बोला—"कहते हैं कि कुरूबरहळ्ळी से बारह खंडी ले गये हैं! फिर हमारे गांव से चार सौ पल्ला कैसे ले गये ?"

"यह मैं क्या जानूं, पटेल जी!"

"तुझे ही कहना होगा, हिसाब लिखने वाली तो तू ही है।"

"पटेल महोदय, 'तू', 'तेरा, कहाने के लिए मैं आपके घर भीख मांगने नहीं आती हूं। जरा इज्जत से बात कीजिए।" कहकर नंजम्मा रसोईघर में चली गयी।

"चेन्निगराय को मैं जन्म से जानता हूं।"

"तो फिर उनसे ही पूछिए। आपने कारिंदे के हाथ बुलवा भेजा, क्या आपने अपने पटेलत्व को महान दौलत समझ रखा है ?"

शिवेगौड़ को लगा मानो किसी ने थपत लगा दी हो। उसने कभी इस औरत से बात नहीं की थी। घरबार खोकर, पत्तलें बेचकर, तरकारी उगाकर खाकर पति के पटवारी-कार्य का हिसाब-किताब लिखने वाली इस औरत का रौब देखकर उसका शरीर जल उठा।

"हमारी मर्दुमशुमारी लिखते समय कम अंदाज क्यों नहीं लिखा, बहन ?"

"यह पूछने वाले आप कौन होते हैं ?"—नंजम्मा ने भीतर से ही कहा।

"मैं सरकार से ही पूछूंगा कि सरकारी हिसाब-किताब औरत लिख सकती है क्या ?" इतना कहकर शिवेगौड़ उठा और वहां से चला गया। जो व्यक्ति सारे गांव में राजा की तरह रहता था, उसे आज पराभव का अनुभव हुआ। वह भी अब तक जिस कारिंदे के सम्मुख रौब-दर्प दिखाता था, उसी के सामने इस औरत ने ऐसी बेइज्जती की थी। अपने साले सिवलिंगे को साथ लेकर वह सीधे कंबन-केरे गया और इलाकेदार से मिलकर पूछा कि औरत सरकारी हिसाब-किताब लिख सकती है क्या ? इलाकेदार को इसकी पृष्ठभूमि पहले से ही मालूम थी।

इन्हें इस इलाके में आये केवल छह महीने हुए थे, लेकिन उनका पूर्वाधिकारी इन्हें इस इलाके की सारी आंतरिक जानकारी दे गया था। फिर भी उसने समझदारी से शिवेगौड़ से ही शिकायत की पृष्ठभूमि उगलवायी। पटवारी अगर मर्दुम-शुमारी में अधिक अंदाज लिखे तो इन्हें लाभ था, कम लिखे तो भी लाभ था। इसलिए इलाकेदार पटवारी का हाथ क्यों छोड़े ? वे बोले—"देखिए, शिवेगौड़जी, डिप्टी कमिश्नर साहब भी जानते हैं कि यह स्त्री हिसाब-किताब लिखती है। हुजूर, जमाबंदी में उन्होंने स्वयं लिखा है कि सारे तुमकूर जिले में इतनी अच्छी तरह से और कोई नहीं लिखता। औरत हिसाब-किताब न लिखे, ऐसा कोई सरकारी नियम भी तो नहीं है।"

पराजित-सा मुंह लटकाये शिवेगौड़ अपने साले के साथ गांव लौट आया। रास्ते में शिवेगौड़ ने साले से पूछा—"वह हरामजादा इलाकेदार जब गांव में आता है तो यह छिनाल उपमा, काफी बनाकर देती है। इसलिए देखा न, किस तरह तरफदारी की है इसने ?"

"सिर्फ उपमा-काफी के लिए कोई इतनी तरफदारी करेगा ? उसके आने पर यह बिस्तर बिछाकर साथ भी सोती है !"

"छिनाल कहीं की", छिनाल रांड कहकर शिवेगौड़ ने अपने मन को तसल्ली दिलायी। लेकिन गांव लौटने के पश्चात इसी बात को और किसी के सामने कहने का साहस न उसमें था और न उसके साले सिवलिंगे में।

शिवेगौड़ के रौब को देखकर नंजम्मा मन ही मन तिरस्कार से जल रही थी। वह केवल पटेलत्व का रौब नहीं था। सारा गांव जानता है कि काशिबड्डी के लेन-देन के रुपये इसी के हैं। परदेशी काशिबड्डी इस गांव में जगह खरीदकर घर बंधवाना नहीं चाहता था। कहा जाता था कि वह अपने हिस्से का ब्याज गिनकर अपने गांव केरल में भिजवा देता था। इसमें दोनों के ब्याज का व्यवहार केवल गिरवी के रूप में आने वाला सोना, चांदी, तांबा, पीतल तक ही सीमित था। इन लोहों को खानेवाले अपनी छोटी-बड़ी भूमि को गिरवी लिखाकर दमड़ी ब्याज के हिसाब से उधार लेते थे। गिरवी रखी हुई चीजें सदा के लिए शिवेगौड़ की हो जाती थीं। तीन महीने का ब्याज वे लोग पहले ही घटाकर देते थे। अर्थात् एक हजार के लिए गिरवी लिख दें तो लगभग पांच सौ रुपये हाथ में आते थे। इसके अतिरिक्त एक हजार का बारह प्रतिशत कोर्ट में जाने पर भी मिलता था,

गत दो सालों में खासकर फसल के अभाव में, दो सालों में शिवेगौड़ का घमंड बहुत बढ़ चुका था। उसे घटाने में उस गांव में कोई समर्थ न था। यह नंजम्मा भी जानती थी। लेकिन उस पर भी पैसों का रौब दिखाने आया तो उसने उसे सही उत्तर दे दिया। आहार-विभाग का कंट्रोल आने के बाद इलाकेदार को बार-बार गांव आना पड़ता था। इस बात की खबर मिलने के बाद कि वह उनसे मिलने गया था और वहां भी उसे मुंह की खानी पड़ी, नंजम्मा चुप ही रही।

[2]

बारिश के बाद अच्छी फसल होने के बावजूद अनाजों का भाव घटा नहीं। युद्ध चलता रहा। पटवारीगिरी के सामान्य हिसाब के साथ आहार नियंत्रण, फसल, धान्य संग्रह आदि के काम बढ़ गये थे। सरकार ने पटवारियों को वार्षिक वर्षासन के अतिरिक्त भत्ता देना शुरू किया। अब नंजम्मा को पुराने वर्षासन के एक सौ बीस रुपये के अतिरिक्त एक सौ रुपये और मिलने लगे थे। हिसाब-किताब का काम बढ़ जाने के कारण अब पत्तलें बनाने के लिए समय ही नहीं मिल पा रहा था। पार्वती घर का कामकाज करती और बगीचे की तरकारी में पानी डालती। गुंडेगौड़ के घर से लायी हुई गायों की देखभाल भी उसी के जिम्मे थी। रामण्णा अब मिडिल स्कूल की तीसरी कक्षा में था। क्लास में वह अव्वल आता। मां के नये-नये हिसाब की किताबों में रेखाएं खींचने से लेकर पल्ला, सेरों को, जोड़ने-घटाने का हिसाब बिना चूक किये करता। मां के किये हुए हिसाब में कभी-कभी गलती तक ढूंढ़ निकालता। एक बार इलाकेदार ने भी उसे बुलाकर अपनी एक हिसाब-बही की नकल उतरवायी। नंजम्मा को इस बात पर कि बेटा अक्लमंद है अतुल आनंद होता था। लेकिन वह नहीं चाहती थी कि रामण्णा पटवारी बने। उसकी कम से कम हाईस्कूल की पढ़ाई होनी चाहिए और वह कम से कम इलाकेदार बनना चाहिए। 'भगवान की कृपा रही तो क्यों नहीं होगा? रामण्णा को इतनी बुद्धि है न!' मन ही मन ऐसा सोचा करती।

विश्व कन्नड़ की तीसरी कक्षा में था। उसके जैसा नटखट पूरे गांव में और कोई नहीं था। वह उतना ही साहसी भी था। गांव के तालाब में बड़ों की तरह पचास-साठ गज की दूरी तक तैर जाता। श्मशान में अकेला घूमकर मधु-छत्तों

को ढूंढ़ता, तोड़ता और सुपारी के खोल में निचोड़ लाता। बातचीत, रौब, साहस, सबमें नाना कंठीजोइस जैसा था वह। उसके और महादेवय्यजी के बीच का स्नेह अधिक बढ़ गया था। वे भजन गाते तो यह इकतारा लेकर बजाता। ताल भी बजाता। उनके भिक्षाटन का खाना भी वह खाने लगा।

नंजम्मा के परिवार को खाने-पीने में अब किसी तरह की कमी नहीं रही थी। आहार का हिसाब शुरू होने के बाद अन्य पटवारी-पटेलों की तरह उसकी आमदनी बढ़ गयी। घर में अब हरएक के दो-दो जोड़ी कपड़े थे। ठंडी के दिनों में रात के समय ओढ़ने के लिए वह कुरूबरहळ्ळी से चार कंबल खरीद लायी थी। लेकिन एक चिंता उसे लगातार सताती रहती। पार्वती को तेरह भर रहा है—इस बीच दो साल दुर्भिक्ष न आता और ठीक से खाना मिलता तो वह अब तक ऋतुमति हो जाती—लेकिन वह अभी लड़की-सी बनी हुई है। अब दोनों बार का खाना अच्छा था। सुबह रोटी-छाछ खाती। अब भी उसकी शादी नहीं हुई थी। शादी से पहले ही कहीं ऋतुमति हो गयी तो? यह विचार नंजम्मा को खाये जा रहा था।

शादी बच्चों का खेल थोड़े ही है! गरीबी में भी करे तो भी सात-आठ सौ रुपये चाहिए ही। वर ढूंढ़कर आगे बढ़कर शादी कराने वाला पुरुष चाहिए। अपने पति की क्षमता वह जानती थी। 'न जाने भगवान कैसे करायेगा? यही चिंता दिन-रात उसे सता रही थी।

किसी ने बताया कि तिपटूर के पास तिरूमगोंडनहळ्ली में एक लड़का है। जाकर देख आने के लिए उसने पति और उस गांव में नये आये हुए मास्टर वेंकटेशय्याजी को भेजा। दो दिन बाद लौटकर मास्टर बोले—"नंजम्मा जी, इस पटवारीजी को साथ ले जाकर कहीं वर निश्चित किया जा सकता है? उनके घर जाकर हमने जन्मपत्रिका मांगी। उन लोगों ने पहले लड़की की जन्मपत्रिका दिखाने के लिए कहा। मैंने दे दी। उन्होंने भोजन करने के लिए कहा। मैंने कहा—'लड़की देने आये हैं। शास्त्र कहता है कि दैव-संकल्प रखकर कन्यादान होने तक हम आपके घर में गंगोदक भी स्वीकार न करें।' लेकिन पटवारीजी माने ही नहीं। मैंने जबान खोलकर ऐसा करने से रोका तो भी न माने और उठकर कमीज निकाल कर हाथ-पैर धोकर खाने के लिए बैठ ही गये। लेकिन मैंने नहीं खाया। खाने के बाद लड़के के पिता ने घर से बाहर आकर मुझसे कहा—'कन्या के पिता

ने ही हमारे घर में खाना खा लिया, अब शादी के प्रस्ताव को आगे नहीं बढ़ाना चाहिए; शास्त्र तो आप जानते ही हैं न' !"

मास्टरजी की बात सुनकर नंजम्मा को दुख और क्रोध दोनों एक साथ आया। पति वहीं चटाई पर लेटकर थकान मिटा रहे थे। उनसे पूछा—"मास्टरजी के मना करने पर भी ऐसा क्यों किया?" तो क्रोध में बोले—"भूख लगी थी, क्या करता ?" मैले पर कंकड़ फेंककर अपने चेहरे पर नही उड़ा लेना चाहिए, यह सोचकर नंजम्मा उनसे फिर कुछ नहीं बोली। अपने आप यह सोचकर चुप हो गयी कि आगे होकर इस लड़की की शादी कौन करायेगा ?

उसकी किस्मत से उसी दिन रात को पार्वती ऋतुमति हो गयी। यद्यपि यह अनपेक्षित न था, किंतु इससे नंजम्मा की छाती धड़कने लगी। ऋतुमति हुई लड़की से शादी कौन करेगा ? उसने सुन रखा था कि तिपटूर जैसे बड़े गांवों में बड़ों-बड़ों के घरों में आजकल ऋतुमति लड़कियों की ही शादी होती हैं। लेकिन यह तो बड़े घरों के लोगों की बात है। हम तो गरीब ठहरे ! देहात वाले । अगर पता लग जाये कि लड़की शादी से पहले ही ऋतुमति हो गयी, तो हमारी खैरियत नहीं। गांव के पुरोहित ने तो मेरा और मेरे बच्चों का पहले ही बहिष्कार कर रखा है। अगर रुपये का इंतजाम होकर कहीं वर मिल भी गया तो वे दंड खाये बिना शादी नहीं करवायेंगे। और अब इसका पता लग गया तो बड़ा हंगामा खड़ा होगा। चार आदमियों को पता लग जाये तो उसे देखने के लिए कोई वर पक्ष के आ भी गये तो उनके कान भरकर शादी तोड़ने का प्रयत्न करेंगे। वह लगभग एक घंटे तक चिंता ग्रस्त बैठी रही। उधर चेन्निगराय सुख की नींद सो रहे थे। उनको यह सब बताना तुतरी के मुंह में फुसफुसाना ही था।

वह एक निर्णय पर पहुंची। किसी से न कहने या सख्त आदेश देकर पार्वती को अपने बिस्तर के पास ही लिटा लिया। सुबह घर का काम करने नहीं दिया। किसी के पूछने पर पेट-दर्द बताने का आदेश देकर, एक जगह बिस्तर बिछाकर लेट जाने के लिए कहा। रामण्णा को यह सब इसलिए बताया कि आखिर वह होशियार लड़का है, किसी के सामने मुंह खोलने वाला नहीं।

लेकिन विश्व अबोध ही था। उसे या पति चेन्निगराय को कुछ नहीं बताया। बच्चे तंदुरुस्त रहें या बीमारी से कराहते रहें, वे कभी पूछते नहीं थे। लेकिन विश्व ने दीदी को स्पर्श करके उसके पेट दर्द के बारे में पूछा। वैसे ही रसोईघर में भी

चला गया। जब से बेटी घर का कामकाज करने लगी थी, नंजम्मा मासिकधर्म के समय बाहर बैठती थी। इसके अलावा रसोईघर में रखे हुए भगवान के फोटो के साथ एक सालिग्राम भी रखकर शुचि रखती थी। मासिकधर्म में लेटी हुई दीदी को छूकर विश्व कमरे में आ चुका था। नंजम्मा ने शुचि साड़ी पहनकर, सालिग्राम को निकालकर एक शुचि ताम्र-पात्र में रखकर ऊपर शहतीर पर रख दिया। अन्य शुचि के बारे में उसे डर न था। सालिग्राम का सहवास बड़ा ही कठिन है।

रामण्णा रोज कंबनकेरे जाता था। नंजम्मा ने उससे तिल मंगवाया। एक दिन स्वयं कुरुबरहळ्ळी जाकर भगवान का कार्य बताकर चार घरों में मांगकर बीस टुकड़े खोपरा लायी। पार्वती को रसोईघर में बिठाकर चुपचाप गुड़-मिश्रित तिल के लड्डू, खोपरा-गुड़ और मेथी का लेह रोज खिलाती। एक सेर मक्खन का भाव अब दस आने हो गया था। उसे रामण्णा चुपचाप कंबनकेरे से ला देता था। नंजम्मा भी चुपचाप बेटी को मक्खन खिलाती। पार्वती के ऋतुमति होने की बात छिपायी जा सकती थी लेकिन ऐसे समय में कुछ देखभाल न करते तो भविष्य में लड़की की तंदुरुस्ती गिर जाती !—यह विचार सदा उसमें जागरूक रहा।

इसी तरह पांच महीने बीत गये। बाहर के लोगों को इस घटना का आभास भी नहीं हुआ। लेकिन पार्वती के शरीर में होने वाले परिवर्तन किसी भी देखने वाले को इस बात का आभास करा देते कि वह बड़ी हो चुकी है। मां जैसा ही ऊंचा शरीर, चौड़ी छाती और वैसे ही चेहरे वाली लड़की थी। गरीबी में भी तिल, गुड़, खोपरा, घी, मेथी आदि खाती; सप्ताह में एक बार तेल-मालिश होती। वह अब पहले जैसे बगीचे में पानी डालने नहीं जाती। शरीर का रंग और भी निखर गया था। उसके इस रूप को कैसे छिपाया जा सकता था ? और भीतर-ही-भीतर होने वाली देखभाल को रोक दे तो लड़की की शारीरिक-शक्ति कैसे छिपी रह पायेगी ? नंजम्मा दुविधा में पड़ गयी। बेटी की तंदुरुस्त शरीर-रचना देखकर क्षणभर के लिए खुशी होती तो दूसरे ही क्षण अपनी स्थिति का अनुभव कर 'इसकी सचमुच शादी होगी ! हमारी इज्जत बचेगी !'—विचार से मन भारी हो जाता।

पार्वती सूक्ष्म बुद्धि की लड़की थी। मां के मन की समस्या वह अच्छी तरह से जानती थी। वह उसी के जीवन की तो समस्या थी। शादी तो होनी ही होगी ! कहते हैं कि पहले जमाने में शादी से पहले लड़की ऋतुमति होती तो आंखों में

पट्टी बांधकर जंगल में छोड़ देते थे। मां किसी तरह शादी करा देगी। लेकिन वर कैसा मिलेगा ? मेरे बाबा के समान ? चाचा की तरह ? मामा कल्लेश जोइस की भांति ? रेवण्णशेट्टी, शिवेगौड़—इस गांव के किसी के बारे में सोचने पर भी उसका मन कहता कि ऐसा पति नहीं चाहिए। मां से तो कह सकती हूं कि ऐसा चाहिए, वैसा नहीं चाहिए। लेकिन यह अच्छी तरह जानती हूं कि अपनी इच्छा के मुताबिक वर ढूंढ़कर शादी करने की शक्ति उनमें नहीं है। मैं पैदा ही न होती तो अच्छा था। अब भी मर जाऊं तो एक दृष्टि से अच्छा ही है। यह सोचकर कि मरने का मतलब है मां, रामण्णा, विश्व को छोड़कर चले जाना; तो उसके मन से मरने का विचार निकल गया। कैसा भी वर मिले, दांपत्य जीवन बिताना ही होगा। मां बिताती है न, वैसा ही। किस्मत अच्छी हो तो अच्छा पति मिल सकता है। इस गांव के स्कूल मास्टर वेंकटेशय्यजी पत्नी को नहीं मारते, पीटते। तंबाकू, बीड़ी कोई भी बुरी आदत नहीं। जबान से बुरी बातें नहीं निकलतीं। ऐसा पति मिला तो बस ! ऐसे अनेक विचार और आशाएं मन को भीतर-ही-भीतर खुरेद रही थीं।

एक दिन शाम को घर लौटकर चेन्निगराय ने पत्नी से पूछा—"पार्वती ऋतु-मति हो गयी है क्या ?"

पूछते समय पार्वती सामने ही थी। नंजम्मा को क्रोध आया। वह बोली—"आपकी अक्ल ठिकाने पर तो है ? किसने कहा ?"

"अण्णाजोइसजी ने पूछा—"तुम्हारी बेटी आजकल तरकारी के बगीचे में आती ही नहीं, हमेशा घर में ही रहती है। कहीं ऋतुमति तो नहीं हो गयी ?"

"आपने क्या कहा ?"

"मैंने कहा, मैं नहीं जानता; घर में पूछूंगा।"

"आपने 'नहीं' क्यों नहीं कहा ?"

"मैं क्या जानूं इन बातों को !" कहते हुए क्रोध ही प्रकट किया उन्होंने।

"अब तक नहीं, कह दीजिये कि घर में पत्तलें लगाने में ही व्यस्त रहती है—" नंजम्मा ने युक्ति से काम लिया। बस, पार्वती के पिता चुप हो गये।

गांव के अन्य ब्राह्मणों को संदेह होने लगा। कितना भी गुप्त क्यों न रखा जाये, ऐसे विषयों को अधिक दिन तक छिपा रखना मुश्किल है। जिस तरह लता में मोंगरे की कली खिलते ही लाख छिपाने पर भी सब जान जाते हैं, उसी तरह

थोड़ी बड़ी होकर देखभाल करा लेने वाली लड़की भी लोगों की समझ में आ ही जाती है।

[3]

दूसरे दिन दोपहर को उनके घर के सामने एक कमानदार गाड़ी आकर रुकी। बैल के गले में आवाज करती हुई घंटियां। उसका जुआ छुड़ाने से पहले ही पीछे से कोई ऊंचा, हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति उतरा। माथे पर त्रिपुंड्र, गले में जपमाला धारण किये। उन्हें पार्वती ने इससे पहले नहीं··· देखा था। जुआ छुड़ाने के बाद अक्कम्मा उतरी। अक्कम्मा को यहां आये चार साल हो गये थे। उसकी कमर पहले की अपेक्षा अब अधिक झुक गयी थी। "मां, अक्कम्मा आ गयी।" भीतर की ओर मुड़कर पार्वती के कहते ही नंजम्मा दौड़ी आयी तो सामने अपने पिता को देखा।

"नंजा, तब से अब तू बहुत उतर गयी है। यही वह लड़की है जो वहां जन्मी थी ?" उन्होंने पूछा।

अपने नाना के बारे में पार्वती और दूसरे बच्चों ने भी सुन रखा था। उन्हें, देखने का अवसर अब मिला। अक्कम्मा कोडुबळे, चकली आदि लायी थी। नाना बेटी, दोहती के लिए साड़ियां, दोहतों के लिए कमीज, चड्डी आदि मिलाकर लाये थे। साथ में एक लोटा गंगाजल भी। स्कूल से लौटे विश्व की खुशी का ठिकाना न था।

"पिता जी को गये तेरह साल हो गये न ? पहले किसी मंदिर में रहकर हमें बुलवा नहीं लेना चाहिए था ?"

"जो काशी से लौटते हैं, उनके लिए यह सब नहीं होता। साथ में गंगाजल भी लाया हूं।"

"वे बिना कहे-सुने इतने साल काशी में क्यों रहे ?"—कंठीजोइसजी ने इस प्रश्न का कोई ठीक उत्तर नहीं दिया। वे बोले—"विश्वेश्वर के चरणों में रहने की इच्छा हुई तो चला गया। मैं कहीं भी रहूं, क्या फर्क पड़ता है !" अक्कम्मा दिन भर पोती नंजम्मा को गांव की बातें बताती रही। कंठीजोइसजी गांव के एक पुरोहित के घर जाकर, उन्हें काशी के बारह साल का अनुभव सुनाकर, तांबूल, नारियल प्राप्त करके लौटे।

उन दोनों के आने का कारण बताते हुए अक्कम्मा बोली—"उस बांझ के पेट में बच्चे तो नहीं होते। शादी हुए सोलह साल हो गये। वह इसी के काबिल भी है लेकिन वंश रुक गया तो हमें पिंड कौन देगा ? हमने निश्चय किया है कि कल्लेश की दूसरी शादी कर देनी चाहिए।"

"इसके लिए भैया मान गया है ?"

"हूं, मानेगा क्यों नहीं ! उसी ने गाड़ी तैयार करके हम दोनों को भेजा है।"

"इस संबंध में क्या कहूं ! मुझे क्या समझ है ?"

"पार्वती को दे दो। एक दिन में शादी कर देंगे।" अक्कम्मा के ऐसा कहते समय पार्वती सामने ही थी। वह तुरंत कुछ न समझ पायी। यह अनपेक्षित, अनूह्य बात नंजम्मा भी समझ न सकी। अक्कम्मा बोली—"कंठी काशी से तीन हजार रुपये, सोने की बीस अंगूठियां आदि लेकर आया है। सारे रुपये हमारी लड़की के होंगे। रानी बनकर रहेगी।"

"अक्कम्मा, पार्वती की उम्र क्या है और भैया की उम्र कितनी है ? वह तो इसका सगा मामा है और यह उसकी भानजी है। उसका कोई बेटा होता तो इसे दिया जा सकता था।"

"बेटा होता तो दूसरी शादी ही क्यों करता ? मामा से कितने लोगों ने शादी नहीं करायी ? उसकी कौनसी बड़ी उम्र है ? छत्तीस-सैंतीस का होगा। अब भी राजकुमार की तरह हट्टा-कट्टा है।"

"भाभी चुप रहेगी ?"

"चुप नहीं रहेगी तो क्या करेगी ? इसके गर्भ से एक संतान होने दो। चाहे तो इसकी चरण सेवा करती रहेगी, नहीं तो पुरानी साड़ी लेकर अपने बाप के घर चली जायेगी !"

नंजम्मा समझ नहीं पा रही थी कि 'हां' कहे या 'ना'। मन में खलबली मच गयी। अक्कम्मा बोली—"तूने ही देखा है न, गांव में खाने-पीने की क्या कमी है ? कल्लेश मेहनत करके खेत जुतवाता है। सुंदर घर है ! कंठी तीन हजार लाया है। अगर यह चाहे तो उससे केवल सोना खरीद लायेगा। एक तरह से पोती हुई तो दूसरी तरह से बहू हुई। कल्लेश की अगर संतान नहीं हुई तो मुझे सद्गति कैसे मिलेगी ? मां के गर्भ से जन्म लेकर तुम दोनों बच गये। मैंने पाला। अब भी मैं ही आकर मांग रही हूं। वह कोई दूर का नहीं, दे दो।"

नंजम्मा की सहानुभूति तो जागी। लेकिन मन भीतर-ही-भीतर इसका विरोध कर रहा था। वह कुछ नहीं बोली। उस दिन रात के भोजन के बाद कंठीजोइसजी ने बात छेड़ी। चेन्निगराय भी उपस्थित थे। वे ससुरजी से शुरू से ही डरते थे। उन्होंने ही तो शिवलिंग से पटवारीगिरी दिलवायी थी। अक्कम्मा ने नंजम्मा से पार्वती के बारे में जो बातें की थीं, उन्हें दुहराने के बाद, दामाद की ओर मुड़कर बोले—"चिन्नय्या क्या कहते हो? गांव में जमीन, घर और तीन हजार रुपये तुम्हारी बेटी को ही मिलेंगे और कहीं वर ढूंढ़कर तुम कहां शादी कराओगे? चुपचाप 'हां' कह दो।"

चेन्निगराय 'ना' क्यों कहते? "ठीक है, इस छि··" कहने वाले थे कि जबान रोककर बोले—"इ-इ-इसे आप ही कहिए, मेरा कुछ नहीं।"

"तेरा पति तो मान गया। तू क्या कहती है नंजा?"

नंजम्मा अब भी समझ नहीं पा रही थी कि क्या कहे। बोली—"रहने दो, कल सोचकर बात करेंगे।"

"इसमें सोचना क्या है? हम सबने मान लिया तो पक्का हो गया। गांव जाकर सब करवा दूंगा। आज से आठ दिन में शादी करवा दूंगा।"—कंठीजोइसजी ने अपना निर्णय सुना दिया।

"खैर, आप चार-एक दिन तो रहेंगे न, बात करेंगे।"

"अब रहने के लिए समय नहीं है। गांव जाकर शादी की सारी तैयारी करनी है। तू एक पाई भी खर्च न करना।" अक्कम्मा बोली।

अक्कम्मा के उपमा का फलाहार; और अन्यों के खाने के बाद सब लेट गये। दोनों आगंतुकों को तुरंत नींद आ गयी। चेन्निगराय खुर्राटे भरने लगे। लड़के भी सो गये। अक्कम्मा के साथ लेटी नंजम्मा की पलकें नहीं मुंदीं। एकाएक आये इस प्रस्ताव को स्वीकार-अस्वीकार करने से पहले ही उसने निर्णय भी सुना लिया था। नागलापुर में, जैसा कि वे कहते हैं, खाने-पीने की कोई कमी नहीं है। दुहे बिना वे खाना भी नहीं खाते। साल भर के लिए बचने जितना धान, मडुआ आदि उगाते हैं। तीन हजार रुपये भी इसी को मिलेंगे। तीन हजार कोई छोटी रकम नहीं। इतनी बड़ी रकम को अब तक हमने हाथ में लिया तक नहीं। मेरी बेटी जब से पैदा हुई है, कौनसा सुख मिला है उसे। कपड़े हैं तो रोटी नहीं, रोटी है तो कपड़े नहीं!—ये ही विचार कुछ समय तक नंजम्मा के मस्तिष्क में उठते

रहे। लेकिन इस महामारी, पहली पत्नी के रहते हुए अपने सगे भाई को ही कन्या देना न्यायोचित है क्या ? यह प्रश्न भी अनायास घूमा। भैया मुझसे सात साल बड़ा है अर्थात् पार्वती और उसमें बाईस साल का अंतर है। तीस वर्ष का अंतर होते हुए भी दूसरी, तीसरी शादी करते हुए भी उसने किसी को देखा है। संतान न होने के कारण बड़ी के रहते हुए भी दूसरी से शादी कर लेना कोई नयी बात नहीं। लेकिन भैया की संतान क्यों नहीं हुई ? उसके दुराचार के कारण नहीं हुई या वह औरत ही बांझ है ? वह कोई किरात जाति की है ! क्या इस शादी के बाद मेरी बेटी सुख से रह पायेगी ?

इन प्रश्नों का उत्तर ढूंढ़कर कल सुबह उठते ही अक्कम्मा और पिताजी को स्पष्ट उत्तर देना है। ऐसी स्थिति में सुख-दुख की बात किससे करे ? घर-भरा अनाज, उस पर तीन हजार रुपये कहते ही कन्या के पिता ने तो स्वीकार कर लिया। बच्चों की शादी में मां-बाप को मिलकर विचार करना चाहिए। किस्मत में जो बदा है, उसे लेकर व्यर्थ ही दिल को क्यों व्यथा पहुंचायी जाये ! अनायास उसे महादेवय्यजी की याद आयी। यह सोचकर कि उनसे पूछकर निर्णय करना विवेकपूर्ण होगा। वह धीरे से उठी और अंधेरे में ही बाहर निकली। आहिस्ते से दरवाजा बंद करते समय पीछे आई पार्वती को देखकर उसे अधिक आश्चर्य नहीं हुआ। उसे आवाज न करने का संकेत कर धीरे से द्वार खींचकर आगे बढ़ी। पार्वती ने भी अनुसरण किया।

मंदिर में आकर महादेवय्यजी को जगाया। उठकर उन्होंने दीप जलाया। इसके प्रकाश में उन्होंने पार्वती की आंखों से बहते आंसू देख लिये। वे बोल पड़े—"क्यों बेटी, मामा जी से शादी करनी पड़ रही है, इसलिए रोती है क्या ?"

"आपको कैसे मालूम अय्याजी ?" नंजम्मा ने पूछा।

"शाम को तुम्हारे पिताजी आये थे। मुझे सारी बातें बतायीं। तुमने क्या सोचा है ?"

"मुझे कुछ सूझ नहीं रहा है, इसीलिए यहां आई हूं।"

इतने में रामण्णा भी वहां आ पहुंचा। "घर छोड़कर तू क्यों आया ?" मां ने पूछा।

"बाहर से धीरे से ताला लगाकर आया हूं। मुझे भी नींद नहीं आ रही थी। समझ गया था कि तुम लोग यहीं आये हो।" कहकर उसने चाबी दिखायी।

"दीदी की शादी के बारे में क्या कहते हो, बेटे ?" महादेवय्यजी ने पूछा।

"नहीं चाहिए अय्ययाजी, कल्लेश मामा नरसी के घर···" कहना ही चाहता था, मगर यह सोचकर तुरंत जबान पर लगाम लगा ली कि यह बात बड़ों के सामने नहीं कहनी चाहिए; आगे बोला—"उसे नहीं देंगे जी !"

महादेवय्यजी ने कहा—"देखो, बहन, तुम्हारे मन में जो है, वही मैं भी कह रहा हूं। भैया समझकर कन्या मत दो। मैं कहूं तो आसपास के क्षेत्र में किसी को मत दो। कौन विवेकी है ? जो सरकारी काम में है, वे ही अच्छे आदमी हैं। कितना भी मुश्किल हो, किसी स्कूल मास्टर को दे दो इज्जत से रहेंगे। बाकी सबका तो भेजा खाली है।"

महादेवय्यजी ने सचमुच पार्वती के मन की बात कही। नंजम्मा को उनकी बात सच लगी। "लेकिन"—धीमी ध्वनि से वह बोली—"लड़की की उम्र देखिए, कहीं बड़ी हो गयी तो फिर ?"

"कहते हैं कि बड़े गांवों में आजकल यह बात नहीं रही। ऐसे ही किसी गांव में वर ढूंढ़ लो। अब तो सरकारी अनाज का हिसाब-किताब भी हाथ में है। अपनी पटवारीगिरी के गांव में भी चंदा मागेंगे तो पांच-छह सौ रुपयों से कम नहीं मिलेंगे।"

"कहते हैं कि बड़े गांव में बहुत दहेज मांगते हैं। मुझे डर है कि बेटी की शादी करने में मैं सफल भी होऊंगी ?"

"मां, मैं ऊपरी कक्षा में हूं। दीदी को सिखाऊंगा। प्राइवेट में उसे भी लोअर सेकंडरी कराके स्कूलमेड बनाया जा सकता है। शादी नहीं हुई तो क्या बिगड़ता है ?" रामण्णा ने कहा।

"वह बाद में देखेंगे। चाहो तो मास्टर वेंकटेशय्यजी से एक बार पूछ लो। उसके बाद अपने पिता को उत्तर दो।"

मां के कहने पर रामण्णा वेंकटेशय्यजी को बुलाने गया। "किसी को न जगाना और किसी को मालूम न पड़े !" मां ने सतर्क किया। थोड़ी देर में मास्टरजी आ गये। पार्वती उठकर खंभे की आड़ में बैठ गयी। सारी बातें विस्तार से बताने के बाद मास्टर बोले—"बहन, अरसीकेरे, बाणावर जैसे छोटे गांवों में भी शादी से पहले ही लड़कियां ऋतुमति हो जाती हैं। हां, कोई बताता नहीं। इस बारे में आप मत डरिये। चाहे तो मैं वर ढूंढ़कर बता दूंगा। प्राइमरी स्कूल मास्टर को

वेतन कम मिलता है। ऐसे लड़के मिल अवश्य जाते हैं। आप पैसे की व्यवस्था कर लीजिए। पांच-छह सौ रुपयों में काम हो जायेगा।"

"मास्टरजी, लड़के का स्वभाव अच्छा होना चाहिए, अविवेकी न हो। पगार कम हो तो हमारी लड़की को पत्तलें बनाना आता है! घर बैठे ही महीने में कम-से-कम पंद्रह रुपये कमा सकती है।"

"वह मैं जानता हूं। पार्वती के पति बनने वाले ने बड़ा पुण्य कमाया होगा!"

तय हुआ कि कन्या मायके में न दी जाये।

"लड़की को कल्लेश से शादी न करने का हठ करने दो। 'लड़की ही ऐसा कहती है तो मैं क्या करूं? योगायोग संबंध नहीं हैं।'—कहकर आप छुटकारा पाइएगा। सीधे यह मत कहिए कि कन्या नहीं दूंगी।"—मास्टर ने समझाया।

आहिस्ते से द्वार खोलकर तीनों घर में प्रविष्ट हुए।

सुबह उठते ही रवाना होने की उतावली करते हुए जोइसजी ने पूछा "नंजा, आठ दिन में एक मुहूर्त है। शादी यहां तेरे घर में हो या वहीं करे?"

"पिताजी, शादी होने वाली लड़की से तो एक बार पूछ लें। हम ही बात करें तो कैसे चलेगा?"

"उससे क्या पूछना? तेरी शादी में मैंने तुझसे पूछा था? री मुन्नी, यहां आ।"—दोहती को बुलाकर कंठीजोइसजी ने पूछा—"क्या कहती है तू?"

पार्वती तुरंत नहीं बोली। दादा के फिर से पूछने पर बोली—"मुझे नहीं करनी।"

"क्यों नहीं करनी?"

"मुझे पसंद नहीं, नहीं चाहिए नानाजी।"—कहकर रसोईघर में चली गयी।

"क्यों री नंजा, यह तो ऐसा कहती है?"

"उसे पसंद नहीं तो छोड़ दीजिए, बाबा!"

कंठीजोइसजी को क्रोध आ गया। वे भी रसोईघर में गये और पार्वती के सामने खड़े होकर—फिर से प्रश्न किया—"क्यों नहीं करनी?" "मुझे पसंद नहीं, मुझे विवश न करें।" बस इतना कहना था कि उन्होंने उसके कपाल पर दे मारा। पार्वती की मां ने भी अब तक कभी उसे नहीं मारा था। आवाज सुनते ही नंजम्मा भीतर आकर बोली—"बाबा, इस लड़की को क्यों मारते हैं? मन में जो भी आता है उसे कर देने का हठ कर बैठते हैं! मेरी शादी करते समय भी कभी आगे-पीछे

सोचा था ? भैया की पहली शादी में भी सोचने की कोशिश की थी ? संतान होना न होना किस्मत की बात है। लेकिन लड़की के गुण स्वभाव के बारे में पूछताछ करके शादी की जाती तो कम-से-कम उसे अच्छी पत्नी मिलती।"

"अब तुझे क्या हुआ है ?"

"और क्या होना चाहिए ? आपके दामाद ने सारी जमीन गंवाकर रास्ते में पड़े रहने की स्थिति में डाल दिया। अगर मैं मेहनत करके कुछ न कमाती तो बच्चे भूखे मर जाते।"

"इसीलिए कहा कि कल्लेश के घर खाने-पीने को है, उसे कन्या दे दो।"

"लड़की ने ही इंकार कर दिया है, इसलिए आप सबके कहने पर भी मैं नहीं दूंगी। भैया की शादी करनी ही है तो और कहीं लड़की ढूंढ़ लीजिए, जाइए।"

"तो फिर तू मेरो बेटी नहीं, मैं तेरा बाप नहीं। बहनचोद, कहीं की" कहते हुए बाहर आकर बोले —"चलो अक्कम्मा, इस भंगिन के घर में पानी की बूंद भी नहीं पीनी चाहिए" और अपने सारे कपड़े लेकर घर के सामने खड़ी गाड़ी में बैठ गये। अक्कम्मा भी इसलिए नाराज हो उठी कि जो कुछ सोचकर आयी थी, नहीं हुआ। वह भी अपनी साड़ियों की गठरी उठाकर गाड़ी में बैठ गयी। गाड़ी चल पड़ने से पहले बाहर आकर नंजम्मा ने कहा—"योगायोग नहीं है, शादी नहीं होगी। इसके लिए आप लोग नाराज क्यों हो रहे हैं ? आज रुक नहीं सकते ?" अक्कम्मा बोली—"तुझे पाल-पोसकर जचकी की, तो तूने अच्छा प्रत्युपकार किया।" कंठीजोइसजी ने कह दिया—"मेरा मुंह मत खुलवा। मैंने कह दिया न कि तू मेरी बेटी नहीं, मैं तेरा बाप नहीं?" नंजम्मा इस पर कुछ नहीं बोली।

[4]

आठ दिन बीत गये। एक दिन ढलती दोपहर को नंजम्मा और पार्वती दोनों चक्की की खूंटी पकड़े मड़ुआ पीस रही थीं। घर में और कोई नहीं था। लगा कि कोई भीतर आया है। नंजम्मा मुड़कर देखती है—नरसी थी। नरसी इससे पहले कभी इस घर में नहीं आयी थी। उसकी दुकान के सामने से उसने कभी गुजरते समय भी नंजम्मा ने खुद भी कभी बात नहीं की। पूछा—"क्यों बहन, कुरूबरहळ्ळी जा रही हैं ?" तो केवल 'हुं' कहकर निकल जाती थी। अब वही आयी है। घर

आयी हुई से बोले बिना नहीं रहना चाहिए। दोनों में झगड़ा भी तो नहीं है! लेकिन उसका चालचलन विश्वास करने योग्य नहीं है। नंजम्मा यह सोच रही थी।

"बैठो बहन" नंजम्मा ने कहा तो नरसी खंभे का आधार लेकर बैठ गयी। पार्वती उठकर रसोईघर में चली गयी। कोई खास काम होगा, नहीं तो वह घर नहीं आती—यह सोचकर नंजम्मा ने पूछा—"कैसे आना हुआ बहन ?"

"बहन, आपसे एक बात कहने के लिए आयी हूं। सुना है कि आपकी पार्वती की शादी आपके भाई के साथ होने जा रही है, क्या सच है ?"

"तुझे किसने कहा ?"

"शिगेहळ्ळी में हमारे रिस्तेदार हैं और उनके रिस्तेदार नागलापुर में हैं। कहते हैं कि नागलापुर में इस बात की चर्चा हो रही है।"

लेकिन उससे भीतरी बात कहना नंजम्मा को पसंद नहीं आया। बोली—"यह सब झूठ है बहन।"

"आपके बाबा और दादाजी आये थे न, उन्हें देखकर मैंने सोचा कि इसीलिए आये होंगे। हो सकता है यह झूठ ही हो। आप किसी को न बतायें कि मैंने ऐसा कहा है। आप भाई-बहन प्यार से रहें तो मैं क्यों जलूं ? उस व्यक्ति को लड़की मत दीजिए।"

इसका उत्तर देने में असमर्थ हो, नंजम्मा उसका मुंह देखने लगी। नरसी फिर बोली—"ऐसे को देने के बदले, कुएं में धकेल दे तो सुख से मरेगी।"

"मेरा भैया अब भी तुम्हारे पास आता है, बहन ?"

"नहीं। चार साल पहले मैंने लात मारकर दूर कर दिया था। वेश्या से लात खाकर भी इस महोदय को शर्म नहीं आई।"

नंजम्मा कुछ नहीं बोली। उम्र में आयी हुई लड़की पार्वती रसोईघर में है। ऐसी बातें इतनी धीरे हों कि वह सुन न सके। लेकिन यह होशियारी नरसी में कहां ? "जाने दो बहन, ये बातें नहीं करनी।"

"बहन, मैं किसी शत्रुता से यह बात नहीं कह रही हूं। सौ लोग आते हैं, सौ जाते हैं। मैं किसी के गुस्से को ध्यान में नहीं रखती। पार्वती मेरी बेटी के समान है। किसी असली बाप के नियतदार लड़के से शादी करवा दीजिए। मेरे साथ सो कर, मेरी आंख लगी, तो दुकान के पैसे चुराकर अपनी जेब में डाल लेना ठीक था क्या ?"

नंजम्मा कुछ नहीं बोली। "मैं जाती हूं बहन, मन को रोक न सकी, सोचा कह दूं।" नरसी चली गयी। मानो उसका उद्देश्य पूरा हो गया।

उसके चले जाने के बाद पार्वती ने बाहर आकर फिर चक्की की खूंटी पकड़ ली। एक ही चक्की को घुमाती हुई मां-बेटी के मन भी एक ही विषय को लेकर सोच रहे थे। दोनों ने सोचा कि इस प्रस्ताव को ठुकराकर हमने अच्छा ही किया। लेकिन दोनों में से किसी की भी जबान नहीं खुली।

[5]

नंजम्मा ने निश्चय किया कि इस बार बेटी की शादी कर ही देनी चाहिए। यह विचार भी आया कि रुपयों की व्यवस्था हुए बिना वर ढूंढ़ने जाये और अचानक कहीं शादी निश्चित हो जाये तो रुपयों के अभाव में बेइज्जत न होना पड़ेगा। जबसे अनाज का हिसाब लिखने लगी थी, लगान का पैसा लिखवाकर कुरुबरहळ्ळी से मड़ुआ लाने की नौबत छूट गयी थी। इसके अतिरिक्त अधिक हिसाब लिखने के लिए सरकार अलग से सालाना सौ रुपये देती थी। कुल दो सौ बीस रुपये अवश्य मिलेंगे। लेकिन इस बात का डर भी था कि वर्षांत में पति महोदय ने तिपटूर जाकर चुपचाप वर्षासन, अनाज-वर्षासन खर्च कर दिया तो ? गुंडेगौड़जी गांव आये। तब कुरुबरहळ्ळी के कुल छह आदमियों के नाम से उस साल की लगन रसीदी लिखकर उसमें हस्ताक्षर करने के लिए पति से बोली।

उन्होंने कहा—"मैं नहीं करूंगा।"

"गौड़जी, बेटी की शादी करनी है। यह रकम अपने पास ही रखें। आप ही कहकर सही करा लीजिए।" कहकर समझाने के बाद गौड़जी बोले—"अरे चिन्नय्या, इस पर सही करता है या तुझे पकड़कर दो मुक्के मारूं ?"

"यह क्या है जी, आप दोनों मिलकर मुझे एक पाई भी लेने नहीं देते ! क्या मैं पटवारी नहीं हूं ? मैं सही करने से इंकार करूं तो क्या करेंगे ?"

"मुक्का मारूंगा देख ! ठहर, मैं देखूंगा कि तू किस तरह हमारे गांव में कदम रखता है ?" कहकर गौड़जी अपनी छड़ी हाथ में लेकर खड़े हुए तो घबराकर चेन्निगराय ने सब रसीदों में सही कर दी। लेकिन वे अपने क्रोध को रोक नहीं सके—"इस चमारिन की औलाद, छिनाल की···" कहकर गालियां देते हुए वह

घर छोड़कर चले गये।

"संसार के माने नाटक, है न बहन ?" गौड़जी हंसते हुए बोले।

"सच है गौड़जी, आप जैसे एक-दो न होते तो वे नाटक मंच पर ही आग लगा देते।" नंजम्मा बोली--"देखिए अब दो सौ रुपये हुए। शादी के लिए कम-से-कम छह सात सौ रुपये चाहिए। आगे क्या करना चाहिए, मेरी समझ में नहीं आ रहा है। आप ही आधार हैं।"

"तुम्हारी बेटी लक्ष्मी है। हमारी जाति में होती तो अब तक आकर कंठाभरण, बाहुबंध, बालियां आदि डालकर लड़की चुनकर ले जाते। आप लोगों की जाति बड़ी बुरी है, बहन।"

"जाति कोई भी हो, जन्म लिया है तो जाति के मुताबिक चलना ही पड़ेगा।"

"तुम नारियल, दाल आदि की चिंता मत करो। वर निश्चित कर लो। हमारे गांव के घरों से, दस-पांच चंदा इकट्ठा करके दे दूंगा। चालीस घरों का गांव है। 'शादी' और 'गांव के पटवारी' कहने से तीन-एक सौ रुपये इकट्ठा नहीं कर पायेंगे क्या ? अनाज हिसाब में तुम हमारे गांव का सिर बचाती आयी हो। कुल पांच सौ हो ही गये न ? गरीबी में किसी तरह कर लो।"

गौड़जी से इतना आश्वासन मिलते ही मानो उसके मन का भारी बोझ हल्का हो गया। अब उसने वर ढूंढ़ने का निश्चय किया। गांव लौटते समय पार्वती को अलग बुलाकर गुंडेगौड़जी ने आशीर्वाद दिया--"तू बड़ी सुंदर लड़की है बेटी, तुझे योग्य वर मिलेगा।"

नंजम्मा ने सोचा था वर ढूंढ़ने में भाई कल्लेश की मदद लेगी, लेकिन उसी का नाम वर के रूप में प्रस्तावित हो गया था। पिता और दादी के रूठकर जाने के बाद और किसी की मदद लिये बिना काम नहीं बनेगा। वह भी कोई विश्वास का आदमी हो। नहीं तो सभ्य गृहस्थ लड़का मिलेगा ही, इसका भी कोई भरोसा नहीं। नंजम्मा सारा भार मास्टर वेंकटेशय्यजी पर डालकर बोली--"कन्यादान करने का फल आपको ही मिलेगा। आप ही कोई रास्ता दिखायें।"

मास्टर दो-चार गांव हो आये। कहीं कुछ नहीं बना। अरसीकेरे के पास एक गांव के बड़े जमींदार ने अपने दूसरे बेटे की शादी इस लड़की से करा देने के विचार से उन्होंने ही कहला भेजा था। वेंकटेशय्यजी बोले--"बहन, मैंने उनसे निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा। मुझे लगता है कि इतने बड़े जमींदार अगर गरीब

घर की लड़की से शादी करने को तैयार होते हैं तो उस लड़के में जरूर कोई कमी होगी।"

"हो सकता है। कहावत है न कि विवाह और विवाद में समानता होनी चाहिए। इतने बड़े घर में अपनी लड़की नहीं देंगे।" नंजम्मा ने मान लिया।

इस तरह चार महीने की खोज के बाद एक प्रस्ताव आया। यह प्रस्ताव तिम्लापुर के द्यावरसय्यजी की ओर से आया था, जिन्होंने शुरू-शुरू में इनकी पटवारीगिरी का हिसाब-किताब लिखा था और नंजम्मा को भी सिखाया था। कहते थे लड़का उनकी पत्नी का दूर का संबंधी है। नाम सूर्यनारायण। एस. एस. एल. सी. (मैट्रिक) उत्तीर्ण होकर मिडिल स्कूल में अध्यापक है। उम्र सत्ताईस है। पहली पत्नी को मरे चार महीने हो गये। तीन साल की एक बेटी है। लड़के के माता-पिता गुजर गये हैं। अब वही उसकी देखभाल करता है। स्कूल जाते समय साथ ले जाता है। लड़का सुंदर है। साठ रुपये वेतन पाता है। मेहनती है। सुवर्ण-सा गुणी। "बहन, चिंता मत करो, लड़की दे दो। काफी विवेकी है। तुम्हारी लड़की सुखी रहेगी। उसकी बच्ची को तुम्हारी बेटी अपनी ही बच्ची समझकर पाले।" द्यावरसय्यजी ने अपने बेटे से कहला भेजा था। वे अब इतनी दूर चलकर आ नहीं सकते थे।

द्यावरसय्यजी काफी समझदार हैं, यह बात नंजम्मा को समझाने की जरूरत नहीं थी। ऐसों पर विश्वास न करे तो फिर किसकी बात माने! "लड़के को आपने देखा है?" नंजम्मा ने पूछा।

"हम अच्छी तरह नहीं जानते। सुना है कि हमारी मां का दूर का संबंधी है। अब गुब्बी तालुका के वाळेकेरे मिडिल स्कूल में मास्टर है। आप बुला भेजें तो लड़की देखने आयेंगे।"

नंजम्मा ने वेंकटेशय्यजी से पूछा। द्यावरसय्यजी के बेटे के साथ तिम्लापुर गये और वर के बारे में पूछताछ कर, लौटकर बोले—"नंजम्मा, वह मेरा भी परिचित है। जब मैं गुब्बी तालुका के कडब गांव में था, पगार के दिन तालुका आफिस में कई बार मिले और बातें की थीं। बड़ा ही अच्छा आदमी है। बेचारी पत्नी अचानक गुजर गयी, मैं नहीं जानता था। अगर विधुरत्व की बात को छोड़ दिया जाये तो ऐसा वर मिलना सचमुच कठिन है।"

नंजम्मा ने पार्वती से पूछा। "मां तुम मान लो तो बस, मुझसे मत पूछो।"

वह बोली। नंजम्मा ने पति के नाम से चिट्ठी लिखी और कारिंदे के हाथों तिम्लापुर भिजवा दी।

इसके पंद्रह दिन बाद एक दिन गाड़ी में बैठकर द्यावरसय्यजी, उनकी पत्नी और बेटा, सूर्यनारायण के साथ कन्या देखने आये। चेहरा देखने से लगता था कि वर की उम्र सत्ताईस से अधिक नहीं होगी। गंभीर स्वभाव था। स्वभावतः मितभाषी। लेकिन उसकी तीन साल की बेटी एक क्षण भी पिता के पास से दूर नहीं रहती थी। वेंकटेशय्य मास्टरजी आ गये। उम्र में वे सूर्यनारायण से काफी बड़े थे। दोनों ने आपस में बातें कीं। दोपहर के भोजन में खीर, परोसते समय सूर्यनारायण की बेटी रत्ना, नंजम्मा से घुलमिल गयी। नंजम्मा उसे कमर पर बिठाकर घुमा रही थी। रसोईघर में बैठी पार्वती की गोद में खेलने के बाद अत में विश्व का हाथ पकड़कर खेलने सड़क पर निकल गयी। सूर्यनारायण बोला—"वह किसी से इतनी घुलती-मिलती नहीं थी। इनसे मिलने के आधा घंटे बाद ही इनके पास आ गयी।"

कन्या देखी गयी। सूर्यनारायण ही नंजम्मा से बोला—"मां जी, अपनी जन्मपत्रिका लाया हूं। आप चाहें तो दोनों जन्मपत्रिकाएं किसी को दिखा लें। मेरा तो उससे विश्वास ही उठ गया है। पहली बार जन्मपत्रिका देखकर दो-तीन पुरोहितों ने कहा था कि इससे बढ़कर मिलती हुई कोई जोड़ी नहीं हो सकती। शादी के चार साल बाद ही ऐसा हो गया। मेरे बारे में द्यावरसय्य मामाजी ने बता दिया होगा। आपके बारे में भी बताया है। चाहें तो आप और दो-चार लोगों से पूछताछ कर लीजिए। आप सबको खुशी है तो इमली का झोल और अन्न बनाकर पाणिग्रहण विधि संपन्न करा दें। हां, एक बात मैं अभी से बता देना चाहूंगा कि मेरी बच्ची को अपनी ही संतान समझकर चलना आपकी बेटी का काम होगा।"

जन्मपत्रिका देखना मास्टरजी अधिक नहीं जानते थे। द्यावरसय्यजी भी थोड़ा ही ज्ञान रखते थे। दोनों ने मिल-मिलाकर देखा। गृहमैत्री योग, योनी योग, नाड़ी योग आदि मिले। कुल तेईस गुण मिले। इससे अधिक मिलना संभव नहीं था। सूर्यनारायण को वेंकटेशय्यजी अपने घर ले गये। इधर घर में द्यावरसय्यजी ने चेन्निगराय से पूछा—"आप क्या कहते हैं, पटवारी जी?"

"मैं क्या कहूं? मुझसे पूछकर थोड़े ही करती है यह!"

"यजमान आप हैं, कार्य उनके निभाने पर भी यजमान-स्थान आपका ही है न ?"

"इतना नाच रही है, पूछिए पैसे के लिए क्या कर रही है ?"

"आप ही अपनी पत्नी से पूछिए कि क्या करेगी ?"

पत्नी की ओर मुड़कर—"पैसेके लिए क्या कर रही है छि···?" कहकर अपनी बात से लज्जित होकर फिर शुरू करके पूछा—"पैसे कहां से लेगी ?"

"इस साल के वर्षासन के रुपये गुंडेगौड़जी के पास हैं। इसके अलावा उन्होंने विश्वास दिलाया है, कि कुरुबरहळ्ळी में थोड़ा चंदा इकट्ठा करके देगें।"

अपने से जबर्दस्ती रसीदों पर लिये हुए हस्ताक्षरों का स्मरण कर पटवारीजी बोले—"वह एक घरफोड़ू हरामजादा है।" नंजम्मा फिर नहीं बोली। उनके स्वभाव से परिचित द्यावरसय्यजी भी चुप ही रहे।

वेंकटेशय्यजी ने महादेवय्यजी को घर बुलाकर वर से मिलवाया। वहां से तीनों नंजम्मा के घर आये। विवाह निश्चित हुआ। सूर्यनारायणा ने कहा कि "पाणिग्रहण के दिन ही लग्नपत्रिका विधि करें और एक महीने में शादी कर दें। आप ज्यादा खर्च न करें। वधू के लिए जो लाना है, मैं ले आऊंगा। वरोपचार के लिए एक जोड़ी मिल की धोती, तांबे का पंचपात्र, आचमन, इतना लायें तो बस काफी है !" उसी ने कहा। रवाना होते समय उसने नंजम्मा और चेन्निगराय को प्रणाम किया। तब तक रास्ते में विश्व के साथ खेलती हुई बच्ची से प्रणाम कराकर, उसे गोद में उठाकर वह चल पड़ा। गाड़ी तैयार होते हुए भी वह द्यावरसय्यजी, उनका बेटा तीनों गांव के बाहर तक पैदल ही चले। वेंकटेशय्य मास्टर और महादेवय्यजी कुछ दूर तक साथ चल उन्हें बिदा करके लौट आये।

[6]

शादी तय हुई। मुहूर्त निकलवाकर शादी करने के लिए पुरोहितों की मदद चाहिए थी। दोनों स्थानीय पुरोहितों ने बहिष्कार कर रखा था। अपने पिता की सहायता भी नहीं ले सकती थी, क्योंकि वे नाराज होकर गये थे। इन स्थानीय पुरोहितों को नियंत्रण में न रखा जाय तो एक-न-एक दिन वे किसी भी तरह से बाधा खड़ी कर सकते थे। लड़के को सूचित कर सकते थे कि लड़की और उसकी मां का बहिष्कार कर रखा है। और किसी तरह की शिकायत भी कर सकते हैं। यद्यपि लड़का सद्स्व-

भावी था, व्यवहार ज्ञान रखता था, फिर भी कह नहीं सकते कि ऐसे विषयों में कैसे मन परिवर्तित हो जाये ।

इन दोनों पुरोहितों को रास्ते पर लाना उसके लिए कठिन काम न था। जब से अनाज-हिसाब आया था तब से जमीन की फसल का अंदाज कम लिखने का निवेदन करने के लिए गांव के अनेकों लोग आया करते। वैसे जोइसजी स्वयं नहीं आये थे, लेकिन पट्टेदार द्वारा घुमा-फिराकर कहला अवश्य भेजा था। यह उनसे छिपा नहीं था कि हिसाब-किताब लिखने वाला गांव का असली पटवारी नंजम्मा ही है। दोपहर को सोचती रही कि अब उसे वहां जाना चाहिए या नहीं। शाम को कारिंदे को बुलाकर बोली—"जाओ अण्णाजोइसजी और अय्याशास्त्रीजी से कहना कि मैंने बुलाया है ।"

उसका यह कदम बड़ा धृष्टतापूर्ण था। शृंगेरीमठ के प्रतिनिधि कहलाने वालों के घर ऐसे गरीबों का जाकर द्वार पर खड़ा रहना, जमीन छूकर प्रणाम करना, तो रिवाज है। इसलिए वे कारिंदों के साथ आयेंगे या नहीं, इसकी उसे शंका थी। अगर कहीं नहीं आये तो आगे क्या करें—यह विचार भी उसके मन में चक्कर काट रहा था। लेकिन ऐसा हुआ ही नहीं। दस मिनट में अय्याशास्त्रीजी, और उनके पांच मिनट बाद अण्णाजोइसजी भी कारिंदों के साथ आ गये।

"माइगा, तू बरामदे में बैठ।" अधिकार-पूर्ण वाणी से बोलने के पश्चात नंजम्मा ने उन दोनों को बैठने के लिए पाट दिये। कुशल सामाचार पूछने के बाद वे ही बोले— "सुना है कि बेटी की शादी तय हो गयी है। बड़ी खुशी की बात है।"

"इसीलिए आपको बुलवाया मैंने। जन्मपत्रिका देखनी है, शादी क मुहूर्त भी निकलवाना है। आप तो जानते हैं कि हमारे बाबा काशी से लौट आये हैं। अगर उनसे कह दूं कि शादी होने तक आकर यहीं रहें और सारा काम करवा दें तो तुरंत घोड़े पर सवार होकर आ जायेंगे। लेकिन यह सोचकर आप लोगों को बुलाया है कि आप स्थानीय पुरोहितों के रहते हुए उन्हें बुलाना ठीक नहीं। आप जैसे बोलेंगे, वैसे ही मैं करूंगी ।"

"छिः छिः ! ऐसा कहीं है ! हमारे रहते हुए उन्हें बुलाने की क्या जरूरत ? हमारे गांव में जो शादी होती है, उसे संपन्न कराना हमारा कर्त्तव्य है। वर की जन्मपत्रिका दो।" अय्याशास्त्रीजी बोले। पहली बात थी कि अनाज का हिसाब नंजम्मा के हाथ में था और दूसरी बात कि उसके पिता कंठीजोइसजी का गांव में

आकर रहना, इन दोनों के लिए सिरदर्द था। ये दोनों जानते थे कि वह व्यक्ति केवल पौरोहित्य में ही चतुर नहीं, क्रोध आने पर किसी को पकड़कर मारने वाला साहसी भी है। ये भी जानते थे कि बारह साल अदृश्य रहकर अब लौट आये हैं। घर में जो पंचांग था, उसे निकालकर देखकर पुरोहित-द्वय ने कहा कि "जन्मपत्रिकाएं मिलती हैं। आज से छब्बीसवें दिन विवाह का योग है।" आश्वासन देते हुए उन्होंने कहा—"शादी के लिए कोई चिंता न करें। अगर वर पक्ष के पुरोहित न भी आये तो हम कार्य संभाल लेंगे।"

"देखिए, मैं चाहती हूं कि उसी समय हमारे रामण्णा का जनेऊ संस्कार भी करवा दूं। यह भी शादी के दिन ही रख सकते हैं?"

फिर से पंचांग देखकर बोले—"शादी के पहले किसी दिन रख लो।"

नंजम्मा ने कभी यह नहीं सोचा था कि यह कार्य इतनी आसानी से बन जायेगा। अब रुपये जुटाकर सामान खरीदने का काम बहुत पड़ा था। दूसरे ही दिन वह कुरुबरहळ्ळी गयी। गुंडेगौड़जी ने गाव वालों को बुलवाकर चंदा मांगा। नंजम्मा द्वारा ही लिखित सूची में कुल दो सौ सत्तर रुपये हुए। शेष तीस रुपये अपनी ओर से देने का आश्वासन देकर गौड़जी बोले—"बहन, अपनी लगान की रसीद से संबंधित दो सौ रुपये आज ही ले जाओ। इन तीन सौ रुपयों को आठ दिन में इकट्ठा करके मैं स्वयं ला दूंगा। जिनकी बाड़ी है उनसे पांच-दस नारियल देने के लिए भी कहूंगा। डेढ़ सौ नारियल से काम चलेगा न?"

"पर्याप्त होगा, गौड़जी!"

"सामान लाने के लिए तिपटूर जाना होगा। जिस दिन सुविधा हो, कहला भेजो। बैलगाड़ी भिजवा दूंगा। गुड़ थोड़ा ज्यादा मंगवा लो।"

फिर नंजम्मा गांव लौटी। अब सामान की सूची बनानी थी। पता नहीं वर पक्ष से कितने लोग आयेंगे। कहते हैं कि उसका निकट संबंधी कोई नहीं है। वैसे उसकी दूसरी शादी है। दस-पंद्रह से ज्यादा नहीं आयेंगे और अपनी तरफ से नागलापुर वालों के अतिरिक्त कोई नहीं। इस गांव में ब्राह्मणों के सात घर हैं। शादी को रात कुरुबरहळ्ळी के हर घर से कम से कम एक आदमी को बुलाना पड़ेगा। कुछ अधिक ही सामान की सूची बनाने के बाद कपड़े, सोना-चांदी का हिसाब लगाने लगी। वेंकटेशय्यजी की जोड़ी गाड़ी तैयार कराकर, रामण्णा को साथ लेकर तिपटूर गयी। वर के लिए जरीदार धोती, रेशमी कमीज,कोट और जरी-

दार फटा के साथ एक चांदी का लोटा, आचमन खरीद लिया। वधू के लिए दो साड़ियां लीं—एक तीस रुपये की और दूसरी पच्चीस की। रामण्णा और विश्व के लिए चड्डी और रामण्णा के लिए दो लुंगी ली। जनेऊ संस्कार निमित्त भिक्षा-पात्र के लिए चांदी की छोटी थाली ली। साढ़े आठ रुपये में पति के लिए एक जोड़ी सफेद पंछा, एक कमीज खरीदा। खुद के लिए शादी की साड़ी थी। अतः सोचा कि अब कुछ नहीं लेना है। मास्टर जी बोले—"नंजम्मा सारा सामान लाने के बावजूद, कम से कम डेढ़ सौ रुपये हाथ में रखिए। संभालकर पैसे खर्च करना।"

कारिंदे के हाथ चिट्ठी देकर उसे नागलापुर भेजा। वह सुबह मुर्गे की बांग देने के समय रवाना हुआ था और रात को लौट आया था। बोला—"कहते हैं कि उनमें से कोई नहीं आयेगा।"

"ऐसा किसने कहा ?

"आपके बाबा ने ही कहा।"

"और क्या कहा ?"

"बोले कि मैंने लड़की देने के लिए पूछा तो इंकार कर दिया था और कहीं देगी तो हमसे संबंध खत्म !"

पिता के स्वभाव को वह जानती थी। उनके हठ की ही जीत होनी चाहिए। उसके सम्मुख मां, बेटी, प्यार, करुणा कुछ नहीं होती।

"दादी क्या बोली ?"

"उन्होंने मुझसे बात नहीं की।"

नंजम्मा को बड़ी ठेस पहुंची। बाप का स्वभाव कोई नया नहीं था। लेकिन जिसने जन्म से पाल-पोसकर बड़ा किया, शादी की, जचकी की, वही दादी न आये तो कैसा ! उसका मन न माना। सोचा कि क्यों न एक दिन के लिए जाकर लिवा लाऊं ? लेकिन बैलगाड़ी से जाने के लिए एक दिन और आने के लिए एक दिन, दो दिन चाहिए। शादी के लिए केवल तेरह दिन बचे हैं। सब काम बाकी है। लकड़ी, तरकारी का इंतजाम नहीं हुआ है। चकली, पकौड़ियां, सेवा आदि के लिए आटा तैयार करना है। पोहा, लाई भूंजनी है। मिर्ची कूटना है। बाजे वालों को तय करना है।

उसने निश्चय किया कि एक और चिट्ठी लिखकर कल-परसों फिर कारिंदे को वहां भेजा जाये। वह बोली—"दो-तीन दिनों के बाद और एक बार वहां

जाना होगा। लेकिन देख, आज अपने वहां जाने और उनके आने से इंकार करने की बात किसी से न कहना।"

कारिंदे के दूसरी बार जाने पर भी वे नहीं आये। दुबारा आने पर कंठीजोइस जी ने उसे ही डांट दिया। नंजम्मा ने उसे फिर से सतर्क कर दिया कि यह बात किसी के कानों में न पड़े। मन-ही-मन उसे इस बात का भय था कि अगर गांव के पुरोहितों को संकेत भी मिल गया कि बेटी-पिता के बीच मनमुटाव है तो वे बीच में ही धोखा दे देंगे।

उसकी ओर से कोई संबंधी ही नहीं था। अब तक सास को भी नहीं बुलाया था। वे खुद भी आयी नहीं। लेकिन क्या सामान लायी क्या नहीं, इसका विवरण बेटे चेन्निगराय से पूछकर जान लेती थी। विवाह-शास्त्र के दो दिन पहले नंजम्मा सास के पास आकर बोली—"मां जी, आप और अप्पण्णय्या वहीं आकर रहिए। सारा काम आपको ही कराना है।"

"स्वार्थी, झगरी! इतने दिन तक सामान लाने, वर निश्चित करने के लिए मुझे बुलाया था? दुनिया में दूसरा कोई लड़का ही नहीं था जो तू इस विधुर को कन्या देने के लिए तैयार हो गयी?"

"मां जी, दुनिया में हजारों लड़के होंगे, उनसे शादी करने की शक्ति मुझमें नहीं है। आप और अप्पण्णा आइए।" बहस के लिए न रुककर, चुपचाप निकल आयी वह!

चेन्निगराय को भी पत्नी पर गुस्सा था। कल्लेश को लड़की देने से इंकार करके वह ससुरजी से मिलने वाली सहायता गंवा बैठी थी। अब तय होने के पश्चात उनसे कुछ नहीं पूछा। उसके अनुभव ने सबक सिखाया था कि वह अगर पूछती तो वे बाधा उपस्थित करते। उन्हें उपेक्षित करने के बदले बदला लेने का मार्ग ढूंढ़ते।

अप्पण्णय्या उसी दिन इनके घर आया। भाभी के कहे मुताबिक रसोईघर में चूल्हा खोदने से लेकर, लकड़ी इकट्ठा करके कारिंदे से कहकर छप्पर डलवाया। दो बार कुरुबरहळ्ळी जाकर वहां ढेर लगे नारियल, कच्चे फल गाड़ी में लदवाकर ले आया। गंगम्मा जनेऊ के दिन आयी। उसके लायक कोई काम न रहने या गांभीर्य के कारण किसी काम में हाथ लगाये बिना रसोईघर में वह चुपचाप बैठी रहीं।

वर पक्ष से अधिक लोग नहीं आये। तिम्लापुर के द्यावरसय्यजी और उनकी पत्नी पाणिग्रहण कराने के लिए उनका बेटा और बहू, तीन पोते, वर के दो सहोद्योगी, एक पुरोहितजी— बस, इतने ही लोग थे। शादी में कोई बाधा नहीं पड़ी। सब शांतिपूर्वक सुचारु रूप से चल रहा था। पाणिग्रहण के निमित वधू-वर को बुला लाने से पहले विवाह मंडप में वधू के माता-पिता का शास्त्र होना चाहिए था। "चेन्निगराय, तुम जल्दी से मंडप में आ जाओ।" पुरोहित ने पुकारा। न जाने वे क्यों अंदर चिपके बैठे थे? "समय हुआ, जल्दी कीजिए।" नंजम्मा ने जाकर उठाया तो बोले—"चाहो तो तुम अपनी बेटी की शादी करा लो, मैं मंडप में नहीं आता।" वह कुछ समझ न पायी। वहीं खड़े मास्टर ने पूछा—"क्या हुआ पटवारीजी, बोलिए तो सही।"

"यही मालकिन है। सामान सामग्री लाते समय इसने मुझसे पूछा था क्या?"

"आप ही मालिक हैं। आपके नाम पर ही सब कार्य चल रहा है न। देर हो रही है, उठिए।"

"यहां देखिए, यह मेरे लिए कैसी धोती लायी है? कम-से-कम एक जोड़ी जरीदार धोती नहीं ला सकती थी? इसे पहनकर मैं शादी मंडप में नहीं जाऊंगा!" कहकर उन्होंने जिद्द पकड़ ली। एक प्वाइंट और था। शादी के लिए बनाये हुए सेव, चकली, पकौड़े आदि भक्ष अंधेरे कमरे में रखे गये थे। उसकी देखभाल किसी जिम्मेदार स्त्री को सौंपना किसी भी विवाहगृह की सामान्य पद्धति है। नंजम्मा ने उस कमरे की चाबी मास्टर की पत्नी को सौंपी थी। थोड़ा ही बनाया था। समधि के जाते समय उन्हें बांधकर देना भी होगा। गांव की सुहागिनों को देने के साथ-साथ शादी में जिन्होंने दौड़-धूप की है, उन्हें भी तो थोड़ा-थोड़ा मिलना चाहिए। लड्डू, चकली बांटने की जिम्मेदारी नंजम्मा ने उस पर डाली थी। अब चेन्निगराय ने पूछा—"जिस कमरे में भक्ष रखे गये हैं, उसकी चाबी मेरे हाथ में क्यों नहीं दी?"

"नंजम्मा बोली—"वह तो औरतों का काम है। चाबी रखकर आप क्या करेंगे?"

"मैं यमजान हूं। वह मेरे हाथ में होनी चाहिए।"

नंजम्मा के मना करने पर भी मास्टरजी ने जाकर अपनी पत्नी के गले में जो चाबी थी, लाकर पटवारी को दे दी। उन्होंने जाकर द्वार खोला और वहीं जो

टोकरी पड़ी थी उसमें लड्डू, चकली आदि भरकर उसे सबके सामने सिर पर रखकर ले जाकर पटवारीगिरी की पेटी में रख ताला लगा दिया। "यह किसलिए चेन्नय्या ?" अय्याशास्त्रीजी ने पूछा तो "शादी के बाद मुझे खाने के लिए चाहिए जी !" कहकर पुनः भीतर जाकर अपने पहले स्थान पर प्वाइंट लेकर बैठ गये—"मेरे लिए जरीदार धोती क्यों नहीं लायी ?"

"देखिये, कुल इतने रुपये खर्च हुए हैं। मैंने कोई नयी साड़ी नहीं ली। आपके लिए इतनी महंगी धोती कहां से लाती ?"

"तो मैं शादी के मंडप में नहीं जाऊंगा।"

वर-पक्ष के पुरोहित ने कहला भेजा कि शुभ मुहूर्त में कार्य होना चाहिए, और क्या कारण है कि वर को बुलाने के लिए नहीं आये ? वर-पक्ष के सब लोग मास्टरजी के घर में उतरे थे। यहां कन्या के घर का यमजान ही रूठकर बैठ गया है ! यहां की विधि पूरी हुए बिना वर को कैसे बुलाने जायें ? मास्टर का समझाना बेकार हुआ। महादेवय्यजी आये। उनसे भी कुछ न बना। दोनों पुरोहितों ने भी समझाया, लेकिन इस तमाशे में उन्हें आनंद आ रहा था। विषय जानकर द्यावरसय्यजी आये लेकिन कोई फल नहीं निकला। द्वार के पास बैठे हुए गुंडेगौड़जी अपनी छड़ी उठा रहे थे। इससे और भी रूठ जाने के डर से नंजम्मा ने गौड़जी को शांत किया। अप्पण्णय्या ने जो अब तक चुप था, पूछा—"हे चिन्नय्य, चुपचाप उठकर मंडप में जाता है या पकड़कर दो लगा दूं !"

"यह हरामजादा मुझे ऐसा कहे ? बड़ा भाई बाप के समान है। उसे मेरा पैर पकड़कर माफी मांगनी पड़ेगी।" चेन्निगराय ने और एक प्वाइंट जोड़ा।

"अप्पण्णय्या, आप चुप रहिए" नंजम्मा ने ही समझाकर उसे शांत किया। लेकिन गंगम्मा बीच में मुंह डालकर बोली—"घर के यजमान को जरीदार धोती न मिले तो पाणिग्रहण कैसे करायेगा ? तुझे इतना भी नहीं समझ में आता ? अब भी एक जोड़ी मंगवाकर दे सकती है !"

अपनी मांग का समर्थन करने वाले एक व्यक्ति के मिलते ही चेन्निगराय को मानो जोश आ गया। "हुं, अब भी किसी को तिपटूर भेजकर मंगवा दो। तब तक मैं यहीं बैठा रहूंगा।"

क्रोध करने पर काम बिगड़ता है, लेकिन कोई उपाय सूझ नहीं रहा था। नंजम्मा ने भगवान की कसम खाकर कहा—"शादी होते ही तिपटूर जाकर

अवश्य धोती ला दूंगी।" लेकिन यजमान जी नहीं माने। उनका एक ही हठ था कि धोती अभी मिलनी चाहिए। नंजम्मा समझ नहीं पा रही थी कि क्या किया जाय। चुपचाप एक कोने में आंसू बहाती खड़ी रही। बाहर विवाह मंडप के बाहर बैठे महादेवय्यजी को विषय मालूम था। वे उठकर अपने मंदिर में गये और लौटकर जोर से बोले—"चिन्नय्या, इसमें बीस रुपये हैं, इसे अपने पास रख लीजिए, धोती बाद में मंगवा देंगे।"

बाहर आकर पटवारीजी बोले—"मुझे रुपये नहीं चाहिए जी, धोती ही चाहिए।"

नंजम्मा को अलग बुलाकर द्यावरसय्यजी बोले—"बहन, एक काम करो। वर के लिए जो धोती लायी हैं, इन्हें दे दो। वर को भेंट देने के लिए हम एक जोड़ी राजा मिल की धोती लाये हैं, वह दे देता हूं। वह कभी प्रश्न नहीं करेगा कि ऐसी धोती क्यों दी?"

"लेकिन इनकी अक्ल तो देखिये मामाजी! ऐसा किया तो जा सकता है लेकिन हमें भी तो अपनी प्रतिष्ठा रखनी है न! भविष्य में कभी एक-न-एक दिन हमारी लड़की से 'तुम्हारे घर में सफेद धोती में पाणिग्रहण करवाया' कहकर उसकी बेइज्जती कर देंगे।"

"बहन, वह ऐसा नहीं कहेगा। दुर्भाग्य से कभी कह भी देगा, तो क्या किया जा सकता है? सह लेना पड़ेगा। तुम्हारे पति के बारे में मैंने उससे सब कुछ कह दिया है। संसार में कैसे-कैसे लोग रहते हैं। अब एक ही रास्ता है। जैसा मैं कहता हूं वैसा करो।"

नंजम्मा भीतर गयी और वर के लिए रखी हुई धोती लाकर पति के सामने रखकर बोली—"उठिए, पहन लीजिए।"

"एक है या जोड़ी?" उन्होंने पूछा।

"जोड़ी है, मत डरिये।"

चेन्निगराय तृप्त हुए। उठकर एक को पहनकर दूसरी को व्यवस्थित रूप से ओढ़ लिया। अब एक ही सूची में तीन कार्य हुए। पत्नी से बदला लिया, पहनने के लिए जरीदार धोती मिली, शादी समाप्त होने के बाद उनके लिए चकली, लड्डू न जाने रखती या नहीं, टोकरी-भर वे भी मिल गये। विजेता-भाव से वे विवाह मंडप में आ गये।

वधू का पिता नयी जरीदार धोती और वर सादी सफेद धोती पहनकर आये। शादी संपन्न होने में और कोई बाधा नहीं पड़ी। ठीक शादी के समय साइकिल से पहुंचे हुए इलाकेदारजी ने वर और वर के ससुर की धोतियां देखकर, तत्काल श्यावरसय्यजी को बुलाकर पूछा। भीतरी बातें न बताकर, "वह चेन्निगराय की शादी की पुरानी धोती है" कहकर विषय को वहीं दबा दिया गया।

ठीक शादी के समय घर के सामने एक कमानीदार बैलगाड़ी आकर रुकी। उससे उतरती हुई अक्कम्मा को देखकर रामण्णा ने दौड़कर मां को खबर दी। अब तक एक तरह की मूक वेदना का अनुभव करती हुई नंजम्मा भारी तसल्ली महसूस करने लगी। सीधे भीतर आकर अक्कम्मा बोली—"कंठी और कल्लेश ने कहा कि तुम्हें हर्गिज नहीं जाना चाहिए, लेकिन मेरी मुन्नी की शादी है, मुझे जाना ही चाहिए—हठ करके आई हूं। शादी हो रही है। लो, इसे पार्वती को दे दो।" अंटी से निकालकर एक सोने का शेवंतीपुष्प (गहना) दिया। अक्कम्मा जब सुहागिन थी तब वह उसे पहना करती थी। अब तक किसी तरह संभालकर बचा रखी थी। भीतर जाकर बल्कल की साड़ी पहन कर बैठ गयी। वैसी ही शुचि साड़ी पहनी समधिन गंगम्मा ने उससे कोई बात नहीं की। अक्कम्मा भी चुप रही। द्वार के पास से ही शादी को देखती हुई अक्कम्मा ने, किसी काम से अंदर आयी नंजम्मा से धीरे से कहा, ताकि वह अकेली ही सुन सके—"तूने अच्छा काम किया। यह लड़का राजकुमार-सा है, अंग्रेजी स्कूल का मास्टर याने छोटा काम है? पहले ही एक बच्ची है तो क्या हुआ?"

शादी हो गयी। सूर्यनारायण की बेटी रत्ना विश्व के साथ खेल रही थी। रत्ना अब तो विश्व की सगी बहन की बेटी बन गयी। मास्टर वेंकटेशय्यजी ने कहा—"इन दोनों की शादी अभी करवा दें?" तो विश्व ने लज्जित होकर बच्ची का संग ही छोड़ दिया। सूर्यनारायण बोले—"आज ही करा दीजिए। उसे यहीं छोड़ जाता हूं।"

दूसरे दिन नागवल्ली (वरोपचार) थी। शादी के दिन ही शाम को मास्टर, और उनकी पत्नी दोनों ने नंजम्मा को अलग से बुलाकर पूछा—"नंजम्माजी, आप अन्यथा न समझें। वर पक्ष किसी तरह समझ गया है कि लड़की बड़ी हो चुकी है।"

इसे सुनकर नंजम्मा घबरा गयी। मास्टर बोले—"डरिये मत। सूर्यनारायण तिपटूर, तुमकूर जैसे बड़े गांवों को देख चुके हैं। ट्रेनिंग के लिए एक साल मैसूर

भी रह चुके हैं। बड़े गांवों में सोलह-सत्रह के बाद ही शादी होती है। वरोपचार के अगले दिन गौना-विधि कराकर भेज देते हैं। कहते हैं कि बंगूलर में तो चप्पर, शादी, वरोपचार, सब एक ही दिन कर देते हैं। सूर्यनारायण ने ही मुझे बताया है। कल वरोपचार होगा। कल रात ही गौना करके लड़की को भी साथ भेज देंगे तो वे ले जायेंगे। नहीं तो इसके लिए आपको फिर खर्च करना पड़ेगा। भोजन में भी खर्च होगा। लगे हाथ निपट लें तो ठीक रहेगा। चाहें तो कल कंबनकेरे जाकर मैं एक जोडी बिछावन ले आता हूं।"

नंजम्मा को इस बात का दुख हुआ कि बेटी को तुरंत ही अपने से दूर करना पड़ रहा है। मन में इससे अधिक भय और एक बात का हुआ। उसने किसी से नहीं कहा था कि बेटी बड़ी हो गयी है। पुरोहितजी ने या और किसी ने वर पक्ष को बताया होगा ! सौभाग्य से उसने हमें गलत समझकर झमेला खड़ा नहीं किया। अगर अब वह गौने के लिए तैयार हो जाती है तो इस बात की स्वीकृति मानी जायेगी कि बेटी ऋतुमति हो गयी थी। सब समझेंगे कि इतने दिन बात छिपाई गयी। जानेंगे तो क्या होगा ? इस प्रश्न की अपेक्षा अब भी उसकी पुरानी प्रज्ञा में भयपूर्ण निर्णय दृढ़वत रह गया कि ऐसा नहीं होना चाहिए। अब एकाएक उसे बदलना संभव नहीं। उसका व्यावहारिक विवेक कह रहा था—'शादी के दो-तीन महीने बाद, एक बार मासिकधर्म होने पर ऋतुमति होने की बात कह-कर बाहर बिठाकर पद्धति के अनुसार चार सुहागिनों के सामने आरती उतारकर, सोलहवें दिन गौना-विधि संपन्न करनी चाहिए।' अब एकाएक बदलने में असमर्थ होकर बोली—"देखिए, यह सच है कि लड़की बड़ी हो गयी है। बड़े-बड़े गांवों में करते हैं, इसे देखकर हम भी करें तो मुश्किल हो जायेगा। इस गांव के पुरोहितों की बात आप जानते ही हैं। हमारे घरवालों के स्वभाव से भी आप भलीभांति परिचित हैं। वे भी पागलों की भांति बोलने लगेंगे। मैंने उन्हें भी नहीं बताया था। तीन महीने के बाद गौना कर देंगे।"

"ऐसा ही कीजिए। सूर्यनारायण ने भी जोर नहीं दिया है। आपका और खर्च न कराने के विचार से ही कहा था। इसके अलावा और तीन महीने तक बच्ची को देखना, खाना-वाना बनाकर स्कूल जाना, परेशानी है।"

"कह दीजिए कि बच्ची को मेरे पास छोड़ जायें।"

यहां का हाल समझाया तो सूर्यनारायण मान गया। गांव की स्थिति से वह

अच्छी तरह वाकिफ था। शादी के तुरंत बाद बच्ची को यहां छोड़ जाने के लिए उसका मन नहीं माना। उसने सोचा कि ऐसा करना व्यावहारिक दृष्टि से भी उचित नहीं है।

दूसरे दिन वरोपचार के पश्चात् वर को वधू सौंपते समय नंजम्मा और अक्कम्मा के साथ रामण्णा भी रो रहा था। वे एक साथ पले, बड़े हुए थे। दोनों में काफी आत्मीयता थी। सब जानते हुए भी उसने मां के पास आकर पूछा— "मां, पार्वती हमारे घर से चली जायेगी ?"

"लड़की है न बेटे !" मां ने सांत्वना दी।

न जाने क्यों, एकाएक अप्पण्णा को भी रुलाई आ गयी। वह इनके घर बहुत कम आया करता था। पार्वती के साथ अधिक बोला भी न था। वह तरकारी की क्यारियों में पानी डालने जाती थी तो उसी समय कभी-कभी पूछता था, "मुझे थोड़ा पालक भाजी दोगी ?" तो वह कहती—"जितना चाहे ले लीजिए, चाचाजी।" इससे अधिक इन दोनों में कोई बात नहीं होती थी। अब न जाने क्यों स्वेच्छा से यहां आकर काम कर रहा था। नंजम्मा के अलावा और किसी ने नींद हराम कर दिन-रात काम किया तो वह था अप्पण्णय्या। क्या करना है, यह कभी भाभी, मास्टर की पत्नी, अक्कम्मा, और कभी-कभी जोइसजी बताते थे। रसोई के बर्तन उठाकर, मांडी निकालने से लेकर पत्तल निकालकर, गोबर से फर्श शुद्ध करने, वर के घर के हंडे में पानी भरने तक का काम, वेतन पानेवाले सेवकों से बढ़कर कर रहा था। वधू सौंपने के बाद पार्वती ने आकर पैर छुए तो अप्पण्णय्या की डबडबा आई आंखों से आंसू छलक कर पार्वती के सिर पर गिर पड़े।

अगले दिन वर-पक्ष के लोगों को विदा किया गया। गांव के बाहर अंबा के मंदिर तक वर-वधू का परस्पर हाथ पकड़वाकर, पैदल ले जाया गया। आगे-आगे बाजेवाले थे। पीछे दूसरों के साथ नंजम्मा बच्ची रत्ना को गोद में लिये चल रही थी। ग्रामदेवता की पूजा के बाद प्रणाम किया गया। फिर गाड़ी के पास आये। पत्नी का हाथ छोड़ने से पहले धीरे से दबाकर सूर्यनारायण ने अकेली ही सुन सके, इतने धीरे से बोला—"तीन महीने के बाद तुझे लिवा लेने आऊंगा।" कांपती-सी सांस लेती हुई सिर झुकाये खड़ी पार्वती कुछ नहीं बोली। वह कुछ कहेगी, इसकी उसने अपेक्षा भी नहीं की थी।

उसने सास, ससुर, छोटे ससुर, पुरोहितों, वेंकटेशय्या मास्टर, महादेवय्यजी

आदि को प्रणाम किया। इतने में उसके और महादेवय्यजी के बीच कुछ हद तक परस्पर परिचय और आत्मीयता जाग उठी थी। पार्वती ने वर-पक्ष के और अपने पक्ष के द्यावरसय्यजी एवं अन्य लोगों के चरण स्पर्श किये। उसके बाद सब गाड़ी में बैठ गये। तिम्लापुर जाकर वहां चप्पर हिलाने की विधि पूरी कर सूर्यनारायण को बाळेकेरे जाना था।

तेरहवां अध्याय

शादी शांतिपूर्वक हो जाने पर नंजम्मा को असीम आनंद हुआ। इस कार्य में हाथ बंटाने वालों को उसने मन ही मन धन्यवाद दिया। वर-पक्ष से अधिक लोगोंके न आने से चावल, दाल, मिर्ची-मसाला आदि काफी सामान बच गया था। उन्हें ऐसे स्थान पर रखा जाय कि पति न देख सके, नहीं तो रोज अन्न, मसालेदार पतली दाल की ही जिद् करेंगे। तीन महीनों में गौना-विधि करानी है। ऐसा सोच उसने उसके लिए सब बंद करके रख दिया। बचा हुआ आधा डिब्बा तेल भी ढक्कन लगाकर ऐसी जगह रख दिया कि कोई देख न सके। 'गौने के लिए और बीस रुपये का सामान लाना होगा! शादी के लिए पचासेक रुपये चाहिए। बेटी के साथ पात्र-बर्तन भेजने के लिए क्या किया जाये? सास गंगम्मा के घर में इनके हिस्से के ही बहुत-से पात्र हैं, लेकिन वे एक भी देने वाली नहीं। अब नये लेने के लिए पैसे नहीं। घर में जो है, उसी में से कुछ भिजवाना होगा। उसके बाद जैसा-जैसा बन पड़ेगा, थोड़ा-थोड़ा देते रहेंगे। सूर्यनारायण भी तो ऐसा आदमी नहीं जो पात्र-बर्तन न देने पर पत्नी पर व्यंग्य कसे!' यह सब भी उसने सोचा।

अब पार्वती कलाई-भर काली चूड़ियां पहनने लगी थी। गले में मंगल सूत्र था। कानों में बड़ा सफेद नग के कर्णफूल, नाक में वरोपचार के दिन उसके पति द्वारा लाये गये सफेद नग की बासर थी। अभी नयी नाक होने के कारण बड़ा बासर सुंदर दिखायी देता था। बालियां, नथ पहनने तक मां नंजम्मा की भी कल्पना नहीं थी कि उन्हें पहनने से बेटी का मुख इतना गोल, सुंदर दिखाई देगा। पैरों में बिछुआ भी थी।

एक दिन इनके घर आई हुई सर्वक्का बोली—"पार्वती कितनी सुंदर लगती है!" फिर नंजम्मा को सतर्क कर बोली—"नंजम्माजी, कच्चा शरीर है, अकेली को तालाब-वालाब मत भेजिए।"

"बालियां, बाजर पहनने के बाद दीदी बहुत सुंदर लगती है। तहसीलदार की पत्नी की तरह सोने की चूड़ियां पहनेगी तो और भी सुंदर लगेगी न मां ?" रामण्णा ने कहा तो मां बोली—"तू जब तहसीलदार होगा न, तब वह भी बनवा लेंगे बेटे !"

पार्वती भी आईने में अपना मुंह देखती तो उसे अपने में कुछ नयापन दिखाई पड़ता। अब दो-तीन महीनों में मायका छोड़कर जाना पड़ेगा, इस विचार के आते ही वह कुम्हला जाती। एक दिन मां बोली—"बेटी तेरा पति बड़ा अच्छा है ! इतना सहयोग देकर और कौन शादी करता ? तू तो रसोई का सब काम अच्छी तरह से जानती ही है ! बिना भेदभाव किये उस बच्ची की देखभाल करना। तेरे पति को भी खुशी होगी ! बिन-मां के बच्चे के आंसू हम सबको तबाह कर देंगे।"

"मैं ऐसा ही करूंगी मां।" बेटी ने कहा।

"बच्ची बड़ी अच्छी है। बाद में अपने विश्व से ही उसकी शादी करवा सकते हैं। है न, मां ?"—रामण्णा ने पूछा।

"यह बड़ा ही नटखट है ! ठीक तरह पढ़-लिखकर हाईस्कूल भी नहीं करेगा तो पार्वती का पति इसे थोड़े ही कन्या देगा ?" मां बोली।

"नहीं मां, हमारे मास्टरजी तो कहा करते हैं कि नटखट ही अधिक बुद्धिमान होते हैं।"

"तो फिर तू साधु स्वभाव का होते हुए भी अपने पूरे स्कूल में 'पहला' कैसे आता है ?" दीदी ने कहा।

"नटखट होता तो शायद इससे भी अधिक नंबर लाता।" भाई ने उत्तर दिया।

इधर इनकी यह बात चल रही थी, उधर विश्व महादेवय्यजी के मंदिर में उनके गुड़ का मटका टटोल रहा था।

शादी हुए एक महीना बीत गया था। सूर्यनारायण ने अपना कुशल समाचार बताते हुए ससुरजी के नाम एक पत्र लिखा। नंजम्मा को एक बात याद आयी। पार्वती की शादी सुचारू रूप से संपन्न होने पर ग्रामदेवी के मंदिर में खीर, दही-भात के साथ आने की मन्नत मानी थी। यह सोचकर कि काली-मां की मन्नत में अधिक देर नहीं करनी चाहिए, शीघ्र ही उसे पूरा कर डालने का निश्चय किया। इसमें अधिक खर्च भी नहीं था। घर में चावल है, गुड़ है, नारियल, दही सब है।

देवी को भेंट चढ़ाने के लिए एक चोली का कपड़ा चाहिए। वह भी घर में है। परसों शुक्रवार है ही। रामण्णा से स्कूल से छुट्टी लेने के लिए कहा। "माता के मंदिर में जाना है, घर में ही रहिए।" पति से बोली तो वे अनायास मान गये—शायद खीर और दही-भात की लालसा से।

गंगम्मा और अप्पण्णय्या आठ दिनों से गांव में नहीं थे। गंडसी की तरफ गांवों में भिक्षाटन के लिए गये थे। नंजम्मा ने देवी के पुजारी काळा को सूचना भिजवायी थी कि वह शुक्रवार को मंदिर में आयेगी। उस दिन वह जल्दी ही उठी और पानी गरम किया। स्नान के बाद शुचि-वस्त्र धारण करके, रसोईघर में प्रविष्ट हुई तो पार्वती विश्व को शुचि-वस्त्र पहनाकर स्वयं भी तैयार हो गयी। रामण्णा के स्नान के बाद चेन्निगराय स्नानगृह में घुसे। तीन सेर चावल डाल दिया। नंजम्मा ने गुड़ की चाशनी में अन्न का आधा भाग डालकर सीजने तक चूल्हे पर रखकर, खोपरा, इलायची, मूंगफली, काजू, मिलाकर उसमें छौंक दिया। फिर कसा हुआ नारियल और बढ़ी पत्ता डालकर दही-भात मिलाकर दो बड़े बर्तनों में भरकर कपड़ा बांधकर रख दिया। हल्दी-कुंकुम, पुष्पों की थालियां तैयार करके पार्वती से शादी में पति का दिया हुआ नौ रुपये का शादी का जोड़ा पहनने के लिए बोली। हल्दी लेपित गाल, दायें से बायें लगा सिंदूर, कंघी किये सुंदर बाल, खोंसे हुए पुष्प, बालियां, बासर, बिछुआ, शादी का जोड़ा पहनकर पार्वती हल्दी-कुंकुम की थाली बायें हाथ में लेकर रास्ते पर चलने लगी तो सबकी निगाहें उस पर टिक गयीं। उसके साथ चलने वाली नंजम्मा को चिंता हुई कि बेटी को कहीं नजर न लग जाये। माथे पर गोपी-चंदन लगाये रामण्णा हाथ में अन्न के दोनों पात्र लिए हुए था। चेन्निगराय पीछे-पीछे चले आ रहे थे।

पुजारी काळा इनकी प्रतीक्षा कर रहा था। नंजम्मा-बेटी को गर्भ मंदिर के भीतर ले गया और बेटी से ही देवी के चरणों की पूजा करायी। हल्दी-कुंकुम, कनेर पुष्प और रामण्णा द्वारा मंदिर के सामने से पौधों से तोड़कर लाये हुए लाल फूलों से पूजा की गयी। पूरे कमरे में फैली बैठी हुई देवी किसी को भी निगलने वाली रणचंडी-सी लग रही थी। इन्होंने देवी की गोद में नयी चोली का कपड़ा चढ़ाया तो पुजारी काळा ने बड़ी मशाल जलाकर मंगलारती उतारी। मंगलारती स्वीकार कर सबने प्रणाम किया। काळा को दक्षिणा देने के बाद, लाये हुए केले के पत्ते के टुकड़ों में भर-भरकर प्रसाद देकर वे मंदिर से बाहर निकले।

और प्रसाद के लिए खड़े लोगों को मुट्ठी भर-भर देकर, ये सब मंदिर के पीछे की तलैया पर पहुंचे। तट पर बैठकर नंजम्मा ने सबको केले के पत्ते में प्रसाद दिया। सबने पेट भर खाया। घर के लिए भी थोड़ा बच गया। चेन्निगराय वहीं से तालाब के चढ़ान की ओर चले गये। मां-बच्चे फिर मंदिर में आकर और बरामदे में कुछ देर बैठकर दुबारा दरवाजे की खिड़की से देवी का दर्शन करके, देहली पर माथा टेककर प्रणाम कर घर लौटे। लौटते समय रास्ते में जो भी औरतें, बच्चे मिले, सब पार्वती को आंखभर देखते रहे। कुछ औरतों ने तो कह ही दिया—"बहन, शादी का हल्दी-कुंकुम लगा शरीर है, शादी का जोड़ा पहनाकर क्यों ले आयीं? नजर नहीं लगेगी?" नंजम्मा को लगा, यह सच भी हो सकता है।

घर में उस दिन दोपहर को खाना नहीं पकाया गया। मंदिर से लाये हुए प्रसाद को ही करीब तीन बजे के समय सबने थोड़ा-थोड़ा लिया। घर पहुंचते ही पार्वती ने शादी का जोड़ा उतारकर सादी साड़ी पहन ली। माथे का सिंदूर, कान की बालियां, सिर के फूल आदि ऐसे ही थे। ऊंघने लगी तो चटाई बिछाकर लेट गयी। रामण्णा घर में बैठा अंग्रेजी पाठ सीख रहा था। विश्व स्कूल गया हुआ था। चेन्निगराय महादेवय्यजी के मंदिर के बरामदे में जाकर लेट गये थे। नंजम्मा से बात करने के लिए सर्वक्का आयी। चटाई पर लेटी हुई पार्वती को देखकर उसे अपनी बेटी रुद्राणी की याद हो आयी। मेरा पति अगर वैसा नहीं करवाता तो शादी होकर अब तक वह कम से कम एक बच्चे की मां बन जाती थी—वह मन ही मन दुखी हो उठी।

कुछ देर में पार्वती जाग उठी। उसकी आंखें लाल हो गयी थीं। "मां, बहुत ठंडी लग रही है, आग सेकने की इच्छा हो रही है।" कहती हुई वह बैठ गयी। गर्मी के दिन नजदीक थे। अब कैसी ठंडी? नंजम्मा ने पास आकर बेटी का माथा छूकर देखा। बुखार आ रहा था। शीत ज्वर है। सर्वक्का तुरंत बोली—"नंजम्माजी, आज उसे शादी के हल्दी-कुंकुम लगे शरीर ही मंदिर क्यों ले गयीं? शादी का जोड़ा भी पहना लिया था। सबकी नजर एक-सी नहीं रहती। नजर उतार दीजिए।"

नंजम्मा ने झाड़ू की आधी सींकें तोड़कर जलायीं और बेटी की नजर उतारकर कोने में डालीं तो वह चिट्-चिट् कर जोर से आवाज करती हुई प्रज्वलित होकर राख बन गयीं। "नजर ही है जी, देखा न कैसी चिट्-चिट् आवाज आयी!"—सर्वक्का ने

अपनी बात का समर्थन किया। पार्वती बैठी ही रही। शाम को सर्वक्का घर गयी तो नंजम्मा खाना पकाने के लिए भीतर गयी हुई थी। बैठने में असमर्थ हो पार्वती कंबल ओढ़कर सिकुड़ गयी। रामण्णा तकिये के पास बैठा उसकी बेजारी दूर कर रहा था। रात को उसका शीत-ज्वर कुछ और बढ़ गया। जिस चूल्हे में खाना बना था, उसी में नंजम्मा ने जीरा, मिर्ची, लवंग, तुलसी का काषाय बनाकर बेटी को पिलाकर सुला दिया। लोगों की दृष्टि एक-सी नहीं रहती। शादी का जोड़ा पहनने के लिए कहा, यही गलती हुई—वह मन ही मन अपने को कोसती रही।

रातभर पार्वती को बुखार रहा। बीच-बीच में शरीर टूटने की शिकायत भी करती थी। मुख अकड़कर आंखें लाल हो गयी थीं। नंजम्मा ने दुबारा काषाय पिलाया। सुबह के प्रहर में पार्वती की आंखें लग गयीं। मां भी कुछ समय के लिए सो गयी। सुबह वह जागी तो सूर्य निकल चुका था। पार्वती का बुखार थोड़ा उतरा-सा लग रहा था लेकिन पूरा नहीं उतरा था। "सारा शरीर टूटता-सा लग रहा है, बहुत दर्द है" कहती हुई वह करवटें बदलती रही।

"बुखार के ताप से ऐसा हो रहा है बेटी ! अब बुखार उतर रहा है। चुपचाप लेटी रहो। पानी गरम करती हूं, बाद में उठकर हाथ-मुंह धो लेना।" कहकर वह बायीं ओर मुड़ी तो रामण्णा अभी तक सोया था। हमेशा मुर्गे के बांग देते समय उठकर मिट्टी का तेल-लैंप जलाकर पढ़ने वाला अभी तक सोया है ! "मुन्ने अब तक नहीं उठा !" पूछने पर चादर के भीतर से ही बोला—"शीत ज्वर आ रहा है मां।" घबरा कर चादर हटाकर देखती है तो उसका चेहरा भी पार्वती के चेहरे के समान हो गया है। मुख अकड़कर आंखें अंगारों सी जल रही हैं। दोनों को एक ही दिन शीत-ज्वर चढ़ा है। ऐसा क्यों हुआ ?—सोचते हुए उसने चूल्हा जलाया। गरम पानी से दोनों का मुंह धोया और बिस्तर पास-पास बिछाकर लिटा दिया। फिर अद्रक-मिर्च का काषाय उबाला। इससे पहले चावल के कण की सादी मांडी बनाकर, उनके इंकार करने पर भी पिलायी। ठंडी, बुखार आता-जाता रहता है। लेकिन रामण्णा की परीक्षा निकट आ रही थी। मान लिया जाये कि पार्वती को नजर लग गयी, तो रामण्णा को बुखार क्यों आया ? वह तो शुची लुंगी में टावेल ओढ़े मंदिर में गया था। उसका भी नया-नया जनेऊ हुआ था ! लेकिन लड़कों को इसमें क्या फर्क पड़ता है ! शादी के समय बहुत मेहनत की थी। उसके बाद पूर्ववत रोज धूप में चलकर स्कूल जाता है। अब एक महीने

में परीक्षा खत्म हो जाये तो फिर गर्मी की छुट्टियां मिलेंगी। इसमें डेढ़ महीने आराम कर सकता है।

शाम को पार्वती का बुखार और बढ़ गया। आंखें तो ग्रामदेवी काली-मां की जलती आंखों के समान थीं। दोनों कानों में चमचमाती हुई बालियां, नाक में चमकती बासर, उसका मुंह देखनेवालों को भयभीत कर देती थीं। नंजम्मा ने बासर-बालियां निकालकर पेटी में रख दीं। रात को पार्वती बोली—"मां, मेरी दायीं जांघ के बगल में फोड़ा-सा निकल आया है।"

शादी के बाद उसने अधिक काम नहीं किया था। चली भी नहीं थी। नंजम्मा ने सोचा शायद कल मंदिर तक चलने के कारण पैर दर्द करने से ऐसा हुआ होगा। लेकिन मंदिर तो गांव के सामने ही है। दस मील चलने पर भी पार्वती कभी नहीं थकी। लेकिन फिर फोड़ा-सा क्यों निकला? खैर, कुछ भी हो। उसने नमक तलकर जांघ के बगल में सेंका। फिर मांडी काषाय पिलाकर लिटा दिया। रामण्णा का बुखार भी वैसा ही था। वह बिना कराहे चुपचाप लेटा था। महादेवय्यजी के मंदिर जाकर भजन सुनकर चेन्निगराय रात के आठ बजे घर आये। विश्व कुछ पहले आ गया था। उन दोनों को दोपहर का ही खाना परोसा। नंजम्मा ने कुछ भी नहीं खाया था। कल रात भी नींद न लेने से उसे भी नींद सता रही थी। इसलिए दोनों बीमार बच्चों का माथा छूकर देखा और अच्छी तरह उढ़ाकर उन दोनों के सिरहाने ही लेट गयी। कुछ देर तक तो नींद नहीं आई, लेकिन फिर गहरी नींद आ गयी।

उसने एक स्वप्न देखा। कल का ग्रामदेवी के मंदिर का दृश्य ही दिखाई दे रहा था। देवी का मुख बुखार से तप्त पार्वती के मुख के समान ही अकड़कर सूज गया है। उसके दोनों कानों की बालियां जल रही हैं। आंखें भी अंगार बन गयी हैं। पालथी मारकर पूरे कमरे में फैली बैठी है। उसकी दोनों जांघों पर पार्वती और रामण्णा नवजात बच्चों के समान नग्न सोये हैं। खुद पास जाकर इन दोनों के शरीर पर एक कंबल ओढ़ाने की कोशिश कर रही है, लेकिन गर्भ-मंदिर की देहली से भीतर जा ही नहीं सकती। द्वार बंद नहीं हैं, सामने कोई रुकावट भी नहीं है। लेकिन उसे अंदर जाने से कोई रोक रहा है। वह भी प्रयास करती जा रही है! 'हाय' कराहने की आवाज हुई तो स्वप्न वहीं टूट गया। वह जाग उठी। रामण्णा कराह रहा था। टिमटिमाते हुए लैंप जल रहा था। उसे तेज करके बेटे

के माथे पर हाथ रखकर कहा—"क्या बात है बेटे ?"

"दोनों जांघों के बगल में फोड़े निकल आये हैं मां ! बहुत दर्द है।"

उसकी छाती धड़कने लगी। तो यह पार्वती के फोड़े साधारण नहीं हैं। यह क्या प्लेग की गांठें हैं ? लेकिन पास-पड़ौस में इसकी कहीं खबर नहीं है। गांव में कहीं चूहा भी नहीं गिरा है। चादर हटाकर रामण्णा की जांघ हाथ लगाकर देखी। संकोच होने पर भी बुखार की खुमारी में वह चुपचाप सोया था। दोनों जांघों के बगल में एक-एक कटहल के बीज जितना फोड़ा उभरा हुआ था। मां के हाथ लगते ही उसने 'हा' कहा। भ्रमित-सी वह पांच मिनट बैठी रही। पति के पास आकर उनका हाथ झकझोरते हुए बोली—"देखिये, पार्वती और रामण्णा को फोड़े निकल आये हैं। प्लेग-वेग हो सकता है, जरा उठकर देखिये।" तीन बार झकझोरा लेकिन "कल सुबह देखेंगे, मुझे नींद आ रही है" कहकर उन्होंने चादर सिर तक खींच ली। उसने अब महादेवय्यजी को बुलाने की सोची। अकेली जाने में उसे न जाने क्यों डर लगा। जबकि अंधेरे से वह कभी डरनेवाली नहीं थी। आज क्यों डर लग रहा है ? सोचते हुए उसने सो रहे विश्व को उठाया। "मुन्ने, अय्याजी को बुलाना है, चलो।" उन्नींदी आंखों में ही वह झट खड़ा हो गया। "मैं ही बुला लाता हूं" बोलकर और दरवाजे के पास दौड़कर उसने चिटकनी खोली। "बाहर भयानक अंधकार है, ठहर। मैं भी आती हूं।" उसके कहने से पहले ही खोलकर बाहर दौड़ पड़ा। आधी रात थी। सारा गांव निस्तब्ध हो सोया था।

थोड़ी ही देर में विश्व का हाथ पकड़े महादेवय्यजी आ गये। दोनों बच्चों की बीमारी के बारे में बताकर नंजम्मा बोली—"यह क्या प्लेग-वेग है, मुझे नहीं समझ में आ रहा है ? डर लगता है। आप ही देखिए !"

महादेवय्यजी ने दोनों का हाथ पकड़कर देखा। रामण्णा की गांठों पर हाथ रखकर देखने के बाद बोले—"शाम को पटवारीजी आये थे, उन्होंने बच्चों की बीमारी के बारे में कुछ नहीं बताया !"

"इस सबसे उनका क्या वास्ता ? यह बताइए कि इन्हें क्या हो गया है ?"

"कल शाम को ही गांव के बाहर गुरुवण्णा और कुरुबरहट्टी के पुट्टय्या बातें कर रहे थे। कह रहे थे कि उनके मोहल्ले में चूहे गिरे हैं, दो दिन हो गये हैं।"

नंजम्मा के मानो प्राण उड़ गये, छाती की धड़कनें रुक गयीं। दो मिनट भ्रमित-

सी बैठी रही। फिर एकाएक सिसक-सिसककर रो पड़ी। "बहन, धीरज धरो। तुम ही अगर रोने लगी तो इन्हें कौन देखेगा ?" अय्याजी के समझाने पर भी उसकी रुलाई नहीं रुकी। "अय्याजी, दुष्ट प्लेग आ गयी है तो कौन बचेगा !" बोलकर जोरों से रो पड़ी। यह सुनकर रामण्णा बोला—"मां, दवा लेने से अच्छे नहीं होंगे ? क्यों रोती है ?" उसे कुछ धैर्य आया-सा लगा। पार्वती में इतना भी बोलने की शक्ति नहीं थी।

महादेवय्यजी बोले—"प्लेग होने पर भी कई लोग बच गये हैं। कहते हैं कि एक बार होकर बच गये तो दुबारा नहीं होता।"

उसे थोड़ी-सी सांत्वना मिली। सच है, उसके भाई कल्लेश को प्लेग हुआ था। क्या वह नहीं बचा ? यह याद आने पर चिंता में थोड़ी कमी आयी। चेन्निगराय के खुर्राटों को छोड़ दें, तो मौन ही मौन था। विश्व चुपचाप अपने बिस्तर पर बैठा था। "तू क्यों बैठा है, सो जा बेटे ?" महादेवय्यजी ने कहकर उसे सुला दिया। कुछ देर बाद रामण्णा को भी नींद आ गयी। इस समय महादेवय्यजी उठकर अपने मंदिर नहीं जा सकते थे। यहां बैठकर कुछ भी करने को सूझ नहीं रहा था। लेकिन यह सोचकर यहीं बैठ गये कि मेरा यहां बैठना भी पर्याप्त होगा ! इससे इस औरत को एक तरह की हिम्मत, सांत्वना तो मिलती है। कुछ देर के बाद नंजम्मा बोली—"अय्याजी, आज रात को एक स्वप्न देखा। उसमें देवी के मंदिर में, देवी की गोद में पार्वती और रामण्णा दोनों नग्न सोये थे, उन पर एक कंबल डालने गयी तो मैं देहली के अंदर जा ही न सकी। सामने कोई दीवार नहीं, पत्थर नहीं। लगा कि कुछ रोक रहा है। इसका मतलब क्या है ?"

"दोनों बच्चे मां की गोद में सोये हैं तो इसका अर्थ यही होता है न कि देवी की दया है ! अब देवी की ही बीमारी है। फिर भी वह बचायेगी। यही अर्थ है।"

नंजम्मा को संतोष मिला। "लेकिन मुझे अंदर क्यों नहीं जाने दिया ?"

महादेवय्यजी को कोई उत्तर नहीं सूझा। उनके मन में आया कि कह दें 'जिन बच्चों की रक्षा भगवान करता है, मानव को उसके पास जाने का क्या अधिकार है ?' लेकिन उन्होंने नहीं कहा। उसके बारे में नंजम्मा भी सोचने लगी। अशुभ संकेत दिखाई देने पर भी, उसे अन्य तरीकों से समझने का प्रयास कर रही थी, भले ही अंतःकरण न माने। "मेरी गोद में सोये हुए बच्चोंको छूने का तुझे क्या अधिकार? मेरे साथ रहने तक उन्हें किसी तरह का डर नहीं। क्या यही इसका अर्थ है ?"

"हां-हां, ठीक है बहन ।"

"तो अय्याजी, इन्हें कुछ दवा लाकर नहीं पिलानी चाहिए ?"

"पिलाये बिना कैसे चलेगा ?"

"मेरी गोद के बच्चों को तू क्यों दवा पिला रही है, कहकर देवी गुस्सा हो गयी तो ?"

वह भी एक समस्या ही थी। दवा देनी चाहिए या नहीं, यही बात कुछ देर तक दोनों के लिए समस्या बनी रही। अंत में महादेवय्यजी बोले—"बहन, व्रण फैलने पर वह नागपूजा कराने से अच्छा हुआ था। तुम्हें जाकर सुई लगवानी पड़ी थी न ? अब भी ऐसा ही करो। कल डाक्टर को बुला लाना चाहिए, नहीं तो बैलगाड़ी से कंबनकेरे जाना चाहिए ।"

नंजम्मा ने ऐसा ही करने का निश्चय किया। तुरंत कारिंदे को बुलाकर एक गाड़ी की व्यवस्था कराने के बारे में पूछा, तो महादेवय्यजी ने कहा—"जिनको इतना बुखार चढ़ा हो, उन्हें गाड़ी में ले जाना ठीक नहीं है। डाक्टर को ही यहां बुलवाना पड़ेगा। गाड़ी तैयार करके भेज दो। चाहें तो मैं भी जाकर आता हूं।"

मुर्गा बांग देने तक बैठे रहने के बाद, महादेवय्यजी जाकर कारिंदे को बुलाकर लाये। वह गया और डेढ़ रुपये भाड़े में गाड़ी तय करके लौटा। सूर्य निकलने से पहले ही गाड़ी में बैठकर महादेवय्यजी कंबनकेरे पहुंचे।

सुबह दोनों का बुखार और बढ़ गया था। दायीं जांघ की गांठ के अलावा पार्वती को दोनों कांखों में दर्द होने लगा था। सारा चेहरा सूजकर चंडी के मुख-सा, देखने वालों को भयभीत कर रहा था। आधी जागी और आधी निद्रावस्था में दिमाग काम नहीं कर रहा था। गरम मांडी पिलाने के लिए पास आकर उसे हिलाया, तो होश में आकर पार्वती बोली—"हाथ-पैरों में शिथिलता आ रही है।"

"बुखार की वजह से ऐसा हो रहा है बेटी। थोड़ी मांडी पी लो, हालत सुधर जायेगी।"

"नहीं चाहिए ···।"

"नहीं तो ताकत कहां से आयेगी। पी लो, मेरी बेटी।"

मां की बात का विरोध किये बिना, जो कुछ मुंह में गिरा उसे निगलकर उसने आंखें मूंद लीं। रामण्णा को जगाया तो वह पूरे होश में था। उसने पूछा—"मां, डाक्टर कब आयेंगे ?"

"करीब नौ बजे आयेंगे बेटे।"

"आते हैं या नहीं ? प्लेग के गांव में आने से डाक्टर डरते हैं। अब पहले वाले डाक्टर नहीं हैं।"

"देखें !"

मां के कहे मुताबिक वह मांडी पीकर लेट गया। उसकी दोनों गांठें अब और अधिक दुखने लगी थीं। उसे सहने में असमर्थ होकर बीच-बीच में 'आं आं मां' पुकारता। सुबह उठकर तालाब की चढ़ान की ओर गये हुए चेन्निगराय अब तक नहीं लौटे थे। विश्व समझ नहीं पा रहा था कि क्या करे ! सिर्फ मां के पीछे-पीछे रसोईघर से बीच के कमरे तक दौड़-धूप कर रहा था। उतने में डुग्गी बजाता हुआ बेलूरा आया और कुछ कहने लगा। नंजम्मा बरामदे के पास आकर खड़ी हो गयी। दूर से 'डम्म-डक्क डम्म-डक्क' डुग्गी पीटता हुआ आकर बेलूरा इनके घर के कोने पर खड़ा हो, डुग्गी रोककर जोर से कहने लगा—"कहते हैं गांव में प्लेग आया है। पंचायत ने फैसला किया है कि सब लोग गांव छोड़ दें और झोपड़ियां बना लें। अगले शुक्रवार तक सब गांव छोड़ दें, सब गांव छोड़ दें शुक्रवार तक…" और फिर 'डम्म-डक्क, डम्म-डक्क' बजाता हुआ वह आगे बढ़ गया।

गांव में प्लेग आने की बात नंजम्मा को मध्य रात्रि तक मालूम नहीं थी। सबसे पहले शायद उनके घर आया था। ग्रामदेवी की मन्नत मनाने के लिए पार्वती को ले गयी। नयी-नयी शादी की हुई लड़की कितनी सुंदर थी। शायद देवी की पहली नजर उसी पर पड़ी होगी ! लेकिन ग्रामदेवी काली और प्लेग की सुंकलदेवी अलग-अगल हैं न ! गांव में सबसे पहले पार्वती को क्यों प्लेग आया ? उसके तुरंत बाद उसके छोटे भाई रामण्णा को आ गया। इसमें न जाने क्या सच है, क्या झूठ ? यह प्लेग दो-तीन साल में एक बार क्यों आता है ? इसकी कोई दवा ही नहीं है क्या ? इस अंतिम प्रश्न के साथ ही 'दवा अवश्य है, डाक्टर आये तो तुरंत ठीक कर देगा।' हमें जल्दी ही झोपड़ी खड़ी कर गांव छोड़ देना चाहिए।" यह तय कर लिया गया।

करीब ग्यारह बजे के समय महादेवय्यजी की गाड़ी लौटी। डाक्टर साथ नहीं था। "कहते हैं उस तरफ भी चूहे गिर रहे हैं, डाक्टर वहां इनाकुलेशन दे रहे हैं। उन्होंने कहा कि अब आ नहीं सकते। रोगी को ही ले आने के लिए कहा है।"

"ऐसे बुखार में कैसे ले जायेंगे, अय्याजी ?"

"गाड़ी में छत तो है। कोमल घास बिछाकर उस पर बिस्तर डालकर धीरे से लिटा ले जायेंगे और किया क्या जा सकता है ?"

नंजम्मा ने देरी नहीं की। गाड़ीवान ने घास लाकर बिछाया। नंजम्मा ने उस पर बिस्तर बिछाया। फिर एक बार मांडी गरम करके दोनों को पिलायी। गाड़ीवान और महादेवय्यजी दोनों ने मिलकर एक-एक को उठा और गाड़ी में लिटाकर कंबल ओढ़ा दिया। साथ में जाना चाहिए या नहीं, दो मिनट सोचने के बाद चेन्निगराय अंततः उनके साथ चले। नंजम्मा विश्व को मास्टर के घर पर रहने का कहकर गाड़ी के आगे दोनों बीमार बच्चों के सिरहाने बैठ गयी। महादेवय्यजी और चेन्निगराय पैदल गाड़ी के पीछे-पीछे चलने लगे।

हिलते हुए, ऊबड़-खाबड़ रास्ते में उठ-गिरकर कव्बळ्ळी टेकड़ी उतरकर, गौड़ कोप्पल का चक्कर काटकर, थूहर गली से निकलकर गाड़ी कंबनकेरे पहुंची तो दोपहर का एक बज गया था। इतने में डाक्टर घर जा चुके थे। गाड़ी को अस्पताल के सामने खड़ी करके, बच्चों पर नजर रखने के लिए चेन्निगराय से कहकर नंजम्मा महादेवय्यजी के साथ डाक्टर के घर गयी। वे खाने के बाद आराम कर रहे थे। पहले कुछ नाराज हुए, लेकिन फिर चाबी लेकर अस्पताल आ गये। गाड़ी में ही रोगी की जांच की। "रोग इतना बढ़ने तक चुप क्यों रहे ?"

"हमें पता ही नहीं लगा सर, गांठें कल रात को दिखायी पड़ीं। हम समझ रहे थे कि शीत-ज्वर है।"

"अब इनाकुलेशन नहीं देना चाहिए। दवा देता हूं, ले जाइए। बोतल लाये हैं ?"

"नहीं जी, हमें कुछ नहीं मालूम था !"

"अस्पताल में आने पर बोतल न लाये तो क्या करोगे ?" फिर अस्पताल खोलकर एक खाली बोतल में दवा भरकर बोले—"दोनों को तीन-तीन बार पिलाइए। आज और कल दो दिन के लिए है। परसों फिर आइए।"

फिर वे कुछ नहीं बोले। इनकी समझ में भी नहीं आया कि क्या पूछें। बस, गाड़ी में सवार हो गांव की ओर चल पड़े। वही ऊबड़-खाबड़ मार्ग पार करते हुए गांव पहुंचे तो शाम के साढ़े चार बज रहे थे। घर आकर देखा तो विश्व मास्टर के घर गया ही नहीं था। द्वार खुले रखकर घर में ही चटाई बिछाकर लेट गया था। सुबह मां ने जो रोटी दी थी, उसके अलावा पेट में और कुछ न था। उसका

शरीर भी टूटा जा रहा था। कुछ हद तक बुखार भी चढ़ रहा था। आंख, चेहरे को देखकर ही नंजम्मा दौड़ी आयी और माथा छूकर जांचने लगी। उस पर भी बीमारी का असर होने लगा था। वह बैठते ही बेटे के चेहरे को अपनी छाती से लगाकर जोर से रोने लगी। "अय्याजी, यह विनाशकारी माता मेरे सब बच्चों को छीनने आयी है। यहां देखिए, विश्व को भी बुखार आया है।"

पार्वती और रामण्णा दोनों गाड़ी में ही थे। आते-जाते कच्चे रास्ते के दस मील के प्रवास से थककर आधा होश खो चुके थे। दोनों ने उन्हें भीतर सुलाया। अब महादेवय्यजी बोले—"बहन, तुम इन दोनों को देखो। ये बैल थक गये हैं, मैं दूसरी गाड़ी से विश्व को लेकर कंबनकेरे जाता हूं। इसे अब तक गांठ नहीं निकली है, इसलिए तुरंत जाना चाहिए।"

और कोई सलाह देने की सूझ नंजम्मा में नहीं थी। महादेवय्यजी मंदिर गये और अपने संदूक से सारे पैसे निकाले। आकर नंजम्मा के हाथ में दस रुपये दिये और शेष लगभग बीस रुपये अपनी जेब में रखे। इतने में घर जाकर मड्डुए का लोंदा खाकर गाड़ीवान दूसरे बैल-जोड़ी ले आया। इस गाड़ी में दूसरा बिस्तर बिछाया गया। उस पर विश्व को लिटाकर महादेवय्यजी गाड़ी के साथ चले।

उनके कंबनकेरे पहुंचते-पहुंचते रात का अंधेरा हो गया था। वे सीधे डाक्टर के घर पर ही गाड़ी ले गये। भीतर जाकर पूछा तो डाक्टर बाहर आकर बोले—"प्लेग के रोगी को इस तरह गांव के अंदर क्यों लाये?"

"आप अस्पताल में नहीं थे, सर!"

"मुझे दिन-रात वहीं रहना पड़ेगा क्या? अरे करिया, देख अस्पताल जाकर दरवाजा खोलकर टेबल पर जो बोतल है, उसमें से दायीं ओर से दूसरी रखी बोतल से इन्हें तीन औंस दे दो।" नौकर से कहकर भीतर चले गये।

इनके साथ अस्पताल तक आये करिया के मन में महादेवय्यजी के गेरुआ वस्त्र देखकर श्रद्धा-भक्ति जाग उठी। वह बोला—"अय्याजी, इस दवा से कुछ नहीं होगा। तिपटूर में हेमादीसिरप मिलता है। तीन रुपये की एक बोतल। वेंकटाचल शेट्टीजी की दुकान पर मिलेगा। दुकान बाजार के रास्ते के मकानों के पीछे की ओर है। इस लड़के को पिलायें तो गांठ अभी बढ़ी नहीं है, हालत सुधर जायेगी।"

"डाक्टर ने वैसा कहा न, भाई?"

"वे तो कहते ही हैं। मेरे कहे मुताबिक आप कीजिए। चाहें तो यह पानी भी दे देता हूं। इससे कोई लाभ नहीं होगा।"

महादेवय्यजी ने तुरंत तिपटूर जाने का निश्चय किया। गाड़ीवान कुछ हिचकिचाया। "ए, आदमी की जान जाते समय पीछे नहीं हटना चाहिए। तेरे घर में भी बाल-बच्चे हैं। याद रख।" महादेवय्यजी ने कहा तो वह भय, औदार्य और सभ्यता के कारण मान गया। कंबनकेरे से तिपटूर जाने के लिए सीधा रास्ता था। दस-ग्यारह मील का फासला था यह सोचकर कि लड़के को भूख लगेगी, महादेवय्यजी ने एक पूड़ा बिस्किट खरीद कर रख लिया। गाड़ी तैयार करवाकर वह तुरंत रवाना हुए।

मध्य रात्रि बीतते-बीतते गाड़ी तिपटूर पहुंची। वेंकटाचल शेट्टी की दुकान महादेवय्यजी भी जानते थे। इस समय दुकान बंद होगी, यह जानते हुए भी वह दुकान पर पहुंचे। वे जानते थे कि शेट्टी का घर और दुकान एक ही मकान में हैं। दरवाजा खटखटाया। शेट्टीजी बाहर आये। इनकी बात सुनकर वे बोले—"हेमादीसिरप आयुर्वेद की एकमात्र दवा है। हम सीधे मद्रास की वेंकटाचार्लु कंपनी से मंगवाते हैं। गांठ उभरने से पहले ही पिलायी जाये तो रोगी अच्छा हो जाता है। बढ़ जाने पर कह नहीं सकते। घट भी सकता है। आपको कितनी बोतल चाहिए?"

"जो एक बार बीमार पड़े, उसे कितनी पिलानी चाहिए?"

"चार चम्मच के हिसाब से दिन में चार बार। तीन दिन एक बोतल चलती है। तीन रुपये की एक बोतल है।"

महादेवय्यजी के पास बीस रुपये थे। अट्ठारह रुपये लेकर छह बोतल देने के बाद शेट्टीजी बोले—"बच्चे को अभी चार चम्मच पिला दीजिए। यह शहद-सा मीठा है। अब इसे प्लेगग्रस्त गांव में न ले जायें। जिस घर में प्लेग का रोगी हो, वहां भी न ले जायें। कहीं गांव के बाहर ही रखना चाहिए।"

इतना कहकर शेट्टीजी अंदर चले गये और दरवाजा बंद कर लेट गये। गाड़ी तुरंत जोतते, लेकिन बैल थक गये थे। साथ ही महादेवय्यजी और गाड़ीवान भी। इस समय अगर पेटपूजा के लिए कुछ मिल सकता था, तो सिर्फ रेलवे स्टेशन के होटल में ही। बैलगाड़ी जोतकर वहां पहुंचे। एक लोटा लिया और पहले विश्व को दवा पिलायी और फिर काफी। होटल में पकौड़े के अलावा और कुछ खाने के

लिए नहीं था। आठ आने का लेकर महादेवय्यजी और गाड़ीवान ने खाया। फिर अचानक गाड़ीवान कुछ सोचकर बोला—"अय्याजी, हमें भी गांव छोड़ना है और झोपड़ी बांधनी है। बैल थक गये हैं लेकिन कोई चारा नहीं है। धीरे-धीरे चलेंगे।"

"यह ठीक रहेगा।"

फिर गाड़ी जोती। विश्व को बुखार था, लेकिन बेहोश नहीं हुआ था। महादेवय्यजी उसके जांघ के बगल में, कांख में आसपास दबा-दबाकर देखने के बाद पूछते—"दर्द है मुन्ने ?" तो वह 'ना' कह देता। उन्हें यही संतोष था। गांठ दिखायी देने के कारण रोग सिर उठाने से पहले ही मिट गया होगा। इस विश्वास से वे भी गाड़ी के छाजन से पीठ लगाकर आंखें मूंदे-मूंदे ऊंघने लगे। थके बैल धीरे-धीरे चल रहे थे। कंबनकेरे पार करने तक मोटर-मार्ग होने के कारण गाड़ीवान भी छाजन से पीठ लगाकर आंखें मूंदे-मूंदे ही बीच-बीच में हांकता रहा।

सुबह सूर्य निकलने तक वे आधा रास्ता पार कर चुके थे। रास्ते के बगल में ही एक चौपाल के पास गाड़ी रोककर महादेवय्यजी ने विश्व का मुंह धोया। फिर दवा पिलायी। बुखार तो था, लेकिन गांठ कहीं भी दिखाई नहीं पड़ी। उनका ढाढ़स और बढ़ गया। लड़के को खाने के लिए दो बिस्किट देकर वे दोनों चौपाल की चढ़ान की आड़ में गये और लौटकर फिर से गाड़ी जोती। रास्ते में आते-आते उन्हें एक विचार आया। सब के सब गांव छोड़ रहे हैं। विश्व को गांव में ले जाना ही नहीं चाहिए। गांव के बाहर आते ही अपना मंदिर पड़ता है। वहीं गाड़ी ले जाकर इसे लिटा देंगे। गांव में जाकर अपना ही कंबल, चटाई, तकिया ले आऊं तो बस काफी है।

उन्होंने ऐसा ही किया। ग्यारह बजे के समय गाड़ी तालाब के चढ़ान के ऊपर मंदिर के पास पहुंची। विश्व को वहीं उतारकर, दवा की बोतल से ही सीधी दवा पिलायी। फिर अपने लौटने तक गाड़ी वाले को रुकने को कहकर दवा की चार बोतलें लेकर गांव में घुसे।

[2]

गांव का हर घरवाला बांस, बल्लियां, ढोये झोपड़ी बनाने के लिए गांव के बाहर जा रहा था। झोपड़ी तैयार होने से पहले ही कई लोग घर के बर्तन, अनाज सिर

पर रखे गांव छोड़ रहे थे। महादेवय्यजी के लौटने तक पार्वती और रामण्णा प्राय: बेहोशी में ही थे। गांठ के दर्द से पार्वती बार-बार 'हाय मां' क्षीण स्वरों में कराह रही थी। महादेवय्यजी को अकेले लौटे देखकर नंजम्मा घबरा गयी। उसकी घबराहट देखकर वे बोले, "घबराओ मत बहन, तिपटूर गाड़ी भगायी थी। विश्व को बुखार है। गांठ नहीं निकली है। अच्छी दवा लाया हूं वहां से। चढ़ान वाले मंदिर में विश्व को सुला दिया है। वहां कहा था कि प्लेग के गांव में नहीं ले जाना चाहिए। यह दवा लेकर इन दोनों को रोज चार-चार बार पिलाओ।"

बोतल खोलकर और दवा गेंडुरी में उंड़ेलकर उसने दोनों के मुंह में डाली। लोटे से पीने की शक्ति उनमें नहीं थी। "केवल यही एक दवा है, शिव बचाना चाहेगा तो इसी से बचा देगा।" कहने के बाद महादेवय्यजी बोले—"जल्दी ही गांव छोड़ देना चाहिए। आप लोगों ने अभी तक कुछ नहीं किया?"

"मैं घर पर ही हूं। इस दौड़धूप में हमें देखने कौन आता?"

"चिन्नय्या कहां है?"

"मालूम नहीं। सुबह आठ बजे के गये हैं। अभी तक लौटे ही नहीं।"

"मैं अपने मंदिर में जाकर कंबल-वंबल ले जाकर रख आता हूं। तुम विश्व की चिंता मत करना! कारिंदा-वारिंदा को बुलाकर तुम लोगों के लिए झोपड़ी बनाने को कह देता हूं।" उनके पास दवा की जो बोतलें थीं, वे उन्होंने नंजम्मा को दे दीं। फिर विश्व के लिए मांडी बनाने के लिए लगभग आधा सेर चावल लेकर चल दिये। पार्वती और रामण्णा के बचने के बारे में नंजम्मा का विश्वास उठ गया था। बच गये तो भगवान की ही दया होगी! दोनों के दोनों जांघों की जोड़ों में, कांखों में गांठें उभर आयी थीं। बुखार तो चढ़ता ही रहता। पार्वती बार-बार आंखें खोलकर देखती लेकिन उसकी दृष्टि इस संसार में नहीं थी। सूजा हुआ चेहरा देखने वाले को भयभीत करा देता था। रामण्णा बिना अधिक कराहे चुपचाप लेटा था। उसकी गांठें भी शकरकंद की तरह बढ़ गयीं। दोनों में से किसी ने भी सुबह से कुछ बात नहीं की थी। 'महादेवय्यजी द्वारा लायी हुई दवा सचमुच अच्छी होगी! तिपटूर से लाये हैं। न जाने कंबनकेरे के डाक्टर ने क्या कहा? उन्होंने ही कहा है कि विश्व के बारे में चिंता न करें! कम-से-कम एक बार उसे देख आना चाहिए! लेकिन मैं जाऊं तो यहां इन बच्चों के पास कौन है?' नंजम्मा

सोच रही थी।

उसी समय मास्टरजी की पत्नी आयीं। उनके हाथ में एक बर्तन था। मास्टर जी तो सुबह आकर रोगियों को देखकर गये थे। वह बोलीं—"देखिए, शास्त्र कहता है कि किसी घर में बनी पूरी रसोई दूसरे घर में न ले जाओ, इसलिए केवल अन्न-सांभर मिलाकर लायी हूं। यह रख जाती हूं। हमारे यजमान झोपड़ी बांध रहे हैं। बच्चे अब कैसे हैं ?"

"कोई फर्क नहीं पड़ा। सुबह से बोले ही नहीं हैं।"

"अपने कारिंदे या अन्य चार आदमियों को भेज दीजिए। यजमानजी आप लोगों के लिए भी एक छोटी-सी झोपड़ी तैयार करा देंगे। आप बच्चों सहित आ जाइएगा वहां। सामान वहां पहुंचा देंगे। पटवारी जी कहां गये ?"

"कौन जाने कहां गये हैं! "

वह जल्दबाजी में निकल गयी। झोपड़ी के लिए बांस-बल्लियां नंजम्मा के घर की छत पर रखी थीं। केवल नारियल के पत्तों की जरूरत थी। गांव भर में सबको उनकी जरूरत होने के कारण उनका अभाव हो गया था। 'एक गाड़ी भेज दें तो कुरुबरहळ्ळी से भरकर ला सकते हैं। क्या मालूम उस गांव को भी लोग छोड़ रहे हों। यहां तो इस कार्य को अगुवा बनकर कराने वाला कौन है ?' नंजम्मा उठी और फिर से दोनों को गेंडुरी में हेमादीसिरप पिलायी। "मांडी चाहिए ?" पूछा तो कोई भी समझ न सका। 'दवा अभी-अभी पेट में पहुंची है। आधा घंटा बीत जाने दो।' ऐसा सोचकर वह चुप रही। इतने में चेन्निगराय घर आये। उनके सिर पर धोयी हुई दो धोतियां और एक कमीज थी। पहना हुआ टावेल आधा भीगा था। माथे की विभूति देखकर ही पता चल गया कि वे बाड़ी के कुंए पर या तालाब पर कपड़े धोने और स्नान करने गये थे। माथे की विभूति बता रही थी कि वे संध्यावंदन कर चुके हैं। संध्यावंदन के लिए बैठते हैं तो 'ऊं तत्सतततततत ऊं तत्स-वितततततत' कुछ निगलकर कहते हुए-से एक सौ आठ या एक हजार आठ बार गायत्री मंत्र जपे बिना नहीं उठते। आज का समय देखकर लगता है कि एक हजार आठ बार गायत्री जपा होगा।

"घर में बच्चे मरे-से-पड़े हैं। सारा गांव खाली हो रहा है। आपको आज ही कपड़े धोने की क्या जरूरत थी ?"

"मैली धोती कितने दिन पहना करूं ? इन्हें तूने दो-चार दिन पहले धोया

था। तू भी उसी साड़ी को पहन रही है! क्या तूने ब्राह्मण-कुल में जन्म नहीं लिया ?"

यह सोचकर वह चुप रही कि उनसे बहस करके कोई लाभ नहीं। यजमान के रसोईघर में प्रविष्ट होते ही मास्टरजी के घर के बर्तन पर नजर पड़ी। ढक्कन हटाकर, पास रखे एक अल्यूमिनियम की थाली में परोस कर, पंचपात्र में पानी डालकर दायें हाथ से जल डालकर आचमन करके, 'चित्राय नमः चित्र गुप्ताय नमः, यमाय नमः यमधर्माय नमः'—कहकर पांच बार चित्रावती रखकर विधिवत् प्रारंभ करके उन्होंने भोजन किया। चेन्निगराय की भूख को मास्टरजी की पत्नी क्या जाने ? उनका लाया हुआ अन्न इन्हें पूरा नहीं पड़ा। भोजन समाप्त कर आचमन करके इनके बाहर आने तक महादेवय्यजी फिर आ गये। पार्वती थोड़ा ऊपर-नीचे श्वास ले रही थी। और कुछ न सूझने के कारण नंजम्मा बेटी की बांह पकड़े बैठी थीं। महादेवय्यजी बोले—"चिन्नय्या, आप सीधे जाकर चढ़ान वाले मंदिर में रहिए। बीच के कमरे में विश्व सोया है। गांव के बाहर के नंजा का बेटा बकरी चरा रहा था, उसे वहीं रहने को कहकर आया हूं। आप जाकर वहां केवल बैठे रहिए कुछ नहीं करना है।"

"मैं अकेला रहने में उकता नहीं जाऊंगा ?"

महादेवय्यजी को गुस्सा आया—"आप आदमी हैं या जानवर ? जैसा कहते हैं वैसा सुनिये।" महादेवय्यजी कभी किसी पर क्रोधित होने वाले व्यक्ति नहीं थे। उनकी बात सुनकर पटवारी महोदय स्तब्ध रह गये। "अच्छा, जाता हूं। थोड़ी तंबाकू हो तो दे दीजिए। खाना खाने के बाद तंबाकू न खाने से 'कुछ-कुछ' होता है।"

"आप खाना भी खा चुके ? खाना किसने पकाया था ?"

"इसने पकाया होगा !"

"मास्टरजी की पत्नी थोड़ा लाकर रख गयी थीं।" नंजम्मा बोली।

"मैं अपना सारा सामान वहीं रख आया हूं। मेरी तांबूल की थैली भी वहीं है। जितना चाहें लेकर खा लीजिए और थूकिये।" महादेवय्यजी के कहने के बाद, पटवारीजी ने बरामदे में खूंटे पर सूख रही अपनी धोती, ताकि वह सूख जाये, उठाकर सिर पर डाली और चले पड़े।

"बहन, तुम्हारी झोपड़ी का क्या हुआ ?"

"झोपड़ी जाये जहन्नुम में। यह इस तरह सांस ले रही है, आकर देखिए तो!"

महादेवय्यजी पास गये और पार्वती की नाक के पास हाथ रखकर देखा। सांस नियमित गति से नहीं चल रही थी। "मांडी कब दी थी?"

"पीती ही नहीं।"

"खाली पेट होने से ऐसा हुआ होगा! पहले मांडी बनाकर पिलाओ। इतने में मैं तुम्हारे नारियल के पत्तों के लिए कुरुबरहळ्ळी कहला भेजता हूं।" कहकर वे बाहर आये। मास्टर का एक बेटा था—विश्व से दो साल बड़ा, लेकिन बड़ा ही चतुर। महादेवय्यजी मास्टर के घर गये और उससे बोले—"अकेले कुरुबरहळ्ळी जाकर आओगे बेटे?"

"हां, दौड़कर जाऊंगा और वैसे ही आऊंगा।"

"गुंडेगौड़जी के घर जाकर कहना कि पटवारीजी के घर में तीनों बच्चों को प्लेग हो गया है। छत डालने के लिए सिर्फ नारियल के पत्ते नहीं हैं, दूसरे सारे सामान हैं। एक गाड़ी-भर नारियल के पत्ते तुरंत भिजवा दें और दो नौकर भी चाहिए। कह सकोगे न कि नंजम्माजी बैठी रो रहीं हैं।"

"जरूर, सब याद करके कहूंगा।"

मास्टरजी ने भी जल्दी जाने के लिए कहा। महादेवय्यजी नंजम्मा के घर आये। भीतर चूल्हे पर मांडी उबल रही थी। महादेवय्यजी को पूरा बिश्वास था कि गुंडेगौड़जी तुरंत पत्ते और आदमी भेज देंगे। तब तक बांस बाहर निकालकर रख देना ठीक रहेगा। आज रात तक अगर झोपड़ी बनकर तैयार हो जाये तो कल सुबह तक यह घर छोड़ा जा सकता है। गांव छोड़े बिना बच्चों की बीमारी नहीं जायेगी—यह सोचकर वे ही छत पर चढ़ गये। बांस से ही निर्मित इस छत के एक कोने में रखे बांसों पर धूल जमी पड़ी थी। मांडी लेकर नंजम्मा आयी तो उससे बोले— "बच्चों के सिर पर कपड़ा डाल दो बहन, धूल गिरेगी। जरा इन बांसों को नीचे डाल देता हूं और धीरे से ताकि अधिक आवाज न हो, एक-एक कर नीचे डाल दिये। तत्पश्चात सीढ़ी से उतरे, जल्दी-जल्दी उन्हें बाहर निकालने तक नंजम्मा ने धूल गिरने से बचाने के लिए मांडी ठंडी होने के लिए अंदर कमरे में रख दी। अब भीतर जाकर पतीली में रखी मांडी लोटे में उंड़ेल, गेंडुरी लेकर आयीं। पार्वती के सिर का कपड़ा हटाया तो सांस धीरे-धीरे चल रही थी। गेंडुरी का अग्रभाग उसके मुंह के अंदर था, फिर भी वह मांडी निगल न सकी। "अय्या-

जी, बांस वहीं रहने दीजिए" नंजम्मा की पुकार सुन कर वे पास आये। पार्वती का मुंह निहारा, तो संदेह हुआ। "देखिए, गांठें कैसी हैं, मैं हाथ धो लेता हूं।" कहकर धूल-भरे हाथ धोने वे स्नानगृह में चले गये।

नंजम्मा ने हाथ डालकर देखा—दायें जांघ की गांठ फूट गयी है और मवाद बह गया है। "अय्याजी, दायीं ओर की गांठ फूट गयी है। आइए, देखिए।"

उन्होंने भी कपड़ा हटाकर देखा कि सूजी हुई गांठ फूट गयी है और सफेद मवाद बह रहा है। उसके आसपास रक्तवर्ण में द्रव फैल रहा है। फोड़ा फटने पर जिस तरह मवाद-रक्त मिलकर बहता है, वैसा ही दृश्य था। साड़ी सरकाकर उन्होंने दूसरी गांठ देखी। उसके भी फूटने के लक्षण दिखायी पड़े। वे समझ गये। उन्होंने साड़ी ठीक करके छाती तक ओढ़ा दी। "क्या है अय्याजी?" भ्रमित-सी नंजम्मा ने पूछा।

"शिव की क्या इच्छा है, यही देखना है बहन!"

वह भी स्थिति समझ गयी। पार्वती की सांस कुछ तेज चलने लगी। नंजम्मा ने इससे पहले कभी अपनी आंखों के सामने मौत नहीं देखी थी। जो सांस अत्यंत क्षीण गति से चल रही थी, वह तेज गति से चलने लगी। इसका अर्थ वह समझ न सकी। आंख का तेज घटने की ओर उसका ध्यान ही नहीं गया। महादेवय्यजी सब जानते थे। लेकिन समझ नहीं पा रहे थे क्या कहना चाहिए, क्या नहीं; वे चुपचाप बैठे रहे। कुछ भी कहने में असमर्थ रहे। अंत में एक निष्कर्ष पर पहुंचकर बोले—"सुना है कि तुम्हारे पिताजी ने काशी से लाकर गंगाजल तुम्हें दिया है। घर में है न?"

"क्यों?" अब नंजम्मा समझने लगी।

"अब घबराना नहीं चाहिए। बचायेगी तो गंगामैया ही बचायेगी। अंदर से ले आओ बहन।"

नंजम्मा दौड़कर गंगाजल ले आयी। चूड़ी से उसके मोम को कुरेदकर ढक्कन के एक कोने में छेद किया। "बेटी का सिर अपनी गोद में रख लो बहन! तुम ठीक तरह से बैठो, मैं धीरे से रखता हूं।" उन्होंने पार्वती का सिर धीरे से उठाकर नंजम्मा की जांघ पर रख दिया। पास ही गेंडुरी में मांडी थी, उसे हाथ से पोंछकर उसमें गंगाजल उंड़ेलकर उसके हाथ में देकर बोले—"धीरे से मुंह में ड़ाल दो बहन। ठहरो, मैं होंठ पकड़कर खोलता हूं।"

नंजम्मा का हाथ कांप रहा था। हाथ में जो गेंडुरी थी, उसका गंगाजल छलक कर गिर रहा था। महादेवय्यजी ने उसका हाथ पकड़कर गेंडुरी के अग्रभाग को दांतों के अंदर डालकर गंगाजल पिलवाया। पार्वती की तेज सांस अब शांत होती जा रही थी। आंखें अधखुली होने पर भी अपने ऊपर झुकी मां का चेहरा उसे दिखायी नहीं दे रहा था। उसे इस बात का ज्ञान नहीं था कि उसका सर मां की गोद में है। धीमी गति से चल रही सांस और भी धीमी हो गयी। नितांत धीमी गति में आकर एक बार अंतिम रूप से बाहर आयी। फिर भीतर नहीं गयी। अधखुला मुंह, जो भीतर की सारी चीजों को एक बार बाहर डाल देने के लिए खुला था, फिर बंद नहीं हुआ।

"अ···य्या···जी !" चिल्लाकर रुकी सांस के साथ ही नंजम्मा ने बेटी की छाती पर सिर रख दिया। महादेवय्यजी जानते थे कि अब सांत्वना देना बेकार है। अगले काम का स्मरण कर वे चुपचाप उठे और मास्टरजी के घर दौड़े गये। मास्टरजी अपने सामान की अंतिम किश्त गाड़ी में लाद रहे थे। पार्वती के निधन का समाचार सुनकर उन्हें आघात लगा।

"अब समय नहीं गंवाना है। शाम हो गयी है। लकड़ी जमानी है। चलिए, आप स्वजाति वालों से मिलकर पहले यह मिट्टी ठिकाने लगवाएं।"

मास्टरजी दौड़े हुए आये। पीछे से उनकी पत्नी भी आ पहुंची। नंजम्मा अब भी बेटी के सीने पर सिर रखे सिसक रही थी। महादेवय्यजी पास आकर बोले—"बहन, अब यह मुर्दा है, इसे छोड़ दो। अब रामण्णा को देखो। उसे मांडी पिलाये बिना बैठी हो। उठो, उस तरफ मुड़ो।"

"अय्याजी, पार्वती !"

"पार्वती शिव के घर चली गयी। अब रामण्णा को देखो।"—कहकर उसका सिर उठाकर उन्होंने नीचे रखा। मास्टरजी ने उस विचार से कि अब देर नहीं करनी चाहिए, शव के हाथ-पैर मोड़ दिये। एकाएक नंजम्मा ने रोना छोड़ दिया। उसके मुंह से निकलती बात भी रुक गयी। खड़ी होकर, रसोईघर में जाकर मांडी को गरम करके गेंडुरी में डालकर लायी। रामण्णा का सर उठाकर अपनी जांघ पर रखा। बेटा अब कितने होश में है, वह नहीं जानती थी। पिलायी हुई मांडी का पानी भीतर गया, इससे ही उसे धीरज मिला। उसी गेंडुरी में हेमादीसिरप डालकर पिलाकर उसे कंबल ओढ़ा दिया। कांख और जांघ पर हाथ लगाकर देखा

तो गांठें फूटी नहीं थीं। गांठ के फूटने पर क्या होता है, न फूटने पर क्या होता है, क्या उसके फूटने पर रोगी मर जाता है और न फूटने पर बचता है— इसकी उसे कोई जानकारी नहीं थी। यह जानकारी वहां किसी को भी नहीं थी। लेकिन गांठ के फूटने के बाद पार्वती मर गयी थी। रामण्णा की गांठें फूटी नहीं हैं। उसकी सांस भी अनियमित नहीं है। इससे उसके मन को तसल्ली मिली। अब हाथ न आने वाले प्राण के निकले मृत बेटी के शरीर को छोड़कर, जीवित बेटे का सर पकड़े वह मूकवत् बैठी रही।

अय्याजी ने छत पर चढ़कर घर के सामने बांस, बल्लियां निकाल कर डाली थीं, उन्हीं में से अर्थी बन सकती थी। मास्टर ने जाकर दोनों पुरोहितों को खबर दी। गांव के अन्य तीन ब्राह्मणों को भी खबर मिली। सब गांव छोड़ने की गड़बड़ी में थे, लेकिन मुर्दे को शीघ्र नहीं जलाया गया तो रात हो जायेगी। फिर सुबह तक इंतजार करना पड़ेगा। जातिवाले आ गये। अब चेन्निगराय को आना था। विश्व अकेला मंदिर में रहेगा। उसके पास किसे बिठाया जाये? महादेवय्यजी ने यहीं रहने का तय किया। जो भी मिले, उसके हाथों विश्व को सौंप देना चाहिए, यह सोचकर वे मंदिर की तरफ गये तो उन्हें ऐसा कोई नजर ही नहीं आया जिसके भरोसे विश्व को छोड़ा जाये। गांव के बाहर अपनी दुकान के दरवाजे पर नरसी बैठी थी। उसने महादेवय्यजी से पूछा—"कहते हैं पटवारीजी की पार्वती गुजर गयी, क्या यह सच है?"

महादेवय्यजी ने उससे मदद का आग्रह किया। सब कुछ बताकर बोले—"तू तो गांव नहीं छोड़ेगी। दुकान बंद करके आ जा। मेरे लौटने तक बच्चे को देख।"

नरसी दरवाजे में ताला लगाकर उनके पीछे चल पड़ी। चेन्निगराय अय्याजी की थैली से चूने की डिबिया निकालकर छठी बार पान पर चूना लगाते हुए बैठे थे। महादेवय्यजी मंदिर के गर्भगृह में जाकर, भगवान का दीया लाकर रखकर नरसी से बोले—"अंधेरा हो जाने पर यह दीया जला लेना। यह बोतल है न, इससे तीन-तीन घंटे में एक बार इतनी-इतनी दवा पिला देना। बच्चा भूख लगने की कहे तो उसमें चावल-कण हैं, कंजी बनाकर पिला देना।"

"मैं सब कर दूंगी, आप जाइए।"

विश्व निःशब्द सोया था। महादेवय्यजी चेन्निगराय से बोले—"पार्वती चली गयी। आप चलिए। आगे का काम करना है।"

"क्यों चली गयी जी ?"

"वहीं पूछना, चलिए।" उनका हाथ पकड़कर महादेवय्यजी ले चले।

उनके आने तक अर्थी तैयार हो गयी थी। अण्णाजोइसजी अगुआ बनकर सब करा रहे थे। अय्याशास्त्रीजी शव से पहले ही भय खाते रहे हैं। वे रास्ते पर खड़े हो बातें कर रहे थे। नंजम्मा लकवा मारी-सी रामण्णा के चेहरे को निहारती ऐसी बैठी थी मानो उसकी बेटी मरी ही नहीं, या इस घर में चल रही शव संस्कार की तैयारी से उसका कोई संबंध ही नहीं।

"सच देखा जाये तो इसका उत्तराधिकारी इसका पति है। उन्हें सूचना दिये बिना संस्कार करना क्या ठीक रहेगा ?" अण्णाजोइसजी ने प्रश्न उठाया।

"अब खबर कैसे पहुंचा सकते हैं ? वह भी प्लेग का शव है। शव रोके रखें तो सारा शरीर काला हो जायेगा। यह जिम्मेदारी मेरी है। मैंने ही बीच में पड़कर शादी करायी थी। उन्हें बाद में चिट्ठी लिख दूंगा। अब देरी मत कीजिए।" मास्टरजी ने उत्तर दिया।

मास्टरजी की पत्नी ने पार्वती के माथे पर हल्दी-कुंकुम लगाया। घर में जो चोली का कपड़ा था, उसे भी रख दिया। कल महादेवय्यजी ने जो रुपये दिये थे, उसमें से बचे पांच रुपये नंजम्मा ने मास्टर के हाथ में रख दिये। शव बांधकर कंधे पर रखकर ले जाते समय मास्टरजी की पत्नी की आंखों से आंसू बह रहे थे। लेकिन नंजम्मा नहीं रोयी। "यह कमबख्त क्यों मरी ?" कहकर चेन्निगराय आंखें पोंछते रहे।

इनके पहुंचने तक चढ़ान के पिछवाड़े झाड़ी में लकड़ी इकट्ठी कर रखी थी। पार्वती विवाहित थी, इसलिए शास्त्रपूर्वक दाह-संस्कार करने चाहिए थे। अण्णा-जोइसजी पर-अपर दोनों कर्मों के जानकार थे। अय्याशास्त्री शव के पीछे-पीछे तो गये लेकिन चढ़ान उतरने से पहले रुक गये। वे दाह के समय ऊपर उठती अग्नि-ज्वाला देखने के बाद भी वहीं रहे। शव वाहकों के श्मशान के कुएं पर स्नान कर लौटने तक वहां इंतजार करते रहे। अंत में सब साथ लौट रहे थे कि उन्हें रोक-कर उन्होंने पूछा—"कपाल जल्दी फटा या नहीं ?"

"हुं !"

"चिन्नय्या, शव वाहकों को कितनी दक्षिणा दी ?"

"आठ-आठ आने।"

"देखो, मुझे भी साथ चलना चाहिए था, लेकिन फिर भी इतनी दूर आया। वहां जाता तो अब शाम को ठंडे पानी में डुबकी लगानी पड़ती। मेरा शरीर यह सह नहीं पाता, इसलिए नहीं गया वहां। मेरे हिस्से की दक्षिणा लाओ।"

यह सुनकर मास्टरजी का सारा शरीर जल उठा। अण्णाजोइसजी तुरंत बोले—"दे दो, दे दो।" चेन्निगराय ने अपनी कमर में ठूंसे हुए पैसों में से आठ आने का सिक्का निकालकर वृद्ध शास्त्रीजी को दिया तो उन्हें बड़ी खुशी हुई।

"क्रिया-कर्म तो इसी गांव में कराओगे न ?" उन्होंने पूछा।

"क्रिया-कर्म तो पतिगृह का काम है न जी, ये कैसे करायेंगे ?" मास्टरजी ने उत्तर दिया तो "अच्छा-अच्छा, भूल गया था" कहकर इन पांच लोगों के साथ वे भी लौट गये।

[3]

पार्वती का शव ले जाने के बाद घर में नंजम्मा के साथ सिर्फ महादेवय्यजी रह गये। मास्टर के घर का लगभग सारा सामान गांव के बाहर झोपड़ी में पहुंच गया था। जो सामान घर में रह गया था, उसे देख आने के लिए मास्टरजी की पत्नी गयी। इसके जाने के पांच मिनट बाद ही कुरुबरहळ्ळी गया हुआ उनका बेटा लौटा। "उन्होंने कहा है कि कल सुबह सूर्योदय के तुरंत बाद दो गाड़ियां भरकर नारियल के पत्ते भिजवा देंगे; देवी के मंदिर के पास इंतजार करते रहें; और उन्हें यह भी बतायें कि खंभे कहां डालें।" यह बताकर वह चला गया।

रामण्णा की सांस क्षीण होती जा रही थी। "फिर दवा दी है बहन ?" महादेवय्यजी ने पूछा। पार्वती के मरने के तुरंत बाद दो चम्मच पिलायी थी। फिर भी गेंडुरी लेकर नंजम्मा पिलाने लगी तो उसने मुंह खोलकर चम्मच का मुंह अंदर डाला तो वह भीतर गयी ही नहीं। "अय्याजी, वह दवा पीने से इंकार कर रहा है" वह बोली—"शायद बुखार उतर रहा है, देखिए।"

वे पास आये और माथा छूकर देखा। बुखार उतर रहा था। प्लेग के रोगी का ताप चढ़ना-उतरना सामान्य बात है। लेकिन यह तो पूरा उतरा-सा लग रहा था। पूरी तरह बुखार का उतर जाना रोग से मुक्ति का चिह्न हो सकता है। "बहन, घर में दो बीमार पड़े। एक की आहुति हो गयी। लगता है कि रामण्णा

बच जायगा, बुखार उतर रहा है।" उनकी इस बात से नंजम्मा को ऐसे ही संतोष हुआ जैसे मृत पार्वती पुनर्जीवित हो घर लौट आयी हो। तसल्ली अनुभव कर बोली—"इतना हुआ तो काली मां को नयी साड़ी पहनाकर जुलूस निकलवाऊंगी।"
रोगी के शरीर का ताप क्षण-क्षण घटता जा रहा था। करीब पांच मिनट तक महादेवय्यजी को भी लगा कि यह अच्छा लक्षण है। तत्पश्चात् संदेह से उन्होंने ओढ़नी के भीतर हाथ डालकर उसके पैरों को छूकर देखा तो वे ठंडे हो रहे थे। "थोड़ी-सी राख चाहिए, कहां है?" उन्होंने पूछा।

"रसोईघर के चूल्हे में।"

वे उठे और दौड़कर एक मुट्ठी राख लाकर रामण्णा के दोनों पैरों पर डालकर रगड़ने लगे। पांच मिनट रगड़ने पर भी गर्मी नहीं आयी। वे कारण समझ गये लेकिन बताया नहीं। चादर हटाकर देखा तो जांघों और कांखों की सूजन वैसी ही थी। कोई भी फूटी नहीं थी। फिर से चादर डालकर दाहिने हाथ की नाड़ी पकड़कर देखी तो वह इतनी क्षीण चल रही थी मानो मिलकर भी न मिली हो। उसे भी गंगाजल पिलाना चाहिए—उसकी मां से कहने का साहस उनमें न था। लेकिन जानते हुए भी वैसा ही छोड़ दें, तो बिन पानी मरेगा। जान ही जा रही तो पानी छोड़ने-न-छोड़ने से क्या फर्क पड़ता है? यह सब हमारा भ्रम है!—उनके मन में तर्क उठने पर भी, यह सोचा कि कहीं ऐसा न हो कि बाद में 'मेरे बच्चे को अंतिम बार पानी देने से भी वंचित रखा गया', कहकर मां के रोने की नौबत आ जाये। पास ही रखे गंगाजल का पात्र उठाकर गेंडुरी की दवा फेंकर उसमें गंगाजल भरा। उसे नंजम्मा के हाथ में देकर, स्वयं लड़के के होंठ छुड़ाकर "बहन, इस पर छोड़ दो" कहा तो वह समझ गयी।

"क्या रामण्णा भी जा रहा है अय्याजी?" वह कह ही रही थी कि बोले—"बहन, अब रोना नहीं चाहिए। जैसा मैं कहता हूं वैसा करो।" और केवल नाम भर के लिए गेंडुरी स्पर्श कराकर उन्होंने ही गंगाजल पिलाया। पता नहीं कि कितना अंदर गया, कितना बाहर रहा। बायें हाथ से नाक के पास से पकड़ा और दायें हाथ से नाड़ी पकड़कर अय्याजी रोगी का मुंह निहारते हुए बैठ गये। नंजम्मा लकवा लगी-सी अपने दूसरे बच्चे के मुख पर दृष्टि गड़ाये बैठी थी। यद्यपि दोनों को यह पता न लगा कि अंतिम प्राणवायु कब निकल गयी! महादेवय्यजी की उंगली के स्पर्श से गहरी उतरकर लुप्त होने वाली नाड़ी भी, पुनः ऊपर न आने

वाले पाताल में उतर गयी थी।

अब तो महादेवय्यजी को बोलना ही चाहिए था। जो कुछ है, बताकर शव के हाथ-पैर मोड़ने पड़ेंगे। देर होने पर शव जकड़ जायेगा और अंग मुड़ेंगे नहीं। लेकिन कैसे कहें ? ऐसी बात नहीं कि वह समझ नहीं पायी थी। पार्वती के मरने पर वह जैसी रोयी थी, वैसी अब नहीं रो रही थी। रामण्णा की छाती पर मुंह नहीं रखा। उसका हाथ भी नहीं पकड़े रही। बेटे का सिर तो उसकी जांघ पर ही था।

अब वे पार्वती का दाह-संस्कार कर लौट रहे होंगे। अभी से उन्हें खबर दे देनी चाहिए। फिर लकड़ी इकट्ठी करके भेज देना चाहिए। रात हो चुकी थी। न जाने इस समय शव ले जाकर जलायेंगे या कल तक इंतजार करायेंगे ! खैर जो भी हो हाथ पैर तो मुड़वाना ही चाहिए। वे बोले—"बहन, प्राण शिव के चरणों में पहुंचने के बाद इस घोंसले में क्या है ? हाथ-पैर मोड़ता हूं।"

"आप अपना काम कीजिए अय्याजी"—कहकर मां ने धीरे से बेटे का सिर नीचे सरका दिया और दूर खिसक गयी। अय्याजी ने अगला काम करके कपड़ा ओढ़ा दिया। इतने में बाहर से मास्टरजी और चेन्निगराय आ गये।

"मास्टरजी, रामण्णा भी चल बसा। आगे का काम कीजिए।" वे बोले।

"अरे भगवान !"

"भगवान के पास ही गया है। अब कुछ नहीं कर सकते। पुरोहितों को बुलाइए।"

मास्टरजी अण्णाजोइस की झोपड़ी की तरफ दौड़े उतने में जोइसजी के घरवाले गांव का घर खाली करके सामान झोपड़ी में ले जा चुके थे। चेन्निगराय को कुछ नहीं सूझा। उनकी आंखें भर आयीं। रामण्णा के शव के पास आकर आंसू बहाते हुए वंह उकड़ूं बैठ गये।

मास्टरजी अण्णाजोइसजी के साथ लौटे। महादेवय्यजी ने जोइसजी से पूछा—"महोदय, रात को ही शव निकाला जा सकता है या कल सुबह तक रखना होगा ?"

"रात को कैसे हो सकता है ?"

मास्टरजी बीच में बोले—"महारोग आया था न, अग्नि-ज्वर; तब न रात थी न दिन। जैसे-जैसे शव गिरता था, वैसे-वैसे ले जाकर जला देते थे। सबकी अलग-

अलग लकड़ी जुटाना मुश्किल होने के कारण दो-तीन शवों को एक साथ जलाते थे। जब गांव में महामारी आई हो तब शास्त्र-संबंध एक-सा नहीं देखा जा सकता। अभी कर देंगे।"

"जोइसजी यह मान गये। वे पहले आये हुए शव-वाहकों को ही बुलाने गये। घर के सामने बांसों का ढेर था ही। मास्टरजी अर्थी बनाने लगे। लकड़ी जुटाने के लिए महादेवय्यजी निकल पड़े, लेकिन चेन्निगराय वैसे ही बैठे रहे।

रामण्णा का जनेऊ संस्कार हो चुका था। विवाहिता दीदी के समान ही इसकी शास्त्रानुसार दाहक्रिया होनी चाहिए थी। शववाहक आ गये। कुछ ही देर से लौटकर महादेवय्यजी बोले—"सूरेगौड़ की झोपड़ी पर नारियल की नट्टी आदि बहुत हैं। उसने कहा है कि भरकर ले जाइए, हम तो गांव छोड़ ही रहे हैं—उसने अपनी गाड़ी भी दी है। वह, उसका बेटा और अन्य दो-तीन आदमी मिलकर गाड़ी में भर रहे हैं। गाड़ी सीधे श्मशान की ओर हांकें आप लोग चलिए।"

सब हो गया। अब शव को उठाकर बाहर लाकर अर्थी पर लिटाकर बांधा गया। मुंह में चावल के दाने डाले। अब उठाकर ले चलना बाकी था। महादेवय्याजी को नंजम्मा दिखायी नहीं पड़ी। "नंजम्मा कहां है?" पूछा तो किसी ने जवाब नहीं दिया। इस दौड़धूप में किसी ने उस पर ध्यान नहीं दिया था।

"तालाब, कुएं जल्दी-जल्दी जाकर देखिए।" जोइसजी ने तुरंत सजग किया।

"यहीं कहीं पानी-वानी की तरफ गयी होगी।" मास्टरजी ने अंदाज लगाया।

महादेवय्यजी को कुछ और ही सूझा। "आप यहीं कहीं देख लीजिए। मैं चढ़ान वाले मंदिर जाता हूं और देखकर अभी आता हूं। आखिरी बेटा वहां है। नंजम्मा वहीं गयी होगी!" कहकर लंबे-लंबे डग भरते हुए अपने मंदिर में पहुंचे। द्वार खोला तो उनकी कल्पना ठीक निकली। विश्व कंबल पर सोया था। उसका सिर नरसी की जांघ पर था। नंजम्मा तीन गज दूर एक खंभे के पास बैठ बच्चे को अपलक निहार रही थी। उसकी आंखों में आंसू नहीं थे। दृष्टि लकवा-खायी सी लग रही थी।

नरसी अय्याजी से बोली—"नंजम्मा बहन अंधेरे में अकेली आयी हैं। मैं बच्चे को मांडी पिला रही थी। आकर बच्चे के सिर को अपनी जांघ पर रख लिया। उसके बाद न जाने क्या सूझा, मुझे पास बुलाकर बोली—नरसी, यह मेरा बच्चा नहीं है। मेरा कहूं तो वह निर्दयी भगवान ले जायेगा। तुझे देती हूं। तेरी संतान

भी नहीं है। तू ही देखभाल कर। यहां पास आकर बैठ। इसे अपनी गोद में लिटा ले। इसका और मेरा कोई संबंध नहीं। मैं कहती हूं न, यह मेरा बच्चा नहीं और न मैं इसकी मां। और बच्चे को मेरी जांघ पर लिटाकर अब दूर जा बैठी है।"

"वैसा ही कर नरसी। रामण्णा भी मर गया है। हम आगे के काम के लिए जा रहें हैं। तू दोनों पर नजर रखना। किसी आदमी को भेज दूं ?"

"मैं हूं न, डर किस बात का ! किसी को मत भेजिए।"

"बुखार कैसा है ?" बच्चे के माथे को स्पर्श कर उन्होंने पूछा—"जांघ के बगल में दर्द-वर्द की शिकायत की है बच्चे ने ?"

"अब से थोड़ा समय पहले की बात थी। मैंने जांघ के बगल को छूकर पूछा था तो बताया कि कोई दर्द नहीं है। बुखार तो जोर का है।"

"कुछ भी हो, दो-दो, तीन-तीन घंटों में एक बार दवा पिलाया करो।" उसे कहकर—"नंजम्मा डरो मत। गांठें निकली नहीं है। दवा असर कर रही है।" सांत्वना की बात कहकर वे गांव की ओर चल पड़े।

पौधों-झाड़ियों के बीच औरतें टट्टी करने जाती थीं। वहां मास्टरजी जाकर 'नंजम्माजी, नंजम्माजी' दो-चार बार पुकार कर लौट आये थे। दूसरे वहीं बैठे इस घर की साढ़ेसाती के बारे में बातें कर रहे थे। महादेवय्यजी आते ही बोले—"नंजम्मा मंदिर में है। आप लोग आगे का काम जारी रखिए।" चार लोगों ने अर्थी उठायी। साथ में चेन्निगराय चले। वह अभी तक बचे हुए हेमादीसिरप की बोतल, हाथ लगा एक बिस्तर, दो कंबल लेकर दरवाजा बंद करके और ताला लगाकर अपने मंदिर की ओर चल पड़े। अब तक शव श्मशान में उतार भी दिया होगा। पुराने शव की चिता की आग पेड़ों के बीच में अब भी दिखायी दे रही थी। चढ़ान से नीचे उतरती जगह में कमर झुकाये अकेले खड़े वृद्ध पुरोहित अय्याशास्त्रीजी उस अंधेरे में भी दिखायी दिये।

"यह क्या पुरोहितजी, अकेले इस तरह यहां खड़े हैं ?" अय्याजी ने पूछा।

"वे शव जलाने गये हैं न, उनके इंतजार में खड़ा हूं।"

महादेवय्यजी समझ नहीं पाये कि उनकी प्रतीक्षा में क्यों खड़े हैं। उन्हें पूछने की रुचि भी नहीं थी। बिस्तर, कंबल लिये वे जल्दी-जल्दी मंदिर की ओर लंबे लंबे डग भरने लगे।

सुबह लगभग आठ बजे कुरुबरहळ्ळी से दो गाड़ी नारियल के पत्तों के साथ दो आदमी भी आ गये थे। वे इस गांव के अंदर नहीं आये। रामसंद्र का कारिंदा पटवारी के घर के सामने जो बांस थे, उन्हें गाड़ी में भर कर ले आया। देवी मंदिर के पीछे पेड़ों की झुरमुट के पास वाले मैदान में दोपहर तक एक झोपड़ी तैयार हो गयी। मास्टरजी ने चढ़ान पर मंदिर में आकर और घर की चाबी ले जाकर पात्र-बर्तन, अनाज, कपड़े-लत्ते आदि जो भी सामान मिला, गाड़ी में डाल भेज दिया! उस दिन शाम तक सारा गांव खाली हो गया।

विश्व को जोर का बुखार था। लेकिन गांठें दिखायी नहीं पड़ीं। पार्वती और रामण्णा को बुखार चढ़ने के चौबीस घंटे के अंदर ही गांठें निकल आयी थीं। विश्व को बुखार शुरू हुए दो दिन हो गये थे। फिर भी गांठें नहीं दिखाई पड़ीं। शायद हेमादीसिरप का असर होगा। या बुखार चढ़ते ही दी गयी नयी दवा का होगा। अब घबराने की बात नहीं थी। लेकिन यह भी कोई कह नहीं सकता कि जिस घर में महामारी ने प्रवेश किया हो, वहां मृत्यु इतने में ही रुक सकती है! अय्याजी कह रहे थे—"नंजम्मा, यह ईश्वर का मंदिर है। इसमें महामारी कैसे आयेगी ? इसीलिए विश्व के गांठ नहीं निकली। डरो मत तुम।"

नंजम्मा कुछ नहीं बोली। शिला की भांति जड़ बनी दूर से ही विश्व को देखती हुई, सुबह होने तक बिना पलक झपकाये बैठी रही। सुबह होने तक महादेवय्यजी थकावट से चूर-चूर हो चुके थे। पूरे कल और परसों उन्होंने कुछ नहीं खाया था। परसों रात गाड़ी के प्रवास में थोड़ा जो सोये थे, उसके अलावा उन्होंने पलकें तक नहीं झपकायीं। उनकी ठीक-ठीक उम्र कोई नहीं जानता था, लेकिन वे पचहत्तर को पार कर चुके हैं—इसमें कोई संदेह नहीं था। दो दिनों से लगातार दौड़धूप कर रहे थे। खंभे का आधार लेकर वे बैठे थे कि अनजाने ही फर्श पर लुढ़क गये; और वैसे ही सो गये। नरसी बोली—"बहन, मुझे भगवान ने संतान नहीं दी। बच्चों के न होने से चिंतित थी। बच्चे होने पर भी चिंता होती है।"

नंजम्मा चुपचाप बैठी थी। उतने में मास्टरजी आये और महादेवय्यजी के पास से नंजम्मा के घर की चाबी ले गये। नंजम्मा बड़ी देर से वैसी ही बैठी थी।

नरसी भी समझ न पायी कि क्या बोले। लेकिन नियमानुसार वह बच्चे को दवा पिलाती रही। विश्व का सिर उसकी जांघ पर ही था। कुछ देर बाद मास्टरजी की पत्नी आयी। उन्होंने आंसू बहाये, लेकिन नंजम्मा के आंसू नहीं बहे।

"उठिये, हमारी झोपड़ी पर चलिए। कपड़े बदल लीजिए। थोड़ा उपमा बनाया है। कल से आपने कुछ नहीं खाया है।"

नंजम्मा ने इंकार में सिर हिला दिया। मास्टरजी की पत्नी वापस चली गयी और वहीं एक पतीली में उपमा ले आयी। नंजम्मा मुंह धोने के लिए भी नहीं उठी। नरसी ने पूछा—"चिन्नय्याजी कहां हैं?"

"कल रात को श्मशान से आने के बाद हमारी झोपड़ी के बाहर बोरा बिछाकर लेट गये हैं। अभी मैं उन्हें उपमा देकर आयी हूं।"

"उन्हें मालूम नहीं कि बच्चा यहां है?"

"मालूम है। हमारे यजमानजी ने उन्हें बताया था। अभी आ जायेंगे।"

"बहनजी, मत समझिए कि मैं बुरी बात कर रही हूं। मुझ जैसी रांड के बच्चे होने पर उनका सुख-दुख देखने कोई नहीं आयेगा। वे किसके बच्चे हैं, इसे कोई नहीं जान सकता। फिर कोई क्यों आयेगा? ये चिन्नय्याजी, अपने बीमार बच्चे को देखने से पहले उपमा खा गये?"

नंजम्मा ने नरसी को हाथ के इशारे से कहा कि बात न करे। मास्टरजी की पत्नी नंजम्मा से बोली—"देखिये, यह ग्रामदेवी मारम्मा, सुंक्लम्मा, आदि अच्छी नहीं हैं। ये सब नाश करने वाली हैं, रक्षा करने वाली देवियां नहीं। कैसी भी विपत्ति क्यों न आये, शृंगेरीशारदा मैया दूर करती हैं। मिन्नत मानिए कि विश्व अच्छा हो जाये, तो इस बार नवरात्रि के अवसर पर तेरे चरणों में आकर कुंकुमार्चन कराऊंगी। हालत अवश्य सुधर जायेगी। आप सूतक में हैं। आप कुछ मत कीजिए। मैं घर जाकर कपड़े बदलकर आपके नाम से चार आने की चवली बांधकर रख देती हूं।"

नंजम्मा ने अस्वीकृतात्मक सिर हिला दिया।

"आप ऐसा क्यों कह रही हैं?"

"भगवान कुछ नहीं करता। भगवान-वगमान सब झूठ है। आयु होगी तो बचेगा, नहीं तो नहीं।"

नरसी बोली—"नंजम्माजी, गुस्से में ऐसा मत कहिए। गलती मानिये और मन्नत मानिये।"

"गलती भी नहीं, वलती भी नहीं। किसी देव की मन्नत नहीं माननी।" नंजम्मा ने स्पष्ट कह दिया। फिर से उन दोनों ने विवश किया तो बोली—"आपकी जो मर्जी हो कीजिए।" मास्टरजी की पत्नी घर गयी। अब मंदिर के पास एक-एक कर गांव के अनेक लोग आने लगे। लेकिन नंजम्मा को जो सांत्वना देने आये थे, वे गंभीर दुख में थे। पार्वती के रूप-गुणों की प्रशंसा की। रामण्णा की बुद्धिमानी की सराहना की। जिंदा रहता तो आगे चलकर उसमें इलाकेदार बनने की योग्यता थी। यह सोचकर कि ऐसे बद्धिमान इस संसार में नहीं रहने चाहिए, शिवजी ने उसे अपने पास बुला लिया। पार्वती को अपक्व शरीर में नयी साड़ी पहनाकर नहीं ले जाना चाहिए था। देवी की नजर सबसे पहले लड़की पर पड़ी—" इसी तरह जितने मुंह उतनी बातें हुई। कहते थे गांव में और आठ व्यक्तियों को प्लेग हुआ है, उनमें से कल रात चार और आज सुबह दो आदमी मर गये। गांव के बाहर ठहरी हुई नंजम्मा और नरसी को इसकी खबर नहीं थी। आगंतुक एक-एक कर चले गये। अकेली सर्वक्का नंजम्मा के पास रह गयी।

सर्वक्का और नंजम्मा परस्पर सुख-दुख की सहेलियां थीं। सर्वक्का भी उम्र में आयी हुई बेटी को खो चुकी थी। अपनी बेटी की मृत्यु के साथ उसे नरसी की भी याद आयी। वही नरसी अब यहां बैठी है। नंजम्मा का बेटा अब उसकी गोद में है। नंजम्मा उससे ऐसे दूर बैठी है मानो वह उसका बेटा है भी या नहीं। नरसी के नाम से ही सर्वक्का का सारा शरीर जल उठता था। और कभी होती तो सर्वक्का झाड़ू से उसकी पूजा करती। लेकिन अब अनजान-सी चुपचाप बैठी रही। नंजम्मा को अकेली छोड़ जाने को उसका मन नहीं माना। कुछ कहने को भी नहीं सूझ रहा था।

इतने में बच्चा जोर से सांस लेने लगा। लगा कि बुखार बढ़ गया है। "नंजम्मा जी, बुखार के मारे मेरी जांघ तप रही है। मुन्ना जोर से सांस छोड़ रहा है। मुझे डर लग रहा है, देखिये।" नरसी बोली।

"मैं नहीं छुऊंगी। आप ही देखिए सर्वक्का!" नंजम्मा ने मुंह खोला।

सर्वक्का ने पास जाकर बच्चे की ओढ़नी के भीतर हाथ डालकर देखा। शरीर पसीने से भीग रहा था। उसकी हथेली भी भीग गयी। वह भी इसका अर्थ नहीं

समझ सकी। अगर साधारण स्थिति में होता तो शायद नंजम्मा समझ जाती, लेकिन अब कुछ समझ में नहीं आ रहा था। नरसी ने महादेवय्यजी को पुकारा। वे गहरी नींद में थे। सर्वक्का ने उनकी भुजा पकड़कर झकझोरा। तो वे उठ बैठे। एक क्षण आंखें मलीं, फिर चारों ओर देखने के बाद उन्हें सर्वक्का की बात समझ में आयी। बच्चे की छाती पर हाथ रखकर वे बोले—"पसीना आ रहा है, बुखार उतरने से पहले ऐसा ही होता है। गांठ-वांठ नहीं निकली है। नंजम्मा, विश्व बच गया—उसकी जान बच गयी है।"

नंजम्मा बैठी मूकवत बच्चे को निहारती रही। "खैर, ईश्वर ने दया दिखायी।" सर्वक्का बोली। बच्चे को पसीना छूट रहा था। कुछ देर के बाद बुखार और कम हुआ। इतने में रेवणाशेट्टी आया। नंजम्मा ने अब तक कभी उससे बात नहीं की थी। उसने भी कभी नंजम्मा से प्रत्यक्ष बात नहीं की थी। बच्चे के पसीने की बात सुनकर उसने भी शरीर छूकर 'बच गया' कहा—"नंजम्माजी, आप इस सारे गांव को समझाने वाली हैं, आपको कौन और कैसे समझा सकता है!"—कहकर अपनी तरफ से उसने समझाया। पत्नी की तरफ मुड़कर बोला—"लगता है इन्होंने दो दिनों से कुछ खाया नहीं है। घर जाकर मडुए का लोंदा बनाकर ला दो।" और उसे साथ लेकर घर चला गया। महादेवय्यजी ने जिद्द करके विश्व को उठाया और उसका मुंह धुलवाया। मास्टरजी की पत्नी का लाया हुआ उपमा बर्तन में ही था। "अब विश्व की देखभाल तुम्हें करनी होगी। काम करने की शक्ति न हो तो कैसे चलेगा! तुम खाओ बहन।" कहने पर भी वह नहीं मानी। अंत में महादेवय्यजी ने धमकाया, और नरसी ने भी जिद्द की। नंजम्मा ने चम्मचभर उपमा मुंह में रखा, निगलने में असमर्थ हो उठकर थूक आयी और बर्तन को एक ओर सरका दिया। महादेवय्यजी ने अपने सामान के बीच से एक डिब्बा ढूंढ़ निकाला। उससे दो चुटकी काले रंग का पाउडर निकालकर बोले—"इसे खालो।" "यह क्या है अय्याजी?"

"ईश्वर का प्रसाद है। काशी से लाया था। बच गया था। यह लो। तुम्हारे सारे कष्ट दूर होंगे। मुन्ने की हालत तो सुधर ही रही है। बुखार भी उतर जायेगा।"

नंजम्मा ने उसे चुपचाप निगल लिया। वह कड़वे और मीठे का मिश्रण था। फिर खंभे का आधार लेकर बच्चे को निहारती बैठ गयी। चेन्निगराय भी आ गये।

"अब तक क्या कर रहे थे पटवारी जी ?" नरसी ने पूछा ।

"आने के लिए निकला था, लेकिन न जाने किस-किसने सांत्वना देने के लिए रोक लिया। वैसे ही बैठा रहा।"

"वाह ! आप जैसे बाप का क्या कहना !" नरसी ने कहा तो वे उसे फटी-फटी आंखों से देखने लगे।

"नरसी कुछ मत बोलो !" महादेवय्यजी बोले।

दस मिनट में नंजम्मा की आंखें झपकियां लेने लगीं। पहले खंभे का सहारा लेकर बैठी थी, अब घुटनों में सिर रख लिया। कल रात लाये बिस्तर को पास ही बिछा दिया गया और हाथ पकड़कर महादेवय्यजी ने उसे लिटाकर एक पुराना चादर ओढ़ा दी। दो मिनट में उसे गहरी नींद आ गयी।

"अय्याजी, आपने नंजम्मा जी को क्या दिया ?" नरसी ने पूछा।

"नींद की दवा। काशी में इसे खाते हैं। वहां से आते समय ले आया था। थोड़ी पुरानी बची थी।"

"तो मुझे जरा दीजिए।" चेन्निगराय का आग्रह था।

"वह मर्दों के लेने के लिए नहीं है। नंजम्मा कल तक नहीं जागेगी। आप यहीं रहिए। मास्टरजी की पत्नी से कह देता हूं कि आपको यहीं खाना ला दे।" चेन्निगराय को आश्वासन देने के बाद वे नरसी से बोले—"नरसी अब डर नहीं है। मुन्ने को नीचे लिटा दो। तुम घर जाकर कुछ खा आओ। तुमने रातभर नींद नहीं ली। बेहतर है घर जाकर सो जाओ।

"अय्याजी, बच्चा बच गया तो सब ठीक है। और दो तीन दिन यूं ही बैठी रहूंगी।"

"घर जाकर और खाना खाकर सो जाओ।"

महादेवय्यजी ने एक छोटा कंबल मोड़कर दिया। उसपर बच्चे का सिर रखकर नरसी उठी और अपने घर चली गयी। नंजम्मा की नींद खुली ही नहीं। दोपहर के समय कुरुबरहळ्ळी के गुंडेगौड़ आदि दस-बारह लोग मंदिर में आये। महादेवय्यजी के आवाज न करने का संकेत करने पर सबने चेन्निगराय को ही बाहर बुलाकर सांत्वना दी। "हमने अपनी तरफ से सारी कोशिश की, लेकिन हरामजादों को बचा नहीं पाये।" कहते समय चेन्निगराय की आखें भर आयीं।

यहां घटी घटना का उल्लेख करते हुए सूर्यनारायण को चिट्ठी लिखकर और

खैरियत लिखने की जगह काले रंग का निशान लगाकर मास्टरजी ने पोस्टकार्ड डाक में डाल दिया।

[5]

दोनों बच्चों को मरे छह दिन हो गये थे। नंजम्मा अपनी झोपड़ी में आयी। झोपड़ी में केवल वह और चेन्निगराय थे। विश्व का बुखार पूरी तरह उतर गया था और वह चंगा हो गया था। महादेवय्यजी ने कहा—"सूतक के घर में उसे अभी न ले जायें। दस दिन मैं ही अपने पास रख लेता हूं।" नंजम्मा ने उसे वहीं छोड़ दिया। उसे वहां बुलाने में उसे भी डर लग रहा था। सुबह और दोपहर को मंदिर जाकर देख आती। यह स्मरण आने पर कि वह सूतक में है, मंदिर के भीतर नहीं जाती थी। विश्व को भी सूतक है, लेकिन वह तो बच्चा है। उठ बैठने की शक्ति होते हुए भी महादेवय्यजी उसे कभी उठने नहीं देते। मंदिर के द्वार पर से उसे देखकर, महादेवय्यजी से भी बिना बोले नंजम्मा घर लौट आती। पार्वती और रामण्णा के लिए लाया हुआ हेमादीसिरप बुखार टूटने पर भी अय्याजी विश्व को पिलाते रहे।

जन्म देने वाली मां के सामने ही बच्चे क्यों मरते हैं?—यह प्रश्न उसे सदा सताता रहता है। बहुत सोचने पर भी उत्तर नहीं सूझ रहा था। एक दिन महादेवय्यजी से ही पूछा तो बोले—"बहन, यह भगवान की माया है। कहते हैं जब कृष्ण छोटा था, तरह-तरह से मां की परीक्षा लिया करता था। वह भूखा रहता तो मां भी उपवासी रहती। बेटे के दूध पीने तक मां ने भी दूध नहीं पिया। इस मातृप्रेम की परीक्षा लेने के उद्देश्य से एक बार उसने पूछा, 'मां, अगर मैं मर जाऊं तो तुम क्या करोगी'?"

"मुन्ने, तुझे छोड़कर मैं रहूंगी? तेरे साथ ही मैं भी मरूंगी।

"सच है?"

"तेरी कसम मेरे लाल!"

"एक दिन पैर फिसलकर वह पास ही की नदी में गिर पड़े। एक डुबकी लगायी फिर ऊपर निकले तो चिल्लाये, 'मां, ऊपर खींच लो। तुम भी पानी में कूदो। मैं मर रहा हूं, बचा लो।' पानी मुंह में आ गया था। मां तटपर खड़ी-खड़ी

चिल्लाई—'मेरे लाल को बचा लो।' लेकिन कोई नहीं आया। तो उसने अपनी साड़ी खोलकर उसका एक छोर पकड़ा और दूसरा छोर उसकी ओर फेंक दिया। वह नहीं मिले। 'मां मां' कहकर रोते हुए वह पानी में डूब गये। मर ही गये। मां साड़ी पहनकर तट पर बैठी-बैठी बहुत रोयी; रोती ही रही। स्वयं पानी में कूदकर मरने के विचार से उठकर तट पर खड़ी हो गयी। लेकिन न जाने क्यों मरने से डर लगने लगा। नदी में कूदी नहीं। बेटे को निगलने वाली नदी को गालियां दीं। जोर-जोर से रोयी। तट पर बैठी रही। फिर भी नदी में नहीं गिरी। एक दिन बीता, दूसरा दिन बीता, यशोधरा रोज नदी तट पर आती और बैठकर रोती। लेकिन पानी में नहीं गिरी। तीसरे दिन कृष्ण ही पानी के अंदर से बाहर निकलकर बोले—'मां, बस! इतना ही है तुम्हारा प्रेम! मेरे मरने पर भी तुम नहीं मरीं! आज से मां के सामने बच्चे मरेंगे।' यह कहकर शाप दे दिया। कहते हैं, इसीलिए ऐसा हो रहा है।"

यह सुनकर नंजम्मा को यशोधरा पर बहुत गुस्सा आया। वह अकेली दृढ़ विश्वास से नदी में कूद पड़ती तो संसार में मां के सामने ही अपने बच्चे नहीं मरते। यशोधरा आखिर मानव थी। श्रीकृष्ण भगवान थे। मानव मां के प्रेम की परीक्षा के उद्देश्य से ही उन्होंने ऐसा किया। देव-मां होती तो शायद मर जाती! लेकिन देवी को मृत्यु ही नहीं। उसके (देवी के) बेटे की भी मृत्यु नहीं। तो यह घटना ही नहीं घटती।

झोपड़ी में आने के बाद भी उसका मन इसी के बारे में सोच रहा था। यह कोई कहानी है या सत्य है?—मन में प्रश्न उठा। कहानी भी हो सकती है। पार्वती, रामण्णा के मरने पर मैं क्यों नहीं मरी?—मन में ही प्रश्न उठा। इस प्रश्न के उठते ही उसे आश्चर्य भी हुआ। साथ ही मन में यह दृढ़ निश्चय भी जागा कि मुझे भी मरना ही चाहिए। रात के आठ बज रहे थे। चेन्निगराय तंबाकू खाते हुए झोपड़ी के सामने बड़े चौरस पत्थर पर बैठे थे। नंजम्मा भीतर चटाई बिछाकर लेट गयी। लेकिन नींद नहीं आयी। मुझे आज मरना चाहिए। पार्वती, रामण्णा का अनुसरण करना है, यह भाव उसमें प्रबल हुआ। मैं दृढ़ मन से मरूं तो भगवान मुझे बचाने के साथ-साथ शायद मेरे दोनों बच्चों को वापस भेज देगा, ऐसा एक आशापूर्ण प्रश्न भी उसके मन में जागा। उसके द्वारा देखे हुए यक्षगान नाटकों में, सीखे हुए गीतों में, पढ़े हुए पुराणों में ऐसा ही होता आया

है। मेरे साथ भी क्यों नहीं हो सकता ? लेकिन एक ही दिन दो बच्चों के मरने के बाद देव पुराणों से उसका विश्वास उठ गया था। कृष्ण के लिए मरने से यशोधरा हिचकिचाई या नहीं, मुझे इसकी जरूरत नहीं। अब मेरे बच्चे मरे है। उनके अभाव में इन छह दिनों से नरक का अनुभव कर रही हूं। यह नरक नहीं चाहिए। मुझे भी मरना चाहिए।

चेन्निगराय भीतर आकर सो गये थे। उनके खुर्राटे भी सुनाई दे रहे थे। नंजम्मा उठी। लगभग ग्यारह बजे होंगे। झोपड़ी का दरवाजा खोलकर बाहर निकली। कहां जाये ? कैसे मरे ? इस संबंध में बिना सोचे ही मन चढ़ा-उतराकर उस श्मशान की ओर ले गया जहां उसके दोनों बच्चे राख हो गये थे। शव को जलाते समय वह वहां नहीं गयी थी। कहते हैं औरतों को श्मशान में नहीं जाना चाहिए। अब सीधे वहीं गयी। किसी तरह का भय नहीं. हिचकिचाहट नहीं। वायु, भूत-पिशाचों का तिलभर भी विचार नहीं। अंधेरे में वह जगह दिखाई दे रही थी जहां दोनों बच्चे जलाये गये थे। उसके बच्चों के अलावा हाल में और कोई ब्राह्मण नहीं मरा था। अत: वह जगह उन्हीं की जलाई हुई है। लेकिन यह समझ न पायी कि पार्वती की कौनसी है और रामण्णा की कौनसी ? फिर सोचा कि उसे जानकर करना भी क्या है ! तीसरे दिन दोनों जगहों पर भस्म-संस्कार पूर्ण हो चुका था। फिर भी उसने झुककर दोनों से एक-एक मुट्ठी राख उठाकर अपने आंचल में बांध ली। श्मशान के पास ही एक तालाब था। शव जलाने के बाद शव-वाहक, संस्कारकर्ता इसी में स्नान करते थे। किसी अन्य कार्य के लिए इसका उपयोग नहीं होता था। अत: पानी कुछ गंदा-सा लगता था। इस तालाब में गिरना चाहिए ! ऊपर के अग्रभाग के जिह्व-शिला से कूदना चाहिए ! उसने आंखें बंद कर लीं। रात का अंधेरा घनी कालिमा में बदल गया। हर नस उभरकर दो क्षण अनियंत्रित हुई। सारा शरीर अनियंत्रित हो कांप उठा। तालाब का पानी हिलोर लेकर किनारों से टकराया। लेकिन नसें धीरे-धीरे शांत हुईं। शरीर कंपन रुक गया। विचार, भाव के समस्त व्यापार मृत-सा हो, मन शून्य हुआ। यही मौत है ? वहां कोई भी नहीं ? पार्वती, रामण्णा, अंत में मैं भी—कुछ नहीं ! आधा कदम आगे बढ़कर केवल पानी में कूदना बाकी है ! वह भी आसानी से बिना प्रयत्न किये ही बढ़ाये जाने वाला कदम है !

कदम बढ़ाने से पहले उसे एक बार, गांव में बचे हुए लोगों की याद आयी।

'अब दो बचे हैं—पति—उन्हें किसी से लेना-देना नहीं; और विश्व। विश्व की याद आते ही मन विचलित हो उठा। वह प्लेग से नहीं मरा, बच गया है। उसकी देखभाल कौन करेगा ? मन ने कहा कि महादेवय्यजी ही सहारा हैं। उसे इस बात का विश्वास हुआ कि महादेवय्यजी को यह पता लगने पर कि बच्चों की मौत के शोक में मैंने आत्महत्या कर ली है, तो वे कभी उसका हाथ नहीं छोड़ेंगे। लेकिन मेरे बिना वह अनाथ हो जायेगा। महादेवय्यजी कुछ भी करें मां जैसा कैसे कर सकते हैं ? पार्वती, रामण्णा के साथ मैं भी बीमार क्यों नहीं पड़ी ? भगवान ने शायद विश्व की देखभाल के लिए ही बचाया होगा ! मुझसे पालन-पोषण कराने के लिए ही शायद विश्व को बचाया होगा।' विश्व का चेहरा याद आया। 'पार्वती का चौड़ा विशाल चेहरा, रामण्णा की बुद्धिशक्ति, दोनों इसमें हैं। उन दोनों के बदले वह रह गया है। मैं जान दे दूं तो उसका रास्ता ?'

इस विचार के साथ वह जिह्व-शिला पर उकड़ूं बैठ गयी। अपनी शादी के बाद इस गांव में आना, इन बच्चों का जन्म लेना, सबके सब याद आये। इस बीच अनुभूत सुख-दुख। बारिश और फसल के अभाव में फैला हुआ दुष्काल। 'पार्वती, रामण्णा कितनी सहनशीलता से भूख सह लेते थे ! इतने अच्छे थे इसीलिए भगवान ने बुला लिया। विश्व भूख से तड़प कर मुझे मारता था। उसका स्वभाव ही ऐसा है। धीरज, गुस्सा, आदि में सारे गांव में ही अव्वल है। लेकिन बाप की तरह केवल अपना पेट भरने की हीन भावना नहीं। कहीं से फल मिलने पर मां, भाई, बहन को दिये बिना नहीं खाता। उसे अनाथ बनाकर मरूं तो भी कौनसा स्वर्ग मिलने वाला है ? अब मरकर उस लोक में जाने पर भी वहां पार्वती, रामण्णा दोनों ने 'मां, तुम विश्व को छोड़कर आ गयी, उसका कौन है ? तुम्हें इतनी अक्ल नहीं ?' कहा, तो मैं क्या बोलूंगी ?'

अनजाने ही उठकर वह जिह्व-शिला से पीछे हटी। कंकड़-कांटे देखती हुई, उसी रास्ते से श्मशान में आयी। जहां पार्वती और रामण्णा को जलाया था। उन जगहों के बीच कुछ देर ठहरी। वहां से चलकर बगीचे से होते हुए तालाब की चढ़ान चढ़ी। लेकिन कदम घर जाने के लिए दायीं ओर न मुड़कर बायीं ओर मंदिर की ओर बढ़े। चढ़ान का रास्ता अंधेरे में स्पष्ट दिखायी दे रहा था। वह बैलगाड़ी आने-जाने जितनी चौड़ी चढ़ान थी। वह भीतर गयी तो अरंडी के तेल का दीप मंदिर के मध्य भाग में जल रहा था। विश्व बिस्तर पर सोया था। उसे

कंबल ओढ़ाकर, उसी बिस्तर के एक कोने में बैठे महादेवय्यजी दायें हाथ में इकतारा लिये गा रहे थे।

कुछ देर के बाद द्वार पर खड़ी एक आकृति का संकेत मिला तो महादेवय्यजी ने उस ओर मुड़कर देखा। पहचान कर बोले—"शाम को आयी थी, अब फिर आ गयी। क्यों आयीं ? चिंता मत करो। विश्व गोल-मटोल पत्थर-सा है। आज से उसे विश्व न कहकर 'गुंडण्णा' कहो। गोल-मटोल पत्थर-सा ही बड़ा होगा।"

महादेवय्याजी की जबान बड़ी शुभ है। उनकी बात सच है।—अब से उसे गुंडण्णा कहकर ही बुलाना चाहिए—मन में निश्चय करने के बाद बोली, "कुछ नहीं, जाती हूं।"

"अब क्यों आयी ?"

"यूं ही आ गयी थी !"

"चाहो तो यहीं रहो। लेकिन देख बहन, लोगों की जबान एक-सी नहीं रहती। तुम घर जाओ।"

"जाती हूं।" वह चलने लगी।

"ठहरो बहन, कुछ दूर साथ आता हूं।"

"नहीं-नहीं, बच्चा सोया है।" कहकर जल्दी-जल्दी चलकर वह चढ़ान के ऊपर आ गयी। झोपड़ी के पास आने से पहले पल्लू में बंधी राख की याद आयी। चढ़ान की बायीं ओर उतरकर पल्लू की गांठ खोलकर राख तलाब के पानी में घोलकर बोली—'गंगामैया, इसे अपने पेट में संभालो।" फिर चढ़ान चढ़ कर और झोपड़ी पर पहुंचकर लेट गयी।

[6]

नंजम्मा उस दिन सुबह मंदिर जाकर विश्व को देख, अपनी झोपड़ी में आकर बैठी थी। आज सातवां दिन था। शास्त्रानुसार शुरू होता तो रामण्णा की तिथि का कार्य आज से प्रारंभ होना चाहिए था। क्या शास्त्र, क्या कर्म ! उसने उस बारे में सोचा भी न था। किसी ने याद भी नहीं दिलायी। पार्वती की तिथि कराना तो उसके पति का काम है।

मध्याह्न के बारह बजे थे। नंजम्मा घुटनों पर सिर रखकर भीतर बैठी थी।

चेन्निगराय कहीं गये हुए थे। लगा कि सफेद कपड़े पहने कोई घर में प्रविष्ट हुआ है। गर्दन उठाकर देखती हैं—आगंतुक सूर्यनारायण था, पार्वती का पति। बायें हाथ से बेटी रत्ना को पकड़े थे। कांख में लटकती एक झोली थी। दायें हाथ में वजनदार बांस की टोकरी। नंजम्मा ने आगंतुक से बैठने के लिए भी नहीं कहा। दामाद के आने से लज्जा, शिष्टाचारवश उठकर भीतर भी नहीं गयी। सर्यनारायण रत्ना से बोला—"नानी के पास जाओ मुन्नी!"

बच्ची नानी को भूली नहीं थी। सीधे उनके पास आकर उनकी भुजा को स्पर्श किया। उसने बच्ची का हाथ पकड़कर अपनी गोद में बिठा लिया। सूर्यनारायण ने टोकरी का ढक्कन निकालकर कहा—"इसे निकालकर रख दीजिए, गर्मी में मुरझा जायगा।" और एक-एक बाहर रखता गया। महकते हुए मोगरा पुष्प की पोटली, कोमल पानों की पोटली, संतरे, केलों का ढेर। होटल से कागज में बांधकर लाये हुए भक्षों का पूड़ा। उन्हें देखते-देखते नंजम्मा की सहनशीलता का बांध टूट गया। रत्ना को सीने से लगाकर एकबार सिसक पड़ी। सकपकाकर सूर्यनारायण ने गर्दन उठाकर देखा। नंजम्मा बच्ची को वहीं छोड़कर रसोईघर की ओट में चली गयी। वह कुछ समझ नहीं पा रहा था। भीतर से केवल सिसकने की आवाज आ रही थी।

"मांजी क्या बात है? क्यों रो रही हैं?" उसने पूछा।

उसे उत्तर नहीं मिला। स्वयं रसोईघर में जाकर पूछने से झिझक रहा था। कुछ न समझकर चुपचाप बैठा रहा। लेकिन उसके मन में भी एक तरह की अव्यक्त शंका, और भय उठे। आध घंटा इसी तरह बीता। सूर्यनारायण ने पूछा, "मांजी मुझसे स्पष्ट नहीं कह सकतीं?" नंजम्मा चुप रही। वहां से निकलकर झोपड़ी के पास गयी। बगल की झोपड़ी के पास खेलते हुए एक लड़के को बुलाकर बोली—"मुन्ने, मास्टरजी के वहां जाकर कहना कि मैंने अभी बुलाया है।" लड़का दौड़ा गया। पांच मिनट में ही मास्टरजी आ गये। "क्यों, आपने बुलाया?" उन्होंने पूछा तो "हमारे घर में जाकर देखिए।" कहकर वहां से सीधी चढ़ान की ओर चलकर मंदिर में पहुंच गयी।

मास्टरजी अंदर आकर देखते हैं तो सूर्यनारायण भ्रमित-सा बैठा मिला उसके सामने फल-फूल, पान, भक्षों की पोटलियां…!

बेटी रत्ना पिता की बांह पकड़े खड़ी थी। "कब आये? मेरी चिट्ठी नहीं मिली?"

"कौन सी चिट्ठी ? नहीं तो ?"

"लिखे आज पांच दिन हो गये।"

"हमारे यहां सप्ताह में एक बार डाक बांटी जाती है।"

मास्टरजी ने कुछ नहीं बताया। मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है, क्या बात है वेंकटेशय्याजी ? सूर्यनारायण ने पूछा।

"किस मुंह से कहूं !"

"कोई बात नहीं, बताइए।" कहते समय उनकी ध्वनि कांप रही थी।

"पार्वती, रामण्णा दोनों चल दिए। आज सातवां दिन है।"

"क्या !" उसने कहा और खुला हुआ मुंह खुला ही रह गया।

"प्लेग ! गांव में आयी हुई महामारी ने सबसे पहले इसी घर पर धावा किया। भाई-बहन दोनों एक ही दिन, एक के पीछे दूसरा चला गया। विश्व सुधर रहा है।" उन्होंने सारी स्थिति बता दी।

सूर्यनारायण मूकवत् बैठा सुन रहा था। सब कह सुनाने के बाद मास्टरजी ने कहा—"बदकिस्मती है, किस्मत को कौन बदल सकता है ?" तो वह सह न सका। रोक रखने पर भी भीतरी दुख उमड़ पड़ा। सिसक-सिसक कर रोते हुए, उसने रोक-रोककर सांस ली। पिता को रोते हुए देखकर रत्ना भी रोने लगी। न जाने वह क्या समझी, क्या नहीं समझी !

"वेंकटेशय्याजी, मैं अभागा हूं।" कहकर बच्ची को सीने से लगाकर, उसने अपना मुंह बच्ची के मुंह में छिपा लिया।

मास्टरजी आगे कुछ न बोल पाये। दस मिनट बाद उन्होंने कहा—"चलिए, हमारे घर चलें।"

"नहीं, अब कुछ भी नहीं। मैं वापस जा रहा हूं।"

"चलेंगे ! चलिए, कम से कम बच्चे के पेट में कुछ डाल दीजिए।" विवश करके उन्हें उठाया। झोपड़ी का दरवाजा बंद कर, चक्की पर रखी हुई चाबी लेकर चल पड़े। उनके घर पहुंचने पर सूतक की रत्ना को पलाश की पत्तल बिछाकर मास्टरजी की पत्नी ने खाना परोसा। सूर्यनारायण ने कॉफी भी नहीं ली। रत्ना के खा चुकने पर सूर्यनारायण ने पत्तल उठाकर, गौ के गोबर से साफ की और कहा—"चलिए, मंदिर चलकर बच्चे को देख आयें।" दोनों तालाब के चढ़ान की ओर चल पड़े। सूर्यनारायण ने रत्ना को उठा लिया।

इनके मंदिर जाने तक नंजम्मा अपनी झोपड़ी पर लौट चुकी थी। एक लड़के को मास्टरजी के घर भेजकर चाबी मंगा ली। अब तक चेन्निगराय का खाना मास्टरजी के घर पर ही बनता था। उनकी पत्नी जो खाना झोपड़ी में ला देती थी, नंजम्मा उसमें से एक कौर खाती, नहीं तो कुत्ते को डाल देती थी। अब द्वार खोलकर भीतर आयी तो सूर्यनारायण के लाये हुए फल-फूल, भक्ष दिखे। उन्हें न देख सकने के कारण दूसरी ओर मुंह करके भीतर चली गयी। जिस संदूक में पटवारी कार्य की बहियां रखी जाती थीं, उसमें पार्वती की शादी की साड़ियां, सूर्यनारायण के पहनाये हुए कर्णफूल, बेसर, चांदी की चूड़ियां थीं। सबको बाहर निकालकर एक सफेद टावेल में बांधकर रख दिया।

करीब एक बजे वे मंदिर से लौटे। सूर्यनारायण चुपचाप खड़ा था। मास्टरजी बोले—"कहते हैं वे अब जायेंगे। कल तक सब इंतजाम करके कम से कम परसों नवमी के दिन कर्म शुरू कर देना चाहिए।" नंजम्मा ने कोई जवाब नहीं दिया। जो बांध रखा था, उसे लाकर सामने रखती हुई बोली—"यह उसके कपड़े-गहने हैं। आपके हैं। थैली में रख लीजिए।"

इन्हें देखकर उसकी आंखें भर आयीं। बोला—"मां जी, मेरी असली वस्तु ही चली गयी तो इसे ले जाकर क्या करूंगा? मुझे नहीं चाहिए।"

"पाणिग्रहण के साथ ही वह आपकी बन गयी थी। उसके गहने-कपड़े अपने घर में रखकर क्या करूंगी? उनपर नजर पड़ते ही मेरे लिए असह्य हो जाता है।"

मास्टरजी के कहने पर उसने उन्हें अपनी थैली में रख लिया। जहां खड़ा था, वहीं झुककर और जमीन छूकर सास को प्रणाम किया और बच्ची को भी मुंह के बल लिटाकर प्रणाम करवाया। एक हाथ में थैली, दूसरे में बच्ची का हाथ पकड़े धीरे-धीरे कदम रखता हुआ चल दिया। मोटर-मार्ग तक मास्टरजी भी साथ चले।

इस रास्ते में कुल तीन मोटरें चलती थीं। मुदालियर की बस के साथ सी. पी. सी. कंपनी की दो बसें दौड़ती थीं। मार्ग पर पहुंचने के दस मिनट बाद तिपटूर जाने वाली बस मिल गयी। बस में बिठाकर मास्टरजी घर लौटे तो नंजम्मा भी बैठी मिली। मास्टरजी बोले—"पार्वती का क्रिया-कर्म परसों से शुरू करवा देंगे।" रामण्णा का जनेऊ हुआ था। शास्त्रानुसार उसका भी करना ही होगा। इन पुरोहितों के हाथ में पड़ेंगे तो पूरा ही मूंढ देंगे। आदमी का सुख-दुख नहीं

देखते। सारी जिम्मेदारी मुझ पर छोड़ दीजिए। पच्चीस रुपयों में सब करा देता हूं। यहां हम कुछ भी करें, वहां मृत जीव को कुछ नहीं होता। केवल धर्म-कर्म के लिए करते हैं।"

"अब पैसे की तंगी है। आप ही कुरुबरहळ्ळी हो आइए। ऐसे वक्त गुंडेगौड़जी ना नहीं कहेंगे।" अगले साल के लगान में देख लेंगे।

मास्टरजी तुरंत कुरुबरहळ्ळी के लिए रवाना हो गये। नंजम्मा अपनी झोपड़ी में आ गयी।

[7]

उसी दिन शाम को बैलगाड़ी में बैठकर अक्कम्मा और कल्लेश आये। अक्कम्मा रास्ते-भर रोती रही, गाड़ी से उतरते समय ही यह मालूम पड़ रहा था। कल्लेश का मुख भी मुरझाया हुआ था। भीतर आकर अक्कम्मा रोती हुई बोली—"नंजा, हम सब क्या मर गये थे? कहते हैं आज सातवां दिन है! हमें खबर नहीं भेजनी थी?"

इस समय अपने मायके वालों को देखकर नंजम्मा रो पड़ी। फिर संभलकर बोलीं—"कौनसी खुशी की खबर थी जिसको भिजवाती!"

"सुख-दुख में हमें भी सहयोग नहीं देना चाहिए? हम दूर के हो गये क्या? उठो, एक-दो महीने गांव में रहकर लौट आना। थोड़ा-सा भुला पाओगी।" कल्लेश ने कहा।

नंजम्मा अभी मायके जाने की स्थिति में नहीं थी। विश्व की हालत अब भी सुधर रहा थी। परसों से छोटे पैमाने पर ही क्यों न हो, रामण्णा का क्रिया-कर्म होना चाहिए। इसके अतिरिक्त न जाने क्यों वह मायके जाना भी नहीं चाहती थी। वहां गये कई साल हो गये थे। लेकिन कल्लेश ने जोर दिया। वह और अक्कम्मा दोनों मंदिर जाकर विश्व को देखकर आये। अक्कम्मा ने बच रहे एक प्रपोते को सीने से लगाया तो आंसू निकल पड़े थे।

ग्यारहवें दिन सूतक बीतने तक दोनों वहीं रहे। अक्कम्मा और कल्लेश को केवल तीन दिनों का सूतक था; इसलिए अक्कम्मा यहीं खाना पकाने लगी। कल्लेश रेवण्णशेट्टी की झोपड़ी खोजता हुआ निकला।

अक्कम्मा नंजु से बोली—"देख, कंठी अब भी गांव में नहीं है। पहले जो घोड़ा था न, वह काशी जाने के चार साल बाद मर गया था। अब एक नया घोड़ा खरीद लाया है। वहां से आने के बाद, कहते हैं न जाने क्या-क्या नये मंत्र-तंत्र सीख लिये हैं। जादू-टोने के नाम से चन्नरायपट्टन, शांतिग्राम, हासन अरकलुगूडु तरफ के लोग ले जाते हैं। उसे घर छोड़े बीस दिन हो गये।"

फिर बोली—"कुरुबरहळ्ळी निंगेगौड़ की बेटी हमारे गांव के चिक्कण्णा के छोटे भाई के लिए लायी गयी थी। कहते हैं निंगेगौड़ कल हमारे गांव आया था। आज सुबह चिक्कण्णा ने ही आकर बताया—'सुना है कि आपकी पोती के दोनों बच्चे मर गये हैं, सब गांव छोड़ चुके हैं, आप नहीं जा रहे हैं?' मैं समझ न पायी कि यह सच है या झूठ! उसने बताया कि उसके समधि ने ही कहा है। कल्लेश ने होन्ना से कहकर तुरंत गाड़ी तैयार करवायी और निकल पड़े।"

"भैया के लिए और कहीं कन्या नहीं ढूंढ़ी?"

"कंठी ने एक जगह तय किया था। आनेकेरे के पास आलनहळ्ळी की थी। उस ढोंगी को पता लगा होगा और उसने अपने बाप को चिट्ठी लिख भेजी होगी। उसके बाप ने आकर कल्लेश का हाथ पकड़कर आंसू बहाते हुए कहा—'तेरी मुसीबत के दिनों में बेटा समझकर मैंने सेवा की। भगवान ने नहीं दिया, संतान नहीं हुई। दूसरी शादी मत करो।' कल्लेश जो तब तक शादी के लिए तैयार था, बाद में इरादा बदल दिया। कह दिया कि मुझे शादी नहीं करनी। मैंने और कंठी ने लाख समझाया, लेकिन नहीं माना।"

मास्टरजी के निर्देशन में रामण्णा का क्रिया-कर्म पच्चीस रुपये में ही हो गया। सूतक बीतने पर नंजम्मा विश्व को घर ले आयी। वह धीरे-धीरे चलने-फिरने लगा था। हृष्ट-पुष्ट सांड की तरह पला लड़का, अब भूखे बछड़े की तरह उतर गया। जिस गाड़ी से वे आये थे, उसे उसी दिन गांव लौटा दिया। अब कल्लेश ने फिर से पूछा—"नंजा, भाड़े में एक छतदार बैलगाड़ी की व्यवस्था करा देता हूं, चलो गांव चलें।"

वह जाना नहीं चाहती थी लेकिन दिल भी नहीं दुखाना चाहती थी। भाभी बुरी हो सकती है। भैया ने भी मेरा अहित नहीं किया। कन्या देने को कहा था। बस, मैंने इंकार किया। गुस्से से शादी में नहीं आये। अब वे आकर बुला रहे हैं तो क्यों न चली जाऊं? लेकिन लगान वसूली का समय था। इतने दिन उस ओर

ध्यान ही नहीं दिया। मैं मायके जाऊं तो पति न यहां अकेले बैठने वाले हैं और न सरकार का काम करने वाले ही। वह बोली—"अक्कम्मा को यहां रहने दो। इस बार की किश्त की वसूली के बाद मैं अक्कम्मा के साथ आ जाऊंगी। वहां दस-पंद्रह दिन रहकर अकेली किश्त की वसूली शुरू होते-होते वापस आ जाऊंगी।"

तब कल्लेश अकेला ही पैदल गांव लौट गया।

चौदहवां अध्याय

इस बार गंगम्मा और अप्पण्णय्या गंड्सी, दुद्द की ओर के गांवों में गये थे, जहां से डेढ़ महीने बाद लौटे। जब वे गांव से दस मील दूर थे, तभी उन्हें इस बात की खबर मिल गयी थी कि सबने गांव छोड़ दिया है। उन्हें भी गांव आने पर बल्लियां, नारियल के पत्ते आदि जुटाकर झोपड़ी बनानी होगी। बर्तन आदि तो गांव के मंदिर के कमरे में हैं। पता नहीं मंदिर का दरवाजा खोलकर ला सकते हैं या नहीं! इन सब झंझटों से बचने के लिए वे दक्षिण दिशा की ओर चल पड़े। इससे पहले जिन देहातों में नहीं जा पाये थे, वहां जाकर, हव्वनघट्ट, हारनहळ्ळी प्रदेशों में धीरे-धीरे घूमकर गांव लौटे तो तीन महीने बीत गये थे। दो बार मद्धिम बारिश हुई थी तो लोग झोपड़ियां छोड़कर गांव लौट आये थे।

पोता-पोती दोनों की मृत्यु की खबर सुनकर गंगम्मा को इतना क्रोध आया कि बहू को खूब गालियां दे। लेकिन उसके सम्मुख खड़े होकर मुंह खोलने में उसे एक तरह का भय था। बहू के घर गयी तो अनजाने ही उसे रोना आ गया। 'उस विधुर को कन्या दी तो वह थोड़े ही बचेगी! मुझसे पूछकर तू शादी तय नहीं कर सकती थी?' उसने अपना दुख व्यक्त किया। जब बच्चे जीवित थे, तब तो उनसे इसका अधिक संपर्क नहीं था। वह बार-बार गांव छोड़कर जाती रहती थी। गांव में रहती तो भी घर नहीं आती थी। बच्चे भी उसके घर नहीं जाते थे। कभी-कभी तरकारी के बगीचे के पास या तालाब के पास पार्वती मिलती तो पूछती—'सुना है तेरी मां कुरुबरहळ्ळी में लगान वसूली के लिए गयी है! मालूम है कितनी दस्तूरी मिली है?' तो वह कहती 'मैं क्या जानूं दादी-मां!' बस इतने में ही दादी-पोती की प्यार-भरी बातें समाप्त हो जाती थीं। दादी रामण्णा से कहती—'सुना है कि तू अंग्रेजी सीखकर तहसीलदारी करने वाला है। मुझे एक लाल रेशमी साड़ी ला देगा?' तो वह 'अच्छा दादी-मां' कहता। बस इतने

में ही सारा वार्तालाप समाप्त हो जाता था। लेकिन आज न जाने क्यों उन दोनों की याद सता रही थी। तीन-चार दिन पोता-पोती की याद करके बहू को गालियां दे-देकर अपनी वेदना व्यक्त करती हुई मंदिर में आनेवालों के समक्ष यह छटपटाती रही।

इससे अधिक दुख हुआ अप्पण्णय्या को। पार्वती की शादी में उसने शरीर-तोड़ मेहनत की थी। शायद इसी से उसके मन में पार्वती के प्रति आत्मीयता जागी थी। यह सुनकर कि रामण्णा अपनी कक्षा में सर्वप्रथम आता है, उसके प्रति अभिमान था। उस लड़के ने तो इलाकेदार को भी बही लिखकर दी थी। अंग्रेजी सीखकर वह इलाकेदार बनेगा। वह उससे अधिक बोलता न था, लेकिन अनजाने में ही उसके प्रति अपनत्व का भाव पनप चुका था। अब अप्पण्णय्या जाकर भाभी के सामने खड़े होकर आंसू बहाते हुए बोला—"मैं पापी हूं, बचाने की बात किस्मत में नहीं थी।"

इस बार की बारिश संतोषप्रद रही। मर्दुमशुमारी लिखकर समाप्त किया। एक दिन मास्टरजी की पत्नी ने आकर बताया—"देखिए, मैंने विश्व के नाम से श्रृंगेरी शारदा देवी के दर्शन कर कुंकुमार्चना कराने की मन्नत मानी थी न, वह पैसा हमारे भगवान के मंडप में ही है अब आठ दिनों में नवरात्रि आने वाली है। आप बच्चे के साथ वहां हो आइए। जिस दिन मैंने मन्नत मानी थी, उसी दिन बुखार उतरा था। मन्नत पूरी करने में देरी नहीं करनी चाहिए।"

नंजम्मा ने भी शृंगेरी जाकर आने का निश्चय किया। कौन जाने किस भगवान की शक्ति कितनी है? उसे भूल जाऊं तो कल कुछ विपत्ति टूट पड़ सकती है! अब विश्व मेरी एक मात्र लता है। अवश्य जाना चाहिए। मास्टरजी ने वहां जाने के रास्ते की जानकारी दी। तिपटूर से रेल से जाकर तरीकेरे में उतरना चाहिए। बीच में बीरूर से दूसरी गाड़ी पकड़ना। रात को तरीकेरी स्टेशन पर ठहरकर सुबह छूटने वाली छोटी रेल से नरसिंहराजपुर उतरना है। वहां से शृंगेरी के लिए मोटर मिलती है जो कोप्पा होकर जाती है। तिपटूर से तरीकेरे के टिकट का पंद्रह आने, वहां से नरसिंहराजपुर का पौने सात आने, आगे मोटर के दो रुपये। शृंगेरी में तीर्थ-यात्रियों के लिए रहने के लिए छत्रशालाएं हैं। मठ में दो बार भोजन की सुविधा भी है।

विश्व के साथ मुझे तो जाना ही होगा। रेल यात्रा करके, दूर देशों में घूमा

हुआ कोई एक आदमी भी साथ चाहिए। इतने रुपये जुटाना भी कठिन है। कुंकुमार्चना के लिए पांच रुपये चाहिए। यही सब सोच ही रही थी कि अप्पण्णय्या ने एक दिन धीरे से कहा—"किसी से मत कहिए, मेरे पास बीस रुपये हैं, देता हूं। बाद में मेरे मांगने पर दे दीजिएगा। मैं भी साथ चलता हूं।"

वे दूर गांवों में जाते तो वहां मिले मडुए को वहीं बेच दिया करते थे। अप्पण्णय्या कभी-कभी मां की आंख बचाकर, यहां-वहां थोड़ा मडुवा बेचकर पान-तंबाकू का पैसा बना लेता था।

बीस रुपये पूरे नहीं पड़ेंगे। बेटी की शादी के बाद जो खर्च हुए, उनमें नंजम्मा ने बचा-खुचा भी खर्च कर दिया था। कुरुबरहळ्ळी से भी कितनी बार मंगाया जाये! अप्पण्णय्या ने कहा—"यहां से तिपटूर पैदल ही जा सकते हैं। नरसिंह-राजपुर तक रेल मिलेगी। फिर मोटर-रास्ता पैदल ही तय कर लेंगे। बीस रुपये पुर जायेंगे।"

यह रकम पूरी पड़ जायेगी, इस विचार से नंजम्मा, विश्व और अप्पण्णय्या का जाना निश्चित हुआ। लेकिन चेन्निगराय कहां पीछा छोड़ने वाले थे? उन्होंने भी आने की जिद्द की। फिर पैसे कहां से लायें? इसके अलावा, इस बात का विश्वास नहीं कि वे पैदल चलने के लिए तैयार होंगे। 'मैं कहीं से भी रुपये लाता हूं, तुझे क्या करना है?' वे बोले—'किसी से भी लगान रसीद लिखकर नहीं लाना चाहिए।' पत्नी ने शर्त रखी। ऐसा न करने का उन्होंने वायदा किया। न जाने कहां से पैसे जुटाए। खैर, अपने खर्च का उन्होंने ही इंतजाम कर लिया। इन तीनों का खर्चा अलग था। नंजम्मा ने पांच सेर सत्तू पीसा। देहातों से लाये धान में से आठ सेर धान अप्पण्णय्या ने मां की आंख बचाकर ला दिया था। पोहा बनाकर नंजम्मा ने यह भी बांध लिया। यात्रा में जाने की इच्छा गंगम्मा की भी हुई, लेकिन इस बहू के साथ नहीं। बेटे को भी जाने से मना कर दिया। लेकिन यह कहकर कि सारा खर्च भाभी करेगी तो क्यों न जाऊं—कहकर वह निकल ही पड़ा।

प्लेग से मुक्त होने के बाद इन छह महीनों में नंजम्मा ने विश्व की काफी देख-भाल कर उसे घी-दूध खिलाया। शुरू से ही वह तगड़ा रहा था। एक दिन मुंह अंधेरे, अर्थात् नंजम्मा पलाश के पत्ते लाने के लिए निकलने से पहले ही नंजम्मा, विश्व और अप्पण्णय्या चटनी-रोटी बांधकर निकल पड़े। मोटर की पहचान होने के कारण चेन्निगराय ने बताया कि वे मोटर से तिपटूर पहुंचकर वहां मिलेंगे।

रोटी का डिब्बा, सत्तू, पोहा, दो बर्तन, एक-दो कपड़े आदि एक छोटे बोरे में बांधकर सिर पर रखकर अप्पण्णय्या चल पड़ा। अपनी दो साड़ियां, चोली, विश्व के कपड़े, दो शाल, एक चादर की गठरी अपनी कांख में दबाकर, दूसरे हाथ से विश्व का हाथ थामे नंजम्मा चली। उजाला होने से पहले वे दो कोस चल चुके थे। विश्व मां का हाथ छोड़कर, चाचा से आगे दौड़ रहा था। 'मां, देखो, मैं तुमसे अधिक मजबूत हूं न ?' वह बार-बार पूछता था। तीन कोस चलने के बाद रास्ते में जो चौपाल मिला, उसके पास बैठकर तीनों ने चटनी-रोटी खायी। आगे दो-तीन मील चलते-फिरते विश्व की चाल धीमी होने लगी। अब फिर से मां का हाथ थामे कदम बढ़ाने लगा। पैर दुख रहे थे, लेकिन यह कहने में अपनी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल अनुभव कर रहा था। इनने में 'भर्रर्र' से उनके पास से मोटर गुजर गयी।

"वह पीछे की सीट पर बैठा है, देखा ?" अप्पण्णय्या ने कहा।

"नहीं !"

"मां, मोटरवाले बाबा को बिठा लेते हैं, मुझे भी क्यों नहीं बिठा लेते ?" विश्व ने प्रश्न किया।

"हुं ! ऐसे ही नहीं बिठा लेते हैं ! इसकी मां ···" अप्पण्णय्या ने उत्तर दिया।

'खैर जाने दो' कहकर नंजम्मा इसे शांत कर रही थी कि वह बोला—"आप कुछ भी कहिए। हमारा चिन्नय्या नालायक है। बचपन से ही वह ऐसा है। उसे केवल अपनी चिंता है। ऐसे को तो जूतों से मारना चाहिए। इसकी मां ···।"

"अप्पण्णय्या, हम तीर्थयात्रा के लिए निकले हैं। हमारे मुंह से बुरी बातें क्यों निकलें ? छोड़ दीजिए।" कहकर नंजम्मा विश्व से बोली—"मुन्ने, मैंने तुझे 'भज गोविंदं भज गोविंदं' सिखाया था न, वह कह सुनाओ तो सही। हम शृंगेरी जा रहे हैं न, उस मठ के शंकराचार्यजी ने ही यह लिखा था।"

विश्व सराग बोलने लगा। वह गलती करता तो मां सुधारती जाती। अप्पण्णय्या का मुंह कुछ चाह रहा था। और कुछ न सूझा तो जेब में हाथ डालकर तांबूल की थैली ही निकाली। आधे पान में चूना लगाकर, सुपारी का एक टुकड़ा डाला और फिर एक टुकड़ा तंबाकू के पत्ते का तोड़कर मुंह में भर लिया। थोड़ी ही देर में मुंह में पीक भर गयी। रास्ते-भर थूकता हुआ वह चलता रहा।

रेल एक बजे तिपटूर आती थी। बीच में एक बार रुककर आराम कर लेने पर भी, बीच-बीच में पगडंडी पर चलने के कारण वे बारह बजे स्टेशन पहुंचे। तीनों

ने फिर एक बार चटनी-रोटी खायी। इतने में पीपल के चौपाल के पास माधवभट्ट के होटल में भोजन करके चेन्निगराय भी वहां आ गये। अप्पण्णय्या ढाई टिकट खरीद लाया। चेन्निगराय ने अपना टिकट खरीदा।

रात को तरीकेरे स्टेशन पर नल से पानी लाकर इन तीनों ने चटनी-रोटी खायी। चेन्निगराय गांव देख आने के लिए निकल पड़े। 'अब वह कहां गया है, मालूम है क्या ?' अप्पण्णय्या के पूछने पर, 'कहीं भी जायें, हमें उससे क्या। चुप रहिए।' नंजम्मा बोली। चादर बिछाकर विश्व के साथ नंजम्मा स्टेशन के एक कोने में लेट गयी। उनके सिर के पास एक बोरा बिछाकर, शाल ओढ़ाकर थैली की गठरी का तकिया बनाकर अप्पण्णय्या भी लेट गया। तीनों को तुरंत नींद आ गयी। भोजन से निपटकर लौटे चेन्निगराय भी छोटे भाई के बगल में धोती बिछाकर फैल गये।

अगले दिन सुबह इनके पास और दस रोटियां बची थीं। परसों की बनी ये रोटियां सूख जाने पर भी पानी में डुबाकर खायी जा सकती थीं। चटनी तो खराब हो गयी थी। अप्पण्णय्या ने होटल से एक आने का सांभर लाने की बात कही। तब तक मुंह धोकर चेन्निगराय होटल में घुस चुके थे। विश्व जोरों से रो रहा था। नंजम्मा बोली, "एक आने का सांभर ले आओ। साथ ही विश्व के लिए एक इडली, दो सादा दोसा ले आइए। कुल तीन आने लगेंगे।"

नरसिंहराजपुर की छोटी रेल छूटते ही, विश्व आनंद से झूम उठा। खिड़की के बाहर कितने पेड़ हैं ? उनके बगल में एक-एक कर न गिन सकने वाले बड़े पेड़। उन पर लिपटी हरी लताएं। अभी-अभी वर्षा ऋतु समाप्त होकर आषोज में पेड़-पौधे सर्वत्र शोभा दे रहे थे। विश्व ने देखा कि एक बड़ा प्राणी निकल गया। अपनी पुस्तक में देखे हुए चित्रों की याद करके वह पहचान गया कि वह हाथी था। 'मां, इसे ही जंगल कहते हैं ?' उसने पूछा। मां भी समझ गयी कि यही जंगल है। लेकिन उसने भी इतने घने पेड़-पौधे इससे पहले नहीं देखे थे।

अप्पण्णय्या बोला—"इस तरफ सब ऐसा ही है। शिवमोग्गा के उस तरफ तो इससे भी भयानक जंगल हैं।"

"आप शिवमोग्गा कब गये थे ?"

कुछ स्मरण आकर वह चुप हो गया। तुरंत नंजम्मा को भी घटना याद आयी। उसे लगा कि मुझे ऐसा नहीं पूछना चाहिए था। इसी भाभी को लात मारकर,

पुलिस द्वारा पकड़े जाने के भय से भागकर वह इन्हीं स्थानों पर घूमा था, इसलिए उसे याद आई तो वह भ्रमित-सा खिड़की के बाहर बैठा रहा। चेन्निगराय तंबाकू मसल रहे थे।

मध्याह्न बारह बजे छोटी रेल नरसिंहराजपुर पहुंची। बस के एजेंटों ने 'शृंगेरी, शृंगेरी, अर्जंट शृंगेरी' कहते हुए घेर लिया।

"तुम लोग मोटर में चलते हो या पैदल आते हो?" चेन्निगराय ने पूछा।

"मोटर में चलने के लिए पैसे कहां हैं?" अप्पण्णय्या ने कहा।

"मेरे पैर में मोच आ गयी है। मैं मोटर से जाता हूं। पहले पहुंचकर छत्र में पूछताछ करके जगह की व्यवस्था करता हूं। तुम लोग पीछे से आ जाओ।" कहकर वे आगे बढ़ गये।

"चिन्नय्या, जरा ठहरो। भाभी और विश्व को साथ ले चलो। तीन रुपये लगेंगे—विश्व का आधा टिकट है। इसके अलावा 'हम गरीब हैं, बच्चे को गोद में बिठा लेते हैं, चार्ज माफ कीजिए' कहेंगे तो उसे ऐसे ही ले जा सकते हो। मैं पैदल चलकर आ जाऊंगा।" अप्पण्णय्या ने पुकार कर कहा।

"मेरे पास पैसे नहीं हैं। उसके पास हों तो चलने दो।" कहकर वे आगे बढ़ गये। सैकड़ों प्रवासियों की भीड़ दौड़-दौड़कर बस में घुस रही थी। चेन्निगराय भी घुसे और जगह बनाकर बैठ गये।

सूखी रोटी पानी में डुबोकर इन तीनों ने खायी। फिर रोटी खत्म हो गयी। पूरी नहीं पड़ी। नंजम्मा ने गुड़, इमली के झोल में डेढ़ पाव सत्तू मिलाया। उसके बाद विश्व की जेब में पोहा भरकर एक भेली गुड़ दे दिया। अप्पण्णय्या भाभी की गठरी को अपने बोरे में बांधकर सिर पर रखकर चलने लगा, और विश्व का हाथ नंजम्मा ने पकड़ लिया।

[2]

ऐसा जंगल नंजम्मा ने पहले कभी नहीं देखा था। पेड़, पौधे, हरियाली के प्रति उसे सदा लगाव रहा था; एक तरह का अलौकिक आकर्षण। पलाश के पत्ते लाने के लिए चौलेश्वर के टीले पर जाती थी तो गांव-भर में हरियाली से लहलहाते खेतों को बहुत देर तक देखती रह जाती थी। यहां तो जंगल ही जंगल हैं—बड़े-

बड़े पेड़ हैं। एक अजीब भाव मन को घेर लेता था। वह अंतःकरण को विचलित कर देता था। मन को प्रफुल्लित कर देने वाली यह हरियाली दोनों बच्चों की याद ताजा कर देती। ये सागवान के पत्ते कितने चौड़े हैं! एक-एक पत्ते पर ही परोसकर खाया जा सकता है। पलाश के पत्ते इतने चौड़े होते तो फिर लगाने की जरूरत ही न रहती। पलाश के पत्ते लेने जाते समय बड़े पत्तों को देखते ही रामण्णा निधी पाया-सा 'मां, यहां देखो, कितने बड़े पत्ते हैं!' कहते हुए दौड़कर तोड़ लेता था। पत्ते बड़े हों तो लगाने में अच्छे नहीं रहते। पत्तलें बहुत बड़ी हो जाती हैं। पलाश के डंठल का रस उठकर उसकी सारी कमीज पर दाग डाल देते थे। इसके लिए एक अलग पुरानी कमीज थी।

पार्वती पत्तों के लिए आती थी तो कुछ गुनगुनाती ही रहती। उसे गाने का बड़ा शौक था। मुझे जो गीत आते थे, उन सबको उसने सीख लिया था। बारह वर्ष की होते-होते मुझसे चक्की छुड़वा दी थी। सुबह पीसते समय उसके सराग गीत को सुनना ही एक आनंद का विषय था। मास्टरजी ने कहा था—कहते हैं कि उसके पति को गीत बहुत आते हैं; सूर्यनारायण हार्मोनियम लेकर महाभारत के पदों को सराग गाता तो सुननेवालों की आंखें भर जाती थीं; साथ ही अनेक श्लोक और भगवत्नाम कंठस्थ थे; घर में बैठकर रोज महाभारत पढ़ा करता था; उसका स्वभाव बड़ा ही सुंदर था—न नाराज होता था और न गरम ही। अपनी बेटी रत्ना की देखभाल किस तरह करता था? पुरुष हो तो ऐसा। ऐसे के साथ जीवन बिताने की किस्मत शायद हमारी पार्वती बेटी की नहीं रही—नंजम्मा का मन सूर्यनारायण की तुलना अपने पति चेन्निगराय से कर रहा था। इससे घृणा होती तो पूर्व-कर्म का फल समझकर मन दूसरी दिशा में मोड़ लेती।

जंगल को देख-देखकर विश्व खुशी से पागल होता जा रहा था। "मां, वहां देखो, हमारे पेड़ के समूह के आम के पेड़ से बड़ा है!" फिर तुरंत कहता—"उसके बगल का आकाश को छू रहा है।" फिर दृष्टि आगे दौड़ाकर कहता—"देखो, उस बंदर का मुंह ऐसा क्यों है? हमारे यहां का बंदर इससे सुंदर है न?"

"यह जंगली बंदर है बेटे।"

"तो हमारे यहां का कौनसा बंदर है?"

"गांव का बंदर।"

"वह गांव में तो रहता ही नहीं, वह तो बगीचे का बंदर है!" वह स्वयं ही उत्तर देता।

रास्ते में जाते-जाते उसे एक-दो सांप भी दिखायी पड़े। सांप उसके लिए अपरिचित नहीं थे। रामसंद्र में भी हैं। यहां जंगल होने के कारण बहुत हैं। बड़ा सतर्क होकर चलना चाहिए। कहते हैं कि पर्वत-प्रदेशों में अजगर भी रहते हैं, आदमी को पूरा ही निगल लेते हैं और लकड़ी के टुकड़े के समान पड़े रहते हैं।

लगातार मां का हाथ पकड़े रहने से विश्व को कंटाला आया तो हाथ छुड़ाकर चलने लगा। एक बार बीस गज आगे दौड़ता तो दूसरी बार दस गज पीछे रह जाता। एक बार नंजम्मा अपने ही विचार में लीन कदम बढ़ा रही थी। अप्पण्णय्या पूर्ववत इनसे दस गज आगे चल रहा था। अचानक कुछ याद आकर नंजम्मा मुड़कर देखती है तो विश्व दिखायी नहीं दिया। उसकी छाती धड़कने लगी। उसे पहली बार याद आया कि जंगल में शेर-चीते रहते हैं। सांप, कीड़ों की भी कमी नहीं। "अप्पण्णय्या, विश्व कहीं दीखता नहीं" चिल्लायी। दोनों मुड़कर खोजते हुए चले। एक फलांग पीछे लौटकर देखा तो वह रास्ते के बगल में छोटे सागवान के पेड़ पर चढ़कर 'क-की-कल, की-की-कल' नकल कर सामने के पेड़ पर बैठे बंदरों को छेड़ कर रहा था। 'क्यों रे, बिना कहे-सुने ऐसा क्यों किया?' पूछा तो उसने उत्तर दिया—'उस बंदर ने मुझे चिढ़ाया न, मां।'

तब से उसने उसे पीछे न छोड़कर आगे ही रखा।

अप्पण्णय्या जंगल के सौंदर्य-वौंदर्य को नहीं जानता। इस मनहूस जंगल से तो हमारा खेती-प्रदेश ही अच्छा है। यहां तो मडुआ, धान है ही नहीं। कोंदा खाये बिना हाथ-पैरों में ताकत कहां से आयेगी? कहते हैं पर्वत प्रदेश वाले हम-जैसे मजबूत नहीं होते—इस विचार के साथ ही उसे भी अपने बीते जीवन को सारी घटनाएं याद हो आयीं। उसकी बेटी जयलक्ष्मी और पार्वती हम उम्र थीं। बेटा रामकृष्ण उससे बहुत छोटा है। न जाने तीसरे का क्या हुआ। रामकृष्ण सचमुच मेरा बेटा है। हमारी मां ने तो इंकार कर दिया। मैं वहां गया था, यह मैं नहीं जानता। न जाने वह स्कूल जाता भी है या नहीं? सुना है कि वे मंत्र-तंत्र सिखाकर उसे पुरोहित बनाना चाहते हैं। अब अकेला ही देहात जाकर दान-वान लाता होगा। पत्नी न जाने कैसी होगी? कौन जाने मुझे याद करती भी होगी या नहीं? मुझे सुहाग (मंगलसूत्र) छीनना नहीं चाहिये था। छिनाल, वह भी

थोड़ा पत्ते-वते लगाकर नमक-मिर्च की कमाई करती तो किसी तरह सुख से रह सकते थे। इन लोगों को सुबह उठते ही कॉफी क्यों चाहिए ? रोज सफेद भात, अरहर की दाल की कढ़ी, काफी कहां से आयेगी ? इसके बाप ने कोई पैसों की गठरी दे रखी थी। फिर भी उस छिनाल को मुझे छोड़कर नहीं जाना चाहिए था—ऐसा सोचते ही उसे अपने अकेलेपन का अनुभव होता। जीवन में एक तरह की नीरसता, सुख के अभाव का भाव जाग उठता। "सुनाई देता है ?" पीछे आ रही भाभी से उसने पूछा।

"क्या कहा ?"

"उस लड़की की भी अब तक शादी करायी होगी ?"

"किसकी बात करते हैं ?"

साफ कहने में संकोच कर वह चुप हो गया। "किस लड़की की ?" भाभी ने दुबारा पूछा तो बोला—"किसी की नहीं, छोड़िये। मुझे रेवण्णशेट्टी के घर की रुद्राणी की याद आ गयी थी।"

"रुद्राणी को मरे कितने साल हो गये ? अब क्यों पूछ रहे हैं ?" नंजम्मा के इस प्रश्न का उसने कोई उत्तर नहीं दिया। अपने ही विचारों में लीन उसका मन देवर की बात की पृष्ठभूमि की कल्पना न कर सका। वे फिर चुपचाप चलने लगे। वह दस गज आगे और यह उतनी ही पीछे। विश्व अपने आप बड़बड़ाता कभी चाचा से आगे चला जाता और कभी दोनों के बीच चलता। कंटाला आने पर मां का हाथ पकड़कर कहता—"मां, कहानी सुनाओ न !"

बीच में एक बार विश्राम लेकर लगभग सात बजे वे चौदह मील चलकर कोप्पा पहुंचे। 'एक बर्तन में पोहा भिगोकर, गुड़ डालकर दूसरे में सत्तू मिलाया जा सकता है, नहीं तो किसी पेड़ के नीचे तीन पत्थरों का चूल्हा बनाकर अन्न पकाकर होटल से दो आने का साग लाया जा सकता है'—नंजम्मा ने सोचा।

"पर्वत प्रदेश के सेठ अपने घर कितने ही लोगों को खाना खिलाते हैं। चलो, वहीं खाकर आयेंगे।" अप्पण्णय्या ने सलाह दी।

"किसी के घर खाने नहीं जायेंगे।" भाभी बोली।

"तो मैं और विश्व खाकर आते हैं। आपको चूल्हा तैयार करके, होटल से साग ला देता हूं।"

"कोई भी नहीं जायेगा। हम जो कुछ लाये हैं, वही खायेंगे।"

अंततः उसी की चली। अप्पण्णय्या ने चूल्हा बनाकर, घासफूस ला दी। नंजम्मा ने अन्न पकाया। होटल से दो आने का सांभर मंगवाया तो बड़े बर्तन में आधे से भी अधिक मिला। तीनों ने भरपेट खाया। एक दुकान के बरामदे में सोकर सुबह उठकर सत्तू बनाया। एक नारियल तोड़कर अप्पण्णय्या होटल में ले गया और आधे को हसुए से छीलकर ले आया। भीगे हुए पोहों में कसा नारियल और गुड़ मिलाया। यह तीनों ने पेट भरकर खाया। बचे हुए गीले पोहों को विश्व के लिए रखकर वे आगे बढ़े। परसों गांव से तिपटूर तक सोलह मील, कल नरसिंह राजपुर से कोप्पा तक चौदह मील लगातार चलने की वजह से विश्व की दोनों टांगें दुखने लगी थीं। उसकी मां के भी दोनों पैर दुख रहे थे। लेकिन कोई चारा नहीं था। 'पैर दुख रहे हैं, मुन्ने ?' पूछा तो विश्व 'मर्दों के नहीं दुखते' उत्तर देकर आगे दौड़ पड़ा। कहते हैं वहां से हरिपुर बारह मील है और वहां शृंगेरी का मठ भी है। जल्दी-जल्दी चलकर मध्याह्न तक हरिपुर पहुंचे। नदी में स्नान कर, भगवान के दर्शन किये। बाद में मठ में भोजन किया। इनकी तरह ही आयी हुई लगभग सौ ब्राह्मण सुहागिनियों के भोजन में शामिल होने के कारण नंजम्मा को संकोच नहीं हुआ। भोजन के बाद विश्व ऊंघने लगा। कहते हैं शृंगेरी अब छह मील और है। नंजम्मा के पैरों का दर्द बढ़ चला था। उन्होंने निश्चय किया कि रात यहीं रहें और फिर सुबह चलेंगे। विश्व को एक छत में सुला दिया। उसके पास चाचा भी सो गया। नंजम्मा को सामने ही बहती हुई नदी के पास बैठने की इच्छा हुई। वह चल दी। रेत पर चलती हुई नदी के तट पर एक पत्थर पर पानी में दोनों पैर डालकर बैठ गयी। पैरों को बड़ा आराम मिला। अब रामण्णा और पार्वती की याद ने मन को घेर लिया। 'वे भी यहां आते तो न जाने कितने खुश होते। बात करते हुए साथ में चलते। मैं पापिन हूं'—सोचते हुए आंखों से आंसू छलक पड़े। आंसू पोंछे। शाम को विश्व और अप्पण्णय्या के बुलाने तक वह ऐसे ही बैठी रही थी।

[3]

इनके पहुंचने तक शृंगेरी चेन्निगराय के लिए पुराना हो चुका था। मठ, गोदाम, रसोईघर, भोजन के कितने कमरे हैं, हर कमरे में कितने लोग बैठ सकते हैं,

किस कमरे में परोसने वाले जल्दी-जल्दी आते हैं, आदि जान लेने के साथ-साथ नदी के वह उस पार वाले नरसिंह वन, कालभैरव टीला आदि सब कुछ देख चुके थे। उनके आने के बाद अलग कमरे के लिए प्रयत्न तो किया, लेकिन इस नवरात्रि के समय जब कि हजारों की तादाद में बड़े-बड़ों को जगह नहीं मिल रही थी, तो चेन्निगराय को मिलने की उम्मीद ही कहां थी। व्यवस्थापकों से गिड़गिड़ाया तो उन्होंने ऊपरी मजले पर जाने वाली सीढ़ी के नीचे की जगह दे दी। उतरने-चढ़ने वालों की खट्-खट् होने पर भी आखिर इतनी जगह तो मिली। छत्र के पहरेदारों के वहीं रहने के कारण कपड़े की गठरी वहां निश्चित हो कर छोड़ी जा सकती थी।

सुबह नौ बजे शृंगेरी पहुंचते ही नंजम्मा को पतिदेव के दर्शन हुए। छत्र में उनके कपड़ों के साथ ही अपना सामान रखा, फिर विश्व और अप्पण्णय्या के साथ वह मठ के पास आयी। नदी पर नये कपड़े पहनकर, धोए हुए कपड़ों को धूप में सुखाकर सब मंदिर देखने निकले। कुंकुमार्चन के लिए देर हो चुकी थी, अतः उसने तय किया कि कल सुबह करा लेंगे। मध्याह्न के भोजन के बाद तीनों नाव में बैठकर नदी पार करके नरसिंह वन देखने निकले तो चेन्निगराय भी साथ हो लिये। "हमें छोड़कर आप अकेले मोटर में आये थे न, अब आप हमारे साथ मत आइए।" विश्व ने पिता को छेड़ा। अप्पण्णय्या ने भी विश्व का पक्ष लेकर बात की। "कोई कुछ न बोले। विश्व, देख, तू होशियार लड़का नहीं?" कहकर नंजम्मा ने समझाया।

नरसिंह वन गये तो वहां गुलाब ही गुलाब के फूल दिखे। नंजम्मा ने गुलाब के इतने पौधों की कल्पना भी नहीं की थी। कहते हैं कि भक्तजन इन्हें जी-भर कर तोड़ते हैं और शारदादेवी को चढ़ाते हैं। कोई भी कितना भी तोड़कर मंदिर में ले जा सकता है। विश्व ने दौड़कर दो फूल तोड़े। उंगली में कांटा चुभने पर भी बिना परवाह किये मां को देते हुए बोला—"तुम लगा लो मां।" "इसे हमें नहीं लगाना चाहिए बेटे, भगवान के लिए हैं।" कहकर हाथ में ले लिये। तुरंत बेटी की याद आ गयी। पार्वती के बाल घने और लंबे थे। कंघी करके, वेणी बांधती तो इतनी घनी दीखती कि नजर लग जाये! सुरंगी फूलों के दिनों में रामण्णा मुंह-अंधेरे ही पेड़ पर चढ़कर झोली भर फूल की कलियां ले आता था। पार्वती भी बड़े चाव से उसकी मोटी माला गूंथती थी। ऋतुमति होने के बाद

एक दिन वेणी बांधी और सुरंगी पुष्प की माला पहनायी तो कितनी सुंदर लग रही थी। रामण्णा अपने स्कूल के कंपाउंड से दो गुलाब तोड़ लाया था। उन्हें लगाने पर तो सौंदर्य में और निखार आ गया था। भाई-बहन में कितनी आत्मीयता थी।

गुलाब के फूलों को देखकर यद्यपि नंजम्मा का मन मुरझा गया था लेकिन उसने फिर भी यहां घूम-घूमकर देखा। बड़े गुरु की तपस्या की गुफा, भैरव का टीला आदि की जानकारी चेन्निगराय ने दी। लौटते समय एक गीले टावेल में गुलाब के फूल भरकर देवी के मंदिर में चढ़ाये।

दूसरे दिन वे सुबह कुंकुमार्चन के लिए कुछ पहले ही निकले। पूजा होने तक विश्व को भी उपवास करना होगा। सुबह के साढ़े सात बजे का समय था। बाहर गये चेन्निगराय भी छत्र में लौट आये थे। धोती के पल्लू में मोटे-मोटे पंद्रह-बीस करेले थे।

"इन्हें क्यों ले आये ?" अप्पण्णय्या ने पूछा।

"बहुत अच्छे हैं। केवल डेढ़ आने में इतने सारे मिले। इसकी चटनी बना दो।" उन्होंने पत्नी को आज्ञा दी।

"आपको क्यों मजाक सूझ रहा है ? अब हम मंदिर में जा रहे हैं।"

"वहां से आने के बाद बना दो। मेरे पास जो खाने का डिब्बा है, उसमें ले जाकर वहां भोजन के साथ खाऊंगा। उनके दाल, सांभर, मिर्ची-नमक बराबर नहीं होते।"

"हजारों लोग खाते हैं। आप ऐसे ले जाकर खाने लगेंगे तो कोई हंसेगा नहीं ?"

"कौन हंसेगा ? उसकी मां···!"

"पुण्यक्षेत्र में आये हैं, गंदी बातें नहीं करनी चाहिए।"

अप्पण्णय्या बोला—"यहां चूल्हा कहां है ? उसके लिए मसाला कहां है ? उसे पीसें कहां ? करेले की चटनी खाने की इच्छा तुम्हें यहीं होनी थी ?"

"छत्र में पीसने का पत्थर है। यहीं तीन ईंट रखकर चूल्हा बनाया जा सकता है। पहरेदार से पूछें तो एक-दो लकड़ियां दे देगा।"

"मां, मत बनाओ, मां।" विश्व बोला।

"नालायक, सिखाता है; तेरी मां···!"

छत्र के पहरेदार ने सुन लिया। "यहां गंदी बातें न करें। व्यवस्थापकों को पता लग जायेगा तो भगा देंगे।" उसने सतर्क कर दिया। उसने यह भी बताया कि ईंट का चूल्हा बनाकर लकड़ी जलाकर गंदा न करें। चेन्निगराय को इससे निराशा हुई। करेले की चटनी उन्हें कितनी प्यारी थी। रामसंद्र में इतना अच्छा करेला नहीं मिलता। यहां मिलो तो भी कोई लाभ नहीं हुआ। "मनहूस व्यवस्थापक की ··· ···" गाली देकर चुप रह गये।

कुंकुमार्चन कराते समय नंजम्मा को एक अजीब मनःशांति मिली। शारदा-देवी को नंजम्मा ने अब तक चित्रों में ही देखा था। कल यहां पहुंचते ही जाकर देखा था, लेकिन तब देवी सजायी नहीं गयी थी। अब अगणित भक्तजन एक साथ कुंकुमार्चन करा रहे हैं। देवी की कैसी शोभा है। कैसा गांभीर्य। रामसंद्र की काली-मां का मुख देखकर तो डर लगता है। लेकिन शारदादेवी का मुख देखने पर भय गायब हो जाता है। देवी की कृपा से ही विश्व बचा है। अब से सुख-दुख, बीमारी कुछ भी हो, इन्हीं की मन्नत माननी चाहिए। और किसी भगवान की नहीं। ऐसा सोचकर उसने विश्व से तीन बार साष्टांग प्रणाम कराकर, स्वयं ने भी प्रदक्षिणा लेकर प्रणाम किया। मन्नत के चार आने का सिक्का डिब्बे में डालकर उन्होंने दिये गये प्रसाद के कुंकुम को रख लिया। अप्पण्णय्या ने भी श्रद्धा से प्रदक्षिणा ली और प्रणाम किया।

दूसरे दिन वे सब शौच आदि से निपटे। सुबह सात बजे का समय था। स्नान के लिए नदी पर जाना होगा। विश्व छत्र के बाहर कहीं होगा, ऐसा ख्याल था। लेकिन देखा तो वह नहीं मिला। चेन्निगराय तो नदी देखने के लिए चले जाते थे और लौटने के समय का पता नहीं रहता था। उनका इंतजार करने की जरूरत भी नहीं। लोगों की भीड़ में नंजम्मा और अप्पण्णय्या लड़के को ढूंढ़ने की सोच ही रहे थे कि रोता हुआ वहीं आ गया और मां का आंचल पकड़कर—"मुझे दोसा दिलवा दो, चलो" कहकर खींचने लगा।

"कपड़े बदल लेने के बाद सत्तू मिलाकर दूंगी, बेटे।" कहा तो "हूं। बाबा वहां दोसा खा रहे हैं, मुझे भी दिलवा दो।" जिद्द करने लगा।

"अभी तू कहां गया था?" अप्पण्णय्या ने पूछा।

"बाबा अकेले होटल जा रहे थे। मैंने भी पीछा किया। उन्होंने दो दोसा देने का आर्डर दिया। उसके बाद मुझे देखकर बोले, 'तू क्यों आया है रे?' 'मुझे

भी दोसा दिलवाइए' मैंने कहा। 'मेरे पास पैसे नहीं, अपनी मां से सत्तू बना देने को कह, चल !' वे बोले। तब मैंने ही होटल वाले से कहा 'मुझे भी दोसा दीजिए' तो बाबा बोले 'यह कोई लड़का मांग रहा है, बाद में मुझसे पैसे मत मांगिएगा।' इस पर होटल वाले ने मुझे धमकाकर भगा दिया।"

"यहां पोहा, सत्तू के हिस्से के लिए भी आता है और नजर बचाकर होटल में भी जाता है। देखा उस चोर, हरामजादे को !" अप्पण्णय्या बोला।

कुछ भी खाने दीजिए। आप मत बोलिए। बच्चे को ले जाकर एक आने का दोसा दिलवा दीजिए।

मां ने एक आना दिया। वह चाचा के साथ जाकर दोसा खाकर लौट आया। उसके बाद तीनों स्नान करने नदी पर गये। विश्व चाहता था कि जहां मछलियां हों, वहां स्नान किया जाये। उसने और उसकी मां ने भी कभी इतनी बड़ी-बड़ी मछलियां नहीं देखी थीं। अप्पण्णय्या ने बताया कि ऐसी मछलियां उसने रामनाथपुर में देखी थीं। खाने के लिए फेंकने पर सेना की भांति बड़ी तेजी से टूट पड़ती हैं। विश्व इन मछलियों को देख थकता न था। अपनी चड्डी की जेब में जो पोहे थे, उसने सब मछलियों को ही खिला दिये।

स्नान घाट से थोड़े ऊपरी भाग के पेड़ों के पास जाकर नंजम्मा ने पहले स्नान किया और कपड़े धोये। उसके बाद विश्व के साथ अप्पण्णय्या उतरा। लेकिन न जाने किस जादू से विश्व उन दोनों की दृष्टि से ओझल हो गया। दो ही क्षणों में वह बहाव की लपेट में आकर नीचे बहा जा रहा था। लेकिन तैराक होने के कारण डूबा नहीं था। "मुन्ना डूब रहा है, बचाओ, बचाओ" नजम्मा सांस रोके चिल्लायी। अप्पण्णय्या तुरंत तैरता हुआ झपटा। विश्व काफी दूर जा चुका था। एक ही सांस में हाथ मारते हुए आगे बढ़कर अप्पण्णय्या ने विश्व को पकड़ लिया। विश्व भी हाथ मार रहा था। खैर, दोनों तट पर आये। नंजम्मा की जान में जान आयी। तट से ही दौड़कर उनके पास पहुंची। यह सब देखने के लिए वहां लोगों की भीड़ जमा हो गयी।

तट पर पहुंचकर विश्व बोला—"मां, तालाब में कैसे भी तैर सकता हूं, लेकिन नदी तो इधर-उधर बहा ही ले जाती है।"

नंजम्मा को बहुत ही क्रोध आया। पकड़कर पीठ पर जोर से चार थाप लगाये। "मेरी तैरने की इच्छा हुई, तैरा।" उसने अपने कार्य का समर्थन किया।

"और भी नीचे जाते तो भंवर में फंस जाते।" पास खड़े एक ने कहा।

शृंगेरी में वे कुल चार दिन रहे। रोज सुबह देवी के कुंकुमार्चन से लेकर रात को स्वामी जी के सिंहासनारूढ़ होने तक देखते। चंडी होम के दूसरे दिन ही गांव के लिए रवाना हो गये। अप्पण्णय्या ने कहा—"बचे पैसे गिन लीजिए। तिपटूर तक रेल के टिकट के लिए हों तो काफी होगा। अधिक पैसे हों तो आप लोग चिन्नय्या के साथ मोटर से परसों आ जाइये। मैं आज ही पैदल निकल पड़ता हूं। नरसिंहराजपुर होता हुआ आऊंगा।" ऐसा किया भी जा सकता था। लेकिन बस के तीन रुपये देने के बाद, रास्ते में अगर विश्व खाने के लिए कुछ मांगने लगेगा तो दिलाने के लिए बचता नहीं था। और फिर यह भावना भी थी कि ऐसे जंगल फिर कभी उसे देखने को मिलेंगे भी कि नहीं। अनजाने ही जंगल के प्रति बहुत ही आकर्षण हो गया था। पैर दुखने पर भी विश्व चलने से हिचकने वाला नहीं। बस, तीनों पैदल ही निकल पड़े। गठरी अप्पण्णय्या ने संभाली। खरीद की हुई शारदादेवी की लिपटी तीनों फोटो नंजम्मा ने पकड़ीं।

रास्ते में नंजम्मा का मन प्रसन्न था। मेरे दोनों बच्चों का इस संसार से उठ जाना, शायद भगवान की ही इच्छा थी! भगवान की इच्छा के विरुद्ध कौन जा सकता है? ···यह भाव मन में जागता था। विश्व नदी के पंजे से छूटकर लौट आया है। शायद उस पर विपत्ति रही होगी। खैर, उससे बच गया। इस पर उसने सोचा कि गांव पहुंचने के बाद अपने पिताजी को बुलवाकर विश्व का पूरा भविष्य लिखवा लेना चाहिए। अप्पण्णय्या न जाने क्यों बहुत खोया-खोया था। शृंगेरी में भी किसी विचार में डूबा-सा मौन था। वह कभी उनके साथ रहा ही नहीं, हमेशा अपनी मां के साथ ही रहा और उसके साथ देहातों में घूमा। नंजम्मा भी यह सोचकर चुप रही कि शायद संकोचवश वह ऐसा कर रहा है।

नरसिंहराजपुर पहुंचे। अन्न पकाया। होटल से सांभर मंगाकर खाना खाया तो तीसरे दिन के मध्याह्न का एक बज गया था। बचे हुए भात को पात्र में रख-कर बांध दिया। इतने में चेन्निगराय की मोटर आ गयी। पिता का मुंह देखते ही विश्व बोला—"मां, इन्हें भात नहीं देना चाहिए। मुझे बिना दिये ही ये अकेले दोसा क्यों खा आये?" मां को इस बात का संकोच हुआ कि कहीं किसी ने सुन लिया तो क्या समझेंगे? उनकी रेल के लिए और भी देर थी। चेन्निगराय ने इनसे अन्न नहीं मांगा। स्टेशन के पास वाले होटल में भोजन मिलता था।

रात को चारों तरीकेरे में सोये। दूसरे दिन सुबह नौ बजे के करीब रेल आ से पहले ही नंजम्मा ने अन्न पका लिया। अप्पण्णय्या सांभर लाया। चेन्निगराय ने इनके साथ नहीं खाया।

उस दिन सुबह से ही अप्पण्णय्या कुछ अधिक खोया हुआ लग रहा था। गाड़ी में भी चुपचाप बैठा रहा था। भैया के देने पर भी एक बार भी तंबाकू नहीं खायी। बीरूर में गाड़ी बदलने के बाद उसके चेहरे पर चिंता झलकने लगी थी। नंजम्मा कारण तो पूछना चाहती थी, लेकिन पति के सामने नहीं। चुप रही। आसपास के मुसाफिरों ने बताया कि कडूर स्टेशन पर पानी भरने के लिए गाड़ी काफी देर ठहरती है। वड़े, बोंडे की तलाश में चेन्निगराय नीचे उतरे। अप्पण्णय्या भाभी से बोला—"आपके पास क्या इतने पैसे हैं कि आप और विश्व मोटर से तिपटूर चले जायं ?"

"क्यों ?"

"आप लोग चले जाइए। मैं यहीं नुग्गीकेरे तक जाकर आता हूं।"

इस अनपेक्षित समाचार से नंजम्मा को बेहद खुशी हुई। बहुत पीटा इसने अपनी पत्नी को। और अब तो मंगलसूत्र तोड़ने की घटना को कई साल हो गये थे। किंतु इसके जाने पर वे इससे बोलेंगे या नहीं! मां की बातों में आकर ही अप्पण्णय्या ने यह सब किया। अब भी परिवार एक हो जाये तो बहुत ही अच्छा है। यही सब नंजम्मा सोच रही थी कि अप्पण्णय्या बोल पड़ा—"बच्चों को देखने की इच्छा हो रही है।"

नंजम्मा ने पैसे गिनकर देखे। दो रुपये ढाई आने थे। दोनों के लिए गाड़ी के बारह आने लगते थे। एक रुपया अप्पण्णय्या के हाथ में रखकर बोली—"जाकर देख आइये। जयलक्ष्मी शादी लायक हो गयी होगी! अगर आप ही बच्चों की देखभाल न करें तो और कौन करेगा। रामकृष्ण न जाने स्कूल जाता है या देहातों के ही चक्कर काट-काटकर दान मांगता फिरता है! जाइये, देख आइए।"

बोरे की थैली की गांठ खोलकर अप्पण्णय्या अपनी कमीज, धोती निकाल रहा था कि चेन्निगराय लौटे। "कहां जा रहा है ?" उन्होंने पूछा तो अप्पण्णय्या बिना सोचे ही बोल पड़ा—"नुग्गीकेरे।" लेकिन न बताने का आभास होने से पहले ही पटवारी जी पूछ बैठे—"छोड़ी हुई पत्नी को देखने जा रहा है हल्कट-

राम ?" उतने में रेल चलने लगी। अप्पण्णय्या बिना उत्तर दिये जल्दी से उतर गया।

दोपहर के तीन बजे तिपटूर पहुंचे और शाम को करीब छह बजे घर। रात के लिए थोड़ा अन्न बचा था, इसलिए नंजम्मा ने कुछ नहीं पकाया। देवी का प्रसाद और फोटो मास्टर जी के यहां देने के लिए उसी समय चल दी।

शृंगेरी से लायी हुई मनःशांति को बचा रखना मुश्किल हो गया। अप्पण्णय्या के नुग्गीकेरे जाने की बात चेन्निगराय से जानकर गंगम्मा दूसरे ही दिन दोपहर में आकर चिल्ला गयी—"क्यों री छिनाल, फिर से गौना कराने के लिए तूने ही उसे वहां भेजा है न ?" दो घंटों तक सड़क पर खड़ी होकर गालियां देती रही। नंजम्मा चुप थी। विश्व दादी को डांटने के लिए बाहर निकला तो उसे अंदर ले जाकर बिठा दिया। सास का सहस्रनाम समाप्त हो जाने के बाद, मन में उठा एक प्रश्न सता रहा था— हम अपने आप रहना चाहते हैं तो भी भगवान ऐसा क्यों कर रहा है ? हमारे न चाहने पर भी कोई-न-कोई आकर क्यों झगड़ने लगता है ? महादेवय्यजी से पूछा तो भी कोई समाधानकारक उत्तर नहीं मिला। उन्होंने तो श्रद्धा भाव से कह दिया—'हमारी परीक्षा ले रहा है ईश्वर।' लेकिन यह कैसी परीक्षा ? ईश्वर ऐसी परीक्षा क्यों ले रहा है ? मन में प्रश्न उठ रहे थे।

चार-पांच दिनों के बाद एक दिन सर्वक्का आयी। "नंजम्मा जी, आपकी दादी ने पार्वती के लिए सोने का शेवंती-पुष्प दिया था न उसका क्या किया ?"

उसे तो इसकी याद ही नहीं थी। सोचने लगी कि सूर्यनारायण को पार्वती के सारे दागिने दिये तो कहीं यह भी न दे दिया गया हो। लेकिन जहां तक याद आता है, यह नहीं दिया है। घर में ढूंढ़ना चाहिए। परंतु बेटी की वस्तुएं न वह ढूंढ़ना चाहती थी न ही देखना। रामण्णा के कपड़े-लत्ते भी अछूत मरिय के बेटे को दे दिये थे।

"मुझे मालूम नहीं। क्यों सर्वक्का ?"

"कहते हैं कि आपके शृंगेरी जाने से पहले आपके यजमान जी ने उसे काशि-बड्डी के हाथों पचास रुपयों में बेच दिया था।"

"आपको किसने बताया ?"

"शिवेगौड़ की बेटी ने। पुराने जमाने का था वह। बड़ी ही सुंदर है—कहकर वह पहनती रहती है।"

नंजम्मा को अपने पति की शृंगेरी यात्रा याद आयी। क्रोध से मन खौल उठा। किंतु दो ही मिनट में अपना क्रोध शांत कर लिया। जो होना था, सो हो चुका। अब उन्हें गालियां देने से क्या मिलने वाला है? उनके इस स्वभाव को कोई सुधार नहीं सकता। यही सब सोचकर कहा—"जाने दो सर्वक्का, वह घर में होता तो मैं उसे देख भी नहीं सकती थी।" इस बात को यहीं समाप्त कर दिया।

[4]

कडूर से नौ मील दूर नुग्गीकेरे जाते समय अप्पण्णय्या के मस्तिष्क में विचार उठ रहे थे। अब बच्चे कैसे दीखते होंगे? वह मुझसे बोलेगी भी या नहीं! घर में कोई पुरुष का आधार चाहिये। अगर वह यह कह दे कि आप यहीं रह जाइये और देहात से दान-वान लाइये, तो क्या मैं ऐसा करूं? घर से जाते समय वह गर्भवती थी। लड़की हुई होगी या लड़का, कौन जाने? इन्हीं विचारों के जाल ने उसका मस्तिष्क घेर रखा था। अगर वह कह दे कि यहां क्यों आया, चल यहां से तो क्या किया जाये? यहां से लौट जाऊं? विचार उठा। कुछ भी हो, जब आ ही गया हूं तो बिना देखे नहीं जाना चाहिए। यह निश्चित कर शाम के छह बजे नुग्गीकेरे पहुंचा। पूछताछ करने पर पता चला कि उन्हें गांव छोड़े तीन साल हो गये। यहां गुजर-बसर करना मुश्किल हो गया था इसलिए कडूर में ही रहने लगे हैं। पता मिला—मार्केट रास्ता, गंगाधरप्पाजी की दुकान के पीछे।

"गुजारे के लिए क्या करते हैं?"

"हम क्या जानें? आपका उनसे क्या रिश्ता है?" प्रश्नकर्त्ता ने हंसकर पूछा।

इसने अपना परिचय देना ठीक नहीं समझा। अब और कुछ पूछे बिना वहां से चल दिया। रास्ते में पड़ने वाले तालाब की चढ़ान के उस पार ओड्डुरहळ्ळी पहुंचा। परदेशी बताकर एक घर से थोड़ा ज्वार का आटा मांगा। रोटी बनायी, और खायी। रात भी बितायी। बची हुई रोटी सुबह खाकर कडूर की ओर कदम बढ़ाने लगा।

कडूर उसके लिए अपरिचित जगह नहीं थी। इससे पहले भी वह यहां आ चुका था। सुबह दस बजे पहुंच गया। मार्केट रास्ता, गंगाधरजी की दुकान

खोजने लगा। दुकान के बगल में एक संकरी गली थी। इसमें से होकर गया तो पीछे की ओर मंगलोरी खपरैलों का एक छोटा-सा घर मिला। दरवाजे पर कांच की मणियों का तोरण लटका हुआ था। यह घर इन्हीं का होगा या नहीं—इस अनुमान में खड़ा था कि भीतर से एक लड़की निकली। चौदह-पंद्रह वर्ष की थी जिसके हाथ में किताबें थीं। चमचमाती साड़ी पहन रखी थी। मुख पर पाउडर लगा हुआ था। देखने पर पहचान गया, जयलक्ष्मी है, अपनी बड़ी बेटी।

उसने उससे पूछा—"यही घर है ?" लड़की ने पूछा—"आप कौन हैं ?"

"पहचाना नहीं ? तेरा बाबा हूं न !"

"किस गांव के ?" कहती हुई वह भीतर चली गयी।

"अरे इसकी मां…" मन में ही बोलकर वह भी अंदर चला गया। भीतरी सजावट का क्या कहना ? मुलायम गद्दी की कुर्सियां, पूरी दीवार पर फोटो, होटल जैसी मेज पर रेडियो था, पत्नी रेशमी परिधान में वेणी बांधे कुर्सी पर बैठी हुई थी। मुख पर पाउडर चुपड़ा हुआ था। कितनी सुंदर दिखाई दे रही थी ? गोदी में दो वर्ष की एक बच्ची थी ! पास ही एक बड़ी कुर्सी पर पीठ टिकाये लगभग चालीस का एक रईस दीख रहा आराम से सिगरेट पी रहा था। उसकी उंगलियों की अंगूठियों का क्या कहना ? गले में चेन और हाथ में सोने की घड़ी !

"यही घर है क्या ? मैं तो नुग्गीकेरे जाकर आया हूं।" अप्पण्णय्या बोला।

सातु आश्चर्य से एक क्षण उसे देखती रही। फिर पति के आगे कुछ कहने के पहले ही बोल उठी—"कौन हैं आप ? यहां क्यों आये ?"

"मुझसे पूछ रही है री, मैं कौन हूं ?"

"इसे घर से भगा दीजिए" कहकर वह बगल के कमरे में चली गयी।

"कौन है रे तू ?" उस पुरुष ने इस ढंग से पूछा कि अप्पण्णय्या घबरा गया। तुरंत मुड़कर बिना पीछे देखे ऐसे तेज कदम रखते हुए दौड़ने लगा मानो किसी ने पीछे कुत्ता छोड़ दिया हो। कहां जा रहा हूं, किस दिशा में जा रहा हूं, बिना सोचे भागता रहा। थक गया तो लंबे-लंबे डग भरने लगा। थोड़ी दूर एक गांव दिखायी दिया। पूछने पर पता चला कि वह बीरूर है। जल्दी-जल्दी वहां पहुंचा। एक ने बताया कि तिपटूर जानेवाली गाड़ी आने ही वाली है। स्टेशन जाकर टिकट खरीदा और गाड़ी में बैठ गया। लेकिन कंबख्त गाड़ी फिर कडूर में ही आकर रुकी ! डर लगने लगा कि कहीं खोज लिया तो ! जल्दी से खिड़की बंद कर दी।

गाड़ी छूटने तक मुंह फेरकर बैठा रहा। तिपटूर पहुंचने तक उसका भय नहीं मिटा। स्टेशन पर उतरा। बचे हुए पांच आने के सिर्फ दोसे खाये और फिर गांव की ओर कदम बढ़ाये। चलते-चलते जिज्ञासा उठी—वह पुरुष कौन था ? अनायास उत्तर भी मिला—उस हरामी को इस छिनाल ने रख लिया होगा ! इच्छा हुई कि ऐसे ही लौटकर उस कुलटा की झाड़ू से पूजा करूं, लेकिन डर से उस ओर कदम नहीं बदलने दिये।

बीच में बिना कहीं रुके रात के दस बजे गांव में पहुंच कर हनुमान मंदिर का दरवाजा खटखटाया। 'मैं हूं' कहने पर उसकी मां ने दरवाजा खोला। मिट्टी के तेल का दीया उसने जलाया कि तब तक अप्पण्णय्या भीतर आकर बैठ ही रहा था कि पूछ बैठी—"फिर उसी रांड को ढूंढ़ने गया था न ? उसने अपने कमरे में लेने से इंकार कर दिया होगा ?"

अप्पण्णय्या मौन रहा। मां फिर बोली—"बेशर्म, रांड़ की औलाद, लाज नहीं आयी तुझे ? शृंगेरी यात्रा का झूठा बहाना बनाकर उसके पास रमने गया था ? इस भगवान के मंदिर के अंदर बैठा है न ! ठहर, अण्णाजोइसजी को बुलाकर तेरा बहिष्कार करवाये देती हूं ! छोड़ी औरत से मिलने जाने वाले बेशर्म कहीं के !"

अप्पण्णय्या क्रोध में बोला—"मां, मुंह बंद करती है या नहीं ?"

"मैं क्यों मुंह बंद कर लूं बेशर्म ? टट्टी की बास सूंघता हुआ तू हरामजादा वहां···?"

उसकी गालियां सुन-सुनकर सारा शरीर जलने लगा था। "चुप रहती है या नहीं ?" दुबारा चिल्लाया। वह और जोर से गालियां देने लगी। अप्पण्णय्या के सामने खजूर की झाड़ू पड़ी थी, उसे उठाकर मां के मुंह, पीठ, हाथ-पैर बिना देखे रप-रप बीस-तीस लगा दीं। "हाय मेरी मां, यह मुझे मारे डाल रहा है" इतने जोर से चिल्लायी कि सात-आठ लोग उठकर आ गये। बाद में और लोग इकट्ठे हो गये। गंगम्मा ने अण्णाजोइसजी को बुलवाया। अय्याशास्त्रीजी भी आ गये।

"जन्म देने वाली मां को झाड़ू मारने से बढ़कर और कौनसा महापाप है ?" अय्याशास्त्रीजी ने पूछा।

"एक सौ एक रुपये दंड लेकर प्रायश्चित कराना चाहिए।" अण्णाजोइसजी ने निर्णय सुनाया।

"मुझसे एक बाल भी नहीं ले सकते। जाइये यहां से !" अप्पण्णय्या ने क्रुद्ध

होकर दो टूक जवाब दे दिया।

ऐसे व्यक्ति को मंदिर में कैसे रहने देते ये लोग ? उसका बहिष्कार कर उसी क्षण बाहर निकाल दिया। "यह इस गांव को ही छोड़ दे।"—अण्णाजोइसजी का अभिमत था। अप्पण्णय्या बोला—"हे पुरोहित, यह गांव अपने बाप की जागीर समझ रखी है क्या ?" उसकी यह हिम्मत किसी ने अब तक नहीं देखी थी। सभी स्तब्ध रह गये। अपने कपड़े-लत्ते लेकर वही निकल पड़ा। "इस रांड के बेटे के हाथ में कीड़े पड़े"—उसकी मां ने शाप दिया।

भाभी के घर जाने की इच्छा हुई। नुग्गीकेरे के बारे में पूछेगी तो क्या कहूंगा—इस विचार से वह वहां नहीं गया। सीधा महादेवय्यजी के मंदिर पर चला गया। बरामदे में सोकर रात बितायी। इसके बाद एक महीने तक गांव में नहीं रहा।

नंजम्मा को भी परसों रात को घटी इस घटना का पता चला। गांव लौटते ही उसके नुग्गीकेरे जाने की खबर अपनी मां तक पहुंचाने वाले अपने पति पर उसे बहुत गुस्सा आया। लेकिन उनसे कहने से कोई लाभ नहीं था। गंगम्मा अपने बेटे के साथ-साथ बहू को भी गालियां देती घूम रही थी। इसके लिए भी नंजम्मा कुछ नहीं बोली। विश्व से उसने कह रखा था कि रास्ते में दादी के पूछने पर कह देना कि मुझे कुछ पता नहीं।

एक महीने बाद एक दिन अप्पण्णय्या भाभी के पास आया। चेन्निगराय घर में नहीं थे। बोला—"यह कुलटा अगर मेरे साथ न रहे तो क्या मैं जिंदगी नहीं बिता सकता ? हिरीसावे के पास वाले देहातों में जाकर डेढ़ पल्ला मडुआ, लौबिया मिर्ची लेकर आया हूं। मेरे बीस रुपये आपके पास हैं, वह दे दीजिए। एक-दो बर्तन खरीद लेता हूं।"

"कहां रहेंगे ?"

"गड़रिये बीरेगौड़ के बरामदे में एक कमरा है। उसे ही मांग लिया है। बीरेगौड़ ने कह दिया है कि महाराज की तरह खाना-वाना बनाकर रह सकते हो।"

तीन दिनों में नंजम्मा ने उसके पैसे जुटाकर दे दिये। कंबनकेरे मार्केट जाकर उसने अल्यूमिनियम की बटलोई, लोटा, कड़छुल, एक घड़ा, आटा, पकाने की हंडिया, एक पाट और कुछ सामान खरीदकर ले आया। गांव में रहता तो लोंदा बना लेता। इसके लिए सांभर तो कभी-कभी ही बनाता, और नहीं तो भाभी के

यहां से ले आता जो दो बार के लिए पर्याप्त हो जाता था। कभी वहीं खा लेता था। उसे घर में प्रवेश देने के कारण नंजम्मा का बहिष्कार करने के लिए गंगम्मा ने पुरोहितों से कहा। लेकिन पुरोहितों ने भयवश कुछ नहीं कहा! एक तो वह सरकार का हिसाब-किताब लिखती है और दूसरे वह शृंगेरी यात्रा कर आयी थी। जबकि इन दोनों में से किसी ने भी शृंगेरी की दिशा तक नहीं देखी।

एक दिन नंजम्मा ने अप्पण्णय्या से पूछा—"नुग्गीकेरे में उन लोगों ने क्या कहा ?"

"वे छिनाल तो उस गांव में ही नहीं रहतीं।"

"किसी ने बताया नहीं कि कहां गयी हैं ?"

"क्यों नहीं बताते ! कडूर में किसी व्यापारी की रखैल बनी हुई है, छिनाल कहीं की।" उसने अपने देखे हुए सारे दृश्य कह सुनाये।

यह सुनकर नंजम्मा का मन मुरझा गया। हम दोनों इस घर में बहू बनकर आयीं। दोनों के पतियों में से किसी ने अपनी पत्नियों की देखभाल नहीं की। जो स्वयं बुद्धिमानी से नहीं जी सकते, वे अपनी पत्नियों की क्या देखभाल करते ! लेकिन बड़े से छोटा भाई अच्छा है। अच्छी तरह से उसे समझायें तो कहे अनुसार करता है। शरीर-तोड़ मेहनत करता है। पत्नी-बच्चों के खाने-पीने की पूछताछ के बाद ही खाता है। सोचा कि अगर सातु विवेक से काम लेती तो शायद ऐसी नौबत न आती ! लेकिन मुसीबत झेलने की क्षमता सबमें एक-सी नहीं होती ! ऐसी सास और पति की बातें सभी नहीं सह सकतीं। मां की बातों में आकर अगर पति ने अपनी ही बांधी झोपड़ी में आग लगा दी, पत्नी का मंगलसूत्र तोड़ लिया, तो भी बहू बनकर आयी मेरी देवरानी को ऐसा नहीं करना चाहिए था। यही सब सोचने के बाद उसने अप्पण्णय्या से पूछा—"इस बात को और किसी से कहा है ?"

"नहीं।"

"तो मत कहियेगा। हमारी ही इज्जत जायेगी।"

"उन छिनालों का नाम लेने से ही मेरी जीभ को इतना कष्ट होता है जितना मैला खाने से। मैं नहीं कहूंगा !"

"यह बात नहीं। कभी-कभी गुस्सा आने पर आपको यह होश ही नहीं रहता कि क्या कह रहे हैं और क्या नहीं ? भगवान की कसम खाकर कहिये कि किसी भी

हालत में आप यह किसी से नहीं कहेंगे।"

"श्रृंगेरी शारदोवी की कसम खाकर कहता हूं कि किसी से नहीं कहूंगा।" उसने दीवार पर टंगी हुई शारदादेवी की फोटो छूकर कहा।

पंद्रहवां अध्याय

इन आठ वर्षों में गांव के बाहर, सरकार ने प्राइमरी स्कूल का नया भवन बनवा दिया था। इस भवन के बन जाने से शिवेगौड़ के मकान में चलते स्कूल का भाड़ा उसे मिलना बंद हो गया। नये स्कूल से लगकर एक ओर खेल का नया मैदान था, और बाकी तीनों ओर खेत ही खेत।

एक दिन नंजम्मा बैठी हुई पिछले साल की खतौनी-बही सी रही थी कि मास्टरजी घर आये। बोले—"नंजम्माजी, जानती हैं आपके विश्व ने क्या किया?"

मास्टरजी स्वयं आकर कह रहे हैं तो उसने भारी शरारत की होगी—यही अर्थ नंजम्मा ने लगाया। आतंकित होकर पूछा तो उन्होंने कहा—"स्कूल के पीछे खेल का मैदान है न, उसके पास ही एक बमीठा है। देखा है न? लगता है उसके पास के बाड़े में एक सांप था। केंचुली बदलने से पहले सांप क्रिया-शून्य हो जाता है। शायद वह धूप सेंक रहा होगा। इसने एक नारियल के पत्ते का डंठा लेकर पीछे से जाकर उस पर वार कर दिया।"

"फिर" नंजम्मा ने घबराकर पूछा।

"सौभाग्य से वार खाली गया। 'सर्रर्र' से वह बमीठे में घुस गया। उसे घुसते हुए मैंने भी देखा। यह पीछे से भगाता जा रहा था तो मैंने पकड़कर दो चपत लगायीं।"

"ऐसा मारना था कि हाथ टूट जाता!"

"अब उसे पीटकर कोई फायदा नहीं। सांप बारह साल तक बदला लेता है। यह उसी स्कूल में जाता है, किसी दिन प्रतीक्षा करके डस दिया तो क्या होगा।"

उसकी छाती धड़कने लगी। इस लड़के का स्वभाव ही ऐसा है। बहुत ही साहसी है। वह मेरी जान पर आता है। "अब क्या करें मास्टरजी?"

"सांप बमीठे में ही होगा। चार सेवकों को भेजकर बमीठा तुड़वाकर उसे मार

डालना चाहिए। देर मत कीजिए।"

नंजम्मा तुरंत उठी और घर में ताला लगाकर कारिंदे को बुलाया। सारे गांव में सांप मारने में प्रसिद्ध बाल्मीक संजीव नायक को एक रुपया देकर उनके साथ भेजा। साथ में वह भी गयी। देखा तो विश्व पास ही के खेत के मैदान में पलटियां मार रहा था।

"सांप को मारने क्यों गया था ?" मां ने पूछा तो वह बोला—"संजीव नायक ने उस दिन तिरुमलय्या के घर के बगीचे में मारा था न, वैसे ही मैंने भी मारा।" संजीव नायक हाथ में बांस की लकड़ी, बरछा लिये सामने खड़ा रहा। कारिंदे, बमीठा खोदने लगे। उसका बिल नीचे उतरकर फैल गया था। उन्होंने शाम तक सारा खोद मारा, लेकिन खोजने पर भी सांप नहीं मिला।

"यह सोचकर कि अब बमीठा खोदने आयेंगे तो सांप महाराज ने अपनी जगह ही छोड़ दी"—संजीव नायक ने कहा, "अब उन्हें ढूंढ़ा नहीं जा सकता। व इंत-जार करके किसी दिन लड़के को डस लेगा।"

नंजम्मा को असह्य गुस्सा आया। नायक के हाथ की बांस की चिपली लेकर विश्व की पीठ पर चार जड़ दीं। वह रोता खड़ा रहा। "जो होना था हो चुका, अब मारने से क्या होगा ?" मास्टर जी ने समझाया। नंजम्मा लड़के का हाथ थामे घर आयी। दो बच्चों के गुजर जाने के बाद यह अकेला बचा है। तैरते हुए बीच तालाब तक जाना, बीच नदी में ही तैरना, महादेवय्यजी के मंदिर के मजले पर चढ़कर नीचे कूदना, दूसरों के बछड़े चुराकर सवारी करना, अकेले ही मधु-मक्खियों का छत्ता तोड़ने जाना, अकेले ही सांप मारना, ऐसा ही दुस्साहस करता रहता है। नंजम्मा को अपने बाप की याद आयी। नाना की ही तरह पैदा हुआ है यह। उसकी ही बुद्धि न आये तो गनीमत है। अब इसने जो अनर्थ किया है, उसके लिए क्या करे ? सांप बारह साल तक बदले की ताक में रहता है। सुबह उठते ही इसे स्कूल जाना पड़ता है। उस दिन उसने बेटे को स्कूल नहीं भेजा। मास्टरजी आकर बोले—"स्कूल भेजे बिना रहना तो ठीक है, लेकिन कब तक लड़के को इस तरह घर में बिठाकर रख सकेंगी ?"

यह भी एक प्रश्न था। प्राइमरी पूरी करने के बाद उसे कंबनकेरे के मिडिल स्कूल में जाना है। तिपटूर जाकर हाईस्कूल में पढ़ना है। इतना होने पर ही वह इलाकेदार बनेगा। नहीं तो मिडिल स्कूल का मास्टर बनेगा। शिक्षा ही न मिले

तो अपने बाप और चाचा के ही समान बनेगा। वह समझ नहीं पा रही थी कि क्या किया जाये ? जाकर महादेवय्यजी से पूछा तो उन्होंने सारा दिन सोचकर, आकर कहा—"अब यह तीसरी क्लास में है। अब इसे अपने भैया के घर छोड़ आइये। चौथी क्लास वहीं पढ़ने दो। उसके बाद उसे इस स्कूल में जाने की जरूरत नहीं रहेगी। खाने-पीने की व्यवस्था करके कंबनकेरे में अंग्रेजी स्कूल में भर्ती करा दीजियेगा। छुट्टी के दिनों में आये तो गांव के इस स्कूल की ओर न जाने दें। तब तक लड़का बड़ा हो जायेगा। आदमी भी पहचान नहीं पायेंगे, तो सांप को कैसे मालूम पड़ेगा ?"

"अय्याजी, आप जानते ही हैं वहां मेरी भाभी कैसी है ?"

"वह कैसी भी हो घर में दादी तो है ? और बच्चा भी कोई नहीं है। आपके भैया भी इसका बड़ा ख्याल रखेंगे।"

उसे भी सलाह अच्छी लगी। लेकिन इकलौते बेटे को वहां छोड़कर यहां वह अकेली कैसे रह पायेगी—यह विचार उसे सताने लगा। गांव में रखकर उसे मृत्यु के मुंह में ठूंसने की अपेक्षा यह चिंता बड़ी नहीं। छुट्टी मिलने पर गांव भी लाया जा सकता है। मैं भी बीच-बीच में जाकर देख आऊंगी। उसने तय किया कि किसी तरह भी डेढ़ साल वहीं रहने दें। इसमें ही उसकी भलाई है।

दूसरे ही दिन उसे नहलाया। दर्जी से कहकर नयी कमीज, चड्डी सिलवायी। कोडुबले, चकली बनायी। "मां, अब मैं कुछ नहीं करूंगा, मुझे कहीं मत भेजो।" विश्व गिड़गिड़ाने लगा। "केवल एक साल के लिए, मुन्ने। उसके बाद तू कंबनकेरे जायेगा। चाहे तो मैं वहां आकर तेरे लिए खाना बनाकर रहा करूंगी। तू बेकार उस सांप को मारने क्यों गया।" आंसू बहाती हुई बेटे के आंसू पोंछकर मां ने समझाया। दो कोठी मडुआ, बीस सेर लोबिया दाल, एक कुप्पी अरंडी तेल, एक घड़ी सीकाकाई पाउडर गाड़ी में लदवायी और स्कूल का सर्टिफिकेट संभालकर विश्व के साथ निकल पड़ी। चेन्निगराय साथ नहीं गये।

बहन के बेटे को घर में रख लेना कल्लेश के लिए खुशी की बात थी। अक्कम्मा के उत्साह का क्या कहना ? पानी-वानी उससे खींचा नहीं जाता था अब। फिर भी कोई बात नहीं, पड़पोते को सप्ताह में एक बार तेल स्नान कराने का अपनी तरफ से विश्वास दिलाया। अनिच्छा दिखायी तो कल्लेश की पत्नी ने। लेकिन उसका व्यवहार तो किसी के प्रति भी ठीक नहीं था।

साथ लाये समानों को देखकर कल्लेश बोला—"ये सब क्यों लायी ? मेरे घर में इतना अन्न नहीं है क्या ? वापस ले जाओ।"

"बेटे के खाने के खर्च के तौर पर मैं नहीं लायी। उसे खाना खिलाना तो तुम्हारा कर्त्तव्य है ही। घर में दुहती गाय थी, ले आयी। यहां भी काफी खर्च है। इसके दूध-दही की कोई चिंता नहीं रहेगी। तुम और कुछ मत करना। वह बड़ा नटखट है। वहां गांव में उसे आदमियों का भी भय नहीं था। कितना भी मारो, लड़के औरतों से नहीं डरते। इस शंका में न रहना कि मैं कुछ कहूंगी। जरूरत पड़ने पर दो-चार लगा देना और नियंत्रण में रखना। लिखने-पढ़ने में बड़ा होशियार है। गांव में तो मैं भी उसे सिखाती थी। यहां तुमसे हो सके तो सिखाना, नहीं तो किसी मास्टर को रख लेना। मैं महीने में एक रुपया भिजवा दूंगी।"

अब कल्लेश कुछ बोल ही नहीं सकता था। 'चार दिन रहकर जाओ।' कल्लेश और अक्कम्मा ने आग्रह किया। लेकिन उसे गांव में हिसाब-किताब लिखना था। अगले दिन उसी गाड़ी से रवाना हो गयी।

"मां, मैं भी आता हूं" विश्व रो रहा था। मां को भी रुलाई आ गयी थी। आंसू पोंछती हुई वह गाड़ी में बैठ गयी।

पिता कंठीजोइसजी से नहीं मिल सकी। पता लगा कि उन्हें गांव न आये तीन महीने हो गये।

[2]

विश्व को छोड़ आने के बाद नंजम्मा को घर में समय बिताना मुश्किल हो गया। करने के लिए काम तो थे, लेकिन घर सूना-सूना लगता था। पार्वती और रामण्णा की याद सताने लगती थी। जिस कमरे में बैठकर वह बही-खाते लिखती, मड़ुआ पीसती, आने वालों से बैठकर बातें करती, उसी कमरे में तो दोनों बीमार पड़े और फिर एक के बाद दूसरा चल बसा। उसे लगने लगा कि इस घर में नहीं रहना चाहिए। तो फिर जाये कहां ? याद आया, इस घर में आये लगभग तेरह साल हो गये हैं। गुंडेगौड़जी का यह घर मानो मेरा ही घर बन गया है। उन्हें भले ही इस घर की जरूरत नहीं हो, लेकिन मेरा अपना भी तो एक घर होना

चाहिए। यह एक नयी आशा जागी।

नया घर क्यों चाहिए? क्योंकि वह नहीं चाहती कि विश्व भविष्य में यहां रहे। उसे तो इलाकेदार बनना है, या कम से कम मिडिल स्कूल मास्टर। वह यहां रहने वाला नहीं। मां का बेटे के साथ रहना स्वाभाविक है। लेकिन गांव में अपना भी एक घोंसला होना चाहिए। छुट्टियों में चार दिन आकर रहने के लिए जगह चाहिए ही। उसी समय एक मकान की जगह खरीदने के लिए तैयार हुई। तेली चेलुवशेट्टी को पत्नी के गांव में बढ़िया जायदाद मिली थी इसलिए वह यहां की सारी चीजें बेचकर जाना चाहता था। नंजम्मा ने उसके सारे कागज-पत्र लिख देना स्वीकार कर लिया। अर्थात् वाक्य-रचना, नंजम्मा की और लिखावट चेन्निगराय की। जमीन खरीदने वाले लिखावट के कुछ नहीं देंगे। खरीदी के अंतर्गत यह घर की जगह भी शामिल होगी, तो क्यों न चेलुवशेट्टी हमें ही लिखकर दे दे। इसकी खरीदी के पचास रुपये दे देंगे। सब ऐसा ही हुआ। सरकारी कानून से वाकिफ नंजम्मा ने उसके घर की जगह अपने नाम से लिखवा ली। लगान-रसीदी पर शेष जमीन के खरीदारों से ही पचास रुपये दिलवा दिये। दो कमरेवाला बरामदा, भीतर तीन कमरे का आंगन, एक रसोईघर, और एक कमरा मडुआ भरकर रखने का या बेटे की शादी होने पर उनके सोने के लिए, इतना अंदाज लगाकर पीछे की ओर दो गाय बांधने के लिए झोपड़ी, बची हुई जगह में छोटा तरकारी का बगीचा बना लेना है। इस अंदाज के अनुसार उस पर खपरैल बिछानी हो तो कम-से-कम डेढ़ हजार रुपये चाहिए।

अब भी अनाज का हिसाब-किताब चालू था। पहले जैसी ही कमाई थी। कुरुबरहळ्ळी के अलावा रामसंद्र लिंगापुर के लोग भी अनाज का हिसाब लिखाने आते और मडुआ आदि लाकर दे जाते। घर में पहले जैसा खर्चा नहीं। एक बार का पकाया हुआ खाना दोनों बार के लिए पूरा हो जाता है। लोगों से मिला मडुआ बेचा जा सकता था। अब एक खंडी मडुए का भाव नव्वे रुपया हो गया है। दो साल का वर्षासन मिलाकर कुल पांच सौ रुपये होते हैं। अगर अगले वर्ष का लगान अग्रिम देने के लिए कहें तो कुरुबरहळ्ळी वाले अवश्य दे देंगे।

इस सिलसिले में एक दिन घर आकर मास्टरजी बोले—"देखिए, अब सरकार ने वयस्क शिक्षा समिति बनायी है। सरकार की आज्ञा हुई है कि स्त्री-पुरुष लिखना-पढ़ना सीखें, अट्ठारह वर्ष से बड़े लोगों को रात सात से नौ बजे तक

पढ़ना-लिखना सिखायें। इसे नाइट-स्कूल कहते हैं। इस गांव के पुरुषों की नाइट-स्कूल के लिए मुझे नियुक्त किया है। इंस्पेक्टर ने इस गांव की पढ़ी-लिखी महिलाओं के बारे में मुझसे पूछा तो मैंने आपका नाम सुझा दिया है।"

"मुझसे यह काम होगा मास्टरजी ?"

"आप यह क्या कह रही हैं ? कुल आठ महीने का काम है। एक समूह समाप्त होने पर दूसरा समूह शुरू करना है। अ, आ, इ, ई, सिखाकर दूसरी किताब पढ़ने लायक हुए, तो बस है ! उसके बाद वे स्वयं घर पर ही पेपर-वेपर पढ़कर अभ्यास करेंगे। महीने के पच्चीस रुपये आयेंगे। केवल महिलाएं भर्ती होंगी।"

"अक्षर कौन सीखना चाहती हैं ? और वह भी यहां की औरतें ?"

"सरकार ही स्लेट, पुस्तक, पेंसिल आदि देगी। आप जो दीप जलाती हैं, उसका भी पैसा देगी। बोर्ड, चाक सब देगी। अपने घर को ही स्कूल बना लीजिए। पहले सात-आठ औरतों को इकट्ठा कर लें तो बाद में और आ सकती हैं। चाहें तो अपनी घरवाली को भी भेज दूंगा।"

नंजम्मा पहले तो नहीं मानी, लेकिन जब एक दिन इनके घर तहसीलदार आये और उन्होंने भी यही बात कही तो मान गयी। कंबनकेरे के मिडिल स्कूल के हैडमास्टर की ही देखरेख में यह कार्य था। वे ही एक दिन एक बैलगाड़ी में स्लेट, पुस्तकें, बोर्ड, लालटेन आदि लेकर आये और उसे सौंपकर चले गये। मास्टरजी की पत्नी अ, आ, इ, ई जानती थीं। फिर भी मास्टरजी ने उन्हें भर्ती करा दिया। सर्वक्का अपने आप आकर भर्ती हुई तो नंजम्मा को आश्चर्य हुआ। पति के मना करने पर भी वह नहीं मानी थी। लिंगायतों की चार औरतें, जुलाहों की दो, गड़रियों के मौहल्ले से दो लड़कियां इसी तरह कुछ और मिलाकर चौदह हो गयीं। अ, आ, इ, ई बोर्ड पर लिखकर सबको क्लास में सिखाना नंजम्मा के लिए नया अनुभव था।

जिन्हें सीखना था, सीख गयीं और जिन्हें नहीं सीखना था, रह गयीं। लेकिन नंजम्मा नहीं जानती थी कि सर्वक्का में इतनी अक्ल है ! एक ही दिन में उसने आठ वर्णाक्षर सीख लिये थे और आठ दिनों में बावन वर्णाक्षर सीखकर, सरल अक्षरों को जोड़कर पढ़ने भी लगी थी।

"नंजम्माजी, आप पहले ही मुझे सिखा देतीं तो सीख लेती। मैं भी आपकी ही तरह हिसाब-किताब लिख सकती थी।" वह बोली।

"हिसाब-किताब लिखने के लिए सबके पास पटवारी-कार्य कहां होता है सर्वक्का ?"

"यह भी सब है।"

रोज सुबह से शाम तक घर के कामकाज, पटवारी-कार्य का हिसाब-किताब करना पड़ता है। किसी-किसी दिन शाम के समय महादेवय्यजी आकर बातें करते। रात के साढ़े आठ-नौ बजे तक क्लास चलती। उसके बाद खा-पीकर लेटती तो जल्दी ही नींद लग जाती। यह एक लाभ था। पढ़ाते समय उसे विश्व की याद आती। न जाने वह कैसा होगा ? मां को याद करके रोता भी होगा। अक्कम्मा के रहते डर नहीं है, वह जी नहीं दुखाती !

क्लास दो-तीन महीने तक चली। भर्ती हुई लोगों में से छह छोड़ गयीं और अब आठ ही आती थीं। मास्टरजी ने कहा था—"उनके छोड़ देने पर भी हाजिरी रजिस्टर में सबकी हाजिरी डाल दिया करें। मास्टरजी का पुरुषों का स्कूल उत्तम रहा। भर्ती हुए बाईस लोगों में से बीस लोग नियमित रूप से आ रहे थे।

एक दिन जब घर में चेन्निगराय नहीं थे, मास्टरजी आये। वे अपनी रात्रि-शाला की बात बता रहे थे—"इतनी उम्र होने पर भी चार दिन दिखाने के बाद भी अक्षर तक याद नहीं रख सकते। न जाने उनका ध्यान कहां रहता है। भगवान ही जाने, ये लोग कैसे साक्षर होंगे ?"

"मास्टरजी, हमारे अप्पण्णय्या कल सांभर लेने आयेंगे। तब उनसे कहूंगी। उन्हें भी आप रात्रिशाला में भर्ती कर लीजिए। जिस दिन वह गांव में रहेंगे, दिन में भी उन्हें कुछ पढ़ाइए। थोड़ी भी विद्या होती तो उनकी ऐसी स्थिति न होती।"

"ओह, अप्पण्णय्या तो दूसरी रात्रिशाला में जा रहे हैं।" कहकर वे हंस पड़े।

"क्या कहते हैं ?"

"कहते हैं अब उनकी और नरसी की खूब जमती है।"

नंजम्मा इस पर विश्वास न कर सकी। अप्पण्णय्या के पास पैसे कहां हैं ? क्या शौकीन है ? देहातों से मडुआ मांगकर लोंदा खाने वाले ब्राह्मण हैं। परायी स्त्रियों को आंख उठाकर देखने की आदत नहीं है।"

"मास्टरजी, यह तो किसी ने झूठी खबर फैलायी होगी।" नंजम्मा ने कहा।

"नहीं। कहते हैं कि सच है। उस नरसी को कोई घास नहीं डालता अब।

उसके पास पैसे की कमी नहीं। अप्पण्णय्या का भी कौन है ? पत्नी, बच्चे, मां ? देहातों से मांग-मांगकर यहां पकाकर खाते हैं। दोस्ती कैसे पनपी, भगवान जाने।"

नंजम्मा को न जाने क्यों शर्म महसूस हुई। आखिर वे अपने ही घर के हैं। अपना देवर है। भिक्षा मांगकर खाना न तो उनकी तकदीर में लिखा होगा ! लेकिन इतने दिनों के बाद यह मुसीबत कहां से आ गयी ? भिक्षाटन के लिए न जाकर उन्हें अपने घर में खाने दें, दो गायों पर नजर रखे तो बस है—कई दिनों से यह विचार उसके मन में था। लेकिन ऐसा कहने पर सास झगड़ने लगेंगी। बेबुनियादी प्रचार भी करेंगी। इसके अलावा अप्पण्णय्या भी एक-सा नहीं रहते। भिक्षाटन के लिए न जाने पर उनके पैर टूटने लगते हैं। अपनी-अपनी किस्मत की बात है—यह सोचकर चुप रही थी। लेकिन मास्टरजी ने जो कुछ कहा, सुनकर उससे रहा नहीं गया।

चार दिन तक वह बहुत सोचती रही कि क्या अप्पण्णय्या को नसीहत की दो बातें कह दी जायें ? अंततः मन को रोक न पायी। एक दिन दोपहर को वह सांभर का पात्र लेकर आया तो चेन्निगराय घर में नहीं थे। नंजम्मा बोली—"अप्पण्णय्या, एक बात पूछूं, गलत न समझना !"

"कहिए, क्या है ?"

"लोगों की जबान काबू में नहीं रहती। आप नरसी की दुकान से तंबाकू लेने जाते हैं तो भी लोग तरह-तरह की कहानी बना देते हैं। क्या आप दूसरी दुकान से तंबाकू नहीं ले सकते ? बेकार लोगों की बदनामी क्यों लेते हैं ?"

"उसकी मां⋯ ⋯ऐसा किसने कहा ?"

"कोई भी हो, हम सावधान रहें तो हमारे लिए ही अच्छा है न ?"

अप्पण्णय्या ने फिर कुछ नहीं कहा। सांभर ले गया, लेकिन दूसरे दिन सांभर लेने नहीं आया। आठ दिन उसके लिए भी सांभर बनाकर रखा था जिसे फेंकना पड़ा। इसके बाद नंजम्मा ने अधिक सांभर बनाना छोड़ दिया। शायद मेरे पूछने से या मुझसे नाराज होने से, और नहीं तो शर्म के मारे वह नहीं आया। रोटी बना लेने के साथ-साथ दाल, सांभर बना लेना अकेले पुरुष के लिए कितना मुश्किल काम है ? अपना-अपना कर्म ! कुछ भी करने दो। ऐसा सोच ही रही थी कि पता लगा कि अप्पण्णय्या गांव में ही नहीं है। इस बार बाहर गया तो

तीन महीने तक नहीं लौटा।

पता लगा कि वह अकेला नहर सिंचित खेती प्रदेश गया था। लौटकर भाभी को एक पल्ला धान दिया। उसके बाद रोज सांभर ले जाने लगा।

एक दिन मास्टरजी ने बताया—"कहते हैं कि अब अप्पणय्या उस ओर नहीं जाते, नहर सिंचित खेती प्रदेश से लौटने के बाद उस दुकान के पास एक बार भी नहीं गये।"

[3]

मातुल के प्रति विश्व को भीतर ही भीतर डर था। कल्लेश उसके प्रति गैर-जिम्मेदार नहीं था। साप्ताहिक बाजार के दिन चनाकुरमुरा, खारीसेव, बतासे लाकर देता। अपने साथ खेत-बाड़ी में ले जाता। लेकिन मस्ती करता तो डांटकर ऐसे आंखें दिखाता कि लड़के को पसीना छूटने लगता। एक दिन यह खबर मिलने पर कि दूसरे लड़के से झगड़ बैठा है, कल्लेश ने विश्व के कपाल पर दे मारा। मार इतनी जोर की थी कि लड़खड़ाकर गिरने के साथ-साथ उसने चड्डी में ही पेशाब कर दिया। अक्कम्मा ने कल्लेश को डांटा और फिर बच्चे को अपने साथ बिठाकर शांत किया।

विश्व के प्रति कमलु को तिलभर भी प्रेम नहीं था। उसके बैठने, उठने, बोलने, सब में उसे गलतियां दिखाई देतीं। लेकिन अक्कम्मा और पति कल्लेश के डर से उसे कुछ कह नहीं पाती। 'यह एक और हरामजादा हमारे घर में खाने आ गया है।' वह किटकिट कर गालियां देती रहती।

लड़का अब पहले जैसा नटखट नहीं रहा था। पढ़ने-लिखने में भी गांव में जितना होशियार था, अब नहीं था। 'किसी का डर न रहने से कमजोर हो गया है' कल्लेश ने यह सोचकर अनुशासन बढ़ा दिया। फिर भी वह दिन-ब-दिन कमजोर होता गया। कल्लेश सिखाने बैठता तो मरते बकरे के समान आंखें फैलाकर, कनखियों से यही देखने में ध्यान केंद्रित कर देता कि कहीं मामा का हाथ अपने पर न उठ रहा हो! अक्कम्मा अक्षर नहीं जानती थी। कल्लेश को इस बात की तृप्ति अवश्य थी कि भानजे को नियंत्रण में रखा हुआ है।

नागलापुर का तालाब रामसंद्र के तालाब से बड़ा है। गांव की तरफ के भाग

में पानी में बीच-बीच में काफी पत्थर हैं। विश्व की बड़ी इच्छा हुई कि तैरकर उन पत्थरों तक पहुंचूं और शरीर का पानी सूखने तक धूप सेंककर वापस तैरते हुए जाऊं। लेकिन मामा की कड़ी आज्ञा थी कि पानी में न उतरना। याद आते ही उसके आंसू बह उठे। इस गांव में न मधु-मक्खियों का छत्ता तोड़ सकता हूं और न ही पेड़ पर चढ़ सकता हूं—क्यों न अपने गांव भाग चलूं ? लेकिन यह भी डर था कि मां फिर यहीं ला छोड़ेंगी। अब वह मां को मन-ही-मन गालियां देने लगा।

एक दिन सुबह वह स्लेट पुस्तक लिये जा रहा था। अनेक छोटे-बड़े लोग समूह में इसके स्कूल की ओर जा रहे थे। भीड़ के सामने चलने वाले ने सफेद कमीज, सफेद टोपी पहन रखी थी। उसके हाथ में एक झंडा था। आगे-आगे झंडा लेकर चलने वाला अपने मुंह के पास कुछ रखकर बोल रहा था—'बोलो भारत माता की' यह बहुत जोर से सुनाई देता था तो पीछे के लोग 'जय' कहते। वे फिर 'महात्मा गांधी की' तो ये कहते 'जय'। वे और भी अनेक तरह की '··· ··· की' कहते, तो ये एक साथ 'जय' कहते। वैसे ही, जैसे मेले में रथ खींचते समय हरहर महादेव कहते हैं। विश्व को बड़ा मजा आया, आगे वाला जो बोलता था, चार बार सुनने पर याद हो गया। उनके रोकते ही वह जोर से बोला—'बोलो भारत की' तो सबने 'जय' कहा। इसने फिर सात-आठ '···की' चिल्लाया, तो सबने जयकार की। सामने वाले ने इसकी पीठ थपथपाकर कहा—'सयाने मुन्ने, आ तू ही आवाज लगा। इस झंडे को पकड़ ले।' और झंडा थमा दिया। साथ ही उन्होंने इसके मुंह के सामने वह साधन पकड़ा। अब वह सबका नायक बन गया। उसे बड़ा मजा आया।

भीड़ इसके स्कूल के पास ही गयी। सामने वाले मैदान में सब बैठ गये। जिस सज्जन ने इसे झंडा दिया था, वे खड़े रहे। दूसरे ने उनके मुंह के सामने उस साधन को पकड़ लिया। उसपर एक तार डालकर पास ही की एक मेज पर एक चौड़ा तुतुरी-सा और कुछ जोड़ दिया। वे बोलने लगे—"भाइयो और बहनो, अभी हमारा देश लाल बंदरों के हाथ में है। वे हमारा सारा सोना-चांदी लूट रहे हैं। हमारी मां को आजाद कराने के लिए हम सबको तैयार हो जाना चाहिए। अब हम सब युद्ध के लिए खड़े सिपाही··· ···।"

उनकी बात बड़ी जोर से सुनाई दे रही थी। उसे लाउडस्पीकर कहते हैं। और

दो-तीन लोगों ने बात की। अंत में वक्ता ने कहा—"आज शनिवार है। दोपहर को चन्नरायपट्टण में साप्ताहिक बाजार लगता है। वहां बड़ी भीड़ होती है। आप सब वहां आयें और देशभक्ति दिखायें।" बहुत से लोग उनके साथ रवाना हो गये। विश्व ने भी जाना चाहा। उस व्यक्ति के पास, जिसने झंडा थमाया था, जाकर बोला —"मैं भी आता हूं जी !"

"आठ मील चलोगे मुन्ने ?" उन्होंने पूछा।

"ओह, मैं शृंगेरी तक चल चुका हूं।"

बस ! भीड़ चल पड़ी। यह भी चला। रास्ते में रेतीला नाल, खजूर का वन, पलाश की कतारें…और भी न जाने क्या-क्या ! शृंगेरी के रास्ते में मिला, वैसा जंगल नहीं था। फिर भी मजेदार था। दोपहर के एक बजे के समय सब चन्नरायपट्टण पहुंचे। इतने में उसे भूख लगने लगी थी और थक भी गया था। उनसे बोला—'मुझे भूख लगी है जी !' हाथ पकड़कर ले गये। एक जगह डेगची रखकर पका रहे थे। शृंगेरी के भोजन के समान यहां भी हुआ। उसके बाद सब बाजार के मैदान में गये तो वहां लोग ही लोग थे। उसने शृंगेरी में इतनी भीड़ नहीं देखी थी। रामसंद्र में अंबा के मेले में भी नहीं देखी ! न नागलापुर के बाजार में ही। मैदान के बीच में एक मंच बांधकर उसपर लाउडस्पीकर रखा था।

विश्व को झंडा देकर ले आने वाले होले नरसीपुर के थे। उन्होंने उससे पूछा— "मुन्ने, तू भाषण करेगा ?"

"हां, करूंगा।"

"मैं बता दूंगा कि तुझे क्या-क्या बोलना है ?"

"आपने जो कुछ कहा, मुझे याद है। वही कह दूंगा। कहूंगा कि लाल बंदरों ने हमारी मां को जेल में रखा है।"

"राइट ! मैं और भी कहूंगा।" वे बहुत सारी बातें सिखाने लगे।

सभा प्रारंभ होने से पूर्व एक व्यक्ति मंच पर चढ़ा और लाउडस्पीकर के सामने खड़े होकर 'वंदे मातरम्' सुंदर ढंग से गाया। तत्पश्चात् 'अब सबसे पहले भारत माता का एक नन्हा बालक भाषण करेगा। उसकी बात से आप लोग प्रेरणा लें।' कहकर एक तरफ खड़ा हो गया। होलेनरसीपुर वाले व्यक्ति ने विश्व को मंच पर चढ़ाया और स्वयं भी चढ़कर उसे माइक के सामने खड़ा कर दिया। इसने पहले सामने लोगों की भीड़ देखी। भरे समुद्र की तरह लोगों की

भीड़ थी। इसे डर लगा। चेहरा लाल हो गया। उसके साथ आये हुए व्यक्ति ने धीरे से उससे कहा—कहो 'बोलो भारत माता की' विश्व चिल्लाया। अरे, उसके बोलने में भी कितना जोर से सुनाई देता है ? लाउडस्पीकर कैसा बनाया है ? उसके अंदर क्या रखा गया है ? अपने पास भी ऐसा ही एक रख लेना चाहिए। उतने में लोगों द्वारा उच्चरित 'जय' इसके द्वारा लाउडस्पीकर से निकली आवाज से भी अधिक जोर की गूंज उठी। जिन आठ-दस 'की' को वह जानता था, बोला। सबके लिए लोग 'जय' कहते हैं। 'अब भाषण शुरू करो'—वे बोले। भरे तालाब में तैरता-सा उसने भाषण प्रारम्भ कर ही दिया—"भाइयो और बहनो, आप लोग जानते ही हैं न कि हमारी भारत मां के हाथ-पैरों में जंजीर हैं। हम सब गुलाम हैं। ये हरामजादे लाल बंदर हमारा सारा लगान लेकर चले जा रहे हैं। आप कोई भी लगान मत दीजिए। हम सबको वे ताड़ी पिला रहे हैं।" निरंतर भाषण देते समय उसे जो कुछ सिखाया गया था, उससे भी आगे बढ़कर, लाल बंदरों के बारे में कहते समय जो भी मुंह में आया, गालियां मिला दीं। किसी तरह वह समझ गया था कि मां, बाप जैसी गालियां नहीं देनी चाहिए। भाषण समाप्त होते ही बगल में खड़े व्यक्ति ने उसके गले में शेवंती-पुष्प की एक माला डालकर कहा—'भारत माता की', 'जय' के साथ लोगों की करतल ध्वनि बहुत देर तक गूंजती रही। उसे नीचे उतारने के बाद और एक नये व्यक्ति ने मंच पर चढ़कर भाषण करना शुरू किया। उनका भाषण क्या था—उन्होंने विश्व की प्रशंसा का पुल बांध दिया—"ऐसे साहसी बालक से आप सब लोगों को प्रेरणा लेनी चाहिए। जिस तरह इस बालक ने सिंह-शिशु की भांति परदेशियों का विरोध किया है, उसी तरह आप लोग भी विरोध करें। इस साल आप में से कोई भी लगान न दें। पुलिस के आने पर इस बालक को याद कर लीजिए, आप लोगों को हिम्मत आयेगी।" इसी तरह बहुत कुछ बोले जिनमें से बहुत कुछ विश्व समझ नहीं पाया।

उतने में लोग एकाएक तितर-बितर होने लगे। खाकी कपड़ों में अनेक पुलिस वाले हाथ में लंबे-लंबे बांस से डंडे लिये आ गये। सफेद टोपी पहने हुए सब लोगों को घेरकर लाउडस्पीकर ले लिया। दोनों में परस्पर बातें हुई। अंत में सबको पुलिस स्टेशन ले गये। उनमें विश्व भी था। सबको एक बड़े कमरे में डाल कर, लोहे के सींकचों का दरवाजा बंद करके ताला लगा दिया। भीतर से लोग

चिल्ला रहे थे—'भारत माता की जय', कुछ लोग आपस में कुछ बोल रहे थे। और कई लोग अंग्रेजी में बोल रहे थे। विश्व उनमें से किसी को नहीं जानता था। उसे ले जाकर भाषण कराने वाला व्यक्ति वहां नहीं था। उसे रुलाई आ गयी। सिसक-सिसक कर रोने लगा। 'डरो मत मुन्ने, हम सब हैं न ! तू होशियार है।' एक आदमी उसके पास आकर उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए समझाने लगा। उसने रोना बंद कर दिया। लेकिन फिर डर गया। सुबह से जो कुछ चला था, उसमें उसे मजा आया था। लेकिन अब बिना खाना दिये भी क्यों बंद कर रखा है ? क्या यही जेल है ?

"जेल इसे ही कहते हैं जी ?" उसने पूछा।

"नहीं बेटे, यह राजमहल है।" एक ने कहा।

"तो फिर सिंहासन कहां है ?"

"प्रतापी बालक है !" सब कहने लगे। किसी ने भी उसके प्रश्न का जवाब नहीं दिया।

उतने में दरवाजा खोलकर पुलिस अधिकारी भीतर आया और उसका हाथ पकड़कर कहा—"बाहर आओ।"

"हम इस बालक को नहीं छोड़ेंगे। आप उसे मारेंगे।" दूसरे उठ खड़े हुए।

"इतने छोटे को हम क्यों मारेंगे ? उसके अभिभावक आये हैं।" कहकर उसका हाथ पकड़ ले गये और दूसरों को भीतर डाल, फिर दरवाजे को ताला लगा दिया। दफ्तर में ले जाकर खड़ा करने के बाद कुर्सी पर बैठे हुए एक मोटे पुलिस वाले ने उससे पूछा—"लड़के, तू किस गांव का है ?"

"रामसंद्र !"

"रामसंद्र ? कहां है जी वह ?" उन्होंने पास खड़े पुलिस वाले से पूछा।

विश्व ही बोला—"तुमकूर डिस्ट्रिक्ट, तिपेटूर तालुका, कंबनकेरे इलाके में है रामसंद्र।"

"शाबाश, तुझे सब मालूम है। क्या पढ़ रहा है ?"

"तीसरी क्लास।"

"तू किसका बेटा है ?"

"पटवारी चेन्निगराय का बेटा हूं।"

"पटवारी का बेटा होकर कोई ऐसा काम करता है ? तुझे कौन ले आया था?"

पूछा तो पास खड़ा पुलिस वाला बोला—"रामसंद्र दूसरे डिस्ट्रिक्ट में है सर, यह वहां से नहीं आया था।" फिर इससे पूछा—"तू किस गांव से आया है ?"

"नागलापुर से।"

"वहां क्यों आया था ?"

"स्कूल जाता हूं।"

"किसके घर में रहता है ?"

"कल्लेशजोइसजी के घर में।"

"उनसे तेरा क्या संबंध ?"

"मां का बड़ा भाई है।"

खड़े पुलिस वाले ने बैठे हुए अफसर से कहा—"ओह ! अब समझ गया सर ! वह कल्लेश जो मेरे साथ पी. सी. था। इस गांव की मस्जिद के पीछे भूतघर है, वहां अकेले कंठीजोइसजी हैं जो जादू-टोना आदि करते रहते हैं—उनका बेटा है कल्लेश। मुन्ने, तू यहां कैसे आया ?"

विश्व ने सुबह अपने घर से निकलने से लेकर चन्नरायपट्टण पहुंचने तक की सारी बातें बता दीं। 'इसे कंठीजोइसजी के पास भेज दो, सिरदर्द क्यों मोल लें ?' फिर इसकी ओर मुड़कर आंखें दिखाकर कहा है, 'दुबारा इनके साथ मिलकर जय-वय चिल्लायेगा तो बेल्ट से मारूंगा, समझे ?' अफसर ने डांटा और फिर दांत काटकर बूट के पैर को जमीन पर जोर से पटक दिया। 'नहीं, नहीं' वह भयभीत होकर बोला। खड़े पुलिस वाले उसका हाथ पकड़कर उसी रात निकल गये। बाजार का रास्ता पारकर साबर मस्जिद के पीछे एक बड़े घर का दरवाजा खटखटाया। 'कौन है ?' भीतर से हुए प्रश्न के उत्तर में 'दरवाजा खोलिए, आपका पोता है' कहा। भीतर दीप जलाकर द्वार खोलने वाला चौड़ा चेहरा और ऊंचा आदमी था। 'आपकी बेटी का बेटा कांग्रेस वालों के साथ मिलकर अनजाने ही आ गया है, बुला लीजिए। और कभी ऐसा बाहर मत छोड़िये।' कहकर वे चले गये।

विश्व को दादाजी को देखा हुआ याद आया। दीदी की शादी से पहले ये अक्कम्मा के साथ गांव में आये थे ! लेकिन पूरी तरह स्मरण नहीं है। उनके साथ भीतर जाकर देखता है तो उसे डर लगा। भीतर व्याघ्र चर्म बिछा है। आदमी की खोपड़ियां, अस्थिपंजर आदि हैं। कौड़ीमणि, ताम्रपट्टी, धागे, कई

जोड़ी चप्पलें भी हैं।

"यहां मुझे डर लग रहा है।" वह बोला।

"आज बड़ी हिम्मत से तूने भाषण दिया। अब डर क्यों ? मैं नहीं जान सका था कि तू ही मेरी बेटी का लाड़ला है। वाह रे वाह मर्द ! रुस्तम ! मेरी बेटी की कोख सार्थक हुई।" कहकर उसे हाथ पकड़कर बिठा लिया।

बेटी पर कंठीजोइस का जो क्रोध था, वह उसके बच्चों की मौत की खबर पाकर भी नहीं उतरा था। वे यह भुला नहीं सकते कि बेटी ने उनके बेटे को कन्या देने की उनकी सलाह न मानकर अविनय दिखाया था। उनके और पोतों का कोई संपर्क नहीं था। कभी-कभी यह विचार आता कि अपने बच्चों की मौत से बेटी के मन को भारी सदमा पहुंचना स्वाभाविक है। लेकिन उन पोतों के प्रति जाग्रत अस्पष्ट वात्सल्य तो बेटी के माध्यम से प्रवाहित मूकभाव मात्र था। साथ में क्रोध भी मिला हुआ था। लेकिन अब इस पोते ने रुस्तम का काम किया है। पंद्रह-बीस हजार लोगों के सामने खड़े होकर पुलिस से भी न डरकर भाषण करके फूलमालाएं पहनवा ली हैं। उन्होंने अपनी आंखों से उसे लोगों द्वारा 'सिंहशिशु' कहकर प्रशंसा करते देखा है। वे भी उसका भाषण सुन रहे थे। अब उसके प्रति उनके मन में अभिमान उमड़ आया। "कहां से आया ?" उन्होंने पूछा।

उसने अब नागलापुर में रहने की बात बता दी। बहुत दिनों से वे गांव नहीं गये थे। चन्नरायपट्टण में भी नहीं गये। हासन, कौशिक, मग्गे, रामनाथपुर की ओर ही ज्यादा रहा करते।

"भूख लग रही है ?" उन्होंने पूछा।

"हां।"

"देख अब केला और शक्कर है, खाकर सो जाओ। सुबह होने पर होटल में कुछ खा लेना।"

"दोसा ?"

"हां, जो तू मांगेगा।"

उन्होंने छिलके उतारकर शक्कर में डुबा-डुबाकर केले दिये। वह पेटभर खा गया। अपने बिस्तर में ही सुलाकर, शाल का आधा उसे ओढ़ाकर दीप बुझा दिया। उसे नींद आ गयी, लेकिन उन्हें नहीं आयी। इच्छा हुई कि जाकर बेटी को देख आऊं। उसके बच्चों को मरे एक साल होने को आया। न जाने कितनी उतर

गयी होगी ! मैं उस लड़की की शादी में भी नहीं गया। अक्कम्मा ने कहा था कि अच्छे लड़के से शादी करायी थी। नंजा का पति, निकम्मा नामर्द है। मेरी बेटी का हाथ पकड़ने की योग्यता उस कुत्ते में कहां ? लेकिन परवाह नहीं। यह एक मर्द बालक उसके पेट से जन्मा है, यही बस है। इन्हीं विचारों में वे करवट बदलते रहे।

उतने में द्वार पर दस्तक की आवाज आई। दूसरी बार पुकारने पर कल्लेश की आवाज पहचान गये। वे उठे, और दीप जलाकर द्वार खोला। विश्व को यहां सोया हुआ देखकर उसकी जान में जान आई। दोपहर तक लड़के का इंतजार करने के बाद वह गांव के कुएं, तालाबों में खोज चुका था। किसी ने रात को बताया था कि चन्नरायपट्टण में जो भीड़ आयी थी, उसमें शायद वह भी था। तुरंत यहां चल पड़ा। आधी रात हो गयी थी और सब सो गये थे। अनुमान से पुलिस स्टेशन जाकर पूछताछ की। वहां पुराने सहयोगी यल्लप्पा ने, जो अब जमादार बन गया है, बालक के बारे में बताकर बोला—"तुम्हारे पिताजी भूत-घर में हैं। मैं स्वयं छोड़ आया हूं।" और लड़के के साहस का वर्णन किया।

कंठीजोइसजी ने भी पोते का साहस कह सुनाया। बच्चों के मरने के बाद नंजा का शृंगेरी जाना, वहां इसका नदी में तैरने का साहस, गांव में सांप को मारने पर भी सांप का छिप जाना, अब नागलापुर में पढ़ाई के लिए भेजा जाना आदि का कल्लेश ने सविस्तार बताया।

सुबह सब देर से उठे। विश्व ने जागकर करवट बदली तो मामाजी बैठे हुए दिखे। डर के मारे वह सकपका गया। उठकर मुंह धोकर तालाब की ओर से लौटने के बाद तीनों होटल में गये। 'मसाला दोसा खाओगे, मुन्ने ?' दादा ने पूछा। उसने उत्तर नहीं दिया। दुबारा पूछा तो बोला—'मुझे कुछ नहीं चाहिए।' वे समझ नहीं पाये कि लड़का कल्लेश से इतना क्यों डरता है। उन्होंने ही उसके लिए दो मसाला दोसा, मैसूर पाक आदि स्वादिष्ट चीजें मंगवायीं। कल्लेश जाने लगा तो बोले—"लड़के को पैदल मत ले जाओ। मैंने नया घोड़ा खरीदा है। पिछवाड़े बांध रखा है। जीन चढ़ाकर बिठाकर ले जाओ।"

उन्होंने ही घोड़े को बाहर लाकर जीन चढ़ाकर उसपर बिठाया तो विश्व की खुशी का ठिकाना न रहा। गांव में रहते समय पटेल के घर के बछेरे पर चोरी-छिपे सवारी कर भगाने की आदत तो थी। लेकिन इस तरह चमकते जीन के

इतने बड़े लाल घोड़े पर वह कभी नहीं बैठा था। क्षणभर के लिए डर लगा, लेकिन उतरने की बात नहीं कही। कल्लेश के पीछे बैठने पर दादाजी बोले—"यह देख, चाहो तो पंद्रह दिन घोड़ा वहीं रहने दो। इतने में इसे सवारी का अभ्यास करा दो। लड़कों को सवारी आनी चाहिए।"

सवारी बड़ी मजेदार रही। रास्ते में मामाजी ने कोई गाली नहीं दी; मुंह तक नहीं खोला। वह चाहता था कि और तेजी से घोड़ा दौड़ाया जाये, लेकिन ऐसा कहने से डरता था। चुपचाप बैठे सवारी का मजा लूट रहा था। परसों के भाषण की बातें याद आ रही थीं। 'यह घोड़ा अगर मेरा ही बने तो कितना अच्छा हो? दादाजी से मांग लेना चाहिए। इसपर बैठकर रात को अकेला गांव जाकर मां को जगाना चाहिए। और वहीं रह जाना चाहिए। मां के बिना, अकेले नहीं रहना चाहिए। हमेशा घोड़े पर आता-जाता रहूं तो सांप कैसे काटेगा? फिर से अपने गांव के स्कूल में ही भर्ती हो जाना चाहिए। मास्टरजी से कहना चाहिए, 'मैं घोड़े पर बैठा रहूंगा, आप पाठ सिखाइए।' प्राइमरी खत्म होने के बाद घोड़े पर बैठकर रोज हमारे गांव से कंबनकेरे मिडिल स्कूल जाऊंगा। अगर यह मामाजी साथ में न होते, तो अभी इसे अपने गांव की ओर भगा ले जाता। मुझे मारने वाले इस मामाजी का हाथ सड़ जाये।' वह अपने मन में सोच रहा था।

गांव पहुंचकर घोड़ा घर के सामने रोका। इसे नीचे उतारा तो द्वार पर खड़ी अक्कम्मा ने आकर पूछा—"कहां गया था मेरे लाल?" और सीने से लगा लिया। चप्पलों को बाहर छोड़कर कल्लेश सीधा रसोईघर में घुस गया। अक्कम्मा और विश्व भी भीतर आ चुके थे। हाथ में जो जली लकड़ी मिली, वही लेकर मामा ने विश्व की दोनों बांहों को पकड़कर उठा-उठाकर मारने लगा। 'हाय, राक्षस, बच्चा मर जायेगा, ऐसा नहीं मारते' अक्कम्मा छुड़ाने आई तो उसी के हाथ पर एक मार लग गयी। इसपर 'हाय-हाय' चिल्लाती हुई, "हे यमराज, बच्चों को ऐसा मारा जाता है?" कहा ही था कि तब तक कल्लेश विश्व को आठ-दस और लगा चुका था।

"बेकाबू भिखारी की तरह पला है भड़ुवा कहीं का! जो मिले, उनके साथ चला जाता है। कुछ हो जाता तो बदनाम कौन होता?" कहते-कहते उसकी दृष्टि लड़के पर पड़ी। पीठ से खून टपक रहा था। वह बेहोश होकर गिरा पड़ा

था। पेशाब पहनी हुई चड्डी में कर देने से जमीन पर बह रहा था। 'वहां सांप काटने के डर से मां ने बचे हुए अपने एकमात्र बेटे को यहां भेज दिया तो तूने मारकर उसकी जान ले ली!' कहकर अक्कम्मा जोर से रोने लगी। पास बगल वाले दौड़े आये। कल्लेश ने विश्व को छूकर जांचा। जान नहीं गयी थी। दौड़कर एक लोटा ठंडा पानी लाया और सिर पर डालने लगा। उसे थोड़ा-थोड़ा होश आया। कमीज उतारकर देखा तो पीठ-भर में घाव ही घाव हो गये और उनसे बहता हुआ खून जमकर काला पड़ता जा रहा था। कल्लेश ने ही घावों को धोया और घर में जो चंदन का तेल था, वह लगाया। लगाते समय विश्व 'हाय-हाय, जल रहा है' कहकर चिल्लाता रहा।

[4]

इस बीच रामसंद्र से मास्टरजी का तबादला हो गया। उन्हें इस गांव में आये पांच साल हो गये थे। अपने गांव हुलियारी के लिए तबादला करा लेने की वे भी कोशिश कर रहे थे। सौभाग्य से उसी गांव में तबादला हो भी गया। उनका चला जाना नंजम्मा को बहुत खला। वे एक सगे भाई की तरह रहे, सुख-दुख सांझा समझकर मदद की। उनकी पत्नी से भी आत्मीयता हो गयी थी। छह महीना चलने के बाद उसका नाइट स्कूल भी बंद हो गया। कंबनकेरे के हैडमास्टर ने आकर रिपोर्ट लिखी कि पहला नाइट स्कूल व्यवस्थित रूप से चला था और दूसरा शुरू करने के लिए सिफारिश की गयी थी। प्रथम बार का मानदेय एक सौ बीस रुपये कुछ ही दिनों में सरकार द्वारा भेजे जाने की बात कहकर, उससे उस रकम की रसीद ले गये। उस मास्टर के बदले में दूसरे कोई अवश्य आ गये थे, लेकिन नंजम्मा का उनसे कोई परिचय नहीं हुआ था। वेंकटेशय्या के जाने से महादेवय्यजी को भी उनकी कमी अखरी।

इसी समय नंजम्मा ने नये घर की तैयारी शुरू कर दी। फिलहाल कोई काम न था। इस विचार से वह लगातार मेहनत करती रही कि इस बार की बारिश गिरने से पहले खपरैल डालवा लेने चाहिए। वह घर बंधवाना नहीं जानती थी। हर कार्य स्वयं की देखरेख में, स्वयं के निर्देशन में कराना है। अन्यथा दुगुना खर्च होगा। अब उसके पास जो रकम है, वह दीवार, लकड़ी, बांस आदि के लिए

पुरेगी। छत की पट्टी कभी भी डलवायी जा सकती है। खपरैल के लिए पैसे जुटाने हैं। दीवार की लिपाई-पुताई आदि काम बाद में भी कराये जा सकते हैं। हर चीज लेते समय, दीवार, लकड़ी के कामों में भी महादेवय्यजी काम वालों को अपनी उपयोगी सलाह दिया करते थे। घर में भी कोई काम न था। नंजम्मा बेकार न बैठकर काम में हाथ बंटाने लगी। गारे के गोले उठाकर दीवारों के ऊपर फेंकती। मिट्टी सानने के लिए घड़ों में पानी खींचकर लाती। पटवारी की हिसाब-किताब लिखने वाली को यह काम करते देखकर कुलियों को संकोच होता रहा था। लेकिन वह सोचती थी कि यह मेरा घर है, अपनी मेहनत से बांधना है; बेकार बैठकर भी क्या करूं?

आठ-नौ फुट दीवार चढ़ चुकी थी। खपरैल के लिए पैसे जुटाना बाकी था। एक दिन शाम को, जहां मिट्टी मिलायी गयी थी, वहां जमीन से चिपकी मिट्टी कुदाली से कुरेदकर गोला बनाकर, ऊपर दीवार बनाने वाले को दे रही थी। उसके पिता वहां आ गये। कंधे पर एक थैला लटकाये, धोती पहने, शाल ओढ़े हुए थे। पैर में जूते और सिर पर हैट पहना, सफेद घोड़े पर सवार होकर निकलने वाले अब पहले वाले कंठीजोइसजी नहीं थे। पैदल ही चलकर आये थे। आते ही बोले—"नंजा, घर बंधवा रही हो? बहुत अच्छा किया।"

उसने कुदाल वहीं छोड़ दी। फिर कल किये जाने वाले काम के बारे में राज को बताकर वह पिता के साथ घर आयी। हाथ-पैर धोकर रसोईघर में जाकर चूल्हा जलाया। "नंजा, मेरे लिए कोई खास न बनाना। अन्न और इमली का झोल बना दो, बस।" कहते हुए वे भी रसोईघर में चूल्हे के पास आ गये और दीवार से टिकाकर रखा पाट बिछाकर बैठ गये। बोले—"तेरा बेटा तो बड़ा रुस्तम निकला। पैदा हो तो ऐसा। बीस हजार लोगों ने उसे सिंहशिशु कहा।" और जो कुछ उन्होंने देखा था, सविस्तार सुना दिया। बेटे की प्रशंसा सुनकर उसे भी खुशी हुई। लेकिन इस बात की चिंता भी हुई कि अगर यह लड़का इस तरह आगे बढ़कर पुलिसवालों से सिर-फुड़वा लेगा तो क्या होगा? 'मैं इस तरफ आया ही नहीं। कल तेरे बेटे को देखा। कहा न कि पुलिसवाले मेरे पास छोड़ गये थे। आज कल्लेश के साथ उसे घोड़े पर बिठाकर गांव भेज दिया। तुझे देखने की इच्छा हुई। यह सोचकर कि देर क्यों करूं, थैली कंधे से लटका, निकल ही पड़ा।" कंठीजोइसजी बोले।

बच्चों की मौत के बारे में उन्होंने कोई बात नहीं की। वह भी नहीं बोली। उन्होंने कहा—"घर बंधवा रही हो, अच्छा ही हुआ। पहले ही मालूम होता तो कुछ पैसे भी दे देता। मंगलौरी खपरैल डलवा सकता था। अब एक महीने पहले आठ सौ रुपये देकर एक घोड़ा खरीद लिया। यह लो, दो सौ रुपये हैं।" और अपने कमीज की भीतरी जेब में हाथ डालकर एक वस्त्र में लिपटे नोटों की गड्डी निकालकर "ले लो, घर बांधने में खर्च कर लेना" कहकर उसके पास रख दी।

"आपको जरूरत पड़ेगी, रख लीजिए। घर के लिए मैंने इंतजाम कर लिया है।"

"मुझे पैसे की जरूरत नहीं है, तू रख ले।"

उस दिन रात लेटने के पश्चात् बाप-बेटी बहुत देर तक बातें करते रहे। नंजु ने पूछा—"पिताजी, आपकी इतनी उम्र हो गयी, भगवान ने हाथ-पैर मजबूत दिये हैं, फिर आप एक गांव से दूसरे गांव चक्कर क्यों काटते रहते हैं? चार छह महीने तक गांव लौटते ही नहीं? अक्कम्मा कह रही थीं कि आपका कोई ठिकाना ही नहीं रहता। अब भी आराम से घर नहीं रह सकते क्या आप?"

"गांव में रहकर क्या करूं?"

"आराम से बैठे रहिए।"

"आराम से कैसे रहूं? कुछ काम तो करना ही चाहिए न?" इस प्रश्न का उत्तर नंजम्मा के पास नहीं था। कुछ देर बाद वे बोले—"कल्लेश की पत्नी का व्यवहार तू जानती ही है। उस छिनाल को लात मारकर भगाने तक किसी को सुख-चैन नहीं। वह भी उसे मारता है, पीटता है, लेकिन भगाता नहीं। उसका खून करके किसी खेत में गाड़ देना कोई मुश्किल काम नहीं। मैं यह सोचकर चुप हूं कि अगर उसके साथ इसी तरह जीवन बिताने की बात कल्लेश की तकदीर में ही लिखी है, तो मैं क्यों उनके बीच में पड़ूं? मेरा तो छोड़ो, मैं कहीं भी रह सकता हूं।"

नंजम्मा कुछ नहीं बोली। वह चाहती थी कि कह दे, 'यहीं आकर रहिए', लेकिन वे बेटी के घर कभी रहने वाले नहीं। इसके अलावा वे यहां रहेंगे भी तो उसका पति घर छोड़ देगा। पति के स्वभाव से वे गुस्सा होकर उन्हें पकड़कर दो लगा भी सकते हैं। वह कुछ नहीं बोली। बीस मील पैदल चलकर आने के कारण उन्हें नींद जल्दी आ गयी।

नंजम्मा कुछ देर करवट बदलती रही। विश्व को पुलिस थाने ले जाने की बात वह सोच रही थी। स्वप्न में भी यही घटना देखी—उसे पुलिस ने छोड़ दिया है लेकिन मुझे पकड़ने आये हैं। छुड़ाकर भागने पर काले रंग के कांस्टेबल पीछा कर रहे हैं। सामने एक तालाब मिलता है जिसे पारकर दूर दौड़ आने के बाद वे 'हमारे हाथ से निकलकर कहां जा सकती हैं' कहकर जोर से हंसते हुए वहीं रुक जाते हैं। इसपर तुरंत उसकी नींद खुल गयी। कोई बुरा स्वप्न है? मैंने वैसा कौनसा बुरा काम किया है कि पुलिस मेरा पीछा करे? यही सोचकर लेटी रही। इसके बहुत देर बाद तक नींद नहीं आयी।

कंठीजोइसजी बेटी के घर तीन दिन रहे। निवास की इमारत देखकर उन्होंने अपनी सलाह दी। हासन तालुके में एक मकान बंधवाने के लिए उन्हें काम था, इसलिए अधिक दिन न ठहर कर वह चले गये।

नंजम्मा खपरैल के लिए पैसों की चिंता कर रही थी लेकिन पैसे पिताजी आकर दे गये। जिस दिन वे गये, उसी दिन वह सण्णेनहळ्ळी जाकर कह आयी कि पैसों का इंतजाम हो गया है, दो दिनों में खपरैल पहुंचाकर पैसे ले जायें। उठी हुई दीवारों के थोड़ा सूखने के बाद खंभे डलवा दिये। खपरैल के पैसे देने के बाद भी पचास रुपये बच जाते हैं। लाल मिट्टी का गारा, पुताई भी लगे हाथ करा देनी चाहिए। घर बना तो बस! गृह-प्रवेश के खर्चे के लिए किसी तरह पैसे जुटाये जा सकते हैं। तब तक नाइट स्कूल के पैसे आ गये तो उस पचास रुपयों में नये घर की पूजा करा देनी चाहिए। इसके लिए पिताजी को बुलाना चाहिए। इस गांव के पुरोहितों को नहीं। गृह-प्रवेश के लिए विश्व को बुलाना तो है ही। अक्कम्मा आयेगी। कल्लेश भी अवश्य आयेगा। उसकी पत्नी का कोई भरोसा नहीं।

इस बार गर्मी के दिन प्रारंभ होने से पहले ही आकाश में बादल दिखायी पड़े। खपरैल डालने से पहले बारिश आयी तो दीवारें ढह जायेंगी। अतः ऊपर का काम पहले करा लेने की सोची। सुतारों को सलाह देकर वह एक दिन फिर सण्णेनहळ्ळी गयी। कुबेरशेट्टी घर में नहीं था। उसके लौटने तक उसके घर बैठी रही। अंत में देर न करने का कहकर लौट आयी। अगले दिन खपरैलें आ गयीं। धूप लगातार जला रही थी। आकाश में बादल मंडरा रहे थे। जल्दी-जल्दी खपरैल चढ़ा देनी चाहिए। खपरैल बिछाने का कार्य भी शुरू हो गया। घर के दोनों ओर जानकार आदमी छत पर चढ़कर बैठ गये। औरतें सीढ़ियां चढ़कर खपरैल ऊपर चढ़ा रही

थीं। उस दिन शाम को बारिश होने की संभावना थी। नंजम्मा भी सुबह से लगातार खपरैल उठाकर दे रही थी। काम करने वालों ने आराम नहीं किया। शाम को चार बजे तक सारा काम समाप्त कर दिया गया। बीच की खपरैलें भी बिछा दी गयीं। 'बहन, आपका काम हो गया—आप जीत गयीं।' कहकर कुली नीचे उतर आये।

महादेवय्यजी वहीं खड़े थे, बोले—"नंजम्मा, अप्पण्णय्या ने गन्ने के खेत में आग लगायी थी; उसी से आप लोगों की सारी जमीन गयी थी न? उस दिन उसने और चिन्नय्या दोनों ने मिलकर घर की छत पर चढ़कर, मूसल से खपरैलें तोड़ी थीं। मैं कह रहा था न कि घर तोड़ना आसान है, लेकिन बांधना कितना कठिन है। खैर, तुमने अपना घर बंधवा ही लिया।"

चेन्निगराय वहीं खड़े थे। उन्होंने यह सुन लिया। क्रोध में आकर वहां से चल दिये।

बादलों ने केवल उधम मचाया था। शाम को बारिश नहीं हुई। रात तक आकाश स्वच्छ हो चुका था। सुबह से खपरैल उठा-उठाकर नंजम्मा थक गयी थी। फिर भी पेट के लिए कुछ बनाना था। रात को चूल्हा जलाकर थोड़ा अन्न बनाया। छाछ के साथ पति को परोसकर, स्वयं भी खाकर लेटी तो मृत बच्चों की याद ने आ घेरा। 'हमारे अपने घर में वे एक दिन भी नहीं रहे'—सोचकर दुखी हो उठी। विश्व की भी याद आयी। उसे नागलापुर गये छह महीने बीत गये थे। अब पंद्रह दिनों में गर्मी की छुट्टियां होंगी, तब यहां ले आऊंगी। इस गांव के स्कूल के आसपास न जाये—यही सतर्कता रखनी होगी। मुझे स्वयं बैलगाड़ी ले कर जाना चाहिए। 'मां-मां' कहकर न जाने कितना तड़प रहा होगा। उसके साथ ही अक्कम्मा को भी लिवा लाना चाहिए। उसे और एक साल वहां रहना है। उसके बाद कंबनकेरे। रामण्णा की तरह रोज आने-जाने के लिए इसे भी दस मील का चक्कर काटना न पड़े, इसलिए वहीं एक छोटा घर भाड़े पर लेकर वहीं रहेंगे। वहीं रहकर पटवारी का हिसाब-किताब भी लिखा जा सकता है'—इसी तरह सोचते-सोचते बहुत देर के बाद उसे नींद आयी।

सुबह आंखें खुलीं तो सारा शरीर भारी हो गया था और बुखार भी था। दोनों कांखों में दर्द था। कल सारा दिन धूप में खपरैल उठाती रही। धूप उसके लिए कोई नया अनुभव नहीं था। कल की धूप तो बारिश देने वाली कड़ी धूप थी।

मानव का शरीर सदा एक-सा नहीं रहता। इतनी खपरैलें उठाने का कारण दोनों कांखों में फोड़ा-सा निकल आया होगा। उठकर हाथ-मुंह धोया और फिर बछड़े को छोड़कर दुहने लगी। विश्व को भेजने के बाद दूध-दही खपता ही नहीं था। अब एक महीने से अप्पण्णय्या भी गांव में नहीं था। इस कारण काफी छाछ बच जाती। बुखार के बावजूद उसने छह रोटियां बनायीं। स्वयं आधी खाकर, शेष साढ़े पांच अपने पति के लिए रख दीं और बिस्तर बिछाकर लेट गयी। आधी निद्रावस्था, आधी जागरणावस्था में। शाम तक का समय यूं ही बीत गया। कोई घर नहीं आया। पति किसी काम के नहीं थे। शाम को उठकर, सूखी अद्रक और काली मिरी का काषाय बनाकर और उसे पीकर लेट गयी। उसे पता ही नहीं चला कि कब रात हुई और कब पतिदेव आकर सोये ?

आधी रात को उनके खर्राटे की आवाज से उसकी आंखें खुल गयीं। पेशाब के लिए उठी तो दोनों जांघों के बगल में दर्द हुआ। इसलिए फिर लेट गयी। अब उसे शंका हुई। खपरैल उठाने से कांखों में दर्द हो सकता है लेकिन सीढ़ियों पर चढ़ने-उतरने से जांघों के बगल में दर्द होता तो सुबह ही क्यों नहीं हुआ ? क्या प्लेग तो नहीं है ? लेकिन गांव भर में कहीं चूहे गिरने की खबर नहीं। गत बार पार्वती और रामण्णा को भी प्लेग हुआ था लेकिन तब भी किसी तरह का पूर्व संकेत नहीं था। अब भी ऐसे ही आ गया है क्या ? उसे डर लगने लगा। कुछ भी हो, महादेवय्यजी से पूछना चाहिए।

"देखिए, जाग गये हैं क्या ?"—उसने पति को पुकारा। उनके खुर्राटे नहीं टूटे। दुबारा पुकारा, हाथ बढ़ाकर उनका हाथ झकझोरा।

"चुपचाप पड़ी रह। रात को रसोई भी नहीं पकायी। अब नींद बिगाड़ रही है।" वे उन्नींदी आंखें लिए गरजे।

उसे गुस्सा आया। सोचा कि पूछूं 'आप आदमी हैं या राक्षस ?' लेकिन इससे उनकी जबान निर्विघ्न होकर गालियां देने लगेगी और अपना दुख और बढ़ जायेगा। इस विचार से अपनी जबान तक आयी बात को निगल कर बोली—"लगता है मुझे प्लेग हो गया है। जाकर महादेवय्यजी को बुला लाइए।"

वे कुछ नहीं बोले। थोड़ी देर में ही फिर खुर्राटे भरने लगे। सुबह तक इंतजार करना पड़ेगा, लेकिन नहीं। जहां तक हो सके जल्दी ही दवा लेनी चाहिए। वह उठी और कंबल ओढ़ा। द्वार खोलकर बाहर निकली। शरीर लड़खड़ा रहा

था। चलते समय जांघों के जोड़ों में दर्द महसूस हो रहा था, लेकिन कांखों के दर्द के समान नहीं था। किसी तरह मंदिर के द्वार तक पहुंचकर पुकारा—'अय्यजी'। गर्मियों के दिन होने के कारण वे बरामदे में ही सोये थे। उनके 'हां' कहने पर वह बोली—'लगता है मुझे प्लेग हो गया है। घर चलिए।' और लौट पड़ी। लड़खड़ाती घर के दरवाजे के पास पहुंची कि पीछे से महादेवय्यजी भी आ गये और उन्होंने दरवाजा खोला। भीतर जाकर सिरहाने के पास रखी दियासलाई से लैंप जलाया। फिर बिस्तर पर पड़ गयी। प्रकाश में महादेवय्यजी उसे देखने लगे। उसका सारा चेहरा सूज गया था, आंखें आग के समान गोल-गोल दीख रही थीं। चेहरे से ही पता चलता था कि बुखार है।

"बुखार कब आने लगा, बहन ?"

"कल रात से ही आया। कल कांखें दुख रही थीं तो सोचा कि खपरैलें उठाने से दर्द होता होगा। अब जागकर देखा तो जांघ के बगल में भी दर्द है।"

एक क्षण सोचने के बाद महादेवय्यजी ने पूछा—"सण्णेनहळ्ळी खपरैलों के लिए गयी थी, तब गांव के अंदर गयीं या बाहर ही रही थीं ?"

"लक्कय्या शेट्टी का घर गांव के बीच में है न, क्यों ?"

"उसके घर में बैठी थी ?"

"हां, मैं गयी थी तो वह घर पर नहीं था। दो घंटे तक इंतजार करती रही थी। क्यों ?"

"सुना है कि उस गांव में दस-बारह दिनों से चूहे गिर रहे हैं। गंवार है, मालूम नहीं होगा। गांव न छोड़, वहीं बसे हैं। आज मैं भिक्षाटन के लिए उस तरफ गया था, तब पता लगा इसलिए गांव में गया ही नहीं।"

"तो आपका मतलब है कि मुझे प्लेग हो गया है ?"

"कह नहीं सकता। जो भी हो, जल्दी दवा करानी चाहिए।"

इतना बोलने में ही वह थक गयी थी। कुछ देर यूं ही आंखें मूंदे रहने के बाद, 'घर में पचास रुपये हैं, कोई भी दवा मंगवा लीजिए। आपका ही सहारा है ?' कहकर पुनः आंखें मूंद लीं। अब उसे कौन-सी दवा दिलानी चाहिए—महादेवय्यजी सोचने लगे। गत बार विश्व को गाड़ी में बिठाकर कंबनकेरे अस्पताल जाने की घटना याद आयी। उन्होंने सोचा कि 'यह डाक्टर कुछ नहीं करेगा। हेमादीसिरप ही उचित रहेगा', नंजम्मा ने पैसे रखने की जगह बतायी। आधी

रात का समय होगा। बाहर निकलकर उन्होंने आकाश की ओर देखा। काल सूचक नक्षत्र दिखायी दे रहे थे। अब पैदल ही तुरंत तिपटूर पहुंचकर हेमादीसिरप खरीदकर पहली बस से कौन लौट सकता है? चेन्निगरांय रात के अंधेरे में चलने की हिम्मत नहीं रखते। उनके आलस्य से सभी परिचित हैं। पैसे ले जाकर दवा लाने के बदले मसाला दोसा, मैसूर पाक खाते हुए वहीं रह गये तो भी मुसीबत। अप्पण्णय्या गांव में नहीं। खुद ही जा सकते थे, लेकिन एक ही सांस में तिपटूर तक चलने की शक्ति अब उनमें भी नहीं रही थी और फिर खुद वहां जाऊं तो यहां रोगी के पास कौन रहेगा? मुसीबत के दिनों में नरसी किसी के भी काम आती थी। अपनी दुकान के लिए तिपटूर से सामान लाने की उसे आदत थी, लेकिन अकेली औरत रात में नहीं जा सकेगी? खैर, उससे पूछकर देखें? वह और किसी को भेज सकती है? ऐसा सोचकर गांव के बाहर उसकी दुकान पर पहुंचकर द्वार खटखटाया। वह तुरंत उठ गयी। दीप जलाकर, बाहर आई? महादेवय्यजी ने बताया तो वह बोली—'अय्याजी, आप मत डरिये। लिंगापुर के संबण्णाजी हैं। मेरे कहने पर वे जरूर काम कर देंगे।' भीतर जाकर उसे जगाया। लिंगापुर के संभेगौड़ महादेवय्यजी के परिचित थे। इस गड़रिये के घर पर वे खाना भी खा चुके थे। अपने नरसी के साथ यहां होने का उनको पता चल जाने से वह शर्मिंदा हो गया। परंतु बाहर निकलना ही पड़ेगा, इसलिए सिर झुकाकर खड़ा हो गया। एक कागज पर 'तिपटूर बाजार, वेंकटाचल शेट्टी की दुकान, हेमादीसिरप, प्लेग की दवा लिखकर और उसे समझाकर बीस रुपये दिये। "अभी भागिए और मोटर से वापस आइए।" नरसी ने आज्ञा दी। चप्पल पहनी, सिर पर दुपट्टा लपेटा और तेज कदम रखता हुआ वह अंधेरे में ही निकल पड़ा।

नरसी ने अय्याजी से पूछा—"अय्याजी, इस सारे गांव में नंजम्माजी जैसी औरत नहीं। उनके जैसी किसी और को कष्ट भी नहीं मिला। अब उन्हें ही प्लेग हो गया। आप ही बताइए, धर्म क्या कहता है?"

महादेवय्यजी को तत्काल कोई उत्तर नहीं सूझा। इस समय तो वे इस बारे में सोचने तक की स्थिति में नहीं थे। "और कभी बताऊंगा, अभी उस बहन को देखने वाला कोई नहीं है"—कहकर वे चल दिये।

"मैं भी आऊं?"

"नहीं !" वे आगे बढ़ गये।

"जरा ठहरिये।" पास आकर नरसी बोली—"मैं नहीं आऊंगी। देखिए, नंजम्माजी ने औरतों के लिए रात का स्कूल खोला था न, मैंने कहला भेजा था कि मैं भी उसमें भर्ती होना चाहती हूं। उन्होंने इंकार कर दिया था। अब अगर आऊं भी तो उन्हें बुरा लगेगा।"

"तुझे भर्ती न करने से बुरा लग गया ?"

"नहीं, छोड़िये ! अगर वे मुझे भर्ती कर लेतीं तो दूसरी औरतें न आतीं।" उसने ही कह दिया।

दवा के आते ही भेज देने का कहकर महादेवय्यजी घर आये तो नंजम्मा सोयी थी। लैंप जल रहा था। उसे उठाना ठीक न समझकर, चुपचाप उसका चेहरा निहारते हुए वह खंभे का आधार लेकर बैठ गये। एक बार सोचा कि चेन्निगराय को जगाया जाये। फिर यह सोचकर नहीं जगाया कि वे जागते तो बेचारी यह बहन ही मेरे पास क्यों आती ? उसका चेहरा देखते रहे। यह शादी होकर इस गांव में आयी, उस दिन से अब तक का इसका जीवन स्मरण हो आया। बहू बनकर पहले-पहल इस गांव में आयी तो बाहर के किसी से बोलती नहीं थी। सास के घर की बहू थी। बहू को न चाहने वाली सास। किसी के प्रति प्यार, विश्वास न देने वाला पति। जमीन का खोना। बचा लेने के लिए किया हुआ बहू का विवेकपूर्ण प्रयास। अकेली का ही बच्चों के साथ अलग संसार बसाना। बेटे की पढ़ाई-लिखाई। बेटी की शादी। दो बच्चों की मौत और अब मौत स्वयं नंजम्मा को ही निगलना चाहती है। नंजम्मा के समान कोई सधवा नहीं। जो दुख, कष्ट इस बहन पर आये, किसी और पर नहीं। अब इसे ही प्लेग ने आ घेरा है। क्या धर्म यही है ? ईश्वर सज्जनों की रक्षा करता है, दुर्जनों को दंड देता है—लेकिन, नंजम्मा ने क्या बुरा किया ? सास की मूर्खता और पति की हीनता का कष्ट इसे क्यों उठाना पड़ा ? क्या प्लेग इसी के घर में, इसी के बच्चों और अंत में इसी के लिए आना था ? उन्होंने तत्व और लावणी के पदों में पढ़ा था कि संसार में धर्म-कर्म के आधार पर सजा देने के लिए भगवान ने रोग, बीमारियां पैदा की हैं। उन्होंने यही समझा था, लेकिन अब समझ में नहीं आ रहा था, यह रहस्य।

ठीक उसी समय नंजम्मा चौंककर 'हाय-हाय' कहती हुई जाग उठी। "क्या

हुआ बहन ?" उन्होंने पूछा। पांच मिनट तक कुछ न समझकर, आंखें फैलाकर देखने के बाद बोली—"आप हैं ?"

"हां, क्या हुआ ?"

"सपना था। इससे पहले भी एक बार आया था। दो काले पुलिसवाले मुझे भगाते हुए आये थे। मैं तालाब पार कर गयी तो कहते थे कि हमसे बचकर कहां जा सकती है। अब फिर वही स्वप्न है। मेरे तालाब पार करने से पहले ही दोनों पास और आकर मुझे पकड़कर काली रस्सी से बांध रहे थे। इतने में मैं जाग उठी।"

"बुखार के ताप के कारण ऐसे स्वप्न आते हैं। चुपचाप लेटी रहो बहन !"

"बुखार के कारण नहीं अय्यजी ! अब मेरा मरना निश्चित है। मुझे थोड़ी-सी मांडी बनाकर देंगे ? इस बात का संकोच मत कीजिए कि यह ब्राह्मणों का घर है। जब नम्मय्या आया था, तो उसने उपमा के लिए चावल कूटकर कण बनाकर रखे थे जो ऊपर काले डिब्बे में हैं। भक्ष बनाने के बर्तन में गुड़ है। गुड़ न मिले तो सादी मांडी भी चलेगी। बनाकर लाइए।"

वे उठे और लैंप लेकर भीतर गये। कल रात को चेन्निगराय के खाते समय गिरे हुए रोटी के टुकड़ों पर अंधेरे में भी मक्खियां उड़ रही थीं। चावल के कण और गुड़ उन्हें जल्दी ही मिल गये। नारियल के पत्ते जलाकर जल्दी से मांडी बनायी और एक थाली साथ में लाये। उन्होंने सहारा देकर नंजम्मा को बिठाया। वह सारा पी लेने के बाद फिर लेट गयी।

पांच मिनट बाद वह बोली—"अब मांडी पीकर ताकत आ गयी है। उसके बाद शायद होश खो जाये। अभी आपसे बोलती हूं।"

"बुखार में ज्यादा नहीं बोलना चाहिए। चुपचाप लेटी रहिए।"

"अब ही कहती हूं, सुनिए। कहते हैं कि मेरे पैदा होते ही मां मर गयी थी तब मैं एक साल की थी। कहते हैं कि एक दिन पालने में पड़े-पड़े मैं लगातार जोर-जोर से रोती रही। बाहर बारिश जोर से हो रही थी और मां गाय के बाड़े में थी, इसलिए मेरा रोना सुनाई नहीं पड़ा। मेरे पिता कोई संस्कृत मंत्र कंठस्थ कर रहे थे तब। मेरे रोने से उनके कार्य में बाधा पड़ी। यह एक हरामजादी उधम मचा रही है—गुस्से से कहकर पालना ले जाकर बाहर छप्पर के नीचे गिर रहे बारिश के पानी के नीचे रख दिया। फिर अंदर आकर मंत्र कंठस्थ करने लगे।

थोड़ी देर के बाद अक्कम्मा आकर देखती है तो पालना ही नहीं मिलता। 'बच्ची कहां है रे ?' पूछने पर बताया कि छप्पर के उतारू के नीचे है। सौभाग्य से मेरा मुंह गिरते पानी के नीचे नहीं था. केवल पैर थे। मुंह रास्ते की ओर था, नहीं तो मैं तभी मर जाती थी। अक्कम्मा ले आयी और ब्रांडी-वांडी पिलाकर सर्दी होने से बचा लिया।"

कंठीजोइसजी का ऐसा करना, उनके स्वभाव से परिचित महादेवय्यजी को कोई अस्वाभाविक नहीं लगा। नंजम्मा आगे बोली—"मुझे तभी मर जाना चाहिए था, लेकिन क्यों नहीं मरी ? इतने साल ऐसे पति का हाथ पकड़कर इतने अच्छे बच्चों को जन्म दिया और उन्हें खोया। अब मरना नहीं चाहिए ? यह सब ऐसा क्यों हो रहा है, अय्यजी ?"

अय्यजी इसी प्रश्न पर एक घंटे से सोच रहे थे। नरसी का पूछा गया प्रश्न और अब नंजम्मा का प्रश्न, एक ही था। ऐसा क्यों होता है ? ईश्वर की इच्छा क्या होगी ? उन्होंने वेदांतों का अध्ययन किया था। उनका अर्जित ज्ञान है तत्व, और लावणी और भजन के पद। जब काशी में थे, ऐसे ही प्रश्नों को लेकर मठ में, मठ के बाहर तर्क करते हुए वे बड़े चाव से सुना करते थे। लेकिन अब नंजम्मा और एक घंटे पहले नरसी के पूछे गये प्रश्नों का उत्तर उनके पास नहीं था। नंजम्मा अधिक अक्लमंद है, पढ़ी-लिखी है। महाभारत के जिन पदों को वे ठीक-ठीक समझ नहीं पाते थे, उन्हें वह सराग गाकर स्पष्ट अर्थ समझा देती। लेकिन उसके इस प्रश्न का उत्तर क्या होगा ? जब वह बच्ची थी तभी क्यों नहीं मरी ? अपने को अधिक बुद्धिमान न समझकर वह मुझसे पूछ रही है।

अब नंजम्मा को नींद की बेहोशी थी। महादेवय्यजी उसका मुंह निहारते हुए बैठे थे। बुखार के मारे सूजे हुए मुख पर कई रेखाएं उभरती-मिटती-सी प्रतीत हो रही थीं। कुछ देर बाद आंखें खोलकर उसने फिर बोलने का प्रयत्न किया, लेकिन थकान के कारण बात निकल नहीं पाती थी। सारी शक्ति बटोरने का प्रयास कर वह बोली—"पार्वती, रामण्णा के मरने पर आपने यशोधरा की कहानी सुनाई थी। बेटे के मरने पर मौत से डरकर वह तट पर ही खड़ी रही। उसी दिन मैं भी श्मशान के कुएं में गिरने गयी थी। हिम्मत बटोरकर पानी में कूद पड़ती। लेकिन यह सोचकर लौट आयी कि विश्व क्या होगा ? अब मैं ही मर रही हूं तो विश्व का क्या होगा ? अक्कम्मा कुछ पकाकर डालेगी ! अपने

भाई पर मेरा विश्वास नहीं है। लड़के की रोटी की समस्या नहीं, उसे बुद्धिमान नहीं बनना चाहिए क्या ?"

इतना बोलते-बोलते बेचैनी का अनुभव कर उसने आंखें मूंद लीं। फिर कुछ नहीं बोली। नींद की बेहोशी आ गयी थी। महादेवय्यजी चुपचाप बैठे थे। मछुआरों के मोहल्ले में मुर्गों की बांग देने की आवाज आई। यह उनका रोज उठने का समय है। लगा कि तालाब के चढ़ान पर जाना चाहिए। जाने से पहले चेन्निगराय को जगाकर कहना चाहा, लेकिन यह सोचकर कि उन्हें जगाकर भी रोगी को कोई लाभ नहीं होने वाला है, जलते हुए लैंप को वैसा ही छोड़कर और दरवाजे को थोड़ा-सा आगे खींचकर बाहर निकल गये। चढ़ान से लौटते समय कौए बोल रहे थे। उठकर चढ़ान की ओर जाने वाले लोग आपस में बातें कर रहे थे, आसपास के गांवों में चूहे गिर रहे हैं, गांव के मुखियों ने मिलकर कल रात को तय किया है कि इस गांव में गिरने से पहले ही गांव छोड़ देना चाहिए, आज सुबह गांव भर में ढोल पीटकर सूचना दी जायेगी। कहते हैं कि कल शाम को कंबनकेरे के सरकारी इलाके वालों ने कहला भेजा है, आज सुबह वे इस गांव में आने वाले हैं, सूचना दी गयी है कि देवी के मंदिर के पास गांव की औरतें और बच्चे आकर इनाक्युलेशन की सुई लगवा लें। कहते हैं कि सरकार की आज्ञा हुई है, रोग फैलने से पहले ही हर गांव में सुई लगा दी जानी चाहिए।

महादेवय्यजी को स्मरण हुआ कि गत साल कंबनकेरे के डाक्टर ने कहा था कि जिन्हें प्लेग हो चुका है, उन्हें सुई नहीं देंगे। गत साल भी यह बीमारी सबसे पहले नंजम्मा के घर आयी थी। इस बार भी बीमारीका संकेत मिलने से पहले ही इस बहन पर उसका आक्रमण हुआ। इस तरह सोचते हुए वह नंजम्मा के घर की ओर चल पड़े।

[5]

दो दिन में ही सबने गांव छोड़ दिया। नंजम्मा के घर बांधने के बाद जो शहतीर बल्लियां बची थीं, महादेवय्यजी ने ले जाकर झोपड़ी बनवा दी। उनके स्वयं के लिए तो चढ़ान पर मंदिर है ही। सबके लिए आश्चर्य का विषय था गंगम्मा का उसी झोपड़ी में आकर बहू की सेवा के लिए रहना। 'घर न बनवाती तो क्या

होता ? उस सण्णेनहळ्ळी में जाकर बीमारी मोल ले आयी। बुजुर्गों की बात सुनती तो इस छिनाल को कुछ नहीं होता ?' सदा बड़बड़ाती रहती। फिर भी महादेवय्यजी के कहे मुताबिक हेमादीसिरप, मांडी बहू के इंकार करने पर भी समय-समय पर उसका मुंह खोलकर पिलाती रही।

चेन्निगराय के इनाक्युलेशन ले लेने से बांह दर्द के कारण महादेवय्यजी के चढ़ान वाले मंदिर में, या बाहर के देवी के मंदिर के बरामदे में सो जाते थे। महादेवय्यजी 'मैं ठहरा संन्यासी, मुझे इस सुई की जरूरत है ? मेरे मरने पर कौन रोयेगा ?" कहने पर भी 'आपका मरना मुख्य नहीं है, आपके कारण बीमारी औरों को लगती है' कहकर वैद्य विभाग के लोगों ने सुई लगा दी। एक दिन बांह जरा दुख रही थी। लेकिन गांव वाले उसके रहते हुए भी झोपड़ी बना कर सामान ले जाते रहे। लेकिन गंगम्मा ने सुई नहीं लगवायी।

नंजम्मा जिस बिस्तर पर सोयी थी, उसे ही चार कोनों में चार व्यक्तियों ने पकड़कर झोपड़ी में लिटा दिया। वह बेहोश थी। एक दिन तक होश आया ही नहीं। लेकिन सास द्वारा जबर्दस्ती पिलाई जाने वाली दवा और मांडी का माढ़ निगल लेती थी। झोपड़ी में आने के दूसरे दिन उसे थोड़ा-सा होश आया और वह बोलने का प्रयत्न करने लगी। पास ही बैठे हुए महादेवय्यजी ने उसके मुंह के पास कान ले जाकर पूछा—"क्या है ?"

"वि··· श्वा··· ?"

"देखना चाहती हैं ?"

उसके मुंह से 'हां' का संकेत पाकर 'लाने के लिए आदमी भेजता हूं' कहकर बाहर आये। सारा गांव अपनी झोपड़ी बनाने में व्यस्त था। अब कौन मिलेगा— यही सोचते हुए कारिंदे की झोपड़ी पर पहुंचकर बोले—"नंजम्मा अब तो मरने वाली है। बेटे को देखना चाहती है। किसी को नागलापुर जाकर लड़के को ले आना होगा, भई !"

"अय्यजी, आप ही देखिए, मेरी झोपड़ी पर केवल एक जोड़ी नारियल के पत्ते ही बिछ पाये हैं। आज गौड़क्की की बाड़ी में जाकर और पत्ते लाने हैं।" कारिंदे ने कहा।

"यह कल किया जा सकता है। मरने वाली मां के मुंह में बेटा पानी न दे तो क्या रह गया ? जाओ भाई।"

"अच्छा !" वह मान गया। उसे तुरंत जाने को कहकर वे वापस झोपड़ी पर आ गये। गंगम्मा बोली—"यह कुछ बोल रही थी, मैं नहीं समझ पायी। आप ही पूछ लीजिए, अय्यजी।"

उसके मुंह के पास कान ले जाकर उन्होंने पूछा—"क्या है बहन ?" पांच मिनट के बाद वह कुछ फुसफुसायी। "सुनाई नहीं पड़ा, जरा जोर से बोलो" कहने के बाद फिर फुसफुसायी। स्पष्ट न सुनाई देने पर भी 'गांव में प्लेग है, लड़के को मत बुलाइए' सारांश समझ में आया। "कारिंदे से कह आता हूं कि नहीं जाये" कहकर वे फिर बाहर आ गये।

उन्होंने भी सोचा कि बीमारी फैले गांव में विश्व को नहीं लाना चाहिए। नंजम्मा अवश्य मरेगी। उसकी इच्छा है कि भले ही बेटा अंतिम बार पानी न दे, लेकिन वह लंबी उम्र जिये। लेकिन कम से कम उसकी दादी और भाई को सूचना देनी ही चाहिए जिन्होंने इसका पालन-पोषण किया। यह सोचकर वे कारिंदे की झोपड़ी की ओर दौड़े। वह लोंदा निगलकर जाने की तैयारी कर रहा था। उन्होंने बताया कि किसी भी हालत में लड़के को नहीं लाना, बल्कि दादी और उसके भैया को तुरंत लिवा लाये।

कारिंदा दौड़ता गया। कितना तेज दौड़े तो भी चोळेश्वर टीला, रेतीला नाला, लाल मिट्टी के नाले, नागफणी के गलियारे पार कर नागलापुर पहुंचते-पहुंचते दोपहर के दो बज ही गये। वहां देखा तो लोगों ने गांव छोड़ दिया था। कल्लेश-जोइस की झोपड़ी पूछते हुए वहां पहुंचा तो विश्व स्कूल गया हुआ था। कल्लेश-जोइस भी गांव में नहीं था। हासन गया हुआ था। अगले दिन लौटेंगे ऐसी सूचना मिली। कारिंदे ने अक्कम्मा को समाचार सुनाया तो वह चौंक उठी। कल्लेश का इंतजार नहीं किया जा सकता था। कमलु से कह दिया कि वह कल्लेश को भेज दे। लेकिन उसपर भरोसा न कर दो पड़ोसियों से भी कहा। अपनी खेत-बाड़ी में काम करने वाले होन्ना की बैलगाड़ी बंधवाकर तुरंत निकल पड़ी।

दुष्ट प्लेग ने गत साल ही उसके दो प्रपोतों की बलि ले ली, और अब इस बार पोती को ही ले जा रहा है। विश्व को हुआ था तो कहते हैं शृंगेरी शारदादेवी की मन्नत मानने से वह चंगा हो गया था। अब कोई उसी देवी की मन्नत मानता है या नहीं। रास्ते में एक छोटा बांध मिला। दो मिनट गाड़ी रुकवाकर नीचे उतर कर हाथ-पैर धोये, अपनी कमर में बांधे हुए पैसों में से चांदी का एक रुपया हाथ

में लेकर पोती ठीक हो जाने पर शृंगेरी भेजकर कुंकुमार्चन करवाने की मन्नत मानी और फिर गाड़ी में बैठी।

इस बार सबने गांव छोड़ दिया था। फिर भी सब गांवों में सरकार ने सुई लगाई थी। नागलापुर में विश्व, कल्लेश, कमलु सबको सुई लगी थी। लेकिन बूढ़ी ने लेने से इंकार कर दिया था। सारी उम्र में अस्पताल का पानी तक नहीं छुआ था तो उस सुई के अंदर के पानी को शरीर में क्यों लेती ?

पोती की हालत के बारे में वह बार-बार कारिंदे से पूछती रही। वह अधिक न जानने के कारण जितना जानता था, बता देता था। मन ही मन यह सोचकर कि पोती की जान को कोई खतरा नहीं है, अक्कम्मा बैलों को चाबुक मारकर तेज दौड़ाने के लिए होन्ना से कह रही थी। बैल तेज दौड़ाने पर भी गाड़ी रामसंद्र पहुंचते-पहुंचते रात का अंधेरा हो चुका था।

[6]

झोपड़ी पर जाकर देखा तो पोती नहीं थी। समधिन गंगम्मा जोर-जोर से रो रही थी। महादेवय्यजी ने बताया—दोपहर को ही नंजम्मा के प्राण उखड़ गये। अंतिम शब्द निकले थे कि प्लेग के इस गांव में बेटे को न लाना। मरने के पहले किसी तरह का फोड़ा भी नहीं निकला था। पांच मिनट सांस ऊपर उठी और प्राणवायु निकल गयी। पास बैठी हुई सास गंगम्मा ने मुंह में पानी छोड़ा। इनके इंतजार में शाम तक शव रखा था लेकिन फिर यह सोचकर कि रात होने पर कल सुबह तक इंतजार करना पड़ेगा और इससे प्लेग के शव से बदबू आने लगेगी, दाह-क्रिया के लिए भेज दिया। इस सबको अभी केवल आधा ही घंटा हुआ है।

अक्कम्मा एक बार छाती पीटकर रोयी। 'मुझे मुंह देखने को भी नहीं मिला। वहीं जाकर देखती हूं।' और अंधेरे में ही श्मशान की ओर चल पड़ी। महादेवय्यजी ने समझाया कि औरतों को वहां नहीं जाना चाहिए, लेकिन वह नहीं मानी। पक्की उम्र और कमर झुकी बुढ़िया कहीं अंधेरे में गिर पड़ेगी, इसलिए उसका हाथ पकड़कर वे भी उसके साथ चल पड़े। चढ़ान उतरती जगह में अय्याशास्त्रीजी अकेले कमर झुकाये खड़े थे। इन दोनों को देखकर पूछा—'कौन हैं ?' 'नंजम्मा की दादी' कहकर महादेवय्यजी अक्कम्मा के साथ बाड़ी की तरफ

उतर गये। उनके चढ़ान उतरकर बाड़ी के बीच से होते हुए वहां पहुंचने तक शास्त्रविधि पूरी हो गयी थी। अब शव को चिता पर रखकर, उसके कपड़े निकाल दिये गये थे। अपनी पोती को जन्म लेते समय जिस रूप में देखा था, वैसा ही अक्कम्मा ने अब देखा। तब बच्ची कितनी गोरी थी, अब सारा शरीर काला स्याह पड़ा है। दौड़कर चिता पर लेटी लाश से लिपट गयी। अक्कम्मा को समझा-बुझाकर, सांत्वना देकर ऊपर उठाने में लोगों को बड़ा परिश्रम करना पड़ा। उसके सामने ही शव पर लकड़ी रखकर आग लगा दी गयी। आग धीरे-धीरे फैलकर धू-धू जलने तक एकटक देखती हुई अक्कम्मा एकाएक चिल्लायी—"चोर छिनाल, अंत में तूने भी ऐसा कर ही दिया? ठहर, तुझे बताती हूं।"

वह क्या कह रही है, कोई समझ नहीं पाया। अक्कम्मा वहां से बड़ी तेजी से लौटी। अंधेरे में उसे अकेली समझ पीछे से आकर महादेवय्यजी ने हाथ पकड़ना चाहा तो उसने फुर्ती से झटक दिया और आगे बढ़ गयी। चढ़ान के पास खड़े अय्याशास्त्रीजी ने 'क्यों मां, इस तरह भाग क्यों रही हैं?' पूछा लेकिन उसे सुनाई नहीं पड़ा। सीधी झोपड़ी में आयी। भीतर जाते ही दरवाजे के पास पड़ी हुई खजूर की झाड़ू उठायी। वहां से बैलगाड़ी के पास जाकर, होन्ना द्वारा छोड़े गये चप्पलों में से एक-दूसरे हाथ में लेकर गांव की ओर बढ़ी। कुछ देर तक गंगम्मा भ्रमित रही, होन्ना भी कुछ न समझ पाया। वे समझ ही नहीं सके कि अंधेरे में वह कहां जा रही है? अमावस्या के बाद की रात होने के कारण अंधकार बर्फ-सा जम गया था। अंधेरे में ही रास्ता पहचानती हुई अक्कम्मा गांव में घुसी। जिस घर में पोती रहा करती थी, सीधे उसके सामने आकर खड़ी हो गयी और दरवाजे को झाड़ू और चप्पल से पीटती हुई जोर से चीख उठी:

"अरी छिनाल, सबको छोड़कर इस घर में ही बार-बार क्यों आती है? तेरी नजर उसके दो बच्चों पर पड़ी। अब शारदा देवी की मन्नत मनाने के पहले ही उसे हड़प कर गयी? तुझसे जो डरते रहे, तू उन्हीं को दबोचती है? पापी, छिनाल, तुझे तो चप्पल से ही मारना चाहिए। छिपकर अंदर बैठी है? आ, बाहर आ, तेरे कपाल के बाल झड़ने तक झाड़ू से मारती हूं!"

अक्कम्मा चप्पल से बारंबार दरवाजे को मारने लगी। फिर मन में जो भी आया, प्लेग को अंट-शंट कोसने लगी। अब वह थक गयी थी। वहीं बरामदे में बैठ गयी। झाड़ू-चप्पल हाथ में ही थे। आधे घंटे बाद उसका क्रोध उतरा। पिछले

साल दो परपोते मरे थे। तो इसी घर में आकर पोती को उसने धीरज बंधाया था। इसी घर में पार्वती की शादी हुई थी। नंजु को इस घर में आये तेरह वर्ष हुए थे। यह प्लेग इस घर को ही ढूंढ़कर क्यों आता है? अक्कम्मा को अब रूलाई आ गयी। सिसकियों से जो प्रारंभ हुई थी, वह अंत में प्रवाह बन बह पड़ी। कुछ देर के बाद वह खड़ी हुई। झाड़ू से दरवाजा पीटने या प्लेग को कोसने की इच्छा नहीं हुई। अंधेरे में ही चलकर गांव से बाहर आ गयी, वह।

सामने से आते हुए महादेवय्यजी ने उसे पहचान कर पूछा—"आपको ढूंढ़ने हम कहां-कहां गये? इस छोड़े हुए गांव में क्यों आईं?"

"प्लेग छिनाल की चप्पल से पूजा करने के लिए आई थी।"

लोग शव को जलाकर लौट आये थे। चेन्निगराय आंसू पोंछते हुए बैठे थे—"इस साढ़े साती घर को न बंधवाती तो क्या यह होता? नया घर बंधवाने के कारण ही देवी ने उसे पकड़ लिया।"

अक्कम्मा रात भर रोती रही। इस बात को लेकर चर्चा चली कि सुबह उठकर गाड़ी बंधवाकर लौटें या कल्लेश के आने तक यहीं रहा जाये। महादेवय्यजी बोले—"उनके आने तक रहिए।" बैलगाड़ी के साथ होन्ना भी रह गया।

दोपहर को बारह बजे झोपड़ी के अंदर अक्कम्मा लेटी थी। गंगम्मा सिर पर हाथ रखे बैठी थी। चेन्निगराय ग्रामदेवी के मंदिर के बरामदे में लेटे अपना दुख भुलाने के लिए नींद ले रहे थे। उसी समय तेज कदम बढ़ाते हुए विश्व गांव की ओर जा रहा था। गांव के बाहर अपनी दुकान में बैठी नरसी विश्व को देखकर दौड़ी और उससे कहा—"कहां जा रहा है बेटे?" उसने पूछा—"क्या यह सच है कि मेरी मां मर गयी?"

नरसी ने उससे लिपटकर उसे भींच लिया। "मुझे क्यों भींच रही हैं? छोड़िये, मुझे घर जाना है।" उसने अपने को छुड़ा लिया।

"जाकर क्या करोगे बेटे?"

"मेरी मां है, वह मरी नहीं है।"

"यहां आओ, मैं कहती हूं।" उसके दोनों हाथों को पकड़कर अपनी दुकान पर ले गयी और बिठाकर पूछा—"अकेला आया है?"

"हुं!"

"किसने बताया कि मां मर गयी है?"

"हमारे पास की झोपड़ी की नागम्माजी ने।"

"उनके कहते ही तू दौड़ पड़ा ?"

"हूं !"

"तू रास्ता जानता था ?"

"गाड़ी में बैठकर जाते समय देखा था। तालाब की चढ़ान चढ़कर, नागफणि के गलियारा और कणग नाला पारकर, हूविनहळ्ळी होते हुए चोळ टीले के ढाके का नाला पारकर आ गया।"

नरसी को रोना आ गया। वह दुबारा लड़के से लिपट गयी।

"नरसी मौसी, आप रो क्यों रही हैं ? छोड़ो, मैं घर जाता हूं।" वह फिर अपने को छुड़ाने की कोशिश करने लगा। "मैं ले चलती हूं, चल।" उसका हाथ पकड़कर उसे वह झोपड़ी पर ले आयी। परपोते को देखकर अक्कम्मा उठी और उसे अंक में भर कर 'अनाथ बन गये न मेरे लाल' कहती हुई जोर से रो पड़ी। विश्व को भी रोना आ गया। 'मां मर गयी है ?' पूछते ही जोर से रोता हुआ वह लुढ़क पड़ा।

[7]

संध्या समय अक्कम्मा को बुखार आ गया। सारा शरीर टूटने लगा, आंखों का विकृत होना और लाल होना, मुख का सूजना—इन लक्षणों को देखकर महादेवय्यजी तुरंत समझ गये कि यह प्लेग है। उन्हें लगा कि अब यह बूढ़ी भी नहीं बच पायेगी। विश्व को रोगी के पास जाने नहीं देना चाहिए इस विचार से उसे नरसी के पास लिवा ले जाकर बोले—"देख बहन, इसे अपने घर से बाहर मत जाने देना। खाना-पीना जो भी देना हो, तुम ही खिलाना। जाति भ्रष्ट नहीं होगी। झोपड़ी में दादी को प्लेग हो गया है। उसे छूना नहीं चाहिए।"

विश्व ने कुछ नहीं खाया। मां की याद में रोता रहा। उसे कहीं न छोड़कर नरसी ने अपने पास ही बिठा लिया।

नंजम्मा के लिए जो हेमादीसिरप लाये थे, वह बचा हुआ था। महादेवय्यजी ने पिलाना चाहा तो अक्कम्मा ने इंकार कर दिया। किसी भी तरह मुंह खोलने के लिए वह तैयार नहीं हुई। लगता था मानो उसने निश्चय कर लिया हो कि

उसे मर ही जाना चाहिए।

रात के दस बजे कल्लेश आया। महादेवय्यजी ने सारी बातें बतायीं। दो मिनट उसने भी आंसू बहाये। अब आगे के कार्य की व्यवस्था होनी चाहिए। "विश्व का इनाक्युलेशन हुआ है। लोगों ने नागलापुर छोड़ दिया है। इस गांव की भी वही हालत है। विश्व कहीं भी रहे, डर नहीं। उसकी मां की तिथि होने तक उसे यहीं रहने दीजिए। उसके बाद मैं आकर ले जाऊंगा। खाली किये हुए गांव के अंदर जाने के कारण अक्कम्मा बीमार पड़ी है। इनाक्युलेशन लेने से इंकार कर दिया था। अब मैं गाड़ी में उसे अपने साथ ले जाता हूं।"

उसका विरोध करने की स्थिति में कोई नहीं था। 'ऐसा ही कीजिए' महादेवय्यजी बोले। "मैं वहां नहीं जाती। मुझे उसी जगह जलाया जाये जहां मेरी पोती जलायी गयी है।" अक्कम्मा ने जिद्द की। लेकिन कल्लेश नहीं माना। गाड़ी में मुलायम घास बिछाकर, उस पर एक बोरा, एक साड़ी बिछाकर, मां को उठाकर लिटा दिया और ऊपर नंजम्मा का ही एक कंबल ओढ़ाकर उसी रात गाड़ी बंधवाकर वह रवाना हो गया।

अगले दिन सुबह अप्पण्णय्या गांव वापस आ गया। गांव में प्लेग आने या भाभी के मरने की बात वह नहीं जानता था। जब पता चला तो वह भी आकर बहुत रोया। पार्वती की शादी के पश्चात् भाभी के प्रति उसमें थोड़ी-सी आत्मीयता जागी थी। दोनों बच्चों के मरने के बाद, उसके साथ शृंगेरी हो आने पर तो भाभी के प्रति बेहद स्नेह जाग्रत हो गया था। अपनी मां से अलग होने के पश्चात् रोज भाभी के हाथ का बना साग और सांभर ही खाता था। उसे लगा कि अब इस गांव में उसका अपना कोई नहीं। नरसी के घर जाकर वह विश्व को ले आया। अय्यजी के अतिरिक्त इस गांव में विश्व के निकट का कोई व्यक्ति अगर रह गया था तो वह था चाचा अप्पण्णय्या। रेवण्णशेट्टी की पत्नी सर्वक्का आदि अनेक महिलाएं झोपड़ी पर आयीं और उसके गाल को छूकर, चूमकर, आंसू बहाकर चली गयीं। लेकिन उनमें से कोई भी उसकी मां को नहीं ला पायी। कहते हैं कि उसे श्मशान में जला दिया है; जलकर जो राख बन गया है वह वापस नहीं आता। जलाने की क्या जरूरत थी? वैसे ही रख देते तो क्या उसमें प्राण नहीं आते?—इसी तरह वह सोच रहा था।

अब भाभी की श्राद्धक्रिया होनी चाहिए। अप्पण्णय्या ने भाई से कहा—"मेरे

पास साठ रुपये हैं । तुम्हारे पास जो कुछ है, दे दो । नियमानुसार करेंगे । वे बड़ी पुण्यात्मा थीं । श्रद्धा-भक्ति से काम होना चाहिए ।"

"गधी, छिनाल ने जो कुछ था, उससे घर बंधवा लिया । मुझे कौन-सा यजमानत्व दिया था कि मेरे पास पैसे रहते ?"

महादेवय्यजी बोले—"दवा मंगवाने के बाद बत्तीस रुपये बचे हैं । रुपये मेरे पास हैं । उसे भी ले लीजिए । किसी तरह कीजिए । इस गांव के पुरोहितों को दान देने पर भी मरी हुई बहन को शांति नहीं मिलती । स्वर्गलोक जाने लायक पुण्य कमाकर ही वह गयी है ।"

उस दिन कंब्रनकेरे के हैडमास्टरजी भी आ गये । रात्रिशाला के एक सौ बीस रुपये चेन्निगराय को देकर, रकम पाने वाली के गुजर जाने के कारण, उनके पति होने के नाते उनके हस्ताक्षर लेकर चले गये । अप्पण्णय्या ने उस रकम को श्राद्ध के लिए मांगा ।

"यह खर्च मत कीजिए । पढ़ने वाले लड़के के कपड़े-वपड़े सिलाने, किताब विताब खरीदने के लिए लगेगा ।" महादेवय्यजी ने कहा । "तो उसे अय्याजी के हाथ में दे दो ।" अप्पण्णय्या ने कहा । चेन्निगराय ने किसी को नहीं दिया । एक वस्त्र के टुकड़े में लपेटकर कमर में ठूंसे ही घूमने लगे ।

कम खर्च में ही श्राद्ध-कार्य की व्यवस्था हुई । नारियल तरकारी मांगने के लिए अप्पण्णय्या कुरुबरहळ्ळी गया । उसे पता था कि उस गांव के लोगों ने भी बाहर झोपड़ियां बनायी हैं । उस दिन सुबह-सुबह ही गुंडेगौड़जी गुजर गये थे । वह जब पहुंचा, तो ठीक उसी समय लोग उनका शव ले जा रहे थे । गुंडेगौड़जी और अप्पण्णय्या परस्पर अधिक परिचित नहीं थे । वह अपनी छोटी उम्र से ही उन्हें देखता आया था । उनके प्रति उसके मन में एक तरह का भय ही था । उन्होंने भाभी की काफी मदद की थी । अप्पण्णय्या को मालूम था कि वे बड़े ही अच्छे आदमी थे । उन्हें और भाभी दोनों को एक साथ मरने पर अप्पण्णय्या सोचने लगा—"भगवान ने दोनों को एक साथ बुला लिया है । कहते हैं कि पुण्यात्माओं को भगवान इस संसार में नहीं छोड़ता; हमारी मां के समान, उस नुग्गीकेरे की छिनाल जैसों को बहुत दिन छोड़ देता है"—लौट पड़ा । गांव में गया ही नहीं ।

विश्व का जनेऊ संस्कार नहीं हुआ था । उसके बदले पुत्र के स्थान पर अपसव्य करता हुआ अप्पण्णय्या ही सारा कार्य कर रहा था । बाड़ी के कुएं के पास ले

जाकर सिर मुंडवा विश्व को कर्म कराते समय चुपचाप बिठा देते थे। अण्णाजोइसजी के ही मंत्र-तंत्र थे। नंजम्मा के परिवार के ही पात्र-बर्तन थे। बैकुंठ समाराधन के दिन उन सारे पात्र-बर्तनों को दिल खोलकर ब्राह्मणों को दान दिया गया।

[8]

बैकुंठ समाराधन के दसवें दिन कल्लेश आया। उसने बताया कि गांव पहुंचने के दो दिन में ही अक्कम्मा चल बसी। हासन, कौशिक, माविनकेरे, गोरूरू, हेब्बालें आदि अनेक गांवों का चक्कर काटकर कल्लेश ने अपने पिता कंठीजोइसजी का पता लगाया और उसकी श्राद्ध क्रिया करायी। अब विश्व को ले जाने आया था।

मां की श्राद्ध-क्रिया के बाद विश्व ने रोना छोड़ दिया था। चढ़ान स्थित मंदिर में जाकर महादेवय्यजी के सामने चुपचाप बैठ जाता। उसे गांव भा नहीं रहा था। वे ही मजबूर करके उसे भिक्षाटन का लोंदा-साग खिलाते थे। मंदिर न जाता तो वह नरसी की दुकान पर चला जाता था। "नरसी मौसी, गांव में जाकर देखूं तो वहां मेरी मां नहीं मिलेगी ? ये सब कह रहे हैं कि वह मर गयी है, यह झूठ नहीं है क्या ?" वह पूछता। उत्तर न सूझकर "मैं नहीं जानती बेटे, लो बिस्किट खा लो" कहकर वह दुकान से बिस्किट लाकर देती।

"मुझे बिस्किट नहीं चाहिए। मुझे यह बताओ कि मेरी मां घर में होगी ?"—वह प्रश्न करता। एक दिन सबकी आंखें बचाकर गांव में चला गया और ताला लगा हुआ अपना घर देखकर चुपचाप लौट भी आया।

जब मामा बुलाने आया तो उसने हिम्मत से कहा—"मैं नहीं जाता।"

"क्यों रे ?"

"तुम मारते हो। मैं इसी गांव के स्कूल जाऊंगा।"

इस गांव में उसे कौन पालेगा ? गंगम्मा ने कहा कि वह उसे रख लेगी। लेकिन उसका क्या भरोसा ? "नहीं मुन्ने, मामा के साथ गांव चला जा" अय्यजी बोले।

"नहीं जी, यह मुझे गाय की तरह मारता है।" उसने मामा के सामने ही कह दिया।

"अब कभी नहीं मारूंगा।" कल्लेश ने विश्वास दिलाया। अन्यों ने भी जोर

दिया। निरुपाय होकर वह चल पड़ा। अय्यजी और अप्पण्णय्या दोनों उसके साथ एक मील तक गये। उन दोनों को लौटते देखकर विश्व ने पुकारकर अय्यजी को रोका। उनके पास दौड़कर आया और बोला—"आप सब लोग कह रहे हैं न कि हमारी मां मर गयी है, यह झूठ भी हो सकता है। गांव वाले झोपड़ियां छोड़कर गांव में जायेंगे, तब वह आयेगी। उससे कह दीजिए कि नागलापुर आकर मुझे ले आये।" 'अच्छा मुन्ने' कहकर वे वहीं रुक गये। कल्लेश उसका हाथ पकड़ आगे बढ़ा। पीछे मुड़-मुड़कर देखता हुआ विश्व उसके पीछे-पीछे कदम खींचता हुआ चल रहा था। उनके सामने वाले टीले पर चढ़कर आंखों से ओझल होने तक ये दोनों वहीं वैसे ही खड़े थे। 'नागलापुर जाने से पहले विश्व में कितनी फूर्ति थी ? अब अनिच्छा है। हाथ-पैर सूख गये हैं। उसका मामा, जैसा कि वह कहता है, गाय की तरह पीटता होगा। अब तक बूढ़ी (दादी) थी। अब वह मामी न जाने किस तरह इसकी देखभाल करेगी ! बहन के मरने के बाद शायद कल्लेशजोइस मारना-पीटना छोड़कर अच्छी तरह से देखभाल करेंगे। ऐसे बिन-मां के बच्चों का तो ईश्वर ही रक्षक है।' सोचते हुए महादेवय्यजी ने गांव की ओर कदम बढ़ाये।

अप्पण्णय्या झोपड़ी में आ गया। उसने अब तक भी किसी विषय को लेकर सोचा न था। अब याद आया—उसके रसोई के सारे बर्तन, सामान गांव के अंदर बीरेगौड़ के बाड़े के बरामदे वाले कमरे में हैं। अब गांव छोड़ दिया गया है। अकेले के लिए अलग से झोपड़ी बनानी पड़ेगी। यह विचार उसे नहीं भाया। बारिश आने तक सब यहीं झोपड़ी में रहेंगे। उसके बाद गांव में जायेंगे। तब तक किसी प्रदेश का चक्कर काट आना अच्छा रहेगा। कल सुबह चल देना चाहिए उसने निश्चय किया।

उस दिन रात का खाना होने के बाद गंगम्मा बोली—"जब वह थी, मेरे खिलाफ कान भरकर मुझसे झगड़ा कराती थी, अब तू अलग क्यों रहता है ? यहीं साथ रह।"

अप्पण्णय्या को अचानक क्रोध आ गया। "उन्होंने कभी मेरे कान नहीं भरे। तू ही छिनाल है।"

"जनम देने वाली मां को ऐसा कहता है, चांडाल रांड की औलाद कहीं का।"

"हां, छिनाल ! तेरे साथ मैं नहीं रहूंगा। तू मरेगी तो मैं श्राद्धक्रिया भी नहीं

कराऊंगा।" अपनी धोती, कमीज, दुपट्टा, आदि बटोरकर बोरे की थैली में रखा और तुरंत झोपड़ी से निकल पड़ा। बाहर चांदनी थी। अब तक भी उसने तय नहीं किया था कि किस ओर जाना है। पांच मिनट रुककर सोचा। इस मडुआ प्रदेश में लगभग सबने गांव छोड़ दिया है। नहर सिंचित खेती-प्रदेश चला जाये। चांदनी तो है ही। बेडेकेरे यहां से आठ मील है। पैदल चलकर गांव के बाहर वाले मंदिर के बरामदे में सो जाया जाये। सुबह उठकर आगे चलना है? तय करके उसने कदम बढ़ाये।

इधर गृहस्थीहीन अप्पण्णय्या फिर देशाटन के लिए निकल पड़ा, तो उधर चेन्निगराय अण्णजोइसजी की झोपड़ी में बैठकर अपनी-भावी गृहस्थी के बारे में विचार-विमर्श कर रहे थे। जिस दिन नंजम्मा का बैकुंठ-समाराधन हुआ, उसी दिन पुरोहितजी ने उनकी दूसरी शादी का प्रस्ताव रखा। कहते हैं कि तिपटूर से तीन मील की दूरी पर बेविनहळ्ळी में एक कन्या है। लड़की के पिता नहीं है। मां बड़ी मुश्किलात में है। मां चाहती है कि बेटी को किसी ब्राह्मण के हाथों सौंप-कर कृतार्थ हो जाये। "तुझे क्या, अभी तेरी उम्र ही क्या है? शादी कर ले। नया घर बसेगा। वंश-परंपरा में आयी हुई पटवारीगिरी है ही। इससे अधिक क्या चाहिए! लड़की सुंदर है। इस तरह अकेला कब तक रहेगा?" पुरोहितजी ने कहा।

चेन्निगराय को जोश आया। "कन्या दिलाइए, शादी करके ही छोडूंगा।"

"चलकर कन्या की मां से बात करनी पड़ेगी। ऐसे जाते समय कन्या के लिए नयी साड़ी लेनी चाहिए। अगर पटवारी-गिरी का रौब दिखाना हो तो अपने लिए भी एक बढ़िया शाल ओढ़कर चलना होगा। कम से कम पचहत्तर रुपये चाहिए, दे दो।" उन्होंने कहा। कन्या चाहिए तो पैसे छोड़ने ही पड़ेंगे। नंजम्मा के स्कूल चलाने से जो एक सौ बीस रुपये मिले थे, उनके कमर में बंधे थे। अगर इस बात का पता जोइसजी को न होता तो वे यह प्रस्ताव ही न रखते! चेन्निग-राय ने उनके सामने ही कमर में ठूंसी पोटली निकालकर खोली और गिनकर पचहत्तर रुपये दे दिये। अब कितने रुपये बच गये हैं, इसका हिसाब जोइसजी के पास था।

दूसरे ही दिन जोइसजी मोटर से तिपटूर गये। बीस रुपये का एक हरा शाल खरीदकर ओढ़कर लौटते हुए अपनी आंखों से चेन्निगराय ने उन्हें देखा। यह इस

बात का सबूत है न, कि कन्या को पचास रुपये की साड़ी देकर आये हैं! दो दिनों के बाद एक शुभ मुहूर्त देखकर दोनों मोटर से तिपटूर गये। रात को होटल में खाने के बाद दोनों छत्र के बरामदे में लेट गये। जोइसजी के आदेशानुसार चेन्निगराय अपनी धोती, जमाबंदी का कोट, फेटा, धुलवाकर लाये थे। सुबह उठकर उन सबको इस्त्री कराने के बाद जोइसजी एक नाई को तालाब के पास बुला लाये। जोइसजी वैदिक होने के कारण किसी सेलून में नहीं जा सकते थे। तालाब के तट पर बिठाकर चेन्निगराय की सफेद दाढ़ी और सिर के सफेद बालों को अच्छी तरह से मुंडवाया। वे भी पास ही बैठे थे। उसके गालों को देखकर उस्तरा उल्टा चलवाया, ताकि सफेद बाल के चिह्न भी न दिखायी पड़ें। उसके बाद स्नान करने के लिए कहा। स्नान करके, इस्त्री की धोती पहनकर, कमीज-कोट डालकर जमाबंदी को जाते समय जिस तरह फेटा बांधते हैं, वैसे ही बांधकर तैयार हुए तो जोइसजी बोले—"चलो अब होटल चलें। वहां बड़ा दर्पण है न! उसमें देख लो तो पता लगेगा कि कैसे दिखाई देते हो?"

होटल में बैठे। मसाला दोसा तैयार होकर आने तक चेन्निगराय ने दर्पण में अपने आपको देखा तो आश्चर्य हुआ! इससे पहले कभी इतने सुंदर ढंग से कोट-फेटा नहीं पहना था। उस छिनाल, पत्नी ने एक दिन भी इस्त्री की धोती, कमीज कोट, फेटा पहनाकर जमाबंदी के लिए नहीं भेजा था। मसाला दोसा, इडली, सांभर, मैसूरपाक खाकर और ऊपर से कॉफी पी। फिर जोइसजी ने आठ रुपये में एक घोड़ा गाड़ी इस शर्त पर तय की कि शाम तक उनके साथ ही रहकर उन्हें वापस ले आयेगा।

बेविनहळ्ळी पंद्रह घरों वाला, घने जंगलों का गांव था। इस कन्या का घर ही एकमात्र ब्राह्मणों का घर था। थोड़ी बहुत जमीन थी। लेकिन वह विधवा उसे कराने में असमर्थ थी। इसलिए किसानों से जो कुछ उससे मिलता था, वह खाकर और पूरा न पड़ने पर भिक्षाटन से गुजारा करती थी। घर के सामने घोड़ा-गाड़ी रुकी तो उन्हें इतनी खुशी हुई कि हाथ-पैर रुक गये। कन्या चौदह वर्ष की थी। मां कहती थी कि अभी तक ऋतुमति नहीं हुई है। लड़की को न देखते तो भी चेन्निगराय स्वीकृति दे देते। अब देखने के बाद अस्वीकृति का प्रश्न ही नहीं उठता था।

"हमेशा पटवारी का हिसाब-किताब लिख-लिखकर हमारे चेन्निगराय ऐसे

दिखायी देते हैं ! बत्तीस वर्ष से अधिक के नहीं हुए हैं। खुद का घर है। पटवारीगिरी और चार एकड़ का खेत-बाड़ी है। आज के जमाने में पटवारीगिरी हो तो चार परिवार को संभाल सकते हैं। आपकी बेटी रोज भोजन के बाद दूध में हाथ धोयेगी, पानी में नहीं।" जोइसजी ने इनकी ओर से कहा।

'शादी तय हो ही गयी। देर क्यों करें', कहकर जोइसजी ने अपने साथ ही लाये हुए सफेद कागज में लग्नपत्रिका भी लिख दी। "जन्मपत्रिका मिलती है। बैशाख में शुभ मुहूर्त भी है। चाहें तो अन्न और इमली का झोल परोसकर शादी कर दीजिए।" कहा तो कन्या की मां को इतनी खुशी हुई मानो उसके कंधे का सारा बोझ उतर गया हो। उसने सब कुछ जुटाकर घी, अन्न, खीर बनाकर परोसा। तांबूल स्वीकार कर ये दोनों घोड़ा-गाड़ी पर सवार होकर तिपटूर पहुंचे तो उनके गांव की ओर जाने वाली मोटर तैयार थी, लेकिन किसी में भी जाने की आतुरता नहीं थी। होटल वालों ने आलू-कांदा डालकर स्वादिष्ट साग बनाया होगा। कल सुबह चले चलेंगे। जोइसजी कपड़े की दुकान में गये और एक जोड़ी धोती और एक साड़ी ले ली। वे रुपये नहीं लाये थे, इसलिए चेन्निगराय ने ही दूकानदार को पच्चीस रुपये दिये।

चेन्निगराय की शादी की खबर गांवभर में फैल गयी। नरसी ने 'इनका पागलपन तो देखो, वह पत्नी बन सकती है?' कहा तो सर्वक्का बोली—'उस बहन के साथ किसी तरह नहीं निभा तो इस लड़की के साथ निभ सकेगा!' रेवण्णशेट्टी एक दिन इन्हें मिला और 'पटवारीजी, आपने राजा का काम किया है। शादी कर लीजिए। नहीं तो पकाकर कौन खिलाएगा?' कहकर उकसाया। मां गंगम्मा ने निरासक्ति ही दिखायी। वह बोली—'कोई भी छिनाल आए वह मेरा क्या करेगी? कोई भी मेरी सेवा नहीं करती।'

एक सप्ताह में चैत्र महीना बीत कर बैशाख आ गया। इसी महीने में शादी होनी चाहिए थी। पहली पत्नी की बालियां और नथ थे। राख में ढूंढ़कर निकाले हुए मांगल्य का सोना भी था। केवल सौ रुपया जुटाना पर्याप्त था। घर में जो गाय थी, उसे सौ रुपये में बेच दिया। लेकिन बात आगे बढ़ाने के लिए कन्या पक्ष का कोई आया ही नहीं। दस-बारह दिनों में अपने मायके पक्ष के संबंधी सिद्धवळ्ळि वेंकटरामय्यजी को भेज देने की बात कन्या की मां ने कही थी, लेकिन कोई नहीं आया। शादी के लिए अब केवल छह दिन रह गये। चेन्निगराय बेचैन

हो उठे। जोइसजी से कहा तो वे बोले—"न जाने क्या बात है ? मेरे पास समय नहीं है। तू ही जाकर देख।" ये ही एक दिन तिपटूर जाकर, पहले जैसे ही बाल कटवाकर, इस्त्री के कपड़े पहनकर बेविनहळ्ळी गये तो घर में एक वृद्ध बैठा हुआ मिला। अपना परिचय स्वयं देकर उनसे बात शुरू कर ही रहे थे कि भीतर से आई कन्या की मां फटाफट बोलने लगी—"कोई वर न मिले तो मैं अपनी लड़की को कुएं में ढकेल दूंगी, लेकिन आप जैसें को नहीं दूंगी।"

पटवारी चेन्निगराय कुछ न समझकर उसे ही टुकुर-टुकुर देखने लगे। वह बोली—"उस पुरोहित को दूर का परिचित समझकर विश्वास किया तो बर दिलाने की बात कहकर मुझसे बीस रुपये लेकर आप जैसे नामर्द बूढ़े को दिखाकर धोखा दे दिया। किसी भगवान ने मुझे पहले से ही सारी बातें बता दी हैं।"

"मे-मे-मे-री गलती क्य-क्य-क्या है मांजी ?" सारा साहस बटोरकर उन्होंने पूछा।

"गलती क्या है ? पहली पत्नी के साथ आपने कैसा बर्ताव किया ? पत्तल लगाकर बेचारी को जीवन बिताना पड़ा न ? कहते हैं कि उसके लिखने तक पटवारी कार्य चलता रहा। हमारी लड़की को यह सारा काम नहीं आता। गांव में आपकी खेत-बाड़ी कहां है ? सुना है कि घर भी पहली पत्नी का बंधवाया हुआ है। घर तो उसके नाम पर है, वह उसके बच्चे को ही मिलेगा। आपने बताया न कि आपका इकलौता बेटा है, परसाल बेटा जिसका जनेऊ हो चुका था और विवाहित बेटी मर गयी, यह झूठ है ?"

"कि-कि-किसने बतायी मां यह सारी बातें आपको ?"

"किसने बतायी ! आपके गांव के ही एक वृद्ध जंगम महोदय ने बताया। हमारे घर आये थे। यह बताइए कि उनकी बात सच है या झूठ ? आपकी उम्र बत्तीस वर्ष है ? सच कहिए ?"

"अरे, इसकी मां…" कहते समय पटवारी को तुरंत महादेवय्यजी की याद आकर उनपर अत्यंत क्रोध आया।

"देखिए, आपके मुंह से कैसे शब्द निकलते हैं ? कहते हैं आप अपनी पहली पत्नी से इसी तरह बात करते थे ! आप जैसे को तो एक लोटा पानी भी नहीं देना चाहिए। यहां से उठकर चले जाइए।"

चेन्निगराय उठकर बाहर आ गये। उस गांव में और कहीं ठहरने से डरकर

सीधे तिपटूर गये। 'इस महादेवय्या की मां…, इस गांव में आकर चुगली खाने की उसे क्या जरूरत थी ? हजार झूठ बोलकर एक शादी कर लेनी चाहिए। यह बूढ़ा, होने वाली शादी में रुकावट डाल गया ! इसका वंश नाश हो।' इस तरह गालियां देते हुए होटल में घुसकर खाने बैठ गये। तुरंत गांव जाने की इच्छा नहीं हुई। गाय बेचकर शादी के लिए जो रुपये रखे थे, उनमें से नब्बे रुपये बचे थे। आराम से बीस दिन तिपटूर में ही रह गये। दीवान छत्र का बरामदा था। गांव भर में होटल थे।

पैसे खत्म होने के बाद ही वह गांव लौटे। नैऋत्य वर्षा हुई थी। लोग झोपड़ियां छोड़कर गांव में आ गये थे। वे नहीं जानते कि किस घर में जायें। हनुमान मंदिर में सीधे गये जहां मां रहती थी। गंगम्मा बोली—"हे मूर्ख, हरामजादे, तेरा पटवारी कार्य निकल गया रे !"

"कहां गया मां ?"

"जब से तेरी पत्नी मरी तब से हिसाब-किताब नहीं लिखा गया। अब दो हफ्ता खत्म होने पर भी पटेल को वसूली नहीं सौंपी। इलाकेदार पूछने आये थे तो तू गांव से ही गायब था। कहते हैं कि पटेल शिवेगौड़, शिवलिंग, दोनों जाकर अमलदार साहब से मिले थे। इलाकेदार ने पुलिस लाकर गुंडेगौड़ के घर का दरवाजे का ताला तुड़वाकर सारी किताबें शिवलिंग को दिलवा दीं। अब वही पटवारी है।"

चेन्निगराय मृत शव-की-सी आंखें लिए बैठ गये।

"अब मैं आ गया हूं, मेरी पटवारीगिरी मुझे दिलाइए साहब—कहकर पूछ ले जा रे।"

"किससे पूछूं ? अगर वे प्रश्न करें कि इतने दिन कहां गया था तो क्या बोलूंगा हां, हिसाब-किताब कौन लिखेगा ? यह आनाज का हिसाब इसकी मां…बड़ा सिरदर्द है।" उन्हें एक उपाय सूझा। वे उठकर शिवलिंग के घर गये। पटवारी शिवलिंग पुराना हिसाब लिखना जानता है, नया अनाज का हिसाब उसके लिए भी कठिन काम है। कंबनकेरे के पटवारी से सीखकर वैसे ही लिखने बैठा था।

"क्यों आये हो जी ?" पटवारी के रौब से उसने पूछा।

"शिवलिंग गौड़जी, मेरा पटवारी कार्य पहले आप ही संभाल रहे थे, अब भी संभालिए। एक बात स्पष्ट कह दीजिए कि साल में एक बार वर्षासन कितना दे सकेंगे ?"

"तुमने मुझे पटवारी कार्य नहीं दिया है। जाओ जी, यह तो सरकार की तरफ से मिला है।"

"तो कुछ नहीं देंगे"

"एक बाल भी नहीं दूंगा। उठकर चला जाता है या कारिंदे को बुलाकर गर्दन पकड़वाकर उस तरफ धकेलवा दूं ?"

उन्हें अपमान लगा। जबान् तक आया कि कह दूं 'तेरी मां··· 'लेकिन इस डर से चुपचाप निकल आये कि शिवलिंग कहीं कारिंदे को बुलाकर कुछ करा न दे। गुस्से से उनका सारा शरीर जल रहा था।

महादेवय्यजी का मंदिर रास्ते में ही पड़ता था। वे बरामदे में बैठकर तंबाकू मसल रहे थे। उन्हें देखते ही चेन्निगराय का सारा क्रोध जाग उठा। स्वयं भी बरामदे में आकर बैठ गये और पूछा—"अय्यजी, मैं सोच रहा था कि आप बड़े न्यायी हैं। पीठ-पीछे चुगली खाना आपने कब से सीखा है ?"

"आप यह इसलिए कह रहे हैं कि आपकी शादी में बाधा पड़ गयी ?"

उनके सहनशीलता न खोकर, शांतिपूर्वक पूछने से इनका क्रोध भड़क उठा है।

"खुद हिसाब-किताब लिखकर पटवारी कार्य करते हैं क्या ? जमीन कहां है कि धान्य, अनाज आये ? घर नंजम्मा के नाम पर है, तो वह तो विश्व को मिलेगा। आपकी उम्र क्या है ? उस छोटी लड़की के साथ गुजारा कैसे करेंगे ?"

"चार घरों से मांगकर लाता और पालता जी।"

"हम सबने देखा है न कि नंजम्मा का गुजारा कैसे कर रहे थे ? सब नंजम्मा की तरह नहीं रह सकती। आपकी नयी पत्नी अगर गांव के बाहर की दुकान-वाली नरसी की तरह हुई तो क्या करेंगे ?"

चेन्निगराय के पास उत्तर नहीं था। लेकिन क्रोध तनिक भी नहीं उतरा था। महादेवय्यजी फिर बोले—"आप अपने स्वभाव को देखिए। आपसे जो नहीं होता, उससे आपको क्या करना है ? चुपचाप संन्यासी की तरह रह जाइए। अब कुछ करना चाहते हैं तो विश्व के लिए कीजिए। अभी क्या शिवलिंग गौड़जी के घर गये थे ? क्या कहा उन्होंने ?"

"उसकी मां··· वर्षासन से कुछ भी देने से इंकार कर दिया।"

महादेवय्यजी ने फिर कुछ नहीं पूछा। पटेल शिवेगौड़ अब लगभग अपनी

ही उम्र का था। शिवलिंग गौड़ उससे दस साल छोटा होगा। उन दोनों की आयु घटती ही नहीं थी। संसार ऐसे ही थोड़े रहेगा—इसी तरह वे सोचने लगे। चेन्निगराय ने अय्यजी की थैली से पान-सुपारी-तंबाकू लेकर खाया और मां के पास पहुंचे।

चेन्निगराय आठ दिन तक फिर गांव में रहे। उस अवधि में जो और एक गाय थी और बर्तन-पात्र थे, सभी बेच दिये। नंजम्मा की बालियां और नथ भी काशिबड्डी के पास रख दिये। उसके बाद दो महीने तक गांव में दिखायी नहीं पड़े।

जीवन में क्या है? महादेवय्यजी की तरह ही संन्यासी बनने का निश्चय कर वे गांव-गांव घूमते हुए मालेकळ्ळु तिरुपति गये। अरसीकेरे से खरीदी हुई गेरुआ रंग की धोती और कमीज पहनकर तिरुपति के सामने प्रणाम कर, मन में ही संन्यास स्वीकार कर लिया। शाम को भूख लगी। टीले से उतरकर पास के एक गांव में भिक्षाटन करके अन्न, दाल, लोंदा खाया। एक घर में जाकर बरामदे में सोने की अनुमति मांगी तो घरवाले ने पान-सुपारी और तंबाकू भी खिलायी। उन्हें लगा कि संन्यास कोई बुरी चीज नहीं है।

लेकिन दो महीने में ही उस जीवन से ऊब गये। मेटिकुरिके, कणकट्टे, हुलियारू, बुदालू क्षेत्रों में दो महीना घूमकर, हर गांव में भिक्षा मांग खा-खाकर वे ऊब गये। रोज एक गांव का चक्कर लगाना। संन्यास स्वीकार करने के बाद विभिन्न जातिवालों के घर में खाते समय उन्हें यह भुला देना पड़ता था कि वे ब्राह्मण हैं। कई घरों में 'मेहनत करके नहीं खा सकते?' पूछते तो उन्हें लगता मानो मुख पर किसी ने चपत लगा दी हो।

हताश हो उन्होंने एक बार गांव जाने की ठान ली। लेकिन गांव में कौन है? क्या है? पत्नी मानी जाने वाली वह 'छिनाल' जिंदा रहती तो अच्छा था। फिर यह सोचकर कि कोई नहीं है तो क्या हुआ, हमारी मां तो हाथ नहीं छोड़ेगी। रास्ता पूछते-पूछते हालुकुरिके से होते हुए तिपटूर आये और वहां से गांव पहुंच गये।

गंगम्मा हनुमान के मंदिर में ही थी। अब वह भी अकेली गांव जाती। वह मांग तो सकती थी लेकिन जो मिलता उसे ढो नहीं सकती थी। अपने लाड़ले बेटे अप्पण्णय्या के आने की कोई संभावना नहीं दिखी। अपनी किस्मत खोटी है,

शनि महाराज कंधे पर बैठा है—सोचकर वह मन ही मन चिंतित थी। एक दिन मंदिर के सामने उसका बड़ा बेटा पटवारी चेन्निगराय संन्यासी वेष में खड़ा था। मैली गेरुआ धोती, उससे भी अधिक गंदी कमीज, महादेवय्यजी जैसा ही वेष। महादेवय्यजी सिर-दाढ़ी साफ मुड़वा लेते थे। लेकिन उसके इस बेटे के बाल बढ़ गये थे और दाढ़ी काले-सफेद बालों का मिश्रण बन गयी थी। क्षण भर वह पहचान ही नहीं पायी। तत्पश्चात "रांड के बेटे, यह क्या बना रखा है?" कहकर मन भारी हो आने के कारण वह आंसू बहाने लगी।

"इस जीवन में अब क्या रह गया है, मां? मेरा कौन है? इसीलिए सब कुछ छोड़कर संन्यासी बन बैठा।"

"थू:! छिनाल की औलाद कहीं का? मैं क्या मर गयी हूं! कोई देख लेगा, अंदर आ। गेरुए कपड़ों को उतार दे और दूसरी धोती लपेट ले। कल रुद्रण्णा को बुलवाकर बाल कटवा लेना।"

चेन्निगराय ने संन्यास त्याग दिया।

मां-बेटे एक हुए। वे अप्पण्णय्या की भांति भारी गठरी तो ढो नहीं सकते थे फिर भी मां को एक आधार मिला। वह जब गांव में घर-घर जाकर भिक्षाटन करती तो वे किसी घर के बरामदे में बैठकर मुंह भर पान-तंबाकू चबाते हुए तांबूल-रस का मजा लूटते।

नंजम्मा द्वारा बंधवाया घर था ही। मंदिर में रहने पर रोज पूजा करनी पड़ती थी। प्राकार में झाड़ू देना, धोकर स्वच्छ रखना पड़ता। इसलिए मां-बेटे दोनों ने मिलकर नये घर में लाल मिट्टी के गारे से दरवाजा, सिटकनी तैयार करवायी। एक दिन गंगम्मा ने नये घर के भीतर दूध उबाला। पुरोहितद्वयों को बुलवाकर, 'बहू को मरे एक साल भी नहीं हुआ। नये घर के लिए किसी तरह शास्त्र नहीं किया जा सकता। इसे ही स्वीकार करें। मैं गरीब विधवा हूं।' कह कर खीर सहित भोजन करा था, और दोनों को दो-दो रुपये दक्षिणा देकर उनके पैर छू लिये।

नंजम्मा गुंडेगौड़जी के जिस घर में रहा करती थी, उसमें अब कोई नहीं था। रामभद्र का कुरुबरहळ्ळी मुद्दय्या गुंडेगौड़जी का संबंधी था। यह कहकर कि वह उसमें रहेगा, और गुंडेगौड़जी के बेटे की इजाजत लेकर वह चाबी ले आया। लेकिन उस घर में, जहां प्लेग ने एक के बाद एक करके तीन लोगों की आहुति

ले ली हो, आने से डरकर उसने किसी अच्छे पुरोहित से कुछ बंधन कराने तक अपने टूटे-फूटे घर में ही रहने का निर्णय लिया और उस घर में ताला लगा दिया।

सोलहवां अध्याय

महादेवय्यजी को इस गांव में आये पैंतालीस साल हो चुके थे। उन्हें न किसी का परिचय चाहिए था और न किसी की दोस्ती। इस सिद्धांत से उन्होंने अपना जीवन प्रारंभ किया था। लेकिन जैसे-जैसे दिन बीतते गये, लोगों का परिचय बढ़ने लगा; आसपास के कई गांवों में पहचान बढ़ गयी। किसी की तकरार में पड़े बिना, किसी से लगाव बढ़ाये बिना रहने वाले उनका यहां बेजार होने का कोई कारण नहीं था। वे जिस भी गांव में रहते, वहां कटुता का अवसर ही नहीं आने देते। जब एक बार बेजार हुए थे तो गांव छोड़कर काशी चले गये थे। पुण्य नगरी क्यों न रही हो, लेकिन पसंद नहीं आई और गांव लौट आये। उन्होंने कई बार सोचा भी था कि वे क्यों लौट आये? यहां ऐसी कौन-सी बात थी जो वहां नहीं थी। हवा अनुकूल नहीं थी, यह सच है; लेकिन उसी एक कारण से काशी नहीं छोड़ी थी। वहां की हिंदी भाषा उन्हें आती ही थी। जंगमवाड़ी मठ में खाने-रहने की हर तरह की सुविधा थी। चाहें तो चौबीसों घंटे भजन करें या सुनें और यह सुविधा काशी में ही है और कहीं नहीं। फिर भी रामसंद्र लौटने की इच्छा हुई। इस गांव में उन्होंने कई साल बिताये थे। यहां का मंदिर, रास्ते, गलियां, तालाब, चढ़ान, आसपास के देहात आदि शायद उनके लिए चित्ताकर्षक बन गये या गांव के लोग उनके मन-मस्तिष्क में समा गये थे—इसे वे ही साफ-साफ समझ नहीं पाये। खैर, लौट आये थे।

आने के बाद यहीं के हो गये। आसपास देहातों में भिक्षाटन के लिए जाते, कुछ लोगों की यथाशक्ति सहायता करते, भजन करते। इसी तरह अपना समय बिता देते। लेकिन अब समय बिताना मुश्किल हो गया। अब उनके दिमाग में यह भावना घर कर गयी कि यहां अपना कोई नहीं। मैं तो निरा संन्यासी ठहरा। पहले ही अपना कौन था, जो अब रहे। ऐसे तमाम प्रश्न उठने पर भी मन का

एकाकीपन नहीं मिटा। क्या लगाव जो इस गांव में रहा जाये ?—यह विचार भी दो-एक बार आया। अब कई दिनों से यही विचार दृढ़ होता जा रहा था। यह गांव नहीं चाहिए; तिपटूर या तुमकूर, नहीं तो कहीं और चला जाये—यह लगभग निश्चित रूप से मन में बैठ गया था।

वे इसी तरह सोच रहे थे कि एक दिन अप्पण्णय्या गांव में आया। इस गांव में उसका भी कोई नहीं था। भाभी के मरने के बाद यह गांव मानो उसे खाने दौड़ता था। इसी वजह से इतने दिनों नहर सिंचित खेती प्रदेश में अकेला भिक्षाटन करता रहा। अपने साथ डेढ़ पल्ला चावल, बीस सेर तूअर की दाल, लगभग दस सेर मिर्ची, मसाला पाउडर लाया। यह सब बीरेगौड़ के बाड़े के बरामदे वाले कमरे में रख दिया। अपना खाना अकेला ही रोज पकाता। गांव में अय्यजी के अलावा और कोई हमदर्द नहीं रहा था। पकाकर, खाने के बाद, समय काटने उनके मंदिर में आकर बैठ जाता। कोई भी विषय उठाते तो अंततः भाभी की ओर ही मुड़ जाता। "इस हरामखोर भाई ने उन्हें बहुत सताया। अब उन्हें खा बैठा है जी।"—यह बात वह बार-बार कहता।

एक दिन अय्यजी बोले—"जो हुआ सो हुआ, अब भी आप दोनों भाई और मां साथ रहें।"

"उसका घर तो बर्बाद हो गया। क्या उस छिनाल के साथ रहूं ? मैं मर्द हूं जी, नहर सिंचित खेती प्रदेश से डेढ़ पल्ला सफेद चावल कमाकर लाया हूं। चलिए, देख लीजिए ?"

महादेवय्यजी चुप रहे। अप्पण्णय्या बीस दिन गांव में रहा, लेकिन एक दिन भी मां या भाई के पास नहीं गया। उनकी बात चलते ही आग बबूला हो जाता। इस गांव से वह ऊब गया था। बेकार बैठकर क्या करे ? आसपास के देहातों में तो मां और भाई ने भिक्षाटन कर लिया है। मैं भी जाऊंगा तो लोग दुबारा नहीं देंगे। एक दिन बीरेगौड़ के बरामदे वाले अपने कमरे में ताला लगाकर नहर सिंचित खेती प्रदेश की ओर फिर चल पड़ा।

जिस दिन अप्पण्णय्या गया, उसी रात अय्यजी नंजम्मा के परिवार के बारे में सोचने लगे। छोटी उम्र में ही बहू बनकर इस गांव में आई, ससुराल का दुख सहा, बच्चों को पाला-पोषा, अलग से घर बसाया, बेटे का जनेऊ कराया और बेटी की शादी की, दो बच्चों की मौत का अपार दुख झेला और अंत में खुद भी

मौत के मुंह में चली गयी—यह सब एक नाटक के रूप में स्मृति-पटल पर आकर चला गया। अब उन्हें एहसास हुआ कि वे इस परिवार के कितने निकट पहुंच गये थे। इस बहन के परिवार का यह हाल !—सोचते हुए एक लंबी निःश्वास छोड़ी। उन्होंने फिर मन परिवार में बचे लता-समान विश्व को याद करने लगा। वह उनकी गोद में बैठकर भिक्षाटन के लौंदे खाता था ! कितना घुलमिल गया था ? बड़ा होशियार है। शेर का सीना रखता है ! आगे पढ़ेगा तो और होशियार होगा। उसे पढ़ाने के लिए नंजम्मा की बड़ी अभिलाषा थी। मामा के घर इसी-लिए तो छोड़ा था न ? पता नहीं वहां पढ़ाई-लिखाई कैसी होती होगी ? नटखट-पन कम तो हो गया होगा ? मामा-मामी की तो कोई संतान नहीं ? तिसपर भी न जाने कैसी देखभाल करते होंगे ?

उनकी याद ने उन्हें यह निश्चय करने को विवश कर दिया कि यह गांव छोड़ने से पहले उन्हें एक बार नागलापुर जाकर विश्व को देख आना चाहिये।

[2]

दो दिन बाद, दोपहर में खाने के बाद वे मंदिर के बरामदे में बैठे तंबाकू मसल रहे थे। नरसी मानो उन्हीं को खोजती आ रही थी। वह आकर बरामदे में बैठ गयी। उसके चेहरे पर व्यथा झलक रही थी।

"क्यों बहन, सात-आठ दिनों से गांव में नहीं थी, कहां गयी थी ?"

"अपने सांतिग्राम के सगेवालों के घर गयी थी जी।"

"चिंतित दीख रही हो ?"

"क्या कहूं जी ! कल गाड़ी से नागलापुर के तालाब की चढ़ान से उतर रही थी कि विश्व मिल गया। उसे देखकर रोना आ गया था।"

महादेवय्यजी जानने के लिए बेचैन हो उठे—"कैसा है वह ?"

"कैसा है ? जो लड़का केले के तने के समान था, अब सूखी लकड़ी सा बन गया है। तालाब से पानी लेने जा रहा था। एक घड़ा था हाथ में। मुझे गाड़ी में देखकर पहचान गया। वह इतना उतर गया है कि मैं उसे पहचान ही नहीं सकी। गाड़ी रुकवाकर नीचे उतरी। पूछा, 'कैसे हो बेटे ?' तो बस, रोने लगा। समझाया, फिर भी चुप नहीं हुआ। उसने पूछा, 'मुझे भी गांव ले चलोगी ?' आप ही बताइए, मैं

कैसे ले आती ? और भी बहुत कुछ कहा उसने। देर होने पर घर में मामी मारेगी, यह कहकर वह घड़ा भरने चला गया। उस छिनाल को क्या कहूं जिसने इतने छोटे बच्चे को इतना बड़ा घड़ा पानी लाने भेजा ?"

"तूने गांव में जाकर कल्लेश जोइसजी से नही पूछा ? तू उन्हें जानती है न ?"

"लड़का चला गया था। गाड़ी को वहीं थोड़ा रुकने को कहकर मैं उतर गयी। वहीं एक औरत कपड़े धो रही थी। उसके पास जाकर पूछा—'बहन, मैं रामसंद्र की हूं और यह लड़का हमारे गांव का है ! कल्लेश जोइसजी इसकी देखभाल कैसे करते हैं ?' उस बहन ने सारी बातें बतायीं। वह कल्लेशजी के पड़ोस की थी। उसने बताया कि सारा काम इस लड़के को ही करना पड़ता है; उनकी पत्नी चावल की रोटी खाती है और लड़के को मडुए की रोटी देती है—वह भी दी तो दी, नहीं तो नहीं। उसके कपड़े भी इसे ही धोने पड़ते हैं, कड़छुल उठाकर कपाल पर मारती भी है।"

"कल्लेश जोइसजी रहते हैं ?"

"वे बेकार के हैं। बता रही थी कि खुश रहते हैं तो लड़के को बाजार ले जाकर मिठाई-विठाई दिला देते हैं। गुस्सा आया तो चूल्हे की लकड़ी लेकर पीटते हैं। मर्द को क्या मालूम कि औरत अंदर क्या-क्या करती है !"

महादेवय्यजी ने आगे कुछ नहीं पूछा। उनमें कभी यह भ्रम न था कि बिन-मां का अनाथ बालक, विश्व, पूर्ण रूप से सुखी है। लेकिन उन्हें इस बात की कल्पना भी नहीं थी कि उसका दुख इस हद तक पहुंच जायेगा। उन्होंने काफी सुन रखा था कि कल्लेश की पत्नी अच्छी औरत नहीं है ! लेकिन बहन के बेटे के बारे में अधिक ख्याल रखना मामा का काम था। लेकिन अक्ल ठिकाने रहे तो ख्याल रखे न ? वे सोच रहे थे। नरसी भी कुछ अपने में ही सोचकर बोली—"अय्यजी, एक बात कहती हूं, सुनेंगे ?"

"कहो।"

"भगवान ने मेरी गोद नहीं भरी। उस लड़के को लाकर मुझे दे दीजिए। बेटा समझ कर पालूंगी। मेरी दुकान, मेरे पैसे, सब उसी के होंगे। मौत से खेल रहा था तो मेरी गोद में ही लिटाया गया था और वह बच गया था। उसकी मां ने ही कहा था तब, 'नरसम्मा, यह मेरा बेटा नहीं, तुम्हारा है; तुम ही पालो।' आप नागलापुर जाकर ले आइए। ऐसे पालूंगी कि उसका एक बाल भी इधर का उधर न हो।"

नरसी ही दुबारा बोली और फिर 'सोच लीजिए' याद दिलाते हुए कहकर चली गयी।

महादेवय्यजी का मन सोच में डूब गया! रातभर सो नहीं पाये। नंजम्मा की भी याद आती रही। उसके फोड़े निकल आये थे। तब आधी रात को मना करने पर भी उसने मन की सारी बात कह डाली थी—'पार्वती और रामण्णा के मरने पर आपने यशोधरा की कहानी सुनाई थी कि अपने बेटे के डूब जाने पर, अपनी मौत से डरकर यशोधरा तट पर ही खड़ी रही। मैं भी उसी दिन श्मशान के कुएं में कूद पड़ती, लेकिन नहीं कूदी। लेकिन अब मैं ही मर रही हूं। विश्व का कौन है? अक्कम्मा कुछ आटा पकाकर डालेगी। अपने भाई पर मुझे विश्वास नहीं। लड़के की रोटी का प्रश्न मुख्य नहीं। उसे बुद्धिमान नहीं बनना चाहिए?'

उसकी सारी बातें उन्हें याद आने लगीं। अक्कम्मा होती तो लड़के को खाने-पीने की कमी न होती। घर में मामी इतना कष्ट भी न दे पाती। लेकिन अपनी पोती के साथ वह भी तो चली गयी। 'लड़के को मामा के साथ भेजते समय क्या मुझे इतना भी नहीं सोचना चाहिए था? मेरी तो अक्ल ही मारी गयी।' वह अपने आपको दोषी ठहराने लगे। अब क्या किया जाये? उसे लाकर नरसी को सौंपे? उसने आग्रह भी तो किया है। सुनता हूं कि नरसी के पास पंद्रह-बीस हजार रुपये हैं, दुकान भी चलती है। वह प्यार से देखभाल करेगी। उसके मामा के घर की अपेक्षा यह अच्छा है। उनके मन ने निष्कर्ष निकाला।

'लेकिन अगर नंजम्मा जिंदा रहती तो क्या लड़के को नरसी के पास छोड़ती? वह हर रात एक नये ग्राहक को बुलाती है। 'लड़के की रोटी का प्रश्न नहीं है, उसे बुद्धिमान नहीं बनना चाहिए?' नंजम्मा का यही प्रश्न था जो उन्हें याद आया। उसे बुद्धिमान कौन बनायेगा? जन्म देने वाले बाप की योग्यता तो मालूम ही है। चाचा को अक्ल ही कहां है? दादी गंगम्मा में विवेक होता तो घर का ऐसा हाल क्यों होता? तो अब उस लड़के का क्या होगा?'

सात-आठ दिन यहीं विचार उन्हें सताते रहे। एक दिन लेटे थे कि अचानक एक उपाय सूझा। 'मैं गांव छोड़ ही रहा हूं, विश्व को भी साथ ले चलूं। मेरे भिक्षाटन से दो जून खा लेगा। मैं ही उसे स्कूल भेजूंगा। लड़का बड़ा होशियार है। अंग्रेजी स्कूल में ही पढ़ने भेजूंगा। सुयोग रहा तो आगे भी पढ़ाऊंगा। यही उचित रहेगा। इस निश्चय से वे आनंद से रोमांचित हो उठे।

लेकिन साथ में यह विचार भी उठा—'मैं काफी बूढ़ा हो चुका हूं। ले जाकर कहीं मैं ही मर गया तो उसका क्या होगा ?' एक-दो घंटे के विचार-मंथन के बाद निवारण निकला—'लड़का निपुण है। मैं अगर मर गया तो कहीं मजदूरी करके पेट भर लेगा। लेकिन उसे मामा-मामी के घर भयमय जीवन मत काटने दो। कौन जाने मैं कब मरूंगा ? पोती की हम उम्र नंजम्मा जैसी मर गयीं ! लेकिन मैं तो लिंग के पत्थर के समान हूं ! विश्व बड़ा होने तक नहीं मरूंगा !'

मस्तिष्क में यह भी उपजा 'कि अगर विश्व को मेरे साथ भेजने से कल्लेश जोइसजी ने इंकार कर दिया तो ? खैर, मुझे देखते ही लड़का मेरा पीछा नहीं छोड़ेगा। चुराकर ले आऊंगा। मुझसे क्या छीन लेंगे ?' यह निर्णय कर दूसरे ही दिन वे नागलापुर के लिए रवाना हो गये।

[3]

रास्ते में वह कटिगेहळ्ळी में रातभर ठहरे। अगले दिन नागलापुर पहुंचे। सुबह के दस बज रहे थे। रास्ते में नदी थी। यहीं स्नान किया। गेरुआ धोती और कमीज पहनी। फिर लाल दुपट्टा बांधा। माथे पर विभूति लगायी। फिर शिव का ध्यान कर सीधे स्कूल पहुंचे। स्कूल छूटने का समय हो गया था। घंटी बजते ही विश्व बाहर आया और उन्हें देखकर पहचान गया। 'अय्यजी' कहकर उसने पुकारा और उनके पास आ गया। आते ही टांगों से लिपट गया वह।

"यहां आओ मुन्ने !" हाथ पकड़कर, स्कूल के पीछे वट-वृक्ष के पास ले जाकर बैठते हुए बोले। जैसा कि नरसी ने बताया था, लड़का वाकई सूखकर कांटा हो गया था। उन्होंने पूछा—"मेरे साथ आयेगा ?"

"हमारे गांव चलेंगे क्या ?"

"हमारे गांव या और कोई गांव, मेरे साथ आ जा। किसी बड़े गांव में चलेंगे। मैं भिक्षाटन करके लाऊंगा और तू स्कूल जाकर बहुत पढ़ना-लिखना। आयेगा न ?"

"जाइये अय्यजी, आप झूठ बोलते हैं।"

"नहीं मुन्ने, सच कह रहा हूं।"

"तो कसम खाकर कहिये।"

"तेरी कसम है बेटे !" उसके सिर पर हाथ रखकर वह बोले।

"तो चलिये, यहीं से भाग चलें।"

"नहीं, घर जाकर तेरे मामा से पूछ लें।"

यह सुनते ही वह रो पड़ा। "वे नहीं भेजेंगे जी !"

"पहले पूछ लेंगे। अगर उन्होंने भेजने से इंकार कर दिया तो मैं कल फिर यहां आऊंगा और तुझे सीधे यहीं से ले चलूंगा।" इतना समझाने के बाद भी उन्हें तीन बार अपनी ताबीज हाथ में लेकर कसम खानी पड़ी।

उन्होंने उसे आगे भेज दिया। दस मिनट बाद घर पूछते हुए वे पहुंचे। 'देर से क्यों आया रे हरामजादे ?' कल्लेश भांजे को गालियां दे रहा था, लेकिन इन्हें देखकर चुप हो गया।

ये इधर-उधर की बातें कर रहे थे कि दरवाजे के सामने एक बड़ा लाल घोड़ा आकर रुका। उस पर से उतरने वाले कंठीजोइसजी थे। मां का श्राद्ध करके यहां से गये थे, तो आज लौटे हैं। जाने से पहले ही उन्हें मालूम था कि कल्लेश विश्व को अपने पास रखेगा। कल्लेश ने ही उन्हें बताया था। अब यूं ही, मन की लहरीं हुई, गांव आ गये हैं। इसी लहर में पोते को भी एक बार देख लेने की इच्छा थी। भीतर आये। विश्व को बुलाकर बड़ा और मैसूरपाक की पुड़िया दी। अब उन्होंने रामसंद्र और बेटी के बंधवाये हुए घर के बारे में महादेवय्यजी से पूछा।

कुछ देर के बाद कल्लेश ने महादेवय्यजी से पूछा—"खाना खायेंगे या खुद ही पकायेंगे ? नहीं तो स्वजाति के यहां व्यवस्था करवा दूं ?"

"स्वजाति के यहां कह दीजिए।"

कल्लेश ने विश्व को गांव के ही मल्लशेट्टी को बुलाने भेजा। मल्लशेट्टी आया और उन्हें खाने के लिए अपने घर ले गया। उसकी पत्नी रसोईघर में खाना पका रही थी और इधर महादेवय्यजी मल्लशेट्टी से पूछताछ करने लगे—"कल्लेश के घर में विश्व कैसे रहता है ?" मल्लशेट्टी बोला—"बच्चों को इस हालत में नहीं जीना चाहिए। शिव-शिव ! इससे तो मर जाना ही अच्छा है !" इस पर उसकी पत्नी ने भी यही कहा।

"शेट्टीजी, जरा कंठीजोइसजी को यहां बुला लायेंगे आप ?"

मल्लशेट्टी के जाने के दस मिनट में ही उसके साथ कंठीजोइसजी आ गये। मल्लशेट्टी ने उन्हें पाट दिया। वे महादेवय्यजी के सामने दीवार से पीठ टिकाकर

बैठ गये। यहां अपने आने का कारण बताकर अय्यजी बोले—"चाहें तो इस शेट्टी से और अंदर उस बहन से भी पूछ लीजिए। इस गांव में किसी से भी पूछ लें। आप अपनी आंखों से देखिए, वह लड़का क्या बन गया है ? आपकी बहू का स्वभाव कैसा है, आप अच्छी तरह जानते हैं। आप लड़के को मेरे साथ भेज दीजिए। मैं उसे पाल-पोसकर होशियार कर दूंगा।"

जोइसजी को इतना गुस्सा आया कि बहू की कमर तोड़ दें, लेकिन महादेवय्यजी ने कहा—"हीन भंवरी मुंडवाने पर नहीं जायेगी। उसे सीधा करने में पति भी सफल नहीं रहे। कल्लेश जोइसजी भी नहीं जानते कि बच्चों की देख-भाल कैसे करनी चाहिए ? अब आप मेरे साथ ही भेज दीजिए।"

जोइसजी ने कुछ देर तक सोचा। उसके बाद पूछा—"आप ले जाकर क्या करेंगे ?"

"क्या करूंगा, कहां रहूंगा, यह मैं भी नहीं जानता। मुझ पर विश्वास हो तो निस्संकोच भेज दीजिए।"

कंठीजोइसजी तुरंत उत्तर नहीं दे पाये। मन में क्रोध फैल रहा था। लड़के का दादा मैं जिंदा हूं। मामा कल्लेश भी है। यह जंगम हमसे यह कहने आया है कि हम लड़के को नहीं पालते, इसलिए अपने साथ भेज दें। इसकी क्या हिम्मत है ? महादेवय्यजी पर बरसना चाहते थे कि एक दूसरा विचार उठा जिसने जबान रोक दी। दस मिनट मौन बैठे रहे। मन कल्लेश के संसार को लेकर सोच रहा था। वह छिनाल अच्छी नहीं है। ठीक से खाना न देने से लड़का मरा जा रहा है। सुना है कि कल्लेश भी मारता है। अगर मैं ही ले जाकर रखूं तो कैसा रहेगा ? जाकर क्या करूंगा ? होटल का भर पेट खाना, घोड़े की सवारी, जादू-टोना, दवा··· छिः ! यह सब नहीं चाहिए। ऐसी स्थिति में उसे पालने वाला कोई नहीं। ये अय्यजी ही विश्वसनीय हैं। नंजु भी कह रही थी कि ये देव-तुल्य मनुष्य हैं। उन्होंने पूछा—"देखिए, आज यहां मैं संयोग से आ गया। अगर मैं न आता तो आपको कल्लेश से ही पूछना पड़ता। तब वह राजी न होता तो आप क्या करते ?"

"अब तो आप हैं ही। उस बात की क्या जरूरत है ?"

"यूं ही। सच बताइए कि मैं न आता तो आप क्या करते ?"

"सच कहूं ? कल उस लड़के के स्कूल जाकर वहीं से उसे हाथ पकड़कर अपने

साथ ले जाता। मुझे कोई रोकने आता तो उन्हें जवाब दे देता।"

जोइसजी क्षण भर उन्हें अपलक देखते रहे। फिर उठकर उनके पास आये और भुजा थपथपाकर बोले—"वाह रे वाह अय्यजी! आप मर्द हैं। शाबाश! ले जाइये। कल्लेश से मैं कह दूंगा।" इतना कहकर वे सीधे घर पहुंचे।

खाना खाने के बाद महादेवय्यजी ने थोड़ी नींद ली। फिर जानबूझकर थोड़ा विलंब करके कंठीजोइसजी के घर गये। वे बेटे को मना चुके थे, तब तक। उसी दिन स्कूल जाकर लड़के का सर्टिफिकेट लिया। अगले दिन उसके कपड़ों को बांधकर महादेवय्यजी ने अपने कंधे पर रख लिया। उन्होंने विश्व से कहा—"बेटे, दादाजी, मामा, मामी सबके पैर छूकर प्रणाम करो।" प्रणाम स्वीकार करते समय कमलु बुत बनी खड़ी थी और कल्लेश मामा की आंखों में आंसू थे।

शाम से कंठीजोइसजी खोये-खोये-से रहने लगे थे। रात का खाना भी नहीं खाया था। रात को दोनों साथ बरामदे में लेटे थे लेकिन महादेवय्यजी से भी बात नहीं की थी। कल्लेश के साथ वे भी, दोनों को बिदा करने के लिए घोड़े की बागडोर पकड़े तालाब के दूसरे छोर तक आये। छोर पार करने के बाद बेटे से बोले—"कल्लेश, तू वापस जा। मैं आधा मील इसके साथ चलकर आता हूं।"

लौटने से पहले कल्लेश ने महादेवय्यजी से कहा—"मैंने इसे नियंत्रण में रखा। बहुत ही नटखट है। नंजम्मा ने ही नियंत्रण में रखने को कहा था। नहीं तो यह बिगड़ जायेगा। आप भी भय दिखाते रहियेगा।"

"अच्छा! अच्छा!! शिल्पकार की सौ चोटें खाने पर ही तो पत्थर से शिव-मूर्ति बनती है! लेकिन जगह देखकर और सीमा में। आपने अच्छे के लिए ही किया, खैर छोड़िये।" अय्यजी ने उत्तर दिया तो कल्लेश का मुंह उतर गया। आगे कुछ बोले ही बिना वह लौट पड़ा।

घोड़ा और तीनों, सौ कदम से भी अधिक चले कि महादेवय्यजी कंठीजोइसजी से बोले—"आप लौट जाइए, हम जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हैं"

जोइसजी कुछ बोलने के लिए मानो छटपटा रहे थे, लेकिन बात थी कि मुंह से निकल ही नहीं रही थी। वे घोड़े के साथ खड़े रहे। महादेवय्यजी भी खड़े हो गये। दोनों के बीच उनकी जांघ तक लंबा विश्व खड़ा था। पांच मिनट तक मौन छाया रहा। 'हम चलें?' महादेवय्यजी ने कहा तो वे बोले—"सुनिये अय्यजी, आप ही मर्द हैं, विजेता हैं।"

महादेवय्यजी नहीं समझे। "आप यह क्या कह रहे हैं?"

"कुछ नहीं। यह लीजिए।" अपनी कमीज की भीतरी जेब में हाथ डालकर नोटों की एक पोटली निकालकर उनकी गेरुआ कमीज की जेब में डालते हुए बोले—"डेढ़ सौ रुपये हैं। आप इसे किसी भी गांव में ले जाइए, और उसके बाद मुझे एक चिट्ठी लिखिए। पते पर 'चन्नरायपट्टण, मस्जिद के पीछे, पिशाचघर नागलापुर के कंठीजोइस' लिखा तो बस होगा।" अपने ऊंचे-पूरे भारी शरीर को झुकाकर उन्होंने पोते के दोनों गालों को चूमा, फिर उसके शरीर, मुख, पीठ अपनी मोटी हथेली से थपथपायी और मुड़कर घोड़े पर सवार हो गये। महादेवय्यजी ने देखा कि उनकी आंखो के कोर में आंसू की बूंद थी। घोड़े के पेट के निचले भाग को एड़ी लगायी और फिर मुड़कर देखे बिना घोड़ा तेज गति से गांव की ओर दौड़ा लिया। विश्व मुड़कर घोड़े की तेज गति को ही देखता रहा। कुछ देर देख लेने के बाद उसका हाथ पकड़ महादेवय्यजी आगे बढ़ गये।

वे आधा मील चले थे। विश्व कुछ सोच रहा था। अनजाने ही उसके अधर कुछ बोल रहे थे। "क्या सोच रहा है मुन्ने?" महादेवय्यजी ने पूछा।

"दादाजी के पास घोड़ा है न, मुझे भी ऐसा एक घोड़ा लेकर देंगे?"

"हमें क्या करना है?"

"मुझे ऐसा घोड़ा देखने पर, अभी दादाजी ने जिस तेजी से दौड़ाया उससे भी अधिक तेज दौड़ाने की इच्छा होती है।"

"और किस-किस चीज की इच्छा होती है?"

"बहुत दूर तक तैरने की इच्छा होती है।"

"पढ़ने की इच्छा नहीं होती?"

"होती है जी, अपनी क्लास में गणित में मैं ही फस्ट हूं।"

"और किसमें फस्ट है?"

"मामाजी के घर में पढ़-लिख न सका, नहीं तो सबमें फस्ट आता। हमारे मास्टरजी ने ही कहा था।"

"अब से तू खूब पढ़ेगा-लिखेगा। थैली भर स्लेट, किताबें लाकर दूंगा, चलो बेटे।"

"हम अपने गांव से कहां जायेंगे?"

"मैंने सोचा नहीं, लेकिन गुब्बी या तुमकूर चलेंगे।"

"अय्यजी, कहीं भी जायें, वहां मेरे तैरने के लिए एक तालाब होना चाहिए। कभी-कभी किसी का घोड़ा दिलवाइयेगा। बैठने की बड़ी इच्छा होती है।"

"अच्छा देखेंगे बेटे।" कहकर गर्दन घुमाकर उन्होंने उसका मुंह देखा। तुरंत कंठीजोइसजी की याद आयी। जोइसजी ने अभी-अभी 'अय्याजी, आप मर्द हैं, विजेता हैं' कहा था। इस बात का अर्थ अब भी उनकी समझ में नहीं आ रहा था। यही सोचते हुए वह आगे बढ़ रहे थे।

[4]

वे उसी दिन रामसंद्र पहुंच गये। गंगम्मा गांव में नहीं थी। महादेवय्यजी ने अपने पास जो कुछ भी मडुआ, दाल, मिर्ची आदि थे शाम को बेच दिये। इससे एक सौ बीस रुपये मिले। उसके अतिरिक्त उनके पास चांदी के चालीस सिक्के थे। कंठीजोइसजी के दिए डेढ़ सौ रुपये कमीज के भीतर थे। उन सबको उन्होंने अपनी कमर में बांध लिया। अल्यूमिनियम के बर्तनों और कंबल ढोने के लिए एक कुली तय किया। सुबह रवाना होने से पहले विश्व बोला—"अय्याजी, क्या सचमुच हमारी मां मर गयी है?"

"हां बेटे!"

"मैं अपने घर में जाकर देखना चाहता हूं।"

"वहां क्या है, देखने के लिए!"

"ऊंहुं, मुझे देखना है।" उसने हठ किया।

उस घर के खाली होने के बाद उसकी चाबी गुंडेगौड़जी के संबंधी कुरुबरहट्टी मुद्दय्या के पास रहती थी। यह महादेवय्यजी जानते थे। मुद्दय्या को बुलवाकर उन्होंने दरवाजा खुलवाया। बंद कमरे के भीतर धूल जमी थी और बदबू भी आ रही थी। विश्व अंदर रसोईघर में गया। वहां से धान रखने के कमरे में जाकर कुछ टटोलने लगा। खंभे के सहारे छत पर चढ़कर देखा। अंत में चिल्लाया, 'मां, तुम नहीं हो?' उत्तर नहीं मिला। नीचे उतरकर पूछा—"अय्याजी, तो मां सचमुच मर गयी है?"

द्वार खोलने के लिए आया हुआ मुद्दय्या पत्थर-सा खड़ा था। "हां मुन्ने, मां सचमुच मर गयी है।" महादेवय्यजी बोले।

विश्व रोने लगा। उससे लिपटकर समझाने के बाद वे बोले—"चलो, चलें।"

वह चुपचाप उनके पीछे चल पड़ा। कुली उनके बर्तन, कंबल, कपड़ों की थैली सिर पर रखे आगे-आगे चला। अपने इकतारा, ताल लिये महादेवय्यजी बढ़ रहे थे। उनके पीछे-पीछे चल रहे विश्व को उसके बहुत कमजोर हो जाने के कारण गांव में कोई नहीं पहचान पाया। महादेवय्यजी ने गांव छोड़ने की बात किसी से नहीं कही। क्यों, कैसे—सभी प्रश्न करेंगे। उन्हें सारी बातें कैसे बताऊंगा? इसीलिए चुप रहे।

कंबनकेरे के रास्ते से गुजरकर मोटर-मार्ग पर पहुंच जाते हैं। कुली सामान लिए बहुत आगे चल रहा था। उसी गति में महादेवय्यजी चलने में असमर्थ थे, इसलिए वे पीछे रह गये। हाथ पकड़े रहने पर भी विश्व महादेवय्यजी से अधिक अंतर्मुखी हो, गर्दन झुकाए कदम रख रहा था। ये एक मील तक आये थे कि रास्ते में एक पेड़ के नीचे सिर तले मडुए की एक छोटी गठरी रखे चेन्निगराय सो रहे थे। तंबाकू की पीक मुंह में भरी हुई थी। पीठ के बल सोये होने के कारण, मुंह से पीक बह रही थी जिसे रोकने के लिए अधरों को वह बार-बार पोंछते थे। महादेवय्यजी ने उन्हें देख लिया। इन दोनों के पैरों की आहट सुनकर वे उठ बैठे। महादेवय्यजी ने उनसे कोई बात नहीं की। गंगम्मा पास ही कहीं यहां के पिछवाड़े गयी होगी। अब वह देखेगी तो पूछेगी—'मेरे पोते को कहां ले जा रहे हैं?' ऐसा सोचकर महादेवय्यजी ने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये। स्वयं बोलने के लिए चेन्निगराय असमर्थ थे, क्योंकि मुंह में तांबूल रस भरा था।

"हमारे बाबा हैं न?" विश्व ने तुरंत पूछ लिया। चेन्निगराय बेटे को पहचान गये। बोलने के लिए उनकी जीभ छटपटाई। लेकिन तांबूल रस थूकना पड़ता। और अगर थूक देते तो पास में और नहीं था। यही वे सोच रहे थे कि वे दोनों तीस-चालीस कदम आगे बढ़ गये। विश्व बार-बार देख रहा था।

"उस ओर मत देख, चुपचाप चल बेटे।" महादेवय्यजी बोले।

चेन्निगराय मुंह का तांबूल रस थूकने में असमर्थ थे, इसीलिए बोलना संभव नहीं हुआ। उनका मन सोच रहा था कि यह जंगम मुझे देखकर भी बिना कुछ कहे चला गया, उसे दुबारा मिलने दो तो ठीक तरह से पूछूंगा। इतने में सामने उतार आया। वहां से उतरकर ये दोनों उनकी आंखों से ओझल हो गये।

के.के. प्रिंटर्स, 150-डी कमला नगर द्वारा मुद्रित